व्रत मञ्जरी

शास्त्रोक्त पद्धति से

(व्रत एवं त्योहारों का अनुपम संग्रह)
मन्त्रानुष्ठान सहित

लेखक व प्रकाशक

भागवत् प्रवक्ता
आचार्य श्री धीरेन्द्र जी
(एम. ए. व्याकरण, ज्योतिष)

प्रकाशनः
कान्हा दर्शन ज्योतिष केन्द्र
117 गोविन्द खण्ड झिलमिल कालोनी (नियर गुरुद्वारा)
शाहदरा दिल्ली-95
संपर्क सूत्रः 9871662417, 9210067801
Email : dpkanha@gmail.com
Web : www.acharyadhirendra.com
Web : www.tripursundri.org
email : info@tripursundri.org

इस ग्रंथ की विषयवस्तु में या पुस्तक प्राप्त करने के इच्छुक पाठकगण निम्नलिखित पते या फोन नम्बर पर सम्पर्क कर सकते हैं:

आचार्य श्री धीरेन्द्र जी
फोन नं.: 9871662417, 9210067801
कान्हा दर्शन ज्योतिष केन्द्र
117 गोविन्द खण्ड झिलमिल कालोनी (नियर गुरुद्वारा)
शाहदरा दिल्ली-95
संपर्क सूत्रः 9871662417, 9210067801
Email : dpkanha@gmail.com
Web : www.acharyadhirendra.com
Web : www.tripursundri.org
email : info@tripursundri.org

संस्करण : श्रावण मास कृष्ण पक्ष षष्ठी शनिवार संवत् २०६४, सन् 2007

मूल्य : सप्रेम पाठ

लेज़र टाइपसैटिंगः
भार्गव लेज़र प्रिन्टर्स, दिल्ली।
फोन नं. 9818747603

दो शब्द

सर्व रूप मयी देवी सर्वं देवी मयं जगत्।
अतोऽहं विश्व रूपां तां नमामि परमेश्वरीम्।।

आद्या शक्ति महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती, स्वरूपा भगवती माँ त्रिपुरसुन्दरी की असीम अनुकम्पा से ठाकुर जी की महती कृपा से ''व्रत मंजरी'' जिसमें वर्ष भर में होने वाले व्रतों एवं त्योहारों के विषय में शास्त्रोक्त एवं देशोक्त, पद्धति से वर्णन किया गया है।

मुझे आशा है कि भक्त गण इस पावन संग्रह से लाभ प्राप्त करेंगे और व्रत+उपवास के प्रति जागरूक होंगे। व्रतोपवास से अनेकानेक लाभ भी प्राप्त होते हैं।

1. व्रतोपवास से मन शान्त रहता है।
2. व्रतोपवास से कार्य या ध्येय सिद्धि के प्रति विश्वास दृढ़ होता है।
3. व्रतोपवास से प्रवृत्ति सत्यमय हो जाती है।
4. व्रतोपवास से साधना में मनोयोग बढ़ता है।
5. व्रतोपवास से संकल्प की दृढ़ता के कारण आत्मशक्ति की वृद्धि होती है।
6. व्रतोपवास से शरीर एवं इन्द्रियों पर स्वत: नियमन एवं नियन्त्रण होता है।
7. व्रतोपवास से इच्छा शक्ति सुदृढ़ होती है।
8. व्रतोपवास से शरीर स्वस्थ एवं मन प्रसन्न रहता है।
9. व्रतोपवास से ऐहिक तथा पारलौकिक सफलताएं करतलगत हो जाती हैं।
10. व्रतोपवास से जीवन में चारों तरफ सफलता प्राप्त होती है।

इस प्रकार निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है, कि व्रतोपवास धर्म तथा अध्यात्म की दृष्टि से ही महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि सामाजिक एवं ऐहिक दृष्टि से भी उपादेय है।

धर्म के प्रथम साधन शरीर के लिये तो सर्वतोभावेन उपयोगी तो है ही एवं साथ ही धर्म-साधना एवं अध्यात्मसिद्धि के लिये भी ये परम उपयोगी है। प्रस्तुत ग्रन्थ ''व्रत मञ्जरी' के माध्यम से मैं भरसक प्रयास करूंगा कि यह जन-जन तक जायें ताकि व्रतों के विषय में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त हो। क्योंकि यह ऋषियों एवं मुनियों के द्वारा निर्मित प्राचीन परम्परा है। इसी का निर्वाह करना ही संस्कृति, सभ्यता एवं संस्कार है।

प्रस्तुत ग्रन्थ ''व्रत मंजरी'' में जनमानस के लिये अन्यान्य साहित्य के साथ-साथ कामना पूरक व्रत भी दिये गये हैं।

''व्रत मंजरी'' जन मानस के लिये भगवत् प्रसाद सिद्ध होगी। इसमें मैंने विषयवस्तु आदि का विविध ग्रन्थों का अध्ययन करके, उससे सम्बन्धित विचारों को अधिग्रहित कर विषय को अधिक रुचिकर बनाने का प्रयास किया है।

अलग-अलग धर्म गन्थों से भिन्न-भिन्न विद्वानों, ऋषियों व महात्माओं के आलेखों का संकलन करके बहुमूल्य सुझावों का मणिकांचन योग प्राप्त करके अनुग्रहीत हुआ हूं।

मेरा इसमें अथक परिश्रम ही कहा जायेगा। योग्यता नहीं सभी "भूरिश:" साधुवाद के पात्र हैं।

यह कार्य प्रथम नारायण की महती कृपा माँ भगवती की विशेष कृपा से पूर्ण हुआ और इस कार्य में मेरे परम प्रेमास्पद "राजेन्द्र गोस्वामी" जी का जो कि परम निष्कामी भक्त हैं। जिनका उत्साहवर्द्धन ही नहीं अपितु इस ग्रन्थ को आप तक पहुंचाने का अनिवर्चनीय सहयोग रहा है। अत: "श्री गोस्वामी परिवार" आदर व साधुवाद के पात्र है, इनका मैं हृदय से आभर प्रकट करता हूं।

इस "व्रत मञ्जरी" ग्रन्थ में जो त्रुटियाँ अभाव, विच्युतियाँ, विसंगतियाँ दृष्टिगोचर हों वे मेरे अबोधता का परिणाम है। अत: क्षमा प्रार्थी हूं।

नोट–आपके सुझाव हमारे लिये अग्रणी हैं।

आचार्य श्री धीरेन्द्र जी
श्री धाम वृन्दावन
सम्पर्क सूत्र–9871662417, 9210067801, 9213280181

अनुक्रम:

मंगला चरणम्	1
अमृतमय वचन	2
नित्यकर्म	3
संक्षिप्त पूजन विधि एवं स्तुति संग्रह	6
संक्षिप्त स्तुति संग्रह	13
जीवनोपयोगी कुछ मन्त्रोपयोग	17
व्रत और उपवास	22
व्रतों के मुख्य भेद एवं उनसे त्रिविध लाभ	29
पुंसवन व्रत	33
मरुद्गणों की उत्पत्ति का आख्यान	33
ब्रह्मचर्य व्रत की महिमा	40
श्री सत्यनारायण व्रत कथा	44
श्री सत्यनारायण व्रत कथा महात्म्य	80
श्री सत्यनारायण जी की आरती	94
वर्ष भर में होने वाले उत्सव एवं त्योहार	95
चैत्र-शुक्ल पक्ष बसन्त ऋतु में नवरात्रि	95
गनगौर व्रत	97
अशोकाष्टमी	101
श्रीराम नवमी	102
श्री हनुमान जयन्ती	103
वैशाख मास उत्सव	105
सक्रांति महत्व	106

अक्षय तृतीय 106
वैशाख मास स्नान एवं अक्षय तृतीया 116
श्री परशुराम भगवान की कथा 117
वैशाख शुक्ला चतुर्दशी 118
श्री नृसिंह चतुर्दशी व्रत 118
गंगा दशहरा 122
निर्जला एकादशी 122
वट सावित्री व्रत एवं कथा 123
ज्येष्ठाभिषेक 130
श्री जगन्नाथ रथ यात्रा 131
देव शयनी एकादशी 131
चातुर्मास्य व्रत 131
गुरु पूर्णिमा 132
व्यास पूर्णिमा 133
श्रावण (मंगला गौरी व्रत) 134
श्रावण सोमवार 139
हरियाली तीज 140
नागपंचमी 141
श्रावणी कर्म (उपाकर्म) 142
रक्षा विधान एवं रक्षाबंधन 143
भाद्रपद–कृष्ण पक्ष (कज्जली तीज) 145
हल की षष्ठी ललही छठ (हरछठ) 148
श्रीकृष्ण जनमाष्टमी व्रत 151
गूगा नवमी 154

गोवत्स पूजा (बछबारस) 154
कुशोत्पाटनी अमावस्या 155
भाद्रपद शुक्ल पक्ष 156
हरतालिका व्रत 157
गणेश जन्म 160
ऋषि पंचमी व्रत 167
पुत्र की दीर्धायु के लिये मुक्ता भरण सप्तमी 174
राजस्थानी त्योहार–दुबड़ी सातें 181
दशावतार व्रत 184
श्री वामन द्वादशी व्रत (वामन जयन्ती) 185
श्री राधा जी का प्राकट्य एवं प्राकट्य कारण 189
श्री राधा जन्माष्टमी व्रत 191
श्री राधा जन्माष्टमी व्रत एवं महिमा 192
अनन्त चतुर्दशी व्रत एवं रहस्य 194
महालक्ष्मी व्रत (सोरहिया व्रत) 196
पितृ पक्ष 198
जीवित्पुत्रिका व्रत 202
शारदीय नवरात्र 207
महा अष्टमी 208
विजया दशमी (दशहरा) 208
कोजागर व्रत 209
आश्विन पूर्णिमा (शरत् पूर्णिमा) 211
करक चतुर्थी (करवा चौथ) 212
अहोई अष्टमी व्रत 216

गोवत्स द्वादशी 217
धन्वंतरी जयन्ती 217
यमदीप धनतेरस 218
नरक चतुर्दशी 219
हनुमान जन्म-महोत्सव 221
दीपावली महोत्सव 222
बलि पूजा-गोवर्धन अन्नकूट 223
यम द्वितीया भैया दूज 225
भाई बहिन का निर्मल प्रेम (सुभद्रा चरित) 226
सूर्य षष्ठी (डाला छठ) 232
गोपाष्टमी 234
गोपाष्टमी कथा तथा गोपालक श्रीकृष्ण 235
अक्षय नवमी-आँवला नवमी (कूष्माण्डा नवमी) 237
देव प्रबोधनी एकादशी (देव उठनी एकादशी) 239
तुलसी विवाह 240
भीष्मपंचक व्रत 241
बैकुण्ठ चतुर्दशी 242
काल भैरव अष्टमी 244
विवाह पंचमी (श्री जानकी विवाह) 245
दत्तात्रेय जयन्ती 245
गीता जयन्ती 246
पौष मास शुक्ला तृतीया 247
माघ मास के पर्व एवं उत्सव 247
संकष्टी चतुर्थी (संकट नाशन चौथ) 248

मकर संक्रान्ति 255
लोहिड़ी पर्व 256
मौनी अमावस्या 257
गौरी चतुर्थी व्रत (तिल चौथ-वरद चौथ) 258
बसन्त पंचमी 259
विद्या की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती पूजन-महोत्सव 259
रथ सप्तमी (पुत्र सप्तमी) 262
भीष्माष्टमी 263
माघी पूर्णिमा 264
महाशिवरात्रि व्रत 264
शिवरात्रि की महिमा 265
होलिका उत्सव 269
होलिकोत्सव-धुलैण्डी-छारंडी 271
शीतला अष्टमी (बासोड़ा) 272
शीतला माता की लोक कथा 274
बारह महीनों में होने वाली एकादशियों की व्रत कथा 275
सप्तवार व्रत कथा 303
चतुर्युगी सृष्टि चक्रम् 340
ॐ की महिमा 342
ॐ शब्द की विशेषता 345
गुरु महिमा 347
स्मरण 350
भयानक होती है क्रोधाग्नि 355
प्रत्येक मानव को शाकाहारी होना चाहिये 356

मांसाहार अनेक रोगों का जनक 358
दान धर्म का निरूपण 359
कामना पूर्ति के लिये विभिन्न देवताओं की उपासना 362
श्राद्ध तत्त्व 363
ज्योतिष में वास्तुशास्त्र (एक दृष्टि में) 365
मंगलीक योग से भय न लायें 369
जीव हत्या करके बलिदान देना महापाप है! (आचार्य श्री का लेख) 373
भक्तों के लिये संदेश 375
उद्‌गार 381
भजन से भी भगवत् प्राप्ति 383
ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र समाज के चार स्तंभ हैं 385
अर्जुन का प्रश्न 387
आपस में परस्पर सम्बन्ध 388
महाकाली और रुद्र का काम 389
राजनीति क्षेत्र में विद्या 390
अवतारों का प्रयोजन 391
महालक्ष्मी भगवान विष्णु का काम 391
महासरस्वती और ब्रह्मा जी का काम 392
प्रवर्तित चक्रम् 392
श्री राम भक्त संत तुलसी दास द्वारा रचित 'रामचरित मानस' 394
सन्तानगोपाल 407
अग्नि स्तोत्र 417
पतृ-स्तोत्र 423
अच्छे दिन 428

ज्ञान गंगा 431
''शिव-निर्माल्य'' सावधाान ? 439
श्री हनुमान चालीसा 448
संकटमोचन हनुमानाष्टक 450
अनमोल वचन या अमृत की कुछ बूँद 454
दिशा ज्ञान 459
उपसंहार 460
समर्पण 462

श्री सरस्वत्यै नमः श्री गणेशाय नमः श्री वेदपुरुषाय नमः

॥ मङ्गला चरणम् ॥

ॐ वक्र तुण्ड महाकाय कोटि सूर्य समप्रभ।
निविघ्नं कुरु देव सर्व कार्येषु सर्वदा॥
ॐ सर्व रुप मयी देवी सर्वं देवी मयं जगत्।
अतोऽहं विश्व रुपां तां नमामि परमेश्वरीम्॥
जय जय श्री राधारमण जय जय नवल किशोर।
जय गोपी चित चोर प्रभु जय जय माखन चोर॥
श्री राधा मुख चन्द्र के चंचल चारु कपोर।
मेरी ओर निहारिये नटवर नन्दकिशोर॥
राधे मेरी स्वामिनी मैं राधे को दास।
जनम जनम मोहि दीजियो श्री वृन्दावन को वास॥
अर्थ न धर्म न काम रुचि गति न चहौं निर्वाण।
जनम जनम रति राम पद यह वरदान न आन॥
श्री गुरु मूरति मुख चन्द्रमा सेवक नयन चकोर।
अष्ट प्रहर निरखत रहूं श्री गुरु चरणन की ओर॥

॥ जय श्री कृष्ण ॥
॥ जय गुरुदेव ॥

॥ अमृतमय वचन ॥

मातृ देवो भवः। पितृ देवो भवः।
आचार्य देवो भवः। अतिथि देवो भवः॥

1. माता-पिता, गुरु और अतिथि संसार में ये चार प्रत्यक्ष देव हैं। इनमें माता का पहला, पिता का दूसरा, गुरु का तीसरा और अतिथि का चौथा है। माता-पिता में परमात्मा का प्रत्यक्ष स्वरूप है।
2. गंगा के समान कोई तीर्थ नहीं, विष्णु के समान कोई पूजनीय नहीं और माता के समान कोई गुरु नहीं।
3. माता-पिता के द्वारा होने वाली परवरिश बच्चे का भविष्य लिख देती है। माँ ही विधाता है।
4. प्राणी अपने माता-पिता के संस्कारों, गुणों एवं व्यवहार से पहचाना जाता है।
5. संतान पैदा होते ही पति-पत्नी का जन्म माँ-बाप के रूप में होता है।
6. माता-पिता की निरंतर सेवा करने वाला मान को प्राप्त करता है। पिता की सेवा करने वाला मध्यम लोक तक पहुंचता है। ऐसी संतान सूर्य के समान तेजस्वी और इन्द्र की तरह सुखी होती है।
7. माता सर्वतीर्थमयी है और पिता धर्म व स्वर्ग है। माता-पिता की संतुष्टि पुत्र को प्रतिदिन गंगा स्नान का फल देती हैं। माँ

की ममता धरती से भारी है, और आकाश से ऊंचा स्थान पिता का है।

।। इति ।।

।। नित्यकर्म ।।

प्रात: काल उठने के बाद स्नान से पूर्व जो आवश्यक विभिन्न कृत्य हैं, शास्त्रों ने उनके लिये भी सुनियोजित विधि-विधान बताया है। गृहस्थ को अपने नित्य कर्मों के अन्तर्गत स्नान से पूर्व के कृत्य भी शास्त्र निर्दिष्ट पद्धति से ही करने चाहिये। क्योंकि तभी वह अग्रिम षट् कर्मों के करने का अधिकारी होता है। अतएव यहां पर क्रमश: जागरण कृत्य एवं स्नान पर्व कृत्यों का निरुपण किया जा रहा है।

ब्रह्ममुहूर्त में जागरण—सूर्योदय से चार घड़ी पूर्व ब्रह्म मुहूर्त में ही जग जाना चाहिये। इस समय सोना शास्त्र में निषिद्ध है।

करावलोकन—आँखों के खुलते ही दोनों हाथ की हथेलियों को देखते हुए निम्नलिखित श्लोक का पाठ करें।

कराग्रे वसते लक्ष्मी करमध्ये सरस्वती।
करमूले स्थितो ब्रह्मा प्रभाते करदर्शनम्।।

हाथ के अग्रभाग में लक्ष्मी, हाथ के मध्य में सरस्वती, और हाथ के मूलभाग में ब्रह्मा जी निवास करते हैं। अत: प्रात: काल दोनों हाथों का अवलोकन करना चाहिये।

भूमि वन्दना—शय्या से उठकर पृथ्वी पर पैर रखने के पूर्व

पृथ्वी माता का अभिवादन करे और उन पर रखने की विवशता के लिये उनसे क्षमा मांगते हुये निम्न श्लोक का पाठ करें।

समुद्र वसने देवि पर्वतस्तनमण्डिते।
विष्णु पत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे।।

समुद्र रूपी वस्त्रों को धारण करने वाली पर्वत स्वरूप स्तनों से मण्डित भगवान् विष्णु की पत्नी पृथ्वी देवी! आप मेरे पादस्पर्श को क्षमा करें।

मङ्गल दर्शन—तत्पश्चात् गोरोचन, चन्दन, सुवर्ण, शंख, मृदंग, दर्पण मणि आदि माङ्गलिक वस्तुओं का दर्शन करें तथा गुरु, अग्नि और सूर्य को नमस्कार करें।

माता, पिता गुरु एवं ईश्वर का अभिवादन—पैर, हाथ, मुख धोकर कुल्ला करें। इसके बाद रात का वस्त्र बदलकर आचमन करें। पुन: निम्नलिखित श्लोकों को पढ़कर सभी अंगों पर जल छिड़के। ऐसा करने से मानसिक स्नान हो जाता है।

मानसिक शुद्धि का मन्त्र—

अतिनीलघनश्यामं, नलिनायतलोचनम्।
स्मरामि पुण्डरीकाक्ष तेन स्नातो भवाम्यहम्।।

इसके बाद मूर्तिमान् भगवान् माता-पिता एवं गुरुजनों का अभिवादन करें।

कर्म और उपासना का समुच्चय (तन्मूलक संकल्प)—इसके बाद परमात्मा से प्रार्थना करें कि हे परमात्मन्! श्रुति और स्मृति आपकी ही आज्ञाएँ हैं। आपकी इन आज्ञाओं के पालन के लिये मैं

इस समय से लेकर सोने तक सभी कार्य करुंगा। इससे आप मुझ पर प्रसन्न हों क्योंकि आज्ञापालन से बढ़कर स्वामी की और कोई सेवा नहीं होती।

स्नान से पूर्व–

गंगे च यमुने चैव, गोदावरि सरस्वती।
नर्मदे सिन्धु कावेरी, जलेस्मिन् संनिधिंकुरु।।

अर्थ–हे गंगा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती, नर्मदा, सिन्धु और कावेरी आप सभी इस जल में उपस्थित हों।

भोजन करने से पूर्व श्लोक–

अन्नपूर्णे सदापूर्णे शंकरप्राण वल्लभे।
ज्ञान वैराग्य सिद्धयर्थं भिक्षां देहि च पार्वती।।

शयन से पूर्व श्लोक–

ब्राह्माणं शंकरं विष्णुमयं रामं दनुं बलिम्।
सप्तैतानि स्मरेनित्यं दुस्वप्नस्तस्य नश्यति।।

ब्रह्मा, शंकर, विष्णु, यम, राम, दनु और बलि इन सातों के नाम का नित्य स्मरण करने से दु: स्वप्न नष्ट होतें है।

दैनिक कर्मों की सूची निर्धारण–इसी समय दिन रात के कार्यों की सूची तैयार कर लें। आज धर्म के कौन-कौन से कार्य करने हैं? धन के लिये क्या करना है? शरीर में कोई कष्ट तो नहीं है? यदि है तो उसका कारण क्या है? और उनका प्रतिकार क्या है।

।। इति ।।

संक्षिप्त पूजन विधि एवं स्तुति संग्रह

।। श्री गणेशाय नमः ।।

ॐ वक्र तुण्ड महाकाय कोटि सूर्य समप्रभ।
निर्विघ्न कुरु में देव सर्व कार्येषु सर्वदा।।

सर्वप्रथम यजमान नित्य क्रिया से निवृत्त होकर पूजनस्थान को गौ के गोबर (फर्श हो तो धो डालें) से लीपकर गणेश वेदी का निर्माण करें और यजमान पूर्व की ओर मुख करके बैठें (पत्नी को पूजन में दायें बैठाये) और आचार्य उदङ्ग मुख होकर बैठे। और धूप-दीप-प्रज्वलित कर आचमन, प्राणायामादि कर शान्ति पाठ द्वादश गणेश नमस्कार संकल्प कर गणेश पूजन करे।

प्रथमयो: अथ गणपति ध्यानम्–

ध्यान–

गजाननं भूत गणादि सेवितं;
कपित्थ जम्बू फल चारु भक्षणम्।
उमासुतं शोक विनाश कारकं,
नमामि विघ्नेश्वर पाद पङ्जम्।।

पूजन–गँ गणतपये नमः, आवाह्यामि स्थापयामि, पूजयामि, स्नानं समर्पयामि: पंचामृत स्नानं समर्पयामि, स्नानं समर्पयामि, अध: वस्त्रं समर्पयामि, यज्ञोपवीतं समर्पयामि, उपवस्त्रं समर्पयामि, गन्धं समर्पयामि, अक्षतां समर्पयामि, पुष्पं समर्पयामि, दूर्वाङ्कुरान् समर्पयामि,

धूपं आघ्रापयामि, दीपं दर्शयामि, हस्तप्रक्षालम्, नैवेद्यम् निवेदयामि (भोग लगायें) आचमनीयंजलं समर्पयामि, हस्तप्रक्षालनम्, ऋतु फलं समर्पयामि, आचमनीयंजलं समर्पयामी, ताम्बूलं समर्पयामि, द्रव्य दक्षिणां समर्पयामि:।

प्रार्थना करें–

त्वां विघ्न शत्रु दलनेति च सुन्दरेति,
भक्त प्रियेति सुखदेति फल प्रदेति।
विद्या प्रदेत्यघहरेति च येस्तुवन्ति,
तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्य मेव।।

प्रार्थना कर पुष्प छोड़ें।

॥ गौरी पूजन ॥

हेमाद्रि तनयां देवी वरदां शङ्करप्रियाम्।
लम्बोदरस्य जननीं गौरी मावाह्याम्यहम्।।

गौर्यै नम: आवाह्यामि, स्थापयामि पूजयामि, (चन्दन, अक्षत पुष्प इत्यादि से पूजन करें)

प्रार्थना–

य: श्री स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मी:
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धि:।।
श्रद्धा सतां कुल जन प्रभवस्यलज्जा,
तां त्वां नतास्म परिपालय देवि विश्वम्।।

(अक्षत छोड़ें)

॥ कलश पूजन ॥

अस्मिन् कलशे वरुणं सांगं सपरिवारं सायुधं सशक्तिक मावाह्यामि, प्रतिष्ठापयामि, पूजयामि नम:।

पूजन कर प्रार्थना करें–

नमो नमस्ते स्फटिक प्रभाय,
सुश्वेत हाराय सुमङ्गलाय।
सुपाश हस्ताय झषा सनाय,
जलाधिनाथाय नमो नमस्ते।।

(अक्षत छोड़ें)

॥ नवग्रह पूजन ॥

ॐ सूर्यादि नवग्रह देवताभ्यो नम:, आवाह्यामि स्थापयामि, पूजयामि।

पूजन कर प्रार्थना करें–

ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी, भानु: शशी भूमि सुतो बुधश्च।
गुरुश्च शुक्र: शनि राहु केतव: सर्वेग्रहाशान्ति करा भवन्तु।।

(अक्षत छोड़ें)

॥ पंचलोक पाल पूजन ॥

ॐ गणपत्यादि पंच लोकपाल देवताभ्यो नम: आवाह्यामि स्थापयामि पूजयामि। पूजन कर अक्षत छोड़ें।

॥ दश दिक्पाल पूजन ॥

ॐ इन्द्रादिदश दिक्पाल देवताभ्यो नमः, आवाह्यामि, स्थपयामि, पूजयामि।

पूजन कर अक्षत छोड़ें।

॥ षोडश मातृका पूजन ॥

ॐ गौरी पद्माशचीमेधा सावित्री विजया जया।
देव शेना स्वधा स्वाहा मातरो लोक मातरः।
ह्रष्टिः पुष्टिस्तथा तुष्टिः आत्मनः कुल देवता,
गणेशेनाधिका ह्येता वृद्धौपूज्यास्तु षोडश।।

श्री गौर्यादि षोडश मातृकाभ्यो, नमः, आवाह्यामि, स्थापयामि पूजयामि।

पूजन कर अक्षत छोड़ें।

प्रर्थना–

जयन्ती मङ्ला काली भद्रकाली कपालिनी।
दुर्गा, क्षमा, शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोस्तुते।।

अक्षत छोड़े।

॥ श्री महालक्ष्मी पूजन ॥

वन्दे लक्ष्मी परशिवमयी शुद्ध जाम्बूनदाभां।
तेजो रूपां कनकं वसनां सर्व भूषो ज्वलांगीन्।।

ॐ महालक्ष्म्यै नमः आवाह्यामि प्रतिष्ठा पयामि पूजयामि नमः।

नैवेद्य पूर्वक पूजन कर प्रार्थना करें–

भवानित्वं महालक्ष्मीः सर्व काम प्रदायिनी।
सुपूजिता प्रसन्नास्यात् महालक्ष्मि नमोऽस्तुते।।

(अक्षत छोड़ें)

॥ महाकाली (दावात्) पूजन ॥

यह पूजन दीपावली के लिये है–

ॐ महाकाल्यै नमः आवाह्यामि स्थापयामि, पूजयामि नमः।

पूजन कर अक्षत छोड़ें।

॥ बही बसना पूजन ॥

ॐ सरस्वत्यै नमः, आवाह्यामि स्थापयामि, पूजयामि नमः।

पूजन कर अक्षत छोड़ें।

॥ कुबेर पूजा ॥

ॐ कुबेराय नमः आवाह्यामि स्थापयामि, पूजयामि नमः।

पूजन कर अक्षत छोड़ें।

॥ तुला पूजन ॥

ॐ विश्वकर्मणे नमः आवाह्यामि स्थापयामि पूजयामि नमः।

पूजन कर अक्षत छोड़ें।

॥ दीपावली पूजन ॥

ॐ दीपेभ्यो नमः आवाह्यामि स्थापयामि, पूजयामि

चन्द्रमामनसो जास्तश्चक्षोः सूर्य्योऽअजायत।

श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुषा दग्नि रजायत्।।

नैवेद्य पूर्वक– (पूजन कर अक्षत छोड़ें)

प्रार्थना करें–

शुभं करोतु कल्याणं आरोग्यं सुखवर्धनम्।

आत्मतत्वप्रबोधाय दीप ज्योतिर्नमो–स्तुते।।

॥ नवरात्र दुर्गा पूजन ॥

शुद्ध माटी में अक्षवा बालू में जौ या गेहूं रोपण कर उसके मध्य में कलश स्थापित करें। आचमन प्राणायाम पूर्वक संकल्प करें, तत्पश्चात् ब्राह्मण का वरण करें नवग्रह आदि देवों की पूजा कर भगवती के वाहनादि की पूजा कर भगवती श्री दुर्गा जी का पूजन करें।

ॐ भवगती वाहनं पूजयामि नमः।

पूजन कर अक्षत छोड़ें।

॥ भैरव पूजन ॥

ॐ भैरवाय नमः

पूजन कर अक्षत छोड़ें।

॥ देवी पूजन ॥

ॐ नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।

नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रण तास्मताम्।।

ॐ श्री त्रिगुणात्मिका श्री महादुर्गायै नमः, आवाह्यामि, स्थापयामि प्रतिष्ठापयामि, पूजयामि।

पूजन कर प्रार्थना करें।

मन्त्र हीनं क्रिया हीनं भक्ति हीनं सुरेश्वरि।

सत्पूजितं मया देवि परिपूर्णं तदस्तु में।।

अक्षत छोड़ें।

॥ (कन्या) कुमारी पूजन ॥

चन्दन–अक्षत पुष्प से कन्याओं का पूजन करें नैवेद्य लगाकर आरती करें।

कर्पूर गौरं करुणावतारं संसार सारं भुजगेन्द्र हारं।

सदा वसंतं हृदया रविन्दे भवं भवानी सहितं नमामि।।

शीतली करण कर हस्त प्रक्षालन करें।

पुष्पांजलि–

नाना सुगन्धि पुष्पाणि यथा कालोद्भवानिच।

पुष्पांजलिः मयादेव पूजार्थं प्रति गृह्यताम्।।

संक्षिप्त स्तुति संग्रह

॥ देवी स्तुति (शिवा) ॥

कालिका चण्डिका भद्रा चामुण्डा विजया जया।
जयन्ती भद्र काली च दुर्गा भगवतीति च।।

॥ गरुड़ स्तुति ॥

विष्णु पत्राय शान्ताय बल बुद्धि युताय च।
पक्षीन्द्रायाति वेगाय गरुड़ाय नमो नमः।।

॥ हनुमत् स्तुति ॥

उल्लंघ्य सिन्धोः सलिलं सलीलं,
यः शोक वान्हिं जनकात्मजायाः।
आदाय तेनैव ददाह लंका,
नमामि तं प्रांजलि राञ्ज नेयम्।।

॥ ज्योति स्तुति ॥

शुभं करोतु कल्याणं आरोग्यं सुख सम्पदाम्।
आत्म तत्व प्रबोधाय ज्योतिदेवि नमोस्तुते।।

॥ दीप स्तुति ॥

भो दीप देव रूपस्थं कर्म साक्षीह्य विघ्न कृत।
यावत्कर्म समाप्तिः स्यात् तावत्वं सुस्थिरो भव।।

॥ अन्न पूर्णा स्तुतिः ॥

अन्न पूर्णे सदा पूर्णे शंकर प्राण वल्लभे।
ज्ञान वैराग्य सिद्धयर्थं भिक्षां देहि च पार्वति।।

॥ काली स्तुतिः ॥

काली काली महाकाली कालिके परमेश्वरी।
सर्वानन्द करे देवि नारायणि नमोस्तुते।।

॥ विश्वकर्मा स्तुतिः ॥

देव शिल्पिन् महाभाग देवानां कार्य साधकः।
विश्व कर्मन् नमस्तुभ्यं सर्वा भीष्ट प्रदायक।।

॥ भगवान नारायण स्तुतिः ॥

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्म नाभं सुरेशं,
विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं सुभाङ्गम्।
लक्ष्मी कान्तं कमल नयनं योगिमिर्ध्यानगम्यम्।
वन्दे विष्णुं भव भय हरं सर्व लौकैक नाथम्।।

॥ राम स्तुतिः ॥

रामाय राम भद्राय राम चन्द्राय वेध से।
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः।।

॥ सीता स्तुतिः ॥

देवि पद्मालयासाक्षात् अवतीर्णा यदालये।
मिथिला पतये तस्मै जनकाय नमो नमः।।

॥ कृष्ण स्तुतिः ॥

वसु देव सुतं देवं कंश चाणूरमर्दनम्।
देवकी परमानन्दं, कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्।।

॥ राधा स्तुतिः ॥

नारायणि महामाये विष्णु माये सनातनि।
प्राणाधिदेव कृष्णस्य मामुद्धर भवार्णवात्।।

॥ शीतला स्तुतिः ॥

शीतले त्वं जगन्माता शीतले त्वं जगत्पिता।
शीतले त्वं जगद्धात्री शीतलायै नमो नमः।।

॥ पीपल स्तुतिः ॥

अश्वत्थ हुत भुग्भाव गोविन्दस्य सदाप्रिय।
अशेषं हर मे पापं वृक्ष राज नमोस्तुते।।

॥ तुलसी स्तुतिः ॥

तुलसि श्री सखि शुभे पापहारिणि पुण्यदे।
नमस्ते नारद नुते नारायण मनः प्रिये।।

॥ कुमारी स्तुतिः ॥

जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये सर्व शक्ति स्वरूपिणि।
पूजां गृहाण कौमारि जगन्मातर्नमोस्तुते।।

॥ नद्याः स्तुतिः ॥

गङ्गे च यमुने चैवं, गोदावारि सरस्वती।
नर्मदे सिन्धु कावेरि, क्षम्यतां परमेश्वरी।।

॥ गौ स्तुतिः ॥

गावो में अग्रतः पान्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः।
गावो में हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाभ्यहम्।।

॥ भागवत स्तुतिः ॥

श्री मद्भागवता ख्योयं प्रत्यक्षः कृष्ण एवहि।
स्वीकृतोसि मयानाथ मुक्तार्थं भव सागरे।।

।। इति स्तुति संग्रहः ।।

जीवनोपयोगी कुछ मन्त्रोपयोग

॥ पुत्र प्राप्ति उपाय मन्त्र ॥

एक बार भूपति मन मांही।
भई ग्लानि मोरे सुत नाहीं॥

विधि–तुलसी दास कृत "रामचरित मानस" में जहां यह चौपाई हो वहीं से रामायण का पाठ आरंभ और इसी चौपाई पर समापन करें तथा इसी चौपाई का सम्पुट पूरे रामायण में करें।

॥ हनुमत् कृपा प्राप्ति उपाय ॥

विधि–आप 108 तुलसीदल तोड़ लें एक तुलसी की लकड़ी की कलम बनाकर चन्दन घिसकर सब पत्तों पर सीता राम लिखकर रख रखें। जब चन्दन सूख जाय तब माला बना लें, या पत्ते की डंडी में धागा लगाकर या वैसी ही जाकर हनुमान जी की मूर्ति में चढ़ा दें और अपनी मनोकामना सुना दें। हो सके तो रोज चढ़ावें नहीं तो मंगल और शनि वार को चढ़ायें हनुमान जी के ऊपर जितना श्रद्धा विश्वास होगा कृपा उतनी ही जल्दी होगी।

॥ रोग नाशक उपाय ॥

मन्त्र–
ॐ रोगानशेषानपहंसि तुष्टा रुष्टा तुकामान् सकलानभीष्टान्।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां त्वामा श्रिता ह्या श्रयतां प्रयान्ति॥

विधि–प्रतिदिन देवी प्रतिमा को पुष्प चढ़ाकर इस मन्त्र का 108 बार जप करें फल शीघ्र ही मिलेगा।

॥ आर्थिक संकट निवारण श्री लक्ष्मी गायत्री मन्त्र ॥

ॐ ह्रीं महालक्ष्मी च विद्महे विष्णु पत्नी च धीमहि
तन्नो लक्ष्मीः प्रचो दयात्।

॥ दरिद्रता नाशक मन्त्र ॥

श्री ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं, विघ्नेश्वराय नमः।
मम दारिद्र्य नाशं कुरु कुरु स्वाहा॥

विधि–उपर्युक्त मन्त्रों का जप ज्योति जला कर करें जप संख्या 1,00,000 (एक लाख) लक्ष्मी जी की कृपा जल्दी प्राप्त होगी।

॥ शत्रु शान्ति उपाय ॥

जाके सुमिरन ते रिपु नासा। नाम शत्रुघन वेद प्रकाशा।
इस चौपाई को सम्पुट लगाकर पूरे रामायण का पाठ करें–

॥ मुकदमा जीतने का मन्त्र ॥

रिपु स्वः जीति सुजय सुर गावत।
सीता सहित अनुज प्रभु आवत॥

निर्देश–पूरे रामायण में सम्पुट लगाकर पाठ करें।

॥ कन्या विवाह के लिये उपाय ॥

विधि–कन्या को चाहिये कि वह नहा–धोकर शंकर जी के ऊपर एक लोटा जल चढ़ाकर गिरिजा जी के माथे में सिन्दूर लगाकर पूजन करें और रामायण के 335 नं. दोहे से (गई भवानी भवन बहोरी से) लेकर 336 नं. तक (वाम अंग फर कन लगे)। यहां तक नित्य पाठ करें।

सफलता शीघ्र ही प्राप्ति मिलेगी।

॥ व्यापार वृद्धि मन्त्र ॥

विश्व भरण षोषन कर जोई। ताकर नाम भरत असि होई।

निर्देश–तुलसीकृत रामायण में हर दोहे के बाद सम्पुट लगाकर नित्य पाठ करें।

या

ॐ सिद्धि बुद्धि प्रदे देवि भुक्ति मुक्ति प्रदायिनी।
मन्त्र पूते सदा देवी महालक्ष्मी नमोस्तुते।।

इस मन्त्र का 108 बार अगरबत्ती लगाकर दुकान या फैक्ट्री में जाप करें।

॥ ब्लडप्रेशर एवं वायु विकार निवारण हेतु मन्त्र ॥

मन्त्र ॐ वन वज्र हस्ताभ्यां नमः।।

प्रतिदिन 108 जप करें, कुल जाप संख्या 1,00,000 है।

॥ कन्या विवाह के लिये दूसरा साधन ॥

निर्देश–रोजाना कन्या गिरिजा पूजन कर 11 माला या 3 माला नित्य करे।

मन्त्र–

हे गौरी शंकरर्धाङ्गि, यथात्वंशंकर प्रियः।
तथा मां कुरु कल्याणि, कान्त कान्तां सुदुर्लभाम्।।

अथवा

कात्यायनि महामाये महायोगिन्य धीश्वरि।
नन्द गोप सुतं देहि पतिं में कुरुते नमः।।

॥ क्लेश निवारण मन्त्र ॥

निर्देश–भगवान श्री कृष्ण प्रतिमा के समक्ष निम्नलिखित मन्त्र का 108 बार पाठ करने से क्लेश का विनाश होता है–

ॐ कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने।
प्रणतः क्लेश नाशाय गोविन्दाय नमो नमः।।

॥ आर्थिक व मानसिक संकट निवारण ॥

मन्त्र–

ॐ नमः शिवाय शुभं शुभं कुरु कुरु शिवाय नमः ॐ।

विधि–भगवान विष्णु द्वारा विरचित यह मन्त्र भगवान शंकर को प्रसन्न करने हेतु देवताओं को बताया था–''यह सावर मन्त्र कहलाता

है।'' इसका सदुपयोग करें दुरुपयोग न करें नहीं तो परिणाम उल्टा हो सकता है। इस मन्त्र को नित्य दीपक जलाकर तीन माला या ग्यारह माला जपें आपका आर्थिक या मानसिक कष्ट जल्दी दूर होगा।

॥ विद्या प्राप्ति उपाय ॥

चौ. मन्त्र–

गुरु गृह गये पढ़न रघुराई। अल्प काल विद्या सब आई।
मोरे हित हरि सम नहिं कोऊ। एहि अवसर सहाय सोइ होऊ।।
मोर सुधा रहिं सो सब भांती। जासु कृपा नहिं कृपा अघाती।
जेहिं पर कृपा करहिं जन जानीं। कवि उर अजिर नचावहिं बानी।।

निर्देश–इन चारों चौपाइयों को विद्यालय जाने से पहले एवं पेपर, देने के पहले और भी नित्य कम से कम 27 बार जाप कर लें।

और– ''ॐ श्रीं ह्रीं वाम सरस्वत्यै स्वाहा''

इस मन्त्र को रोजाना 108 बार जप करें। सरस्वती माँ की शीघ्र कृपा होगी।

चेतावनी–उक्त पूजन या स्तुति और मनोकामना सिद्ध मन्त्रों का जाप वही करें जो शकाहारी हो। यदि विपरीत हों तो नहीं करें नहीं तो उल्टा परिणाम हो सकता है। हमेशा श्रद्धा और विश्वास से करें, जितनी प्रगाढ़ श्रद्धा होगी उतनी ही जल्दी मनोकामना सिद्ध (पूर्ण) होगी।

॥ इति ॥

॥ व्रत और उपवास ॥

संकल्पपूर्वक दृढ़ निश्चय के साथ क्रिया विशेष द्वारा जो अनुष्ठान किया जाये, उसे व्रत कहा जाता है, हमारे शास्त्रों में जिन-जिन व्रतों का वर्णन किया गया है वे कभी न कभी किसी ऋषि महर्षि महापुरुष साधक के द्वारा किये गये अनुष्ठान ही हैं। उनसे सम्बन्धित कथाओं में बताया गया है कि सर्वप्रथम इस व्रत को कैसे किया तथा उसे किस अभीष्ट फल की प्राप्ति हुई। इसलिये वर्तमान समय में भी वह व्रत करणीय है। व्रतोपवास का न केवल दृष्ट फल ही है। अपितु इससे कर्ता का शुभ अदृष्ट फल भी बनता है, दृढ़ निश्चय के लिये संस्कृत में संकल्प नाम दिया गया है। किसी भी व्रत का अनुष्ठान करने अथवा नियम लेने के लिये दृढ़ इच्छा शक्ति की आवश्यकता होती है। हमारे यहां इसीलिये किसी भी शुभ कार्य को प्रारंभ करते समय विधान किया गया है। मनु महाराज का कथन है–

संकल्पमूलः कामो वै यज्ञाः संकल्पसम्भवाः।
व्रतानि यमधर्माश्च सर्वे संकल्पजाः स्मृताः।।

जो भी कामना की जाती है, उसके मूल में एक संकल्प रहता है यज्ञ भी संकल्प से संभव होते हैं, व्रत नियम और धर्म सभी संकल्प जनित होते हैं। संकल्प ही कार्य में प्रधान होता है। इसलिये दीर्घकाल तक उपासना करने योग्य कार्यकलाप को जो एक निश्चत संकल्प के साथ किया जाये इसे व्रत कहा गया।

कुछ साधक अपने इष्ट देव की तिथि को उपवास भजन पूजन

का विशेष व्रत रखते हैं। विष्णुभक्त प्रति मास की दोनों एकादशी, शिवभक्त महाशिवरात्रि और गणेशभक्त चतुर्थी को व्रत रखते हैं। किसी कामना विशेष की पूर्ति के लिये जो अनुष्ठान किया जाये उसे भी व्रत कहा जाता है। क्योंकि कर्ता उस अनुष्ठान की अवधि में कुछ विशेष नियमों का पालन करता है। इसी प्रकार ब्रह्मचारी के लिये उपनयन संस्कार के समय से लेकर समावर्तन-संस्कार के समय तक कुछ यम-नियमों का पालन करता होता है, इसलिये उसका नाम ही व्रतवन्ध प्रचलित हुआ।

उपवास—समीं पता बोधक अव्यय है। इसलिये उपवास का शाब्दिक अर्थ होता है। समीप में वास। अभिप्राय यह है कि उपवास के द्वारा साधक अपने इष्ट की निकटता का अनुभव करें भौतिक धरातल आगे आध्यात्मिक स्तर का अनुभव करें। मन और इन्द्रियों से आगे आत्म-साक्षात्कार की ओर अग्रसर हो विधिपूर्वक उवपास करने से शरीर के अनेक विकार दूर होते हैं। वात, पित्त और कफ की विषमता से उत्पन्न होने वाले सभी रोग बिना औषधि सेवन से ठीक हो जाते हैं। आलस्य और थकान दूर होकर स्फूर्ति का अनुभव होता है। असन्तुलित आहार के कारण शरीर जो एक बोझ का अनुभव करता है, वह उपवास से दूर होता है। उपवास से शरीर में एक हल्कापन अनुभव होता है। इतना होने पर भी उपवास साध्य नहीं साधना मात्र ही माना जाना चाहिये। चित्तप्रसाद की स्थिति से जो चिन्तन किया जाएगा वह परिणाम में सुखावह ही होता है। ध्यान की एकाग्रता प्राप्त होती है। विचार शक्ति सद्भावना से पूर्ण होती

है। मन की एकाग्रता से ईश्वर के चिन्तन, मन में अधिक समय तक लीन रहने की इच्छा जाग्रत होती है।

वतोपवास धर्म के अङ्गरूप ही है, व्रतोपवास में दक्ष लक्षणात्मक धर्मस्वरूप का अनुपालन अति आवश्यक है अन्यथा केवल व्रताभाल ही होगा। महाराज मनु ने धर्म के दस लक्षण इस प्रकार बताये हैं।

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

अर्थात् धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, धी, विद्या, सत्य और अक्रोध ये धर्म के दस लक्षण है—

1. **धृति**—धृति का अर्थ केवल धैर्य नहीं है गीता में कहा गया है धृत्या यथा-धारयते मनः प्राणेन्द्रियक्रियाः। जिसके द्वारा मन प्राण और इन्द्रियों के व्यापार की, कार्य कलाप को नियन्त्रित किया जाये उसे 'धृति' कहा गया है। व्रतोपवास के लिये कर्ता में धृति गुण का होना आवश्यक है।
2. **क्षमा**—अपराध करने वाले को क्षमा करना मात्र सामान्य क्षमा है। यदि कोई व्यक्ति शत्रुता का व्यवहार करता है, तो उसे क्षमा करना ही वास्तविक क्षमा कहा जायेगा। जिसमें क्षमा करने का गुण होगा, वह किसी के प्रति भी मन में दुर्भावना नहीं रखेगा। अपकारी का भी उपकार करना या द्वन्दों की सहिष्णुता यह क्षमा के व्रत का प्रभाव है। व्रत कर्ता को इस नियम को विशेष रूप से अपने में प्रतिष्ठित करना चाहिये

3. **दम**—आत्मसंयम का बोधक है। कालिदास ने कहा है कि विकार हेतौ सति विक्रियन्ते 'येषां न चेतासि त एव धीराः' मनोविकार का कारण उपस्थित होने पर भी चित्त में विकार न आना दम है। अन्यत्र कहा गया है कि कुत्सितात् कर्मणो विप्र यच्च चिंत्तानिवारणम्। सकीर्तितो दमः के अनुसार मन यदि किसी कुत्सित कर्म की ओर प्रवृत्त होता है तो उसे रोकना ही 'दम' है।

4. **अस्तेय**—अस्तेय का शाब्दिक अर्थ होता है—चोरी न करना। परायी वस्तु की प्राप्ति के लिये मन में लालच न हो अस्तेय है। जो दूसरे का प्राप्य है उसे किसी प्रकार हथियाने की चेष्टा भी मानसिक स्तेय की परिभाषा में आता है।

5. **शौच**—मन वचन और कर्म से पवित्र रहना शौच के अन्तर्गत आता है। इससे मुख्य रूप से अन्तः शौच तथा ब्राह्यशौच दोनों परिग्रहीत हैं। सब प्रकार की शुचिता ही शौच है। व्रत कर्ता हैं द्रव्य शुद्धि, भाव शुद्धि तथा क्रिया शुद्धि ये तीनों अपरिहार्य हैं।

6. **इन्द्रियनिग्रह**—पांच ज्ञानेन्द्रियां और पांच कर्मेन्द्रियां तथा मन को मिला कर इन्द्रिया ग्यारह होती है। इन इन्द्रियों के विषय भी अलग-अलग हैं। आंख का काम देखना, कान का सुनना, नांक का सूंघना त्वचा का स्पर्श और रसना का स्वाद ग्रहण करना है। इसी प्रकार हाथ-पांव आदि कर्मेन्द्रियों के भी अलग- अलग विषय हैं। इन्द्रियों का उनके सम्बन्धित विषयों

से अपहरण ही इन्द्रिय निग्रह कहा गया है। गांधी जी के तीन बन्दरों की कहानी प्रसिद्ध है—एक बन्दर मुंह पर हाथ रखे दिखाया गया था, दूसरा आंखों पर हाथ रखकर और तीसरा कानों पर हाथ रखकर उन्हें बंद किये हुये था। तात्पर्य यह था कि अप्रिय वचन बोलने की अपेक्षा मुंह बंद रखना अच्छा है आंखों से बुरा मत देखो, उस ओर से नेत्र बन्द कर लो, कानों से बुरी बातें न सुनो वैदिक ऋषि इसलिये प्रार्थना करते हैं। भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः हम जीवन यात्रा में प्रवृत्त होकर कानों से भली बात ही सुने आंखों से भला ही देखे इससे अन्यथा का दुष्परिणाम भी बताया गया है।

कुरंगमातंगतमृगमीना हताः पञ्चभिरेव पञ्च।

अर्थात् मृग श्रवण सुखद ध्वनि नाद पर रीझकर बन्धन में पड़ता है। हाथी स्पर्श सुख के मिथ्या लोभ में पड़कर गड्ढ़े में गिरता है। भौरा गन्ध से आकृष्ट होकर बन्धन में पड़ता है। और मीन मछली स्वाद के पीछे बधिर के कांटे में बिंधकर जान देती है। जब साधारण जीव जन्तु एक-एक इन्द्रिय के आकर्षण में फंसकर प्राणों से हाथ धो देता है तब मनुष्य जीव इन पांचों इन्द्रियों के आकर्षण में फंसेगा उसकी क्या दशा होगी इसलिये इन्द्रिय निग्रह के द्वारा रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द के आकर्षण से बचना चाहिये।

7. **धी**—विवेक बुद्धि को धी कहा गया है। गायत्री मन्त्र में भी

आया है—धियो यो नः प्रचोदयात् जो हमारी बुद्धि को असत् से सत् की ओर प्रवृत करे।

8. **विद्या**—स विद्या या विमुक्त ये 'विद्या वह है जो व्यक्ति को बन्धनों से मुक्त कराने वाली हो तथा तत्वज्ञान कराने वाली हो व्रत कर्ता के लिये आवश्यक है कि वह असत् विद्या का परिहार कर सत् विद्या का आश्रय करें।

9. **सत्य**—कार्य में छल-कपट से रहित व्यवहार और वाणी में मधुर एवं सच बोलना ''सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्''। सत्य बोले, प्रिय वचन बोले किन्तु ऐसा सत्य बोलें जो सुनने वाले को अप्रिय न लगे किसी के मन को चोट पहुंचाने वाली बात यदि सत्य भी हो ऐसे कथन से बचना चाहिये।

10. **अक्रोध**—साधक ही नहीं सामान्य व्यक्ति के लिये भी क्रोध करना हानिकारक है। उसका विवेक नष्ट हो जाता है। व्यक्ति के लिये क्रोध हानिकारक है। उसका विवेक नष्ट हो जाता है, क्रोध में उसे न तो स्वयं की हानि का ध्यान रहता और न दूसरे की, क्रोधी व्यक्ति का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, हृदय रोग हो सकता है। अधिक क्रोध करने वाले की उम्र कम हो जाती है। बल, वीर्य का ह्रास होने लगता है प्राण शक्ति क्षीण होने लगती है अतः कारण उपस्थित होने पर भी क्रोध न करने का अभ्यास डालना चाहिये।

मनु ने इन्हें धर्म के दस लक्षण कहा है पर वास्तव में इनमें से

एक को भी जीवन में उतारा जा सके तो वह साधक महान् संत बन सकता है। इन नियमों के पालन करने का व्रत ही वास्तव में सर्वोत्तम व्रत है।

॥ इति ॥

॥ सन्ध्या का विधान ॥

प्रातःकाल सूर्योदय से पहले और सायंकाल सूर्यास्त के समय सन्ध्या का समय माना गया है। परन्तु यदि कार्यवश समय न सध सके तो कर्म तो अवश्य होना चाहिये। कार्यवशात् काल लोप हो जाय परन्तु कर्म लोप न हो।

रात्रि और दिन में अज्ञान से जो पाप बन गये हों, वे सब त्रिकाल सन्ध्या करने से नष्ट हो जाते हैं।

व्रतों के मुख्य भेद एवं उनसे त्रिविध लाभ

किसी सत्विक लक्ष्य को सामने रखकर विशेष संकल्प के साथ लक्ष्य सिद्धि के लिये की जाने वाली क्रिया विशेष का नाम व्रत है। व्रत-प्रकृति और निवृत्ति भेद से दो प्रकार के और नित्य नैमित्तिक एवं काम्य भेद से तीन प्रकार के होते हैं–

द्रव्य विशेष अर्थात् भोजन तथा पूजादि द्वारा सहायक व्रत प्रकृतिमूलक और केवल उपवासादि द्वारा साहयक व्रत निवृत्ति मूलक है। ये दोनों ही प्रकार के व्रत पुनः लक्ष्य भेद से तीन प्रकार के होते हैं। यथा नित्य नैमित्तिक और काम्य। एकादशी आदि व्रत जिनके न करने से प्रत्यवाय होता है, उन्हें नित्य कहते हैं।

एकादशी अदि व्रत जिनके न करने से प्रत्यवाय होता है। उन्हें नित्यव्रत्य कहते हैं। पापक्षय अदि निमित्त को लेकर अनुष्ठित चान्द्रायण अदि नैमित्तिक व्रत हैं। किसी विशेष तिथि में अनुष्ठित सावित्री व्रत आदि को काम्यव्रत कहा जाता है। इस प्रकार धर्म शास्त्रों में व्रतों के विभिन्न भेद कहे गये हैं। इससे अतिरिक्त कायिक और मानसिक भेद से भी व्रत के दो भेद होते हैं–अहिंसा सत्य अस्तेय, ब्रह्मचर्य ये सब मानस व्रत हैं तथा भोजन अयाचित नियम तथा शारीरिक तप आदि कयिक व्रत हैं। इन व्रतों द्वारा मनुष्य पाप मुक्त होकर पुण्य प्रभाव से उत्तम गति लाभ प्राप्त करते हैं। शुक्ल पक्ष की विभिन्न तिथियों को चन्द्रमा की विभिन्न कलाओं का प्रभाव पृथ्वी और जीवों पर चन्द्रमण्डल द्वारा और कृष्ण पक्ष की विभिन्न तिथियों को

सूर्य मण्डल द्वारा पड़ा करता है। इससे अतिरिक्त नक्षत्र लोक का भी प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार इन व्रत विधानों का वैज्ञानिक आधार है। ये व्रत पर्व शरीर को प्रभावित करते हैं। विधिपूर्वक व्रतानुष्ठान होने पर शरीर, मन और बुद्धि तीनों का अथवा आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक त्रिविध कल्याण होता है। काम, क्रोध, लोभ और मोह की वृत्ति मनुष्यों में स्वाभाविक होने के कारण पाचन शक्ति से अधिक भोजन मनुष्य प्रायः कर लेता है। वही अन्न अपच उपजाता हुआ अनेक प्रकार की व्याधियां उत्पन्न करता है। व्रत के पूर्व दिन व्रतों के बीच में या व्रत के बीच में या व्रत के दिन जो उपवास फलाहार लघु आहार या आहार संयम की विधियां हैं, उनमें आनायास ही पाकयन्त्र को विश्राम मिल जाता है, तथा अपक्व अन्न पचकर शरीर को स्वस्थ बना देता है, यह आधिभौतिक लाभ है।

नित्य नैमित्तिक काम्य–इन सभी व्रतों में ज्ञानेन्द्रिय, कमेन्द्रिय और मनका संयम तथा विविध प्रकार की तपस्याओं का विधान है फिर समस्त संयम या तप, निष्काम भाव से अनुष्ठति होने पर आत्मोन्नति का कारण बनता है और सकाम भाव से अनुष्ठित होने पर विविध विभूतियों को प्रदान करता है। ये व्रतों के अधिदैविक लाभ हैं। हमारे धर्म ग्रन्थों में व्रतोपवास सम्बन्धी जिन अनुष्ठानों का विधान है, उनसे आत्मा का प्रचुर कल्याण होता है। बाहरिन्द्रियों और अन्तरिन्द्रियों संयम, यम, नियम, ब्रह्मचर्य, सदाचार सात्विक आहार विहार ये व्रत के प्राण हैं। इनके पालन के लिये बिना व्रत

में सफलता नहीं हो सकती साथ ही ये सब अनुष्ठान आध्यात्मिक उन्नति के भी मूल यन्त्र हैं।

नित्य नैमित्तिक एवं काम्य–तीनों व्रतों में ही प्रायश्चित आदि कितने ही शरीर तथा मनोनिग्रह के विधान हमारे महर्षियों ने बताये हैं। जिनके द्वारा अन्त:करण निर्मल होकर शरीर भगवत् प्राप्ति के योग्य हो जाता है। फिर आहार निवृत्ति से विषयनिवृत्ति भी होती है। और विषयनिवृत्ति ही मुक्ति का द्वार है। व्रतों में निराहार स्वल्पाहार का विशेष विधान हैं। अत: उनमें आहार निवृत्ति के द्वारा विषय निवृत्ति करके मुक्ति पंथ प्रशस्त करने के उपाय बताये गये हैं।

एकाग्रचित् से इष्ट ध्यान तथा इष्ट जप करना प्रत्येक व्रत में विशेष रूप में विहित है। दृष्टि में चित्त के एक ज्ञान को जाने का नाम ध्यान है। और उससे आत्मा प्रत्यक्ष हो जाती है, ध्यान के द्वारा ध्येय में चित्त निविष्ट होता है। अनुराग तथा प्रेमभक्ति पूर्वक निविष्ट चित्त से ध्येय देव का ध्यान करते हैं। और देवता के दर्शन होते हैं। इष्ट देव के दर्शन से समस्त पाप कट जाते हैं। और अन्त:करण निर्मल होकर स्वरूप में स्थित हो जाता है।

ध्यान के अन्त में ध्याता और ध्येय की एकता होने पर समाधी लग जाती है, और समाधी में अन्त:करण परमात्मा में तल्लीन हो जाने पर आनन्दमय आत्मा को निरतिशय असीम आनन्द मिलने लगता है।

सुखमात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धिग्राहामतीन्द्रियम्।
यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं तत:।।

वह असीम आनन्द इन्द्रियों से अतीत योग बुद्धि से अनुभव करने योग्य है, उसके पाने से संसार को कोई वस्तु इससे अधिक उत्तम नहीं मालूम पड़ती यही मनुष्य का अन्तिम सर्वोत्तम प्राप्तव्य पदार्थ है। व्रत के आध्यात्मिक लाभ से उपास नारायण व्रती को यह अनोखा लाभ मिलता है। इस प्रकार व्रतानुष्ठान के द्वारा आधिभौतिक आधिदैविक तथा आध्यात्मिक त्रिविध कल्याण की प्राप्ति होती है।

।। इति ।।

।। वेद मन्त्रों में त्रुटि नहीं होनी चाहिए ।।

वैदिक मंत्रों के उच्चारण में जरा सी त्रुटि हो जाने से अभिप्रेत अर्थ से विपरीत अर्थ का बोध हो सकता है।

"एक: शब्द: स्वरतो वर्णतो वा।
मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थ माह।।

वेद मंत्र के एक शब्द का भी यदि ठीक प्रयोग न हुआ या उसके स्वर, मात्रा या अक्षर के उच्चारण में त्रुटि हो गई, तो उससे अभीष्ट अर्थ का प्रतिपादन नहीं होता।

॥ पुंसवन व्रत ॥ (पुत्र प्राप्ति के लिए)

सभी पुराणों में श्रीमद्भागवत महापुराण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। यह महापुराण अपनी ज्ञान-गरिमा के द्वारा युगों से मानव का सन्मार्ग-दर्शन करता आ रहा है। श्री मद्भागवत को विद्वता की कसौटी माना जाता है 'विद्यावतां भागवते परीक्षा' यह महापुराण अपने अनुपम काव्य-सौंदर्य, शब्द माधुरी, अर्थ-गाम्भीर्य एवं भक्ति के कारण पुराण-उपवन में 'कल्पतरु' के समान सुशोभित है।

श्री मद्भागवत के षष्ठ स्कन्ध के अठारहवें तथा उन्नीसवें अध्याय में पुंसवन व्रत संबंधी मरुद्गणों की उत्पत्ति का आख्यान इस व्रत का स्वरूप, विधि एवं माहात्म्य सविस्तार वर्णित है, जिसका सार यहां संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

मरुद्गणों की उत्पत्ति का आख्यान

एक समय की बात है, राजा परीक्षित श्री शुकदेव जी से प्रश्न करते हैं, भगवन्! मरुद्गण ने ऐसा कौन सा सत्कर्म किया था, जिसके कारण वे अपने जन्म प्रात असुरोचित भाव को छोड़ सके और देवराज इन्द्र के द्वारा देवता बना दिए गये?

तभी शुकदेव जी ने राजा परीक्षित के प्रश्न का उत्तर इस प्रकार दिया–

भगवान विष्णु ने इन्द्र का पक्ष लेकर दिति के दोनों पुत्रों हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष को मार डाला था। अत: दिति शोकाग्नि से उद्दीप्त

क्रोध में जलती हुई सोचने लगी–'इन्द्र बड़ा क्रूर तथा निर्दयी है। उसने अपने भाइयों को ही मरवा डाला। अब मैं वह उपाय करूंगी, जिससे मुझे ऐसा पुत्र प्राप्त हो, जो इन्द्र का घमण्ड चूर कर दे। दिति अपने मन में ऐसा विचार करके अपने पति देव कश्यप जी की सेवा-सुश्रूसा कर प्रसन्न रखने लगी। कश्यप जी दिति की सेवा से मोहित हो गये और उन्होंने उससे कहा–प्रिये! मैं तुम पर प्रसन्न हूं, तुम जो चाहो, वर मांग लो।'

दिति ने कहा– ब्रह्मन! इन्द्र ने विष्णु के द्वारा मेरे दोनों पुत्रों को मरवाकर मुझे पुत्रहीन बना दिया इसलिए यदि आप मुझे वर देना चाहते हैं तो कृपया एक अमर पुत्र दीजिए, जो इन्द्र को मार डाले।' दिति की बात सुनकर कश्यप जी खिन्न होकर पछताने लगे। वे विचार करने लगे, 'मैं वर देने का वचन दे चुका हूं। मेरी बात असत्य नहीं होनी चाहिए, परन्तु इन्द्र भी वध करने के योग्य नहीं है। अच्छा, अब मैं इस विषय में यह युक्ति करता हूं, इस प्रकार विचार करके उन्होंने दिति से कहा–

कल्याणि! यदि तुम पुंसवन–व्रत का एक वर्ष तक विधि पूर्वक पालन करोगी तो तुम्हें इन्द्र को मारने वाला पुत्र प्राप्त होगा। परन्तु यदि किस प्रकार नियमों में त्रुटि हो गई तो वह देवताओं का मित्र बन जायेगा।'

दिति ने कहा–ब्रह्मन्! मैं उस व्रत का पालन करूंगी। आप बतलाइए कि मुझे क्या-क्या करना चाहिए, कौन-कौन से कार्य छोड़ देने चाहिए और कौन-कौन से कार्य ऐसे हैं, जिनसे व्रत भंग

नहीं होता।

पुंसवन-व्रत का स्वरुप—कश्यप जी ने कहा-देवि इस व्रत में किसी भी प्राणी को मन, वाणी या क्रिया के द्वारा सताना नहीं चाहिए। किसी को शाप या गाली नहीं देनी चाहिए तथा झूठ नहीं बोलना चाहिए शरीर के नख और रोएं नहीं काटने चाहिए, और न ही किसी अशुभ वस्तु का स्पर्श करना चाहिए, निर्वस्त्र होकर जल में स्नान न करें, क्रोध न करें दुर्जनों से बातचीत न करें, बिना धुला वस्त्र न पहने तथा किसी की पहली हुई माला न पहनें।

जूठा न खाय, शूद्र का लाया हुआ और रजस्वला का देखा हुआ अन्न भी न खाये और अंजली से जलपान न करें।

बिना पैर धोए, अपवित्र अवस्था में, गीले पैरों से उत्तर या पश्चिम की ओर सिर करके, दूसरे के साथ, नग्नावस्था में तथा सायं प्रातः सोना नहीं चाहिए।

इस प्रकार इन निषिद्ध कर्मों का त्याग करके सर्वदा पवित्र रहें।

प्रातः काल जलपान करने के पहले ही गाय ब्राह्मण, लक्ष्मी जी एवं भगवान् नारायण की पूजा करें।

इसके उपरान्त पुष्प माला, चन्दन आदि सुगन्ध द्रव्य नैवेद्य तथा आभूषण आदि से पूजा करें। और पति की पूजा करके उनकी सेवा में संलग्न रहें और यह भावना करती रहें कि पति का तेज मेरी कोख में स्थित है।

दिति अत्यन्त मनस्विनी और दृढ़ निश्चय वाली थी उसने ''बहुत अच्छा'' कहकर कश्यप जी की आज्ञा स्वीकार कर ली वह अपनी

कोख में भगवान कश्यप का वीर्य तथा जीवन में उनके द्वारा प्रतिपादित व्रत धारण करके बड़ी सावधानी पूर्वक नियमों का पालन करें।

देवराज इन्द्र अपनी मौसी दिति का अभिप्राय जानकर बड़ी बुद्धिमानी से अपना वेश बदलकर उसके आश्रम पर आए और दिति के व्रत पालन की त्रुटि पकड़ने के लिए उसकी सेवा करने लगे।

दिति व्रत के नियमों का पालन करते-करते बहुत दुर्बल हो गई थी विधाता ने भी उसे मोह में डाल दिया, इसलिए एक दिन संध्या के समय जूठे मुंह बिना आचमन किए और बिना पैर धोए ही वह सो गई। योगेश्वर इन्द्र अवसर पाकर योगमाया से सोयी हुई दिती के गर्भ में प्रवेश कर गए। उन्होंने वहां जाकर सुवर्ण के समान चमकते हुए गर्भ के वज्र से सात टुकड़े कर दिये।

जब वह गर्भ रोने लगा, तब देवराज ने मत रो, मत रो यह कहकर सातों टुकड़ों में से प्रत्येक के पुनः सात-सात टुकड़े कर दिए तब उन टुकड़ों ने हाथ जोड़कर इन्द्र से कहा—देवराज! तुम हमें क्यों मार रहे हो? हम तो तुम्हारे भाई मरुद्गण है।

इन्द्र ने मरुद्गण से कहा—अच्छी बात है तुम लोग मेरे भाई हो अब मत डरो, इस प्रकार भगवान श्री हरि की कृपा से दिति का गर्भ वज्र के द्वारा टुकड़े-टुकड़े होने पर भी मरा नहीं क्योंकि दिति ने लगभग एक वर्ष तक भगवान नारायण की तपस्या की थी अब वे उनचास मरुतगण इन्द्र से मिलकर पचास हो गए।

इन्द्र ने भी सौतेली माता के पुत्रों के साथ शत्रु भाव न रखकर

उन्हें सोमपायी देवता बना लिया, जब दिति की आंखें खुलीं, तब उसने देखा कि उसके अग्नि के समान तेजस्वी उनचास बालक इन्द्र के साथ हैं, उसने इन्द्र से पूछा बेटा! मैं इस इच्छा से इस अत्यन्त कठिन व्रत का पालन कर रही थी कि तुम अदिति के पुत्रों को भयभीत करने वाला पुत्र उत्पन्न हो। मैंने केवल एक ही पुत्र के लिये संकल्प किया था, फिर ये उनचास पुत्र कैसे हो गये।

इन्द्र ने कहा—माता मुझे इस बात का पता चल गया था कि तुम किस उद्देश्य से व्रत कर रही हो? इसलिये अपना स्वार्थ सिद्ध करने के उद्देश्य से मैं स्वर्ग छोड़कर तुम्हारे पास आया। मेरे मन में तनिक भी धर्म भावना नहीं थी। इसलिये तुम्हारे व्रत में त्रुटि होते ही मैंने उस गर्भ के टुकड़े कर दिये। किन्तु वे मरे नहीं बल्कि उनचास बालक बन गये। यह परम आश्चर्यमयी घटना देखकर मैंने ऐसा निश्चय किया है, कि परमपुरुष भगवान् की उपासना की यह कोई स्वाभाविक सिद्धि है, जो लोग निष्काम भाव से भगवान की आराधना करते हैं वे ही अपने स्वार्थ और परमार्थ में निपुण हैं। हे मां मैंने मूर्खतावश बड़ी दुष्टता की है, तुम मेरे अपराध को क्षमा करो। माता दिति इन्द्र के शुद्ध भाव से सन्तुष्ट हुई आज्ञा प्राप्त किया और स्वर्ग लोक में चले गये।

राजा परीक्षित के पूछने पर शुकाचार्य स्वामी ने पुंसवन विधि को बताया।

पुंसवन व्रत विधि

सर्वप्रथम स्त्री को अपने पति से आज्ञा ले मार्गशीर्ष शुक्ल प्रतिपदा से इस व्रत को आरंभ करना चाहिये।

पहले मरुद्गणों की कथा सुनकर ब्राह्मणों से आज्ञा लेनी चाहिये तदुपरान्त प्रति दिन नित्य क्रिया से सम्पन्न हो शुद्ध वस्त्राभूषण धारण करें।

प्रात:काल कुछ खाने से पहले भगवान् लक्ष्मी नारायण की पूजा करते हुए प्रार्थना करनी चाहिये।

हे प्रभू आप पूर्ण काम हें, तथा निरपेक्ष हैं, आप समस्त विभूतियों के स्वामी हो, आपको बारम्बार नमस्कार है, माता लक्ष्मी आप भगवान् की अर्धांगनी और महामाया स्वरुपिणी हैं। भगवान के समस्त गुण आपमें निवाश करते हैं महा भाग्यवती माता आप मुझ पर प्रसन्न हों मैं आपको नमस्कार करती हूं।

इस प्रकार स्तुति करें—

मन्त्र—

ॐ नमो भगवते महा पुरुषाय महानुभाावाय।
महा विभूतिपतये सह महाविभूति भिर्बलिमुप हारिणि।

इस मंत्र के द्वारा प्रतिदिन भगवान विष्णु का सोडषोपचार विधि से पूजन करना चाहिये।

मन्त्र—ॐ नमो भगवते महापुरुषाय महाविभूतिपतये स्वाहा।

यह मन्त्र बोलकर अग्नि में बारह आहुतियां दें।

भगवान को प्रणाम कर पूर्वोक्त मन्त्र का जप करें और विविध स्तोत्रों से लक्ष्मी नारायण भगवान् की स्तुति करें।

भगवान् की पूजा के उपरान्त अपने पति को साक्षात् भगवान समझ-कर उनकी प्रिय वस्तुएं सेवा में उपस्थित करें। पति भी अपनी पत्नी के प्रिय पदार्थ लाकर उसे दे। और उसके छोटे-बड़े कार्य करता रहे।

यदि पत्नी रजोधर्म में प्रवृत्त हो जाये (अशुद्धावस्था हो जाये) तो यह अनुष्ठान पति को करना चाहिये।

यह भगवान विष्णु का व्रत है, इसका नियम लेकर बीच में इसे कभी नहीं छोड़ना चाहिए। जो भी नियम ग्रहण करे वह प्रतिदिन पंचोपचार से भक्तिपूर्वक ब्राह्मण एवं सुहागिनी स्त्रियों का पूजन करे तथा भगवान विष्णु की पूजा करें। इसके पश्चात् भगवान का विसर्जन कर आत्म-समर्पण कर दे। साध्वी स्त्री इस विधि से बारह महीनों तक (सम्पूर्ण वर्ष) इस व्रत का आचरण करके मार्गशीर्ष की अमावस्या को उद्यापन करे। और पहले आचार्य को भोजन कराये। तथा मौन होकर भाई बन्धुओं के साथ स्वयं भोजन करे। इसके बाद हवन से बची हुई घृत मिश्रित खीर अपनी पत्नी को खिला दे। वह प्रसाद स्त्री को सत्पुत्र और सौभाग्य देने वाला होता है।

इस व्रत को करने से मनचाही वस्तु स्त्रियों को सौभाग्य, संपत्ति, सन्तान, यश और गृह की प्राप्ति होती है। तथा पति की दीर्धायु होती है।

(तुष्टा: प्रयच्छन्ति समस्त कामान् होमा वसाने हुत भुक् श्रीर्हरिश्च)

इति पुंसवन व्रत विधि समाप्तम् ।।

।। ब्रह्मचर्य व्रत की महिमा ।।

ब्रह्मचर्य संपूर्ण मानव-जीवन का मुकुट है, ब्रह्मचर्य व्रत की महता को जीवन में प्रयोग करने वाले दिव्य पुरुषों के पवित्र पदचिन्हों पर चलकर अर्थात् ब्रह्मचर्य से लाभान्वित होकर हम लोगों को जीवन के महान् उद्देश्यों की प्राप्ति में लगना चाहिये।

धर्म का साधन शरीर है, शरीर से ही सारी साधनाएं होती हैं, यदि शरीर शक्तिहीन है तो उसका प्रभाव मन पर पड़ता है, जिससे मन भी दुर्बल हो जाता है। कोई भी कार्य सफलतापूर्वक करना हो तो तन और मन दोनों स्वस्थ होना चाहिये। इसीलिये प्रत्येक युग में महापुरुष ब्रह्मचर्य व्रत पर जोर देते आये हैं। जिस व्यक्ति के जीवन में संयम नहीं है, वह न तो स्वयं की ठीक से उन्नति कर पाता है। और न ही समाज में कोई महान् कार्य कर पाता है।

पहले ब्रह्मचर्य क्या है? यह समझना चाहिये याज्ञवल्क्य संहिता में आया है-

कर्मणा मनसा वाचा सर्वावस्थासु सर्वथा।
सर्वत्र मैथुनत्यागी ब्रह्मचर्य प्रचक्षते।।

जिस अवस्था में मन, वचन और कर्म तीनों के द्वारा सदैव मैथुन का त्याग हो उसे 'ब्रह्मचर्य' कहते हैं।

देवताओं को देवत्व भी इसी ब्रह्मचर्य के द्वारा प्राप्त हुआ है। जैसा कि अथर्ववेद में वर्णित है।

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाहनत।
इन्द्रो ह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वराभरत्।।

ब्रह्मचर्य रूपी तप से देवों ने मृत्यु को जीत लिया है देवराज इन्द्र ने भी ब्रह्मचर्य से ही देवताओं से अधिक सुख तथा उच्च पद को प्राप्त किया। ऐसे तो तपस्वी लोग कई प्रकार के तप करते हैं।

श्लोक–

न तपस्तप इत्याहुर्ब्रह्मचर्यं तपोत्तमम्।
ऊर्ध्वरेता भवेत्वस्तु स देवो न तु मानुषः।।

अर्थात् ब्रह्मचर्य ही उत्कृष्ट तप है इससे बढ़कर तपश्चर्या तीनो लोकों में दूसरी नहीं हो सकती ऊर्ध्वरेता पुरुष इस लोक में मनुष्य रूप में प्रत्यक्ष देवता ही है।

वैद्यशास्त्र में इसको परम बता कहा गया है–

''ब्रह्मचर्यं परं बलं'' अर्थात् ब्रह्मचर्य महान बल है, अब प्रश्न उठता है कि शरीर में वीर्य कैसे बनता है, भोजन से वीर्य बनने की प्रक्रिया बड़ी विचित्र है श्री श्रुश्रुताचार्य जी ने लिखा है–

रसाद्रक्तं ततो मांसं मांसान्मेदः प्रजापते।
मेदसोऽस्थि ततो मज्जा मज्ज्ञः शुक्रं तुजापते।।

जो भोजन पचता है उसका पहले रस बनता है, पांच दिनों तक उसका पाचन होकर रक्त बनता है पांच दिनों के बाद रक्त में मांस उनमें से पांच-पांच दिन के अन्दर से भेद, भेद में हड्डी-हड्डी में मज्जा और मज्जा से अन्त में वीर्य बनता है। स्त्री में जो धातु बनती है, उसे 'रज' कहते हैं। वीर्य शरीर की बहुत मूल्यवान धातु है,

जीवनी शक्ति है इसलिए शरीर के बल बुद्धि की सुरक्षा के लिये वीर्य रक्षण बहुत आवश्यक है। पतांजलि योग दर्शन के साधन (सूत्र 38) में ब्रह्मचर्य की महत्ता इन शब्दों में बताई गई है

''ब्रह्मचर्य प्रतिष्ठायां वीर्य लाभः'' ब्रह्मचर्य की स्थिति हो जाने पर सामर्थ्य का लाभ होता है।

शास्त्रकार ने लिखा है–

आयुस्तेजो बतां वीर्यं प्रज्ञाश्रीश्च महद्यमः।
पुण्यं च प्रीति मत्वं च हन्यते ऽ ब्रह्मचर्यया।।

अर्थात् आयु, तेज, बल, वीर्य, बुद्धि, लक्ष्मी, कीर्ति, यश तथा पुण्य और प्रीति–ये सब ब्रह्मचर्य का पालन न करने से नष्ट हो जाते हैं।

ब्रह्मचर्य श्रेष्ठ व्रत है, श्रेष्ठ तप तथा श्रेष्ठ साधना है और इस साधना का फल है आत्मज्ञान, आत्म साक्षात्कार, इस फल प्राप्ति के साथ ही ब्रह्मचर्य व्रत का पूर्ण अर्थ प्रकट होता है।

ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने से मेधा शक्ति, दीर्घ जीवन, उत्साह, उत्तम गति, अपूर्व सुख मस्तिष्क में अच्छे-अच्छे विचार प्रवाहित होते हैं। ब्रह्मचर्य उत्थान का मार्ग है। ब्रह्मचर्य ही जीवन है।

ब्रह्मचर्य के प्रभाव से ही बड़े-बड़े ब्रह्मनिष्ठ ऋषि गण, योद्धा, योगी, धीर, ऐश्वर्यवान् और धर्मनिष्ठ हो गए हैं।

इनके चरित्र इतिहास में लिखे हैं तथा इनके पवित्र नाम अब भी प्रातः स्मरणीय हो रहे हैं।

ब्रह्मचर्य एक प्रकार का तप है, ब्रह्मचारी के उपास्य धर्म को

ब्रह्मचर्य कहते हैं, या यों समझो कि जो ब्रह्मचर्य से रहता है, वह ब्रह्मचारी है, सत्चरित्रता का मुख्य साधन ब्रह्मचर्य है।

जिसने ब्रह्मचर्य का पालन किया है, सत्चरित्रता मानो आप से आप उसके हाथ आ गई, बस इसी एक ब्रह्मचर्य के भीतर है–सत्य, सौच, संतोष, शम, दया, मैत्री और अध्यात्म चिंतन।

।। नाम जप से ब्रह्म की प्राप्ति ।।

श्री नारद जी तीनों लोकों में भ्रमण करते हुए निरन्तर ''श्रीमन् नारायण नारायण'' का ही उच्चारण करते रहते हैं।

फलस्वरूप इच्छानुसार भगवान् के दर्शन प्राप्त करते हैं। महर्षि बाल्मीकि जी उल्टा नाम जपते-जपते ब्रह्ममय हो गये।

चौ.– उलटा नाम जपत जग जाना।
बाल्मीक भये ब्रह्म समाना।।

संत तुलसीदास जी कहते हैं–

भाव-कुभाव अनख आलसहूँ।
नाम जपत मंगलदिसिस दसहूँ।।

प्रेम से-वैरभाव से-क्रोध से-आलस्य से। नाम जपने से दसों दिशा में मंगल होता है। (तात्पर्य) कैसे भी ईश्वर के नाम को जपें।।

।। श्री सत्यनाराण व्रत कथा।।

सत्य का बोध कराने वाला देव है श्री सत्यनाराण।

सत्य की राह बताने वाली कथा: श्री सत्यनारायण व्रत कथा।

वास्तव में सत्य का क्या स्वरूप है, वही इस कथा के अन्तर्गत संकलन कर्ता ने दर्शाया है।

सर्वप्रर्थम इस कथा की खोज राजस्थान के विद्वान ने की जो कि प्रश्न उपनिषद से ली गई है। उसी के मार्गदर्शन पर लेखक आचार्य श्री धीरेन्द्र जी ने प्रश्न उपनिषद का गहन अध्ययन किया और भक्तों में यथार्थ सत्य नारायण की कथा का प्रचार किया।

श्री राजेन्द्र गोस्वामी जी के निवेदन पर यह महान् कार्य सम्पन्न हुआ।

यथार्थ में सत्यनारायण व्रत कथा का यही वास्तविक स्वरूप है। जो स्कन्द पुराणोक्त पांच अध्यायों में 'सत्यनारायण व्रत कथा लिखी है। वह सत्य नारायण व्रत कथा का माहात्म्य है कि पृथ्वी पर किस-किसने इस व्रत को किया और उन्हें क्या फल प्राप्त हुआ।

इस प्रश्न उपनिषद से संकल्न कर आचार्य श्री ने यथार्थ हिन्दी रूप देकर अत्यन्त सरल बना दिया है। जिससे कि आने वाले सत्य के उपासक भक्त सुदृढ़ मार्ग पर चल सकें। प्रत्येक मानव का धर्म है, कि वह अपने आपको पहचाने कि मैं कौन हूं और मेरे अन्दर कितनी शक्ति है। और मुझे किस प्रकार से जीवन यापन करना है। किस प्रकार से हम इस धरा में आते हैं, इन सब बातों का इस महान

संकलन में विषद रूप से वर्ण करने का प्रयास किया गया है, और साथ में वर्ष भर में होने वाले व्रत एवं त्यौहारों के बारे में लेखन किया गया है। सात वारों की कथा एवं छब्बीस एकादशियों की कथा तथा और भी गूढ़ विषयों पर लेखन कार्य किया गया है। जिससे कि साधक एक ही ग्रन्थ में सब कुछ प्राप्त कर सकें।

नोट–इस व्रत मंजरी में कहीं कोई त्रुटि हो तो पाठक गण कृपया सुधार कर पढ़ें और हमें उस त्रुटि के सम्बन्ध में सूचना दें।

।। जय श्री कृष्ण ।।

।। प्रश्नोत्तरी ।।

प्र. सत्य क्या है?

उ. प्राणि मात्र का साधन मात्र।

प्र. जीवधारियों में प्रियाति प्रिय क्या है?

उ. प्राण (आत्मा)

प्र. सुख किससे मिलता है?

उ. सज्जन पुरुष की मित्रता से।

प्र. मृत्यु क्या है?

उ. मूर्खता।

प्र. सुख क्या है?

उ. समस्त आसक्तियों से वैराग्य।

प्र. निद्रा क्या है?

उ. प्राणी का मूढ़ भाव।

।। अथ प्रथमोऽध्यायः ।।

संस्कृत–ऊँ सुकेशा च भारद्वाजः शैव्यश्च सत्यकामः सौर्यायणी च गार्म्यः कौशल्याश्चाश्वलायनो भार्गवो वैदर्भिः कबन्धी काव्यायनस्ते हैते ब्रह्मनिष्ठाः परं ब्रह्मान्वेषमाणा एष हवै तत्सर्वं वक्ष्यतीति ते ह समित्पाणयो भगवन्तं पिप्पलादमुपसन्नाः।।

व्याख्या–ओंकारस्वरूप सच्चिदानन्द धन परमात्मा का स्मरण करके शास्त्रों को आरंभ किया जाता है। प्रसिद्ध है कि भारद्वाज के पुत्र सुकेशा शिविकुमार सत्यकाम, गर्ग गोत्र में उत्पन्न सौर्यायणि, कोसल देश, निवासी आश्वलायन, विदर्भ देशीय भार्गव और कत्य के प्रपौत्र कबन्धी ये वेदाभ्यास के परायण और ब्रह्मनिष्ठ अर्थात् श्रद्धापूर्वक वेदानुकूल आचरण करने वाले थे। एक बार ये छहों ऋषि परब्रह्म परमेश्वर की जिज्ञासा से एक साथ बाहर निकले। इन्होंने सुना था कि पिप्पलाद ऋषि इस विषय को विशेष रूप से जानते हैं। अतः यह सोचकर कि 'परब्रह्म' के सम्बन्ध में हम जो कुछ जानना चाहते हैं। वह सब हमें बता देंगे वे लोग जिज्ञासु के वेश में हाथ में समिधा लिये हुए महर्षि पिप्पलाद के पास गये। उन छहों ऋषियों को परब्रह्म की जिज्ञासा से अपने पास आया देखकर महर्षि पिप्पलाद ने उनसे कहा तुम लोग तपस्वी हो तुमने ब्रह्मचर्य के पालनपूर्वक सांङ्गोपाङ्ग वेद पढ़े हैं। तथाऽपि मेरे आश्रम मे रहकर पुनः एक वर्ष तक श्रद्धापूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए तपश्चर्या करो। उसके बाद तुम लोग जो चाहो, मुझसे प्रश्न करना। यदि तुम्हारे पूछे

हुए विषय का मुझे ज्ञान होगा तो नि:संदेह तुम्हें सब बाते भलीभांति प्रकार से समझाकर बताऊंगा। महर्षि पिप्पलाद की आज्ञा पाकर वे लोग श्रद्धापूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वहीं तपश्चर्या करने लगे। महर्षि की देख-रेख में संयमपूर्वक रहकर एक वर्ष तक उन्होंने त्यागमय जीवन बिताया। उसके बाद वे सब पुन: पिप्पलाद ऋषि के पास गये तथा उनमें से सर्वप्रथम कत्य ऋषि के प्रपौत्र कबन्धी ने श्रद्धा और विनयपूर्वक पूछा भगवन् जिससे ये संपूर्ण चराचर जीव नाना रूपों में उत्पन्न होते हें। जो इनका सुनिश्चित परम कारण है। वह कौन है। कबन्धी ऋषि का यह प्रश्न सुनकर महर्षि पिप्पाद बोले हे—कात्यायन यह बात वेदों में प्रसिद्ध है कि संपूर्ण जीवों के स्वामी परमेश्वर को सृष्टि के आदि में जब प्रजा उत्पन्न करने की इच्छा हुई इन दोनों का एक जोड़ा उत्पन्न किया। तप से उन्होंने सर्वप्रथम रयि और प्राण इन दोनों का एक जोड़ा उत्पन्न किया। उन्हें उत्पन्न करने का उद्देश्य यह था कि ये दोनों मिलकर मेरे लिए नाना प्रकार की सृष्टि उत्पन्न करेंगे। सबको जीवन प्रदान करने वाली जो समष्टि जीवनी शक्ति है, उसे ही 'प्राण' नाम दिया गया है। इस जीवनी शक्ति से ही प्रकृति के स्थूल स्वरूप में समस्त पदार्थों में जीवन स्थिति और यथा योग्य सामंजस्य आता है एवं स्थूल भूत समुदाय का नाम 'रयि' रखा गया है। जो प्राणरूप जीवनी शक्ति से अनुप्राणित होकर कार्यक्षम होता है। प्राण चेतना है। रयि शक्ति और आकृति है। प्राण और रयि के संयोग से ही सृष्टि का समस्त कार्य सम्पन्न होता है। इन्हीं को अन्यत्र अग्नि और सोम के नाम से भी कहा गया है।

पिप्पलाद मुनि कहते हैं कि यह दिखने वाला संपूर्ण जगत प्राण और रयि इन दोनों तत्वों के संयोग या सम्मिश्रण से बना है। इसलिये यद्यपि इन्हें पृथक्-प्रथक् करके नहीं बताया जा सकता तथापि तुम इस प्रकार समझो यह सूर्य जो हमें प्रत्यक्ष दिखालायी देता है। यही प्राण है क्योंकि इसी में सबको जीवन प्रदान करने वाली चेतना शक्ति की प्रधानता और अधिकता है। यह सूर्य उस सूक्ष्म जीवनी शक्ति का घनीभूत स्वरूप है। उसी प्रकार यह चंद्रमा ही रयि है। क्योंकि इसमें स्थूल तत्वों को पुष्ट करने वाली भूत तन्मात्राओं की ही अधिकता है। समस्त प्राणियों के स्थूल शरीरों का पोषण इस चन्द्रमा की शक्ति को पाकर ही होता है। हमारे शरीरों में ये दोनों शक्तियां प्रत्येक अंग-प्रत्यंग में व्याप्त है। उनमें जीवनी शक्ति का संबंध सूर्य से है और मांस, मेद आदि स्थूल तत्वों का सम्बन्ध चंद्रमा से है और संपूर्ण प्राणियों के शरीरों में जो जीवनी शक्ति है उसके साथ सूर्य का संबंध दिखलाया गया है। भाव यह है कि रात्रि के बाद जब सूर्य उदय होकर पूर्व दिशा में अपना प्रकाश फैलाता है। उस समय वहां के प्राणियों के प्राणों को अपनी किरणों में धारण करता है। अर्थात् उनकी जीवनी शक्ति का सूर्य की किरणों से संबंध होकर उसमें नवीन स्फूर्ति आ जाती है। उसी प्रकार जिस समय जिस दिशा में जहां-जहां सूर्य अपना प्रकाश फैलाता है। वहां-वहां के प्राणियों को स्फूर्ति देता रहता है। अत: सूर्य ही समस्त प्राणियों का प्राण है। प्राणियों के शरीर में जो वैश्वानर नाम से कही जाने वाली जठराग्नि है, जिससे अन्न का पाचन होता है। वह सूर्य का ही अंश है अत: सूर्य ही है तथा जो

प्राण, अपान, समान, व्यान और उदान इन पांच रूपों में विभक्त प्राण है। वह भी इस उदय होने वाले सूर्य का ही अंश है अतः सूर्य ही है।

संस्कृत–

विश्वरूपं हरिणं जातवेदसं
परायणं ज्योतिरेकं तपन्तम्।
सहस्ररश्मिः शतधा वर्तमानः
प्राणः प्रजानामुदयत्येष सूर्यः।।

व्याख्या–इस सूर्य के तत्व को जानने वालों का कहना है कि यह किरण जाल से मण्डित एवं प्रकाशमय, तपता हुआ सूर्य विश्व के समस्त रूपों का केन्द्र है। सभी सूप सूर्य से उत्पन्न और प्रकाशित होते हैं। यह सविता ही सबका उत्पत्ति स्थान है और यही सबकी जीवन ज्योति का मूल स्रोत है। यह सर्वज्ञ और सर्वाधार है। वैश्वानर अग्नि और प्राण शक्ति के रूप में सर्वत्र व्याप्त है। और सबको धारण किये हुए है। समस्त जगत का प्राण रूप सूर्य एक ही है। इसके समान इस जगत में दूसरी कोई भी जीवनी शक्ति नहीं है। यह सहस्रों किरणों वाला सूर्य हमारे सैकड़ों प्रकार के व्यवहार सिद्ध करता हुआ उदय होता है। जगत में ऊष्णता और प्रकाश फैलाना सबको जीवन प्रदान करना, ऋतुओं का परिवर्तन करना आदि हमारी सैकड़ों प्रकार की आवश्यकताओं को पूर्ण करता हुआ संपूर्ण सृष्टि का जीवन दाता प्राण ही सूर्य के रूप में उदित होता है। संवत्सर को परमात्मा का प्रतीक बनाकर उसके अंग रूप रयि स्थानीय भोग्य पदार्थों के उद्देश्य से की जाने वाली उपासना और उसका फल

बताते है। भाव यह है कि बारह महीनों का यह संवत्सर रूप काल ही मानो सृष्टि के स्वामी परमेश्वर का स्वरूप है। इसके दो अयन हैं। दक्षिण और उत्तर दक्षिणायन के जो छः महीने है। जिसमें सूर्य दक्षिण की ओर घूमता है ये मानो उसके दक्षिण अंग है और उत्तरायण के छः महीने ही उत्तर अंग है। दक्षिण और उत्तर अंग प्राण है। इस विश्व के आत्मारूप उस परेश्वर का सर्वान्तर्यामी स्वरूप है और दक्षिण अंग रयि अर्थात् उसका बाह्य भोग्य स्वरूप है। इस जगत में जो संतान की कामना वाले ऋषि स्वर्गादि सांसारिक भोगों में आसक्त हैं वे यज्ञादि द्वारा देवताओं का पूजन करना ब्राह्मण एवं श्रेष्ठ पुरुषों का धनादि से सत्कार करना, दुखी प्राणियों की सेवा करना आदि इष्ट कर्म तथा कुआं बावली, तालाब, बगीचा, धर्मशाला विद्यालय औषद्यालय, पुस्तकालय आदि लोकोपकारी चिरस्थायी स्मारकों की स्थापना करना आदि पूर्व कर्मों को उत्कृष्ट कर्तव्य समझते हैं और इनके फल स्वरूप इस लोक तथा परलोक के भोगों के उद्देश्य से इनकी उपासना अर्थात् विधिवत् अनुष्ठान करते हैं। यह उस परमेश्वर के दक्षिण अंग की उपासना है। इसी को उपनिषद् आदि में असम्भूति की उपासना के नाम से देव, पितर, मनुष्य आदि शरीरों की सेवा बताया है। इसके प्रभाव से वे चंद्र लोक को प्राप्त होते हैं। और वहां अपने कर्मों का फल भोगकर पुनः इस लोक में लौट आते हैं। यही पितृयाण मार्ग है।

अर्थात् उन सकाम उपासकों से भिन्न जो कल्याण कामी साधक हैं वे इन सांसारिक भोगों की अनित्यता और दुःख रूपता को

समझकर इससे सर्वथा विरक्त हो जाते हैं वे श्रद्धापूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए संयम के साथ त्याग मय जीवन बिताते हैं। और अध्यात्म विद्या के द्वारा अर्थात् परमात्मा की प्राप्ति कराने वाले किसी भी अनुकूल साधन द्वारा सबके आत्म स्वरूप परब्रह्म परमेश्वर की निष्काम उपासना करते हैं। यह मानो उस संवतसर प्रजापति के उत्तर अंग की उपासना है इसको उपनिषद् आदि में सम्भूति की उपासना कहा है। इसके उपासक उत्तरायण मार्ग से सूर्य लोक में जाकर सूर्य के आत्मारूप परब्रह्म परमेश्वर को प्राप्त हो जाते हैं। यह सूर्य ही संपूर्ण जगत के प्राणों का केन्द्र है। यही अमृत अविनाशी और निर्भय पद है। यही परम गति है। इसे प्राप्त हुए महापुरुष फिर लौट कर नहीं आते यह पूर्व जन्म को रोकने वाला आत्यन्तिक प्रलय है। और भगवान सूर्य को परमेश्वर का स्वरूप मानकर ही उपर्युक्त महिमा कही गयी है। इसी बात को आगे स्पष्ट रूप में बताया गया है।

संस्कृत–

पञ्चपादं पितरं द्वादशाकृतिं दिव आहुः परेअर्धे पुरीषिणम्।
अथेमे अन्य उ परे विचक्षणं सप्त चक्रेषडर आहुरर्पित मिति।।

व्याख्या–परब्रह्म परमेश्वर के प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर स्वरूप इस सूर्य के विषय में कितने ही तत्ववेत्ता तो यों कहते हैं कि इसके पांच पैर हैं। अर्थात् छः ऋतुओं में से हेमन्त और शिशिर इन दो ऋतुओं की एकता करके पांच ऋतुओं को वे इस सूर्य के पांच चरण बतलाते हैं तथा यह भी कहते हैं कि बारह महीने ही इसकी बारह

आकृतियां अर्थात् बारह शरीर है। इसका स्थान स्वर्ग लोक से भी ऊँचा है। स्वर्ग लोक भी इसी के आलोक से प्रकाशित है। इस लोक में जो बरसता है। उस जल की उत्पत्ति इसी से होती है। अतः सबको जल रूप जीवन प्रदान करने वाला होने से यह सबका पिता है। दूसरे ज्ञानी पुरुषों का कहना है कि लाल–पीले आदि सात रंगों की किरणों से युक्त तथा बसन्त आदि छः ऋतुओं के हेतुभूत इस विशुद्ध प्रकाशमय सूर्य मण्डल में जिसे सात चक्र एवं छः अरोंवाला रथ कहा गया है। बैठा हुआ इसका आत्मा रूप, सबको भली भांति जानने वाला सर्वज्ञ परमेश्वर ही उपास्य है। यह स्थूल नेत्रों से दिखाई देने वाला सूर्य मण्डल उसका शरीर है। इसलिये यह उसी की महिमा है।

संस्कृत–

भासो वै प्रजापतिस्तस्य कृष्ण पक्ष एवं रयिः शुक्लः प्राणस्तस्मादेत ऋषयः शक्लः इष्टं कुर्बन्तीतर इतरस्मिन्।।

व्याख्या–इस मंत्र में महीने को प्रजापति परमेश्वर का रूप देकर कर्मों द्वारा उसकी उपासना करने का रहस्य बताया गया है। भाव यह है कि प्रत्येक महीना ही मानो प्रजापति है। उसमें कृष्ण पक्ष के पंद्रह दिन तो उस परमात्मा का दाहिना अंग है। इसे रयि समझना चाहिए। यह उस परमेश्वर का शक्तिस्वरूप भोगमय रूप है। और शुक्ल पक्ष के पंद्रह दिन ही मानो उत्तर अंग हैं। यही प्राण अर्थात् सबको जीवन प्रदान करने वाले परमात्मा का सर्वान्तर्यामी रूप है। इसलिए जो कल्याण कामी ऋषि है। जो रयिस्थानीय भोग

पदार्थों से विरक्त होकर प्राणस्थानीय सर्वात्मरूप परब्रह्म को चाहने वाले हैं। वे अपने समस्त शुभ कर्मों को शुक्ल पक्ष में करते हें। अर्थात शुक्ल पक्ष स्थानीय प्राणाधार परब्रह्म परमेश्वर को अर्पण करके कहते हैं स्वयं उसका कोई फल नहीं चाहते, यही गीतोक्त कर्म योग है। इनसे भिन्न जो भोगासक्त मनुष्य है। वे कृष्ण पक्ष में अर्थात् कृष्ण पक्ष स्थानीय स्थूल पदार्थों की प्राप्ति के उद्देश्य से सब प्रकार के कर्म किया करते हैं। इनका वर्णन गीता में स्वर्गपरा: के नाम से हुआ है। दिन और रात्रि रूप चौबीस घंटे के कालरूप में परमेश्वर के स्वरूप की कल्पना करके जीवनोपयोगी कर्मों का रहय समझाया गया है। भाव यह कि ये दिन और रात मिलकर जगत्पति परमेश्वर का पूर्ण रूप है। उसका यह दिन तो मानो प्राण अर्थात् सबको जीवन देने वाला प्रकाशमय विशुद्ध स्वरूप है। और रात्रि ही भोग रूप रयि है। अत: जो मनुष्य दिन में स्त्री प्रसंग करते हैं, अर्थात् परमात्मा के विशुद्ध स्वरूपता को प्राप्त करने की इच्छा से प्रकाशमय मार्ग में चलना प्रारंभ करके भी वे अपने लक्ष्य तक न पहुंचकर इस अमूल्य जीवन को व्यर्थ खो देते हैं। उनसे भिन्न जो सांसारिक उन्नति चाहने वाले हैं वे यदि शास्त्र के नियमानुसार स्त्री प्रसंग का पालन करते हैं तो शास्त्र की आज्ञा का पालन करने के कारण ब्रह्मचारी के तुल्य ही है। लौकिक दृष्टि से यों कह सकते हैं कि इस विषय में ग्रहस्थों को दिन में स्त्री प्रसंग कदापि न करने का और विहित रात्रियों में शास्त्रानुसार संयमित रूप में केवल संतान की इच्छा से स्त्री ससंर्ग करने का उपदेश दिया है, तभी वह ब्रह्मचर्य

की गणना में आ सकता है।

संस्कृत—अन्नं वै प्रजापतिस्ततो हवै तद्रेतर-तस्मा दिमा: प्रजा: प्रजायन्त इति।

व्याख्या—इस मंत्र में अन्न को प्रजापति का स्वरूप बताकर अन्न की महिमा बतलाते हुए कहते हैं कि यह सब प्राणियों का आहार रूप अन्न ही प्रजापति है, क्योंकि इसी से वीर्य उत्पन्न होता है। और वीर्य से समस्त चराचर प्राणी उत्पन्न होते हैं इस कारण इस अन्न को भी प्रकारान्तर से प्रजापति माना गया है। जो लोग सन्तान की इच्छा से प्रजापति के व्रत का अनुष्ठान करते हैं। अर्थात् स्वर्गादि लोगों के भोग की प्राप्ति के लिए शास्त्र के निर्देशानुसार शुभ कर्मों का आचरण करते हुए दाम्पत्य जीवन नियमानुसार आचरण करें। प्रजा की वृद्धि करते हैं और जो उनसे भिन्न है। जिनमें ब्रह्मचर्य व्रत का तप है। जिनका जीवन सत्यमय है तथा जो सत्यस्वरूप परमेश्वर को अपने हृदय में नित्य स्थित देखते हैं उन्हीं को वह ब्रह्मलोक मिलता है दूसरों को नहीं।

जिनमें कुटिलता का लेश भी नहीं है। जो स्वप्न में भी मिथ्या भाषण नहीं करते और असत्यमय आचरण से सदा दूर रहते हैं जिनमें राग द्वेषादि विकारों का सर्वथा अभाव है। जो सब प्रकार के छल-कपट से शून्य है। उन्हीं को वह विकार रहित विशुद्ध ब्रह्मलोक मिलता है। जो इनसे विपरीत लक्षणों वाले हैं, उनको नहीं मिलता।

॥ प्रथम-प्रश्न समाप्त ॥

॥ अथ द्वितीयोऽध्यायः ॥

संस्कृत—अथहैनं भार्गवो वैदर्भिः पप्रच्छ। भगवन्कत्येव देवाः प्रजां विधारयन्ते कतर एतत् प्रकाशयन्ते कः पुनरेषां वरिष्ठ इति॥

व्याख्या—एवं भार्गव ऋषि ने महर्षि पिप्पलाद मुनि से तीन बाते पूछी हैं—

1. प्रजा को यानी प्राणियों के शरीर को धारण करने वाले कुल कितने देवता हैं।
2. और उनमें से कौन-कौन इसको प्रकाशित करने वाले हैं।
3. इन सबमें अत्यन्त श्रेष्ठ कौन है।

ये मेरे तीन प्रश्न हैं कृपा कर आप इनका उत्तर बताएँ?

भार्गव ऋषि के इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए महर्षि पिप्पलाद यहां दो प्रश्नों का उत्तर एक ही साथ दे दिया। वे कहते हैं कि सबका आधार तो वैसे आकाश रूप देवता ही है, परन्तु उससे उत्पन्न होने वाले, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी ये चारों महाभूत भी शरीर को धारण किये रहते हैं, यह स्थूल शरीर इन्हीं से बना है। इसलिये ये धारक देवता है। वाणी आदि पांच कर्मेन्द्रियां, नेत्र और कान आदि पांच ज्ञानेंद्रियां एवं मन आदि चार अन्तःकरण ये चौदह देवता इस शरीर के प्रकाशक हैं, ये देवता देह को धारण और प्रकाशित करते हैं। इसलिए ये धारक और प्रकाशक देवता कहलाते हैं। ये इस देह को प्रकाशित करके आपस में झगड़ पड़े और अभिमानपूर्वक परस्पर कहने लगे कि हमने शरीर को आश्रय देकर धारण कर रखा है।

इस प्रकार जब संपर्णू महाभूत इन्द्रियां और अन्तः करण रूप देवता परस्पर विवाद करने लगे तब सर्वश्रेष्ठ प्राण ने उनसे कहा तुम लोग अज्ञानवश आपस में विवाद मत करो तुममे से किसी में भी इस शरीर को धारण करने या सुरक्षित की शक्ति नहीं है। इसे तो मैंने ही अपने को (प्राण, अपान, समान, व्यान और उदान रूप) पांच भागों में विभक्त करके आश्रय देते हुए धारण कर रखा है। और मुझसे ही यह सुरक्षित है। प्राण की यह बात सुनकर भी उन देवताओं ने उस पर विश्वास नहीं किया, वे अविश्वासी ही बने रहे। तब उनको अपना प्रभाव दिखलाकर सावधान करने के लिये वह सर्वश्रेष्ठ प्रायः अभिमान में ठेस लगने से मानो रूठकर इस शरीर से बाहर निकलने के लिए ऊपर की ओर उठने लगा। फिर तो सबके सब देवता विवश होकर उसी के साथ बाहर निकलने लगे कोई भी स्थिर नहीं रह सका जब वह अपने स्थान पर स्थित हो गया, तब अन्य सब भी स्थित हो गये। जैसे मधुमक्खियों का राजा जब अपने स्थान से उड़ता है, तब उसके साथ ही वहां बैठी हुई अन्य सब मधुमक्खियां भी उड़ जाती हैं। और जब वह बैठ जाता है, तब अन्य सब भी बैठ जाती हैं। ऐसी ही दशा इन सब वागादि देवताओं की भी हुई। यह देखकर वाणी, चक्षु, श्रोत्र आदि सब इन्द्रियों को और मन आदि अन्तःकरण की वृत्तियों को भी यह विश्वास हो गया कि हम सबमें प्राण ही श्रेष्ठ है। अतः वे सब प्रसन्नतापूर्वक निम्न प्रकार से प्राण की स्तुति करने लगे। वे वाणी आदि सब देवता स्तुति करते हुए बोले—यह प्राण ही अग्निरूप धारण करके तपता है। और यही

सूर्य है, यही मेघ, इन्द्र और वायु है। यही देव पृथ्वी और रवि है। तथा सत् और असत् एवं उससे भी श्रेष्ठ जो अमृतस्वरूप परमात्मा है। वह भी यह प्राण ही है।

संस्कृत–

अरा इव रथ नाभौ प्राणे सर्वं प्रतिष्ठितम्।
ऋचो यजूँषि सामानि यज्ञः क्षत्रं ब्रह्म च।।

व्याख्या–जिस प्रकार रथ के पहिये की नाभि में लगे हुए अरे नाभि के ही आश्रित रहते हैं। उसी प्रकार ऋग्वेद की सब ऋचाएं, यजुर्वेद के समस्त मन्त्र सबका सब सामवेद, उनके द्वारा सिद्ध होने वाले यज्ञादि शुभ कर्म और यज्ञादि शुभ कर्म करने वाले ब्राह्मण क्षत्रिय और अधिकारी वर्ग ये सबके सब प्राण के आधार पर ही टिके हुए हैं। सबको आश्रय प्राण ही है। हे प्राण तू ही प्रजापति है। तू ही गर्भ में विचरने वाला और माता-पिता के अनुरूप संतान के रूप में जन्म लेने वाला है। ये सब जीव तुझे ही भेंट समर्पण करते हैं। भाव यह है कि तुम्हारी तृप्ति के लिए ही अन्न भक्षण आदि कर रहे हैं। तू ही अपानादि सब प्राणों के सहित सबके शरीर में स्थित हो रहा है। हे प्राण तू ही देवताओं के लिए 'हवि पहुंचाने वाला उत्तम अग्नि है। पितरों के लिए पहली स्वधा है। अथर्वाङ्गिरस आदि ऋषियों के द्वारा आचरित (अनुभूत) सत्य भी तू ही है। हे प्राण तू सब प्रकार के शक्तियों से सम्पन्न तीनों लोकों का स्वामी इन्द्र है। तू ही प्रलयकाल में सबका संहार करने वाला रूद्र है। और तू ही सबकी भली-भांति यथा योग्य रक्षा करने वाला है तू ही

अन्तरिक्ष में (पृथ्वी और स्वर्ग के बीच में) विचरने वाला वायु है। तथा तू ही अग्नि चंद्र तारे आदि समस्त ज्योतिगणों का वामी सूर्य है। हे प्राण जब तू मेघ रूप होकर पृथ्वी लोक में सब ओर वर्षा करता है। तब तेरी यह संपूर्ण प्रजा हम लोगों के जीवन-निर्वाह के लिये यथेष्ट अन्न उत्पन्न होगा ऐसी आशा करती हुई आनंद में मग्न हो जाती है। हे प्राण तू संस्कार रहित होकर भी एकमात्र सर्वश्रेष्ठ ऋषि है। तात्पर्य यह कि तू स्वभाव से ही शुद्ध है। अतः मुझे संस्कार द्वारा शुद्धि की आवश्यकता नहीं है। प्रत्युत तू ही सबको पवित्र करने वाला एकमात्र सर्वश्रेष्ठ ऋषि है। हम लोग (सब इन्द्रियां और मन) तेरे लिए नाना प्रकार की भोजन सामग्री अर्पण करने वाले हैं। और तू उसे खाने वाला है। तू ही समस्त विश्व का उत्तम स्वामी है। हे आकाशचारी समष्टि वायु स्वरूप प्राण, तू हमारा पिता है। क्योंकि तुझी से हम सबकी उत्पत्ति हुई है।

संस्कृत–

या ते तनूर्वाचि प्रतिष्ठिता या श्रोत्रेया च चक्षुषि।
या च मनसि सन्तता शिवां तां कुरू मोत्क्रमीः।।

व्याख्या–हे प्राण जो तेरा स्वरूप वाणी श्रोत्र चक्षु आदि समस्त इन्द्रियों में और मन आदि अन्त करण की वृत्तियों में व्याप्त है। उसे तू कल्याणमय बना ले अर्थात् तुझमें जो अन्तःकरण की वृत्तियों में व्याप्त है। उसे तू कल्याणमय बना ले अर्थात् तुझमें जो हमें सावधान करने के लिए आवेश आया है। उसे शांत कर ले और तू शरीर से उठकर बाहर न जा यह हम लोगों की प्रार्थना है। प्रत्यक्ष दिखने वाले

इस लोक में जितने भी पदार्थ हैं और जो कुछ स्वर्ग में स्थित हैं वे सबके सब इस प्राण के ही अधीन है। यह सोचकर वे इन्द्रियादि देव गण अंत में प्राण से प्रार्थना करते हैं, हे प्राण जिस प्रकार माता अपने पुत्रों की रक्षा करती है उसी प्रकार तू हमारी रक्षा कर तथा तू हम लोगों को श्री कांति अर्थात् कार्य करने की शक्ति और प्रज्ञा (ज्ञान) प्रदान कर इस प्रकार इस प्रकरण में भार्गव ऋषि द्वारा पूछे हुए तीन प्रश्नों का उत्तर देते हुए महर्षि पिप्पलाद ने यह बात समझायी कि समस्त प्राणियों के शरीरों को अवकाश देकर बाहर और भीतर से धारण करने वाला आकाश तत्व है। साथ ही इस शरीर के अवयवों की पूर्ति करने वाले वायु अग्नि, जल और पृथ्वी ये चार तत्व हैं। दस इन्द्रियां और अन्तःकरण से इसको प्रकाश देकर क्रियाशील बनाने वाले हैं। इन सबसे श्रेष्ठ प्राण है। अतएव प्राण ही वास्तव में इस शरीर को धारण करने वाला है। प्राण के बिना शरीर को धारण करने की शक्ति किसी में नहीं है। अन्य सब इन्द्रिय आदि में इसी की शक्ति अनुस्यूत है। इसी की शक्ति पाक वे शरीर को धारण करते हैं। इसी प्रकार प्राण की श्रेष्ठता का वर्णन उपनिषद् आदि में आया है।

॥ द्वितीय-प्रश्न समाप्त ॥

॥ अथ तृतीयोऽध्यायः ॥

श्री आश्वलायन मुनि ने महर्षि पिप्लाद से कुल छः बाते पूछी हैं—कहते हैं, कि (1) जिस प्राण की महिमा का आपने वर्णन

किया है। वह प्राण किससे उत्पन्न होता है, (2) वह इस मनुष्य शरीर में कैसे प्रवेश करता है, (3) अपने को विभाजित करके किस प्रकार शरीर में स्थित रहता है, (4) एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में जाते समय पहले शरीर से किस प्रकार निकलता है, (5) इस बाह्य (पांच भौतिक) जगत को किस प्रकार धारण करता है। तथा (6) मन और इन्द्रिय आदि आध्यत्मिक (आन्तरिक) जगत् को किस प्रकार धारण करता है। यहां प्राण के विषय में वे ही बातें पूछी गयी हैं। जिनका वर्णन पहले उत्तर में नही आया है। और जो पहले प्रश्न के उत्तर को सुनकर स्फुरित हुई है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है, कि प्रश्नोत्तर के समय सुकेशादि छहों ऋषि वहां साथ-साथ बैठे सुन रहे थे महर्षि पिप्पलाद ने आश्वलायन मुनि के प्रश्नों को कठिन बतलाकर उनकी बुद्धिमत्ता और तर्कशीलता की प्रशंसा की है। और साथ ही यह भाव भी दिखलाया है। कि तू जिस ढंग से पूछ रहा है, उसे देखते हुए तो मुझे तेरे प्रश्नों का उत्तर नहीं देना चाहिए परन्तु मैं जानता हूं कि तू तर्क बुद्धि से नहीं पूछ रहा है तू श्रद्धालु है, वेदों में निष्णात है। अतः मैं तेरे प्रश्नों का उत्तर दे रहा हूं। महर्षि पिप्पलाद आश्वलायन ऋषि के दो प्रश्नों का उत्तर दिया है। पहले प्रश्न का उत्तर तो यह है कि जिसका प्रकरण चल रहा है। वह सर्वश्रेष्ठ परमात्मा से उत्पन्न हुआ है। वह परब्रह्म परमेश्वर ही इसका उपादान कारण है और वही इसकी रचना करने वाला है। अतः इसकी स्थिति उस सर्वात्मा महेश्वर के अधीन उसी के आश्रित है। ठीक उसी प्रकार जैसे किसी मनुष्य की छाया उसके

अधीन रहती है। दूसरे प्रश्न का उत्तर यह है कि मन द्वारा किये हुए संकल्प से वह शरीर में प्रवेश करता है। भाव यह है कि मरते समय प्राणी के मन में उसके कर्मानुसार जैसा संकल्प होता है, उसे वैसा ही शरीर मिलता है। अतः प्राणों का शरीर में प्रवेश मन के संकल्प से ही होता है और तीसरे प्रश्न का समाधान करते हुए कहते हैं जिस प्रकार भूमंडल का चक्रवर्ती सम्राट भिन्न-भिन्न ग्राम, मण्डल और जनपद आदि में पृथक्-पृथक् अधिकारियों की नियुक्ति करता है, और उनको बांट देता है उसी प्रकार यह सर्वश्रेष्ठ प्राण भी अपने अंगस्वरुप अपान, व्यान आदि दूसरे प्राणों को शरीर के पृथक्-पृथक् स्थानों में पृथक्-पृथक् कार्य के लिये नियुक्त कर देता है। यह स्वयं तो मुख और नासिका द्वारा विचरता हुआ नेत्र और श्रोत्र में स्थित रहता है तथा गुदा और उपस्थ में अपान को स्थापित करता है बाहर करना भी इसी का काम है शरीर के मध्य भाग—नाभि में समान रहता है। यह समान वायु को ही प्राण रूप अग्नि में हवन किये हुए उदर में डाले हुए अन्न को अर्थात् उसके सार को संपूर्ण शरीर के अंग प्रत्यंगों में यथा योग्य समभाव से पहुंचाता है। उस अन्न के सारभूत रस से ही इस शरीर में ये सात ज्वालाएं अर्थात् समस्त विषयों को प्रकाशित करने वाले दो नेत्र दो कान दो नासिकाएं और एक मुख (रसना) से सात द्वार उत्पन्न होते हैं। उस रस से पुष्ट होकर ही ये अपना-अपना कार्य करने में समर्थ होते हैं। इस शरीर में जो हृदय प्रदेश है जो जीवात्मा का निवास स्थान है उसमें एक सौ मूलभूत नाड़ियां हैं उनमें से प्रत्येक नाड़ी की एक-एक सौ

शाखा नाड़ियां हैं और प्रत्येक शाखा नाड़ी की बहत्तर-बहत्तर हजार प्रति शाखा नाड़ियां हैं इस प्रकार इस शरीर में कुल बहत्तर करोड़ नाड़ियों से भिन्न एक नाड़ी और है जिसको सुषुम्णा कहते हैं। जो हृदय से निकलकर ऊपर मस्तक में गयी है उसके द्वारा उदान वायु शरीर में ऊपर की ओर विचरण करती है। इस प्रकार आश्वलायन के तीसरे प्रश्न का समाधान करके अब महर्षि उनके चौथे प्रश्न का उत्तर संक्षेप में देते हैं। जो मनुष्य पुण्यशील होता है जिसके शुभ कर्मों के भोग उदय हो जाते हैं उसे यह उदान वायु ही अन्य सब प्राण और इन्द्रियों के सहित वर्तमान शरीर से निकालकर पुण्य लोकों में अर्थात् स्वर्गादि उच्च लोकों में ले जाता है। पाप कर्मों से युक्त मनुष्य को शूकर-कूकर आदि पाप योनियों में और रौरवादि नरकों में ले जाता है। तथा जो पाप और पुण्य दोनों प्रकार के कर्मों का मिश्रित फल भोगने के लिए अभिमुख हुए रहते हैं। उनको मनुष्य शरीर में ले जाता है। यह निश्चयपूर्वक समझना चाहिए कि सूर्य ही सबका ब्राह्य प्राण है। यह मुख्य प्राण सूर्य रूप से उदय होकर इस शरीर के बाह्य अङ्ग प्रत्यङ्गों को पुष्ट करता है। और नेत्र इन्द्रिय रूप आध्यात्मिक शरीर पर अनुग्रह करता है। उसे देखने की शक्ति अर्थात् प्रकाश देता है। पृथ्वी में जो देवता अर्थात् अपान वायु की शक्ति है। वह मनुष्य के भीतर रहने वाले अपान वायु को आश्रय देती है। टिकाये रखती है। यह इस अपान वायु की शक्ति गुदा और उपस्थ इन्द्रियों की सहायक है तथा इनके बाहरी स्थूल आकार को धारण करती है। पृथ्वी और स्वर्ग लोक के बीच का

जो आकाश है, वही समान वायु का बाह्य स्वरूप है। वह इस शरीर के बाहरी अंग प्रत्यङ्गों को अवकाश देकर इसकी रक्षा करता है। और शरीर के भीतर रहने वाले समान वायु को विचरने के लिये शरीर में अवकाश देता है। इसी की सहायता से श्रोत्र इन्द्रिय शब्द सुन सकती है। आकाश में विचरने वाला प्रत्यक्ष वायु ही व्यान का बाह्य स्वरूप है। यह इस शरीर के बाहरी अंग-प्रत्यंग को चेष्टा शील करता है। और शांति प्रदान करता है। भीतरी व्यान वायु को नाड़ियों में संचारित करने तथा त्वचा इन्द्रियों को स्पर्श का ज्ञान कराने में भी यह सहायक है।

संस्कृत–

तेजो ह वा उदानस्तस्मादुपशान्त तेजा:
पुनर्भवमिन्द्रियैर्मनसिसम्पद्यमानै:।।

व्याख्या–सूर्य और अग्नि का जो बाहरी तेज अर्थात् उष्णत्व है वही उदान का बाह्य स्वरूप है। वह शरीर के बाहरी अंग-प्रत्यंगों को ठंडा नहीं होने देता और शरीर के भीतर की ऊष्मा को भी स्थिर रखता है। जिसके शरीर से उदान वायु निकल जाती है। उसका शरीर गरम नहीं रहता। अत: शरीर की गर्मी शांत हो जाते ही उसमें रहने वाला जीवात्मा मन में विलीन हुई इन्द्रियों को साथ लेकर उदान वायु के साथ-साथ दूसरे शरीर में चला जाता है।

संस्कृत–

यच्चित्तस्तेनैष प्राणमायाति प्राणस्तेजसा युक्त:।
सहात्मना यथा संकल्पितं लोकं नयति।।

व्याख्या–मरते समय इस आत्मा का जैसा संकल्प होता है। इसका मन क्षण में जिस भाव का चिन्तन करता है। उस संकल्प के सहित मन, इन्द्रियों को साथ लिये हुए यह मुख्य प्राण में स्थित हो जाता है। वह मुख्य प्राण उदान वायु से मिलकर अपने सहित मन और इन्द्रियों से युक्त जीवात्मा को उस अन्तिम संकल्प के अनुसार यथायोग्य भिन्न-भिन्न लोक अथवा योनि में ले जाता है। अत: मनुष्य को उचित है। कि अपने मन में निरन्तर एक भगवान का ही चिन्तन रखे दूसरा संकल्प न आने दे, क्योंकि जीवन अल्प और अनित्य है न जाने कब अचानक इस शरीर का अंत हो जाय यदि उस समय भगवान का चिन्तन न होकर कोई दूसरा संकल्प आ गया तो सदा की भांति पुन: चौरासी लाख योनियों में भटकना पड़ेगा। जो इस प्राण के रहस्य को समझ लेता है, प्राण के महत्व को समझकर हर प्रकार से उसे सुरक्षित रखता है, उसकी अवहेलना नहीं करता उसकी सन्तान परम्परा कभी नष्ट नहीं होती। क्योंकि उसका वीर्य अमोघ ओर अद्‌भुत शक्ति सम्पन्न हो जाता है और वह यदि उसके आधयात्मिक रहस्य को समझकर अपने जीवन को सार्थक बना लेता है एक क्षण भी भगवान के चिन्तन से शून्य नहीं रहने देता तो सदा के लिये अमर हो जाता है अर्थात् जन्म मरण रूप संसार से मुक्त हो जाता है।

जो मनुष्य प्राण की उत्पत्ति को अर्थात् यह जिससे और जिस प्रकार उत्पन्न होता है इस रहस्य को जानता है। शरीर में उसके प्रवेश करने की प्रक्रिया का तथा इसी व्यापकता का ज्ञान रखता है।

तथा जो प्राण की स्थिति को अर्थात् बाहर और भीतर कहां-कहां वह रहता है। इस रहस्य को तथा इसके बाहरी और भीतरी अर्थात् आधिभौतिक और आधयात्मिक पांचों भेदों के रहस्य को भलीभांति समझ लेता है, वह अमृत स्वरूप परमानन्दमय परब्रह्म परमेश्वर को प्राप्त कर लेता है तथा उस आनंदमय के संयोग सुख का निरन्तर अनुभव करता है।

॥ तृतीय-प्रश्न समाप्त ॥

॥ अथ चतुर्थोऽध्यायः ॥

अब गार्ग्य मुनि ने महात्मा पिप्पलाद जी से पांच बातें पूछी हैं—(1) गहरी निद्रा के समय इस मनुष्य शरीर में रहने वाले पूर्वोक्त देवताओं में से कौन-कौन सोते हैं, (2) कौन-कौन जागते रहते हैं, (3) स्वप्न अवस्था में इनमें से कौन देवता स्वप्न की घटनाओं को देखता रहता है, (4) निद्रा अवस्था में सुख का अनुभव किसको होता है, और (5) ये सबके सब देवता सर्वभाव से किसमें स्थित हैं, अर्थात् किसके आश्रित हैं। इस प्रकार इस प्रश्न में गार्ग्य मुनि ने जीवात्मा और परमात्मा का पूरा-पूरा तत्व पूछ लिया। पिप्पलाद ऋषि ने गार्ग्य जी के पहले प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा हे गार्ग्य जी जब सूर्य अस्त होता है उस समय उसकी सब ओर फैली हुई संपूर्ण किरणें जिस प्रकार उस तेज पुंज में मिलकर एक हो जाती हैं। ठीक उसी प्रकार गहरी निद्रा के समय तुम्हारे पूछे हुए सब देवता अर्थात् सबकी सब इन्द्रियां उन सबसे श्रेष्ठ जो मन

रूप देव है, उसमें विलीन होकर तद्रूप हो जाती है। इसलिए उस समय यह जीवात्मा न तो सुनता है, न देखता है, न सूंघता है, न स्वाद लेता है, न स्पर्श करता है, न बोलता है, न ग्रहण करता है, न चलता है, न मल-मूत्र त्याग करता है और न रति सुख का सुख ही भोगता है। भाव यह है कि उस समय दसों इन्द्रियों का कार्य सर्वथा बंद रहता है। केवल लोग कहते हैं कि इस समय यह पुरूष सो रहा है। उसके जागने पर पुनः वे सब इन्द्रियां मन से पृथक होकर अपना-अपना कार्य करने लगती हैं। ठीक वैसे ही जिस प्रकार सूर्य के उदय होने पर उसकी किरणें पुनः सब ओर फैल जाती हैं।

उस समय इस मनुष्य शरीर रूप नगर में पांच प्राण रूप अग्नियां जागती रहती हैं यह दूसरे प्रश्न का संक्षेप में उत्तर है। यहां निद्रा को यज्ञ का रूप देने के लिए पांचों प्राणों को अग्नि रूप बतलाया है, यज्ञ में अग्नि की प्रधानता होती है इसलिए यहां संक्षेपतः प्राण मात्र को अग्नि के नाम से कह दिया परन्तु आगे इस यज्ञ के रूप में किस प्राणवृत्ति की किसके स्थान में कल्पना करनी चाहिए इसका मतलब यह कि शरीर में जो प्राण की अपान वृत्ति है, यही मानो उस यज्ञ की 'गार्हपत्य' अग्नि है। 'व्यान' दक्षिणाग्नि है। गार्हपत्य अग्नि रूप अपान से प्राण उठते हैं इस कारण मनुष्य प्राण ही इस यज्ञ की कल्पना में आह्वनीय अग्नि हैं। क्योंकि यज्ञ में आह्वनीय अग्नि गार्हपत्य से उठाकर लायी जाती है। पहले तीसरे प्रश्न के प्रसंग में भी प्राण को अन्नरूप आहुति जिसमें हवन की जाती है। इस व्युत्पत्ति

द्वारा आह्वनीय अग्नि ही बताया है। यह जो मुख्य प्राण का श्वास-प्रश्वास के रूप में शरीर के बाहर निकलना और भीतर लौट जाना है वही मानो इस यज्ञ में आहुतियां पड़ती हैं। इन आहुतियों द्वारा जो शरीर के पोषक-तत्व शरीर में प्रवेश कराये जाते हैं। वे ही हवि है, उस हवि को समस्त शरीर में आवश्यकतानुसार समभाव से पहुंचाने का कार्य समान वायु का है। इसलिए उसे समान कहते हैं। वही इस रूपक में मानो होता है अर्थात् हवन करने वाला ऋत्विक है। अग्नि रूप होने पर भी आहुतियों को पहुंचाने का कार्य करने के कारण इसे होता कहा गया है। पहले बताया हुआ मन ही मानो यजमान है। और उदानवायु ही मानो उस यजमान का अभीष्ट फल है। क्योंकि जिस प्रकार अग्नि होत्र करने वाले यजमान को अभीष्ट फल उसे अपनी ओर आकर्षित करके कर्म फल भुगताने के लिए कर्मानुसार स्वर्गादि लोकों में ले जाता है। उसी प्रकार यह उदान वायु मन को प्रतिदिन निद्रा के समय उसके कर्मफल के भोग स्वरूप ब्रह्मलोक में परमात्मा के निवासस्थान रूप हृदय गुहा में ले जाता है। वहां इस मन के द्वारा जीवात्मा निद्राजनित विश्राम रूप सुख का अनुभव करता है। क्योंकि जीवात्मा का निवास स्थान भी वही है। यह बात छठे मंत्र में कही है। यहां 'ब्रह्म गमयति' से यह बात नहीं समझनी चाहिए कि निद्राजनित सुख ब्रह्म प्राप्ति के सुख की किसी भी अंश में समानता कर सकता है। क्योंकि यह तो तामस सुख है और परब्रह्म परमेश्वर की प्राप्ति का सुख तीनों गुणों से अतीत है। गार्ग्य मुनि ने जो तीसरा प्रश्न किया था कि कौन देवता

स्वप्नों को देखता है। उसका उत्तर देते हुए महर्षि पिप्पलाद मुनि कहते हैं कि इस स्वप्न अवस्था में जीवात्मा ही मन और सूक्ष्म इन्द्रियों द्वारा अपनी विभूति का अनुभव करता है। इसका पहले जहां कहीं भी जो कुछ बार-बार देखा सुना और अनुभव किया हुआ है उसी को यह स्वप्न में बार-बार देखता, सुनता और अनुभव करता रहता है। परन्तु यह नियम नहीं है कि जाग्रत अवस्था में इसने जिस प्रकार जिस ढंग से और जिस जगह को घटना देखी, सुनी और अनुभव की है। उसी प्रकार यह स्वप्न में भी अनुभव करता है। अपितु स्वप्न में जाग्रत की किसी घटना का कोई अंश किसी दूसरी घटना के किसी अंश के साथ मिलकर एक नए ही रूप में इसके अनुभव में आता है। अतः कहा जाता है कि स्वप्नकाल में यह देखे और न देखे हुए को भी देखता है। सुने और न सुने हुए को भी सुनता है। अनुभव किये हुए और अनुभव न किये हुए को भी अनुभव करता है। जो वस्तु वास्तव में है, उसे और जो नहीं है, उसे भी स्वप्न में देख लेता है। इस प्रकार स्वप्न में यह विचित्र ढंग से सब घटनाओं को बार-बार अनुभव करता रहता है, और स्वयं ही सब कुछ बनकर देखता है। उस समय जीवात्मा के अतिरिक्त कोई दूसरी वस्तु नहीं है।

संस्कृत-

स यदा तेजसाभि भूतो भवत्यत्रैष देवः स्वप्नान्न
पश्यत्यथ तदैतस्मिञ्शरीर एतत्सुखं भवति।।

व्याख्या-गार्ग्य मुनि ने चौथी बात जो पूछी थी कि-"निद्रा में

सुख का अनुभव किसको होता है तो उसका उत्तर महर्षि इस प्रकार देते हैं। कि जब निद्रा के समय यह मन उदान वायु के अधीन हो जाता है। अर्थात् जब उदान वायु इस मन को जीवात्मा के निवास स्थान हृदय में पहुंचाकर मोहित कर देता है। उस निद्रावस्था में यह जीवात्मा मनके द्वारा स्वप्न की घटनाओं को नहीं देखता उस समय निद्राजनित सुख का अनुभव जीवात्मा को ही होता है। इस शरीर में सुख-दु:खों को भोगने वाला प्रत्येक अवस्था में प्रकृतिस्थ पुरुष अर्थात् जीवात्मा ही है।

गार्ग्य मुनि ने जो यह पांचवी बात पूछी थी कि ये मन, बुद्धि, इन्द्रियां और प्राण सबके सब किसमें स्थित हैं। किसके आश्रित हैं। उसका उत्तर महर्षि इस प्रकार देते हैं कहते हैं-प्यारे गार्ग्य जी आकाश में उड़ने वाले पक्षिगण जिस प्रकार सायं काल में लौटकर अपने निवास भूत वृक्ष पर आराम से बसेरा लेते हैं। ठीक उसी प्रकार आगे बतलाए जाने वाले पृथ्वी से लेकर प्राण तक जितने तत्व हैं वे सबके सब परब्रह्म पुरूषोत्तम में जो कि सबके आत्मा है। आश्रय लेते हैं। क्योंकि वे ही इन सबके परम आश्रय हैं। महर्षि पिप्पलाद जी कहते हैं कि हे गार्ग्य मुनि ये स्थूल और सूक्ष्म पांचों महाभूत दसो इन्द्रियां और उनके विषय चारों प्रकार के अन्त:करण और उनके विषय तथा पांच भेदों वाला प्राण वायु सबके सब परमात्मा के ही आश्रित हैं। कहना यह है कि स्थूल पृथ्वी और उसका कारण गन्ध तन्मात्रा, स्थूल जल तत्व, और उसका कारण रस तन्मात्रा, स्थूल तेज तत्व और उसका कारण रूप तन्मात्रा, स्थूल

वायु तत्व और उसका कारण स्पर्श तन्मात्रा स्थूल आकाश और उसका कारण शब्द तन्मात्रा इस प्रकार अपने कारणों सहित पांचों भूत तथा नेत्र इन्द्रिय और उसके द्वारा देखने में आने वाली वस्तुएं श्रोत्र इन्द्रिय और उसके द्वारा जो कुछ सुना जा सकता है वह सब घ्रणेन्द्रिय और उसके द्वारा सूंघने में आने वाले पदार्थ रसना इन्द्रिय और उसके द्वारा आस्वादन में आने वाले खट्टे-मीठे आदि सब प्रकार के रस त्वचा इन्द्रिय और उसके द्वारा बोले जाने वाले शब्द दोनों हाथ और उनके द्वारा पकड़ने में आने वाली सब वस्तुएं दोनों पैर और उनके गन्तव्य स्थान उपस्थ इन्द्रिय का सुख गुदा इन्द्रिय और उसके द्वारा त्यागा जाने वाला मल, मन और उसके द्वारा मनन करने में आने वाले सब पदार्थ बुद्धि और उसके द्वारा जानने में आने वाले सब पदार्थ अहंकार और उसका विषय चित्त और चित्त के द्वारा चिंतन में आने वाले पदार्थ प्रभाव और प्रभाव से प्रभावित होने वाली वस्तु एवं पांच वृत्ति वाला प्राण और उसके द्वारा जीवन देकर धारण किये जाने वाले सब शरीर ये सबके सब इसके कारण भूत पंचमेश्वर के ही आश्रित हैं।

संस्कृत-

एष हि द्रष्टा स्प्रष्टा श्रोता घ्रातारसयिता मन्ता बोद्धा कर्ता
विज्ञानात्मा पुरूष: स परेऽक्षर आत्मनि सम्प्रतिष्ठते।।

व्याख्या-देखने वाला, स्पर्श करने वाला सुनने वाला सूंघने वाला स्वाद लेने वाला, मनन करने वाला जानने वाला तथा संपूर्ण इन्द्रियों और मन के द्वारा समस्त कर्म करने वाला जो यह विज्ञान

स्वरूप पुरूष जीवात्मा है। यह भी उन परम अविनाशी सबके आत्मा परब्रह्म पुरूषोत्तम में ही स्थिति पाता है। उन्हें प्राप्त कर लेने पर ही इसे वास्तविक शान्ति मिलती है। अतः इसके भी परम आश्रय वे परमेश्वर ही है। यह निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है, कि जो कोई भी मनुष्य उन छाया रहित शरीर रहित लाल-पीले आदि सब रंगों से रहित विशुद्ध अविनाशी परमात्मा को जान लेता है। वह परम अक्षर परमात्मा को ही प्राप्त हो जाता है। इसमें तनिक भी संशय नहीं है। हे सौम्य जो कोई भी ऐसा है अर्थात् जो भी उस परब्रह्म परमेश्वर को प्राप्त कर लेता है। वह सर्वज्ञ और सर्व रूप हो जाता है। इस विषय में निम्नलिखित ऋचा है।

संस्कृत–

विज्ञानात्मा सह देवैश्च सर्वैः
प्राणा भूतानि सम्प्रतिष्ठिन्ति यत्र।
तदक्षरं वेदयते यस्तु सोम्य
स सर्वज्ञः सर्व मेवा विवेशेति।।

व्याख्या–सबके परम कारण जिन परमेश्वर में समस्त प्राण और पांचों महाभूत तथा समस्त इन्द्रियां और अन्तःकरण के सहित स्वयं विज्ञान स्वरूप जीवात्मा ये सब आश्रय लेते हैं। उन परम अक्षर अविनाशी परमात्मा को जो कोई जान लेता है। वह सर्वज्ञ है तथा सर्व रूप परमेश्वर में प्रविष्ट हो जाता है।

।। चतुर्थ-प्रश्न समाप्त ।।

।। अथ पञ्चमोऽध्यायः ।।

सत्य काम ने ओंकार की उपासना के विषय में प्रश्न किया है। उसने यही जिज्ञासा की है कि जो मनुष्य आजीवन सदा ओंकार की भली-भांति उपासना करता है। उसे उस उपासना के द्वारा कौन से लोक की प्राप्ति होती है। अर्थात् उसका क्या फल मिलता है। इसके उत्तर में महर्षि पिप्पलाद ''ओम्'' इस अक्षर की उसके लक्ष्य भूत परब्रह्म पुरुषोत्तम के साथ एकता करते हुए कहते हैं। सत्यकाम यह जो ऊँ है। वह अपने लक्ष्यभूत परब्रह्म परमेश्वर से भिन्न नहीं है। इसलिये यही परब्रह्म है। और यही उन परब्रह्म से प्रकट हुआ उनका विराट स्वरूप अपर ब्रह्म भी है। केवल इसी एक ओंकार का जप, स्मरण और चिंतन करके उसके द्वारा अपने इष्ट को चाहने वाला विज्ञान सम्पन्न मनुष्य उसे पा लेता है। भाव यह है कि जो मनुष्य परमेश्वर के विराट स्वरूप इस जगत के ऐश्वर्यमय किसी भी अंग को प्राप्त करने की इच्छा से ओंकार की उपासना करता है। वह अपनी भावना के अनुसार विराट स्वरूप परमेश्वर के किसी एक अंग को प्राप्त करता है और जो इसके अन्तर्यामी आत्मा पूर्ण ब्रह्म पुरुषोत्तम को लक्ष्य बनाकर उसको पाने के लिए निष्काम भाव से इसकी उपासना करता है। वह परब्रह्म पुरूषोत्तम को पा लेता है। यही बात आगे स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि ओंकार का चिंतन करने वाला मनुष्य यदि विराट परमेश्वर के भूः, भुवः और स्वः इन तीनों रूपों में भूलोक के ऐश्वर्य में आसक्त होकर उसकी प्राप्ति के लिए

ओंकार की उपासना करता है। तो वह मरने के बाद अपने प्राणप्रिय ऐश्वर्य की ओर प्रेरित होकर तत्काल पृथ्वी लोक में आ जाता है। ॐकार की पहली मात्रा ऋग्वेद स्वरूपा है। उसका पृथ्वी लोक से सम्बन्ध है। अत: उसके चिन्तन से साधक को ऋग्वेद की ऋचाएं पुन: मनुष्य शरीर में प्रविष्ट करा देती है। वह उस नवीन मनुष्य जन्म में ब्रह्मचर्य और श्रद्धा से सम्पन्न उत्तम आचरणों वाला श्रेष्ठ मनुष्य बनकर अतिशय ऐश्वर्य का उपभोग करता है। अर्थात् उसे नीची योनियों में नहीं भटकना पड़ता वह मरने के बाद मनुष्य अन्तर्यामी रूप से ओंकार वाच्य परब्रह्म परमेश्वर का जो यह जगत रूप विराट स्वरूप है अर्थात् जो कुछ देखने सुनने और समझने में आता है। यह उसका वास्तविक परम अविनाशी स्वरूप नहीं है। यह परिवर्तनशील है। अत: इसमें रहने वाला जीव अमर नहीं होता, वह चाहे ऊंची से ऊंची योनि को प्राप्त कर ले परन्तु जन्म मृत्यु के चक्र से नहीं छूटता इसके एक अंग पृथ्वी लोक की या पृथ्वी और अन्तरिक्ष इन दोनों लोकों की अथवा तीनों लोकों को मिलाकर संपूर्ण जगत की अभिलाषा रखते हुए जो उपासना करता है। जिसका इस जगत के आत्मरूप परब्रह्म पुरूषोत्तम की ओर लक्ष्य नहीं है। वरं जो जगत के बाह्य स्वरूप में ही आशक्त हो रहा है। वह उन्हें नहीं पाता अत: बार-बार जन्मता मरता रहता है। उन्हें तो वही साधक पा सकता है। जो अपने शरीर के बाहर भीतर और शरीर के मध्य स्थान हृदय देश में होने वाली बाहरी, भीतरी और बीच की समस्त क्रियाओं में होने वाले बाहरी भीतरी और बीच की

समस्त क्रियाओं में सर्वज्ञ ओंकार के वाच्यार्थ रूप एक मात्र परब्रह्म पुरूषोत्तम को व्याप्त समझता है। और ओंकार के द्वारा उनकी उपासना करता है। उन्हें पाने की ही अभिलाषा से ओंकार का जप स्मरण और चिन्तन करता है। वह ज्ञानी परमात्मा को पाकर फिर कभी अपनी स्थिति से विचलित नहीं होता है।

संस्कृत–

ऋग्भिरेतं यजुर्भिरन्त रिक्षं
सामर्भियत तत्कवयो वेदयन्ते।
तमोङ्कारेणैवायत नेनान्वेति विद्वान्
यत्तच्छान्तमजर ममृतमभयं परं चेति।।

व्याख्या–इस मंत्र में ब्राह्मण ग्रन्थ के वाक्यों में कही हुई बात का समर्थन किया है। भाव यह है कि एक मात्रा अर्थात् एक अंग को लक्ष्य बनाकर उपासना करने वाले साधक को ऋग्वेद की ऋचाएं मनुष्य लोक में पहुंचा देती है। दो मात्रा उपासना करने वाले को अर्थात् जगत के ऊंचे से ऊंचे स्वर्गीय ऐश्वर्य को लक्ष्य बनाकर ओंकार की उपासना करने वाले को यजुर्वेद के मन्त्र चंद्र लोक में ले जाते हैं। और जो इन सबमें परिपूर्ण इनके आत्मस्वरूप परमेश्वर की ओंकार के द्वारा उपासना करता है। उसको सामवेद के मन्त्र उस ब्रह्मलोक में पहुंचा देते हैं। जिसे ज्ञानी जन जानते हैं। संपूर्ण रहस्य को समझने वाले बुद्धिमान् मनुष्य बाह्य जगत् में आसक्त न होकर ओंकार की उपासना द्वारा समस्त जगत् के आत्मरूप उन परब्रह्मा परमात्मा को पा लेते हैं। जो परम शान्त सब प्रकार के विकारों से

रहित हैं। जहां न बुढ़ापा है, न मृत्यु है, न भय है, जो अजर-अमर निर्भय एवं सर्वश्रेष्ठ परम पुरूषोत्तम है।

।। पंचम-प्रश्न समाप्त ।।

।। अथ षष्ठोऽध्यायः ।।

श्री सुकेशा ऋषि ने अपनी अल्पज्ञता को प्रकट करते हुए सोलह कलाओं वाले पुरूष के विषय में प्रश्न करते हैं। बोले भगवन एक बार कोशल देश का राजकुमार हिरण्य नाभ मेरे पास आया था। उसने मुझसे पूछा—भारद्वाज क्या तुम सोलह कलाओं वाले पुरूष के विषय में जानते हो। तो मैंने उससे स्पष्ट कह दिया कि भाई मैं उसे नहीं जानता होता तो तुम्हें अवश्य बता देता। न बताने का कोई कारण नहीं है। तुम अपने मन में यह न समझना कि मैंने बहाना करके तुम्हारे प्रश्न को टाल दिया है, क्योंकि मैं झूठ नहीं बोलता झूठ बोलने वाले को मूलोच्छेद हो जाता है। वह इस लोक में या परलोक में कहीं भी प्रतिष्ठा नहीं पा सकता मेरी इस बात को सुनकर राजकुमार चुपचाप रथ पर सवार होकर जैसे आया था, वैसे ही लौट गया अब मैं आपके द्वारा उसी सोलह कलाओं वाले पुरूष का तत्व जानना चाहता हूं कृपया आप मुझे बतलायें कि वह कहां है, और उसका स्वरूप क्या है।

संस्कृत—

तस्मै स होवाच। इहै वान्तः शरीरे सोम्य स पुरूषो।
यस्मिन्नेताः षोडश कलाः प्रभवन्तीति।।

व्याख्या—अब उन सोलह कलाओं वाले पुरूष का संकेत मात्र किया गया है। महर्षि पिप्पलाद कहते हैं प्रिय सुकेशा जिन परमेश्वर से सोलह कलाओं का समुदाय संपूर्ण जगद्रूप उनका विराट शरीर उत्पन्न हुआ है। वे परम पुरूष हमारे इस शरीर के भीतर ही विराजमान हैं। उनको खोजने के लिए कहीं अन्यत्र नहीं जाना है। भाव यह है कि जब मनुष्य के हृदय में परमात्मा को पाने के लिये उत्कृष्ट अभिलाषा जागृत हो जाती है। तब वे उसे वहीं उसके हृदय में ही मिल जाते हैं। महासर्ग के आदि में जगत् की रचना करने वाले परमपुरूष परमेश्वर ने विचार किया कि मैं जिस ब्रह्माण्ड की रचना करना चाहता हूं उसमें एक ऐसा कौन सा तत्व डाला जाय कि जिसके न रहने पर मैं स्वयं भी उसमें न रह सकूं अर्थात् मेरी सत्ता स्पष्ट रूप से व्यक्त न रहे और जिसके रहने पर मेरी सत्ता स्पष्ट प्रतीत होती रहे। परब्रह्म परमेश्वर ने सर्वप्रथम सबके प्राण रूप सर्वात्मा हिरण्यगर्भ को बनाया उसके बाद शुभ कर्म में प्रवृत्त कराने वाली श्रद्धा अर्थात् आस्तिक बुद्धि को प्रकट करके फिर क्रमशः शरीर के उपादान भूत आकाश, वायु, तेज, जल और पृथ्वी इन पांच महाभूतों की सृष्टि की इन पांच महाभूतों का कार्य ही यह दृश्य मान संपूर्ण ब्रह्माण्ड है। पांच महाभूतों के बाद परमेश्वर ने मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार इन चारों के समुदाय रूप अन्तःकरण को रचा। फिर विषयों के ज्ञान एवं कर्म के लिये पांच ज्ञानेन्द्रियों तथा पांच कर्मेन्द्रियों को उत्पन्न किया फिर प्राणियों के शरीर की स्थिति के लिए अन्न की ओर अन्न के परिपाक द्वारा बल की सृष्टि की

उसके बाद अन्त:करण और इन्द्रियों के संयमरूप तपका प्रादुर्भाव किया उपासना के लिये भिन्न-भिन्न मंत्रों की कल्पना की अन्त:करण के संयोग से इन्द्रियों द्वारा किये जाने वाले कर्मों का निर्माण किया उनके भिन्न-भिन्न फल रूप लोकों को बनाया और उन सबके नाम रूपों की रचना की इस प्रकार सोलह कलाओं से युक्त इस ब्रह्माण्ड की रचना करके जीवात्मा के सहित परमेश्वर स्वयं इसमें प्रविष्ट हो गये इसीलिये वे सोलह कलाओं वाले पुरुष कहलाते हैं। हमारा यह मनुष्य शरीर भी ब्रह्माण्ड का ही एक छोटा-सा नमूना है। अत: परमेश्वर जिस प्रकार इस सारे ब्रह्माण्ड में है। उसी प्रकार हमारे इस शरीर में भी है। और इस शरीर में भी वे सोलह कलाएं वर्तमान हैं। उन हृदयस्थ परमदेव पुरूषोत्तम को जान लेना ही उस सोलह कला वाले पुरूष को जान लेना है। जिस प्रकार नाम और रूपों वाली ये बहुत-सी नदियां अपने उद्‌गम स्थान समुद्र की ओर दौड़ती हुई समुद्र में पहुंचकर उसी में विलीन हो जाती हैं। उनका समुद्र से पृथक् कोई नाम रूप नहीं रहता वे समुद्र ही बन जाती है। उसी प्रकार सर्व साक्षी सबके आत्म रूप नहीं रहता वे समुद्र ही बन जाती हैं। उसी प्रकार सर्व साक्षी सबके आत्म रूप परमात्मा से उत्पन्न हुई ये सोलह कलाएं (अर्थात्) यह संपूर्ण ब्रह्माण्ड प्रलय काल में अपने परमाधार परम पुरुष परमेश्वर में जाकर उसी में विलीन हो जाती है। फिर इन सबके अलग-अलग नाम रूप नहीं रहते एकमात्र परम पुरुष परमेश्वर के स्वरूप में तदाकार हो जाती है। अत: उन्हीं के नाम से उन्हीं के वर्णन से इनका वर्णन होता है। अलग नहीं उस

समय परमात्मा में किसी प्रकार का संकल्प नहीं रहता अत: वे समस्त कलाओं से रहित आत्मस्वरूप कहे जाते हैं। इस तत्व को समझने वाला मनुष्य भी उन परब्रह्म को प्राप्त होकर अजर और अमर हो जाता है। इस विषय पर आगे कहा जाने वाला मंत्र है।

संस्कृत–

अरा इव रथनाभौ कला यस्मिन् प्रतिष्ठता।
तं वेद्यं पुरुषं वेद यथा मा वो मृत्यु: परिव्यथा इति।।

व्याख्या–इस मंत्र में सर्वाधार परमेश्वर को जानने के लिए प्रेरणा करके उसका फल जन्म मृत्यु से रहित हो जाना बताया गया है। वेद भगवान मनुष्यों से कहते हैं जिस प्रकार रथ के पहिये में लगे रहने वाले सब अरे उस पहिए के मध्यस्थ नाभि में प्रविष्ट रहते हैं। उन सबका आधार नाभि है। नाभि के बिना वे टिक ही नहीं सकते उसी प्रकार ऊपर बतायी हुई प्राण आदि सोलह कलाओं के जो आधार हैं ये सब कलायें जिनके आश्रित हैं जिनसे उत्पन्न होती है। और जिनमें विलीन हो जाती है। वे ही जानने योग्य परब्रह्म परमेश्वर है। उन सर्वाधार परमात्मा को जानना चाहिए उन्हें जान लेने के बाद तुम्हें मौत का डर नहीं रहेगा फिर मृत्यु तुमको इस जन्म मृत्युयुक्त संसार में डालकर दु:ख नहीं कर सकेगी तुम लोग सदा के लिए अमर हो जाओगे। इतना उपदेश करने के बाद महर्षि पिप्पलाद ने परम भाग्यवान् सुकेशा आदि छहो ऋषियों को सम्बोधन करके कहा–ऋषियों इन परब्रह्म परमेश्वर के विषय में मैं इतना ही जानता हूं इनसे पर अर्थात् श्रेष्ठ अन्य कुछ भी नहीं है। मैंने तुम

लोगों से उनके विषय में जो कुछ कहना था सब कह दिया। इस प्रकार आचार्य पिप्पलाद जी से ब्रह्म का उपदेश पाकर उन छहों ऋषियों ने पिप्पलाद जी की पूजा की, और कहा—भगवन् आप ही हमारे वास्तविक पिता हैं, जिन्होंने हमें इस संसार-समुद्र के पार पहुंचा दिया ऐसे गुरु से बढ़कर दूसरा कोई हो ही कैसे सकता है। आप परम ऋषि हैं। ज्ञान स्वरूप हैं। आपको नमस्कार है। बार-बार नमस्कार है। अन्तिम वाक्य की पुनरावृत्ति ग्रन्थ की समाप्ति सूचित करने के लिये है।

॥ इति ॥

प्र.—कहाँ वास करना चाहिये ?

उ.—सज्जनों के साथ अथवा काशी में।

कबीर

कहत कबीरा राम न जा मुख ता मुख धूल भरी।
भजो रे भैया राम गोविन्द हरी।।

श्री सत्यनारायण व्रत कथा माहात्म्य

॥ अथ प्रथमोऽध्याय ॥

श्री व्यास उवाच

श्री वेद व्यास जी ने कहा—

एकदा नैमिषारण्ये ऋषयः शौनकादयः।
पप्रच्छुर्मुनयः सर्वे सूतं पौराणिकं खलु।।

एक समय नैमिषारण्य तीर्थ में नित्यक्रिया से निवृत्त होकर शौनक आदि अठ्ठासी हजार ऋषियों ने भी सूत जी से पूछा—हे प्रभु आप तो इतिहास एवं पुराणों के ज्ञाता है। अतः आपसे एक निवेदन है, कि इस कलियुग में वेद विद्या से रहित मनुष्यों को प्रभु शक्ति किस प्रकार से प्राप्त हो, तथा उनका उद्धार कैसे होगा? इसलिये हे मुनिश्रेष्ठ कोई ऐसा तप कहें, कोई ऐसा व्रत कहें, कोई ऐसा अनुष्ठान कहें, जिससे थोड़े ही समय में पुण्य मिल सके और मनोवांछित फल की भी प्राप्ति हो सके। हमारी सुनने की प्रबल इच्छा है।

सर्वशास्त्र ज्ञाता श्री सूत जी ने कहा—हे ऋषियों आप सबने सभी प्राणियों के हित के लिये यह बात पूछी है, क्योंकि परोपकार ही तो संतों का लक्षण है। इसलिये उस श्रेष्ठ व्रत को आप लोगों से कहूंगा जिस व्रत को नारद जी ने भगवान कमलापति से पूछा था। एक समय योगिराज नारद जी (परानुग्रह कांक्षया) दूसरों के हित की इच्छा से अनेक लोकों में घूमते हुए मृत्यु लोक में आ पहुंचे। वहाँ अनेक योनियों में जन्में प्राणी अपने कर्मों के द्वारा अनेकों दुःखों

से पीड़ित हैं। ऐसा देखकर नारद जी ने मन में विचार किया कि किस यत्न से इन प्राणियों के दु:ख का नाश हो। ऐसा मन में विचार कर श्री विष्णु लोक को गये–वहां श्वेत वर्ण और चार भुजाओं वाले सबके आधार भगवान नारायण को देखा। जिनके हाथों में शंख, चक्र, गदा और पद्म तथा गले में वनमाला सुशोभित है। नारद जी ने श्री विग्रह के दर्शन कर सुन्दर स्तुति की–हे भगवन्! आप अत्यन्त शक्ति से सम्पन्न हैं। मन तथा वाणी भी आपको नहीं पा सकती, आपका आदि, मध्य, अन्त भी नहीं है। निर्गुण स्वरूप सृष्टि के आदिभूत एवं भक्तों के दु:खों को नष्ट करने वाले आप हैं, भगवन् मेरा नमन् स्वीकार करें। नारद जी की स्तुति सुनकर भगवान् नारायण ने नारद जी से पूछा हे मुनि श्रेष्ठ आपके मन में क्या है। आपका यहां किस काम के लिये आगमन हुआ है। नि:संकोच कहो।

नारद जी ने कहा–हे प्रभु, मृत्युलोक में प्राय: सभी मनुष्य अपने-अपने कर्मों के द्वारा अनेक प्रकार के दु:खों से दु:खी हो रहे हैं। हे नाथ मुझ पर दया रखते हैं तो बतलाये कि उन मनुष्यों के सब दु:ख थोड़े से ही प्रयत्न से कैसे दूर हों।

भगवान श्रीहरि ने कहा–हे नारद! मनुष्यों की भलाई के लिये आपने बहुत अच्छी बात पूछी है। सो मैं उस महान शक्तिशाली व्रत को कहता हूं, श्री सत्यनारायण भगवान का व्रत महान् पुण्य देने वाला तथा स्वर्ग एवं मृत्युलोक में अत्यन्त दुर्लभ है।

श्री सत्यनारायण जी का व्रत पूर्ण विधि विधान से करने पर मनुष्य मृत्युलोक में सुख भोग कर अन्त में शरीर छोड़कर मोक्ष को

प्राप्त होता है।

भगवान् के श्रीमुख से वचन सुनकर, नारद जी ने पूछा हे प्रभो! इस व्रत का फल क्या है? क्या विधान है? किसने इस व्रत को किया है? तथा किस दिन इस व्रत को करना चाहिये। सब विस्तार से मेरी सुनने की अभिलाषा है।

भगवान् ने कहा–नारद! दु:ख शोक आदि को दूर करने वाला धन, धान्य को बढ़ाने वाला, सौभाग्य तथा सन्तान को देने वाला सभी स्थानों पर विजय श्री दिलाने वाला–भक्ति और श्रद्धा के साथ किसी भी दिन मनुष्य श्री सत्यनारायण की कथा शाम के समय ब्राह्मणों एवं बन्धुओं के साथ धर्म पारायण होकर पूजा करें।

भक्ति भाव से सवाया मात्रा में नैवेद्य, केले का फल, घी, दूध, और गेहूं का चूर्ण लेवे। गेहूं के अभाव में साठी का चूर्ण, शक्कर तथा गुड़ ले और सब भक्षण योग्य पदार्थ जमा करके भगवान् सत्यनारायण को अर्पण कर कथा श्रवण करें और ब्राह्मणों को भोजन एवं दक्षिणा दे सन्तुष्ट करें एवं बन्धु-बान्धवों सहित स्वयं भी भोजन करें। नृत्य गीत आदि का आचरण कर श्री सत्यनारायण भगवान् को स्मरण कर रात्रि व्यतीत करें। इस तरह से व्रत करने पर मनुष्यों की इच्छायें निश्चय ही पूर्ण होती हैं। विशेष कलिकाल में मृत्यु लोक में यही इच्छा पूर्ति एवं मोक्ष का सरल उपाय है।

।। इति श्री सत्यनारायण व्रत कथायां प्रथमोऽध्याय: ।।

॥ अथ द्वितीयोऽध्याय: ॥

सूत जी बोले हे ऋषियों जिसने पहले समय में इस व्रत को किया है, उसका इतिहास कहता हूँ, उसे ध्यान से सुनो। एक सुन्दर काशीपुरी नगरी में एक अति निर्धन ब्राह्मण रहता था, वह ब्राह्मण भूख और प्यास से व्याकुल हुआ नित्य ही पृथ्वी पर घूमता था। ब्राह्मणों से प्रेम करने वाले भगवान् श्री विष्णु जी ने (ब्राह्मण प्रिय:) ब्राह्मण को दुखी देखकर बूढ़े ब्राह्मण का रूप धारण कर उसके पास जा आदरपूर्वक पूछा–हे विप्र! नित्य दु:खी होकर पृथ्वी पर क्यों घूमते हो? हे श्रेष्ठ ब्राह्मण वह सब मुझसे कहो मैं सुनना चाहता हूँ। ब्राह्मण बोला–मैं बहुत निर्धन ब्राह्मण हूं भिक्षा के लिये पृथ्वी पर घूमता हूं (भिक्षार्थ वैविभ्रतेमहीम्)। हे भगवान् इस निर्धनता से छुटकारा दिलाने वाला कोई उपाय जानते हों तो कहें।

वृद्ध ब्राह्मण रूपधारी भगवान श्री विष्णु जी ने कहा–भगवान् सत्यनारायण मनवांछित फल देने वाले हैं। इसलिये हे ब्राह्मण उनका पूजन तुम्हारे लिये अभीष्ट है। जिसके करने से मनुष्य सब दु:खों से मुक्त होता है। ब्राह्मण को सारा व्रत का विधान बतलाकर बूढ़े ब्राह्मण का रूप धारण करने वाले सत्यनारायण भगवान् अन्तर्ध्यान हो गये।

जिस व्रत को वृद्ध ब्राह्मण ने बतलाया है, उस व्रत को मैं निश्चय ही करूंगा। यह निश्चय कर निर्धन ब्राह्मण को (रात्रौनिद्रा न लब्धवान्) रात्रि में नींद नहीं आई। वह प्रात:काल उठा नित्यक्रिया से निवृत्त

हो श्री सत्यनारायण जी के व्रत का निश्चय कर भिक्षा के लिये चला। भगवत् कृपा से उस दिन उसको भिक्षा में बहुत सा धन मिला जिससे बन्धु बान्धवों के साथ उसने सत्यनारायण व्रत किया। इस प्रकार सत्यनारायण की महिमा से ब्राह्मण सब दु:खों से छूटकर अनेक प्रकार की सम्पत्तियों से युक्त हो गया।

उस समय जो मनुष्य "श्री सत्यनारायण व्रत कथा" करता है, वह सब पापों से छूटकर दुर्लभ मोक्ष का अधिकारी बनता है। आगे जो पृथ्वी पर "सत्यनारायण व्रत कथा" करेगा वह मनुष्य सब दु:खों से छूट जायेगा।

सूत जी कहते हैं–कि इस तरह मैंने नारायण जी के श्री मुख से कहा हुआ यह व्रत मैंने तुमसे कहा–हे ऋषियों और क्या सुनना चाहते हो? ऋषि बोले हे–मुनीश्वर संसार में उस ब्राह्मण से सुनकर किस-किस ने इस व्रत को किया हम वह सब सुनना चाहते हैं। इसके लिये हमारे मन में श्रद्धा है।

सूत जी बोले हे मुनियों जिस-जिसने इस व्रत को किया है वह सब सुनों–एक समय वह ब्राह्मण धन और ऐश्वर्य के अनुसार बन्धु-बान्धवों के साथ व्रत करने को तैयार हुआ। उसी समय एक लकड़हारा आया, और बाहर लकड़ियों का गठ्ठर रखकर ब्राह्मण के मकान में गया। प्यास से दु:खी लकड़हारे ने ब्राह्मण को व्रत करते देख ब्राह्मण को नमस्कार कर कहने लगा–कि आप यह क्या कर रहे हैं? और इसके करने से क्या फल मिलता है, कृपा कर मुझसे कहें।

ब्राह्मण ने कहा! सभी मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाला यह श्री सत्यनारायण भगवान् का व्रत है। इसी व्रत के प्रभाव से मेरे यहां धन-धान्य आदि की वृद्धि हुई है।

ब्राह्मण से इस व्रत के बारे में जानकर लकड़हारा बहुत प्रसन्न हुआ चरणामृत और प्रसाद ले अपने घर को गया।

लकड़हारे ने मन में इस प्रकार का संकल्प किया कि आज ग्राम में लकड़ी बेचने से जो धन मुझे मिलेगा, उसी से सत्यनारायण देव का उत्तम व्रत करुंगा। यह मन में विचार कर बूढ़ा लकड़हारा अपने सिर पर लकड़ियां रखकर जिस नगर में धनिक लोग रहते थे वह ऐसे सुन्दर नगर में गया। इस दिन अन्य दिनों की अपेक्षा लकड़ियों का दाम चौगुनी मात्रा में मिला। तब वह बूढ़ा लकड़हारा दाम ले अति प्रसन्न होकर सत्यनारायण व्रत कथा की सामग्री सवाया मात्रा में लेकर अपने घर गया। उसने अपने बन्धु-बान्धवों एवं ब्राह्मणों को एकत्रित कर विधि विधान से भगवान् सत्यनारायण के व्रत को किया। उस व्रत के प्रभाव से बूढ़ा लकड़हारा धन, पुत्र आदि से युक्त हुआ और संसार के समस्त सुखों को भोगकर बैकुण्ठ को गया।

।। इति सत्यनारायण व्रत कथायां द्वितीयो-अध्यायः ।।

।। अथ तृतीयोऽध्यायः ।।

श्री सूत जी बोले-हे श्रेष्ठ ऋषियों अब ध्यानपूर्वक आगे की कथा सुनो। प्राचीन समय में उल्कामुख नाम का एक सुबुद्धिमान

राजा था। उल्कामुख सत्यवक्ता एवं जितेन्द्रिय था। वह प्रतिदिन देव स्थानों में जाता तथा गरीबों को धन देकर उन्हें सन्तुष्ट करता था। ब्राह्मणों को दान आदि देकर तृप्त करता।

उसकी पत्नी कमल के समान मुख वाली और सती साध्वी थीं भद्रशीला नदी के तट पर दोनों दम्पतियों ने भगवान् सत्यदेव का व्रत किया। जिस समय राज व्रत एवं पूजन कर रहा था उसी समय वहां पर एक साधु वैश्य आया। उसके पास व्यापार के लिये बहुत-सा धन था। अपनी नौका को नदी किनारे ठहराकर राजा के पास गया और राजा को व्रत करते देख विनयपूर्वक पूछने लगा। हे राजन् भक्ति युक्त चित्त से यह आप क्या कर रहे हैं? मेरी सुनने की इच्छा है। यह आप मुझे बताने की कृपा करें। राजा बोला-हे साधू! अपने बान्धवों के साथ पुत्र प्राप्ति के लिये यह महाशक्तिशाली सत्यनारायण भगवान् का पूजन एवं व्रत कर रहा हूं। राजा के वचन सुनकर वह साधू वैश्य आदर के साथ बोला। हे राजन्! मुझसे इस व्रत का सब विधान कहे। मेरे भी कोई सन्तान नहीं है, अतः आपके कथनानुसार इस व्रत को मैं भी करुंगा। राजा से व्रत का विधान सुन व्यापार से निवृत्त हो आनन्द के साथ साधु वैश्य घर गया। साधु नेअपनी स्त्री से सन्तान देने वाले उस व्रत का समाचार सुनाया और कहा जब मेरे सन्तान होगी तब मैं इस व्रत को करूंगा। साधु ने ऐसे वचन अपनी पत्नी लीलावती से कहे। एक दिन उसकी पत्नी लीलावती आनन्दित हो सांसारिक धर्म में प्रवृत्त हो सत्यदेव की कृपा से गर्भवती हुई। तथा समय बीतने पर दसवें महीने में उसके यहां एक

सुन्दर कन्या ने जन्म लिया। वह कन्या दिनोंदिन इस प्रकार बढ़ने लगी जैसे शुक्ल पक्ष का चन्द्रमा बढ़ रहा हो। इस लिये उस कन्या का नाम कलावती रखा गया। तब लीलावती ने मीठे शब्दों में अपने पति से कहा कि आपने जो संकल्प किया था कि सन्तान होने पर भगवान् सत्यदेव का व्रत करूंगा सो भगवत् कृपा से हमारे यहां कन्या ने जन्म लिया है। अत: आप संकल्पानुसार उस व्रत को करिये।

साधु बोला–हे प्रिये! इसके विवाह पर कर लूंगा जल्दी क्या है? अपनी पत्नी को आश्वासन दे वह नगर को गया। इधर कलावती पितृ गृह में वृद्धि को प्राप्त हो गई। साधू ने जब नगर में सखियों के साथ अपनी पुत्री को देखा तो तुरन्त ही दूत को बुलाकर कहा–कि पुत्री कलावती के लिये कोई सुयोग्य वणिक् पुत्र देखकर लाओ।

साधु की आज्ञा पाकर दूत कंचननगर पहुंचा और बड़ी खोज एवं देखभाल कर लड़की के वास्ते सुयोग्य वणिक पुत्र को ले आया। उस सुयोग्य वणिक् पुत्र को देखकर साधु वैश्य ने अपने भाई बन्धुओं सहित प्रसन्न चित्त अपनी पुत्री कलावती का विवाह उसके साथ कर दिया। लेकिन दुर्भाग्यवश विवाह के समय भी सत्यदेव का व्रत एवं पूजन भूल गया।

तब भगवान् सत्यनारायण कुपित हो गए और श्राप दिया कि तुम्हें दारुण दु:ख प्राप्त होगा। अपने कार्य में कुशल साधु बनिया अपने जामाता सहित समुद्र के समीप व्यापार करने रत्नसारपुर पहुंचा। और वहां चन्द्रकेतु राजा के नगर में दोनों ससुर जमाई व्यापार करने लगे।

एक दिन भगवान् सत्यनारायण की माया से प्रेरित होकर दो चोर राजा के धन को चुराकर भागे जा रहे थे। किन्तु पीछे से राजा के दूतों को आता देख वे दोनों चोर घबराकर भागते–भागते धन को वहीं चुपचाप छुपा दिया, जहां दोनों ससुर–जमाई ठहरे हुए थे। तब दूतों ने उस साधु वैश्य के पास राजा के धन को रखा देखकर दोनों को बांधकर ले गये। और प्रसन्नता से दौड़ते हुए राजा के समीप जाकर बोले ये दो चोर हम पकड़कर ले आये हैं आप देखकर आज्ञा दें। राजा की आज्ञा से उनको कठिन कारावास में डाल दिया। और उनका धन छीन लिया। सत्यदेव के कुपित होने से इधर साधु वैश्य की पत्नी और पुत्री कलावती भी बहुत दु:खी हुई। और घर पर जो धन रखा था चोर चुरा कर ले गये।

भूख प्यास से अति दुखित हो अन्न की चिन्ता में कलावती एक ब्राह्मण के घर गई। वहां उसने सत्यनारायण व्रत होते देखा। उसने कथा सुनी तथा प्रसाद ग्रहण कर रात को घर आई माता ने कलावती से कहा–हे पुत्री दिन में कहां रही? तेरे मन में क्या है।

कलावती बोली हे माता! मैंने एक ब्राह्मण के घर सत्यनारायण का व्रत देखा है। पुत्री के वचन सुनकर लीलावती भगवान् के पूजन की तैयारी करने लगी लीलावती ने परिवार और बन्धुओं सहित भगवान् का पूजन एवं व्रत किया और यह वर मांगा कि मेरे पति और दामाद शीघ्र ही सकुशल लौट आए। और प्रार्थना की हम सबका अपराध क्षमा करें। भगवान सत्यदेव इस व्रत से सन्तुष्ट हुए। और राजा चन्द्रकेतु को स्वप्न में दिखाई दिये और कहा–हे राजन्

दोनों बन्दी वैश्य प्रात:काल ही छोड़ दो और उनका सब धन जो तुमने ग्रहण किया है लौटा दो नहीं तो सब धन, राज्य पाट आदि सब नष्ट कर दूंगा। इतना कहकर भगवान् अन्तर्ध्यान हो गये।

प्रात:काल राजा चन्द्रकेतु ने सभा में अपना स्वप्न सुनाया और दोनों बन्दी वैश्यों को मुक्त कर सभा में लाने की आज्ञा दी। दोनों को सभा में लाया गया। आते ही दोनों ने राजा चन्द्रकेतु को नमस्कार किया। राजा चन्द्रकेतु मीठे वचनों से बोले हे महानुभवों भावी वस ऐसा कठिन दु:ख प्राप्त हुआ है। अब कोई भय नहीं है। ऐसा कहकर उन दोनों का क्षौर कर्म करा नए-नए वस्त्राभूषण पहनावाकर तथा आदर के साथ उनका जितना धन लिया था उससे दूना कर धन दिलाकर विदा किया। साधू वैश्य ने भगवान् का धन्यवाद कर मङ्गलाचरण कर अपने नगर के लिये प्रस्थित हुआ।

जापर कृपा राम की होई।
तापर कृपा करहिं सब कोई।।

।। इति सत्यनारायण व्रत कथायां तृतीयोऽध्याय: ।।

।। अथ चतुर्थोऽध्याय: ।।

सूत जी बोले—वैश्य ने मंगलाचार करके यात्रा आरंभ की और और अपने नगर को चला। उनके थोड़ी दूर पहुंचने पर दण्डी वेशधारी सत्यनारायण भगवान ने उनसे पूछा हे साधू आपकी नाव में क्या है? अभिमानी वणिक हंसता हुआ बोला हे दण्डी! आप क्यों पूछते हैं? क्या मेरा धन लेने की इच्छा है? मेरी नाव में तो बेल तथा

पत्ते आदि भरे हैं। वैश्य का कठोर वचन सुनकर भगवान ने कहा तुम्हारा वचन सत्य हो। ऐसा कहकर दण्डी वहां से चले गये और कुछ दूर जाकर समुद्र के किनारे बैठ गये। दण्डी के जाने पर वैश्य ने नित्यक्रिया करने के बाद नाव को ऊँची उठी देखकर अचम्भा किया तथा नाव में बेल आदि देखकर मूर्छित हो जमीन पर गिर पड़ा। फिर मूर्छा खुलने पर बहुत शोक करने लगा तब उसका दामाद बोला आप शोक न करें यह दण्डी का श्राप है, अत: उनकी शरण में चलना चाहिए तभी हमारी मनोकामना पूरी होगी। दामाद के वचन सुन वह दण्डी के पास पहुंचा। अत्यन्त भक्तिभाव से प्रणाम करके बोला—मैंने जो आपसे असत्य वचन कहे थे, उसके लिए क्षमा कीजिए ऐसा कहकर महान् शोकातुर हो रोने लगा तब दण्डी भगवान बोले हे वैश्यपुत्र मेरी आज्ञा से बार-बार तुम्हें दु:ख प्राप्त हुआ है तू मेरी पूजा से विमुख हुआ है, साधू वणिक् बोला हे भगवान् आपकी माया से मोहित ब्रह्मा आदि भी आपके कृपा को नहीं जानते तब मैं अज्ञानी कैसे जान सकता हूं? आप प्रसन्न होइए मैं सामर्थ्य के अनुसार आपकी पूजा करूंगा। मेरी रक्षा करो और पहले की तरह मेरा सामान नौका में भर जाय। उसके भक्तियुक्त वचन सुनकर भगवान् प्रसन्न हो गये, और उसकी इच्छानुसार वर देकर अन्तर्ध्यान हो गये। तब उन्होंने नाव पर आकर देखा कि नाव धन से परिपूर्ण है। फिर वह भगवान् सत्यदेव का पूजन कर साथियों सहित अपने नगर को चला जब अपने नगर के निकट पहुंचा तब दूत को घर भेजा। दूत ने साधू के घर जा उसकी स्त्री को नमस्कार कर कहा

कि साधू अपने दामाद सहित इस नगर के समीप आ गये हैं। ऐसा वचन सुन लीलावती ने बड़े हर्ष के साथ सत्यदेव का पूजन कर पुत्री से कहा मैं अपने पति के दर्शन करने जाती हूं, तुम कार्य पूर्ण करके शीघ्र आना माता के वचन सुनकर कलावती प्रसाद छोड़ पति के पास गई। प्रसाद की अवज्ञा के कारण सत्यदेव ने रुष्ट हो उनके पति को नाव सहित पानी में डुबा दिया। कलावती अपने पति को न देखकर रोती हुई जमीन पर गिर गई इस तरह नौका को डूबा हुआ तथा कन्या को रोता देख साधू दुखित हो बोला–हे प्रभो मुझसे या मेरे परिवार से जो भूल हुई उसे क्षमा करो। उसके दीन वचन सुनकर भगवान् सत्यदेव को दया आ गई और आकाशवाणी के द्वारा बोले–हे साधू तेरी कन्या ने मेरे प्रसाद का त्यागा है इसलिये इसका पति अदृश्य हुआ है प्रसाद ग्रहण कर आये तो इसका पति इसे जरूर मिल जायेगा। आकशवाणी को सुन कलावती ने घर पहुंचकर प्रसाद खाया फिर उसने आकर अपने पति के दर्शन किए तब वैश्य परिवार के सब लोग प्रसन्न हुए। फिर साधू ने बांधवों सहित सत्यदेव का विधिपूर्वक पूजन किया। उस दिन से हर पूर्णिमा व संक्रान्ति को सत्यनारायण भगवान् का पूजन करने लगा। फिर इस लोक में सुख भोगकर स्वर्ग को चला गया।

॥ इति सत्यनारायण व्रत कथायां चतुर्थोऽध्यायः ॥

॥ अथ पंचमोऽध्यायः ॥

सूत जी बोले हे– ऋषियों! मैं भी कथा कहता हूं सुनो। प्रजा पालन में लीन तुंगध्वज नाम का राजा था। उसने भी भगवान् का प्रसाद त्यागकर बहुत दुःख पाया। एक समय वन में जाकर के पशुओं को मारकर बड़ पेड़ के नीचे आया उसने भक्ति भाव से ग्वालों को बांधवों सहित सत्यनारायण की पूजा करते देखा, राजा देखकर भी अभिमान वश न वहां गया और न ही नमस्कार किया। जब ग्वालों ने भगवान का प्रसाद उसके सामने रखा तो वह प्रसाद को त्यागकर अपनी सुन्दर नगरी को चला गया। वहां उसने अपना सब कुछ नष्ट पाया। तो वह जान गया कि यह सब कुछ भगवान ने किया है, तब वह विश्वास कर ग्वालों के समीप गया और विधिपूर्वक पूजन कर प्रसाद खाया तो सत्यदेव की कृपा से सब जैसा था वैसा हो गया इस परम दुर्लभ व्रत को करेगा भगवान् की कृपा से उसे धन–धान्य की प्राप्ति होगी। निर्धन धनी होता है, बन्दी बन्धन से मुक्त होकर निर्भय हो जाता है, सन्तान हीनों को संतान प्राप्त होती है सब मनोरथ पूर्ण होकर अन्त में बैकुण्ठ धाम को जाता है।

जिन्होंने पहले इस व्रत को किया है उसके दूसरे जन्म की कथा कहता हूं। वृद्ध शतानन्द ब्राह्मण सुदामा का जन्म लेकर मोक्ष को पाया। उल्कामुख नाम का राजा दशरथ होकर बैकुण्ठ को प्राप्त हुआ, साधू नाम के वैश्य ने मौरध्वज बनकर अपने पुत्र को आरे

से चीरकर मोक्ष प्राप्त किया। महाराज तुंगध्वज ने स्वयंभू होकर भगवान् के भक्तियुक्त कर्म कर मोक्ष को प्राप्त किया।

।। इति श्री सत्यनारायण व्रत कथायां पंचमोऽध्यायः ।।

स्वार्थवश मनुष्य दया धर्म छोड़ते हैं।
एक-दूसरे के प्रति हिंसा सब करते हैं।।
तुष्ट करने देवता को भक्ति पूजन करते हैं।
शुभ कर्म में क्यों फिर पशु निधन करते हैं।।
लोभ में पड़कर पशुमार कर खाते हैं।
परस्पर में कहते हैं इससे धर्म खुश होते हैं।
लोभ से पाप, पाप से मृत्यु शास्त्र का कथन है।
अहिंसा ही परम धर्म श्रेष्ठ यह शास्त्र का वचन है।
हत्या कर सकते हो इच्छा जब होती है।
जीवन दे सकते नहीं इच्छा जब होती है।

।। श्री सत्यनारायण जी की आरती ।।

जय लक्ष्मी रमणा श्री जय लक्ष्मी रमणा,
सत्यनारायण स्वामी जन पातक हरणा ।।जय...।।
रत्न जड़ित सिंहासन अद्भुत छबि राजे,
नारद कहत निरंजन घन्टा ध्वनि बाजे ।।जय...।।
प्रकट भये कलि कारण द्विज को दर्श दियो,
बूढ़ो ब्राह्मण बनकर कंचन महल कियो ।।जय...।।
दुर्बल भील करालो इस पर कृपा करो,
चन्द्र चूड़ एक राजा तिनकी विपत्ति हरी ।।जय...।।
वैश्य मनोरथ पायो श्रद्धा तज छीनी,
सो फल भोग्यो प्रभुजी फेर स्तुति कीनी ।।जय...।।
भाव भक्ति के कारण क्षण-क्षण रुप धरो,
श्रद्धा धारण कीनी तिनको काज सर्‌यो ।।जय...।।
ग्वाल बाल संग राजा वन में भक्ति करी,
मन वांछित फल दीना दीन दयाल हरी ।।जय...।।
चढ़त प्रसाद सवाया कदली फल मेवा,
धूप दीप तुलसी से राजी सत्य देवा ।।जय...।।
श्री सत्यनारायण जी की आरती जो कोई गावे,
भजत हरिहर स्वामी मनवांछित फल पावै ।।जय...।।

।। इति सत्यनारायण नीराजनम् ।।

ॐ गँ गणपतये नमः

॥ श्री त्रिपुर सुन्दर्यै नमः ॥

॥ वर्ष भर में होने वाले उत्सव एवं त्योहार ॥

हमारे हिन्दू धर्म (सनातम धर्म) में चैत्र प्रतिपदा (एकम्) को घट-स्थापन, दीपक जलाकर एवं धान्य को बोकर नव संवत का शुभारम्भ करते हैं।

॥ चैत्र-शुक्ल पक्ष बसन्त ऋतु में नवरात्रि (दुर्गा) पूजन ॥

चैत्र शुक्ला एकम् से लेकर नवमी तक आदि शक्ति दुर्गा की उपासना करनी चाहिये। शास्त्रों में कहा है, 'योन पूजयेत् नित्यं चण्डिकां-भक्तवत्सलाम्। भस्मी कृत्यास्य पुण्यानि निर्दहेत परमेश्वरि।।'

जो व्यक्ति मां की प्रतिदिन पूजन नहीं करता है, उसके जन्म-जन्मान्तर के पुण्य भस्म हो जाते हैं, अतः प्रतिदिन यदि मां का पूजन न कर सकें तो नवरात्रों में मां की पूजा (उपासना) निश्चित रूप से प्रत्येक मानव को करना ही चाहिये।

स्नान आदि से निवृत्त होकर शुद्ध आसन पर बैठकर आचमन कर दीप प्रज्वलित कर गणेश, कलश, नवग्रह, षोऽश मातृका, देवी पूजन तथा पुस्तक पूजन करके स्वयं या ब्राह्मण द्वारा दुर्गा-सप्तशती के 700 मंत्रों से दुर्गा जी का पाठ प्रतिपदा (01) से नवमी (9) तक करना चाहिये। यदि ये विधान करने में आसक्त हो तो स्वयं

देवी कवच तथा सिद्ध कुजिंका स्तोत्र का पाठ एवं देवी पूजन कन्या पूजन, बटुक पूजन, प्रतिदिन अवश्य करना चाहिये। फलाहार आदि के द्वारा या जैसे शरीर की व्यवस्था बने उसी प्रकार से जगदम्बा दुर्गा की आराधना करनी चाहिये।

यदि उस दिन चित्रा या वैधृति नक्षत्र हो तो अभिजित् मुहूर्त में घट स्थापन करना चाहिये। यदि अधिक पूजन सामग्री न हो तो गन्ध (चंदन) पुष्प, धूप, दीप, भोग के लिये नैवेद्य पंचोपचार से ही पूजन कर उपासना करनी चाहिये।

अशौच (अशुद्ध अवस्था) में ब्राह्मणों के द्वारा कराना चाहिये। इष्ट देव की प्रसन्नता के लिये रामभक्तों के लिये नवाह्न पारायण रामायण का पाठ करना चाहिये। दुर्गा पाठ दशांश हवन के निमित्त एक पाठ और करना चाहिये। तथा रामायण पाठ पूर्ण होने के बाद संकीर्तन होना चाहिये। वैसे तो कभी भी किसी का अपमान नहीं होना चाहिये। फिर भी ध्यान रहे अनुष्ठान मात्र में किसी का भी अपमान नहीं करना चाहिये। परन्तु नवरात्र देवी उपासना में स्त्री जाति का अपमान नहीं सम्मान हो यह विशेष ध्यान रखना चाहिये। दुर्गा पाठ में लिखा है–

या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्तिथा।
नमस्तस्यै-नमस्तस्यै-नमस्तस्यै नमो नमः।।

लक्ष्मी स्तोत्र में आया है, तव कला सर्व योषितः–स्त्री मात्र में तेरी कला है।

विशेष–नवमी पूजन के उपरान्त कन्या भोज, बटुक भोज और

ब्राह्मण भोज कराना चाहिये।

प्रथम दिन–माँ दुर्गा का पूजन ''शैल पुत्री'' के रूप में होता है।

द्वितीय दिन–माँ दुर्गा का पूजन ''ब्रह्मचारिणी'' के रूप में होता है।

तृतीय दिन–माँ दुर्गा का पूजन ''चन्द्रघण्टा'' के रूप में होता है।

चतुर्थ दिन–माँ दुर्गा का पूजन ''कूष्माण्डा'' के रूप में होता है।

पांचवे दिन–माँ दुर्गा का पूजन ''स्कन्दमाता'' के रूप में होता है।

छठे दिन–माँ दुर्गा का पूजन ''कात्यायनी'' के रूप में होता है।

सातवें दिन–माँ दुर्गा का पूजन ''कालरात्री'' के रूप में होता है।

आठवें दिन–माँ दुर्गा का पूजन ''महागौरी'' के रूप में होता है।

नवम दिन–माँ दुर्गा का पूजन ''सिद्धिरात्री'' के रूप में होता है।

।। इति ।।

॥ गनगौर व्रत ॥ (सौभाग्य तृतीया)

यह व्रत चैत्र शुक्ला तृतीया को मनाया जाता है। इसी दिन सधवा स्त्रियां व्रत रखती है। कहा जाता है कि इसी दिन भगवान शंकर ने अपनी अर्द्धांगिनी पार्वती को तथा पार्वती ने तमाम स्त्रियों को सौभाग्य वर दिया था। पूजन के समय रेणुका की गौरी (गौर) बना करके उस पर चूड़ी, महावर, सिंदूर चढ़ाने का विशेष फल है। चन्दन अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य से पूजन करने, सुहाग सामग्री चढ़ाने तथा भोग लगाने का नियम है। यह व्रत रखने वाली स्त्रियों को गौर पर चढ़े सिन्दूर को अपनी मांग में लगाना चाहिए।

व्रत की कथा

एक समय शंकर भगवान् नारद एवं पार्वती को साथ लेकर पृथ्वी पर चल दिये भ्रमण करते हुए तीनों जब एक गांव में पहुंचे। उसी दिन चैत्र शुक्ला तृतीया थी गांव के लोगों को जब शंकर जी की सूचना मिली तो धनी स्त्रियां उनके पूजनार्थ नाना प्रकार के रूचिकर भोजन बनाने में लग गई। इसी प्रकरण से उन कुलवन्त स्त्रियां को काफी देर हो गई दूसरी ओर कुलीन (निर्धन) घर की स्त्रियां जैसी बैठी थी, वैसे ही थाल में चावल, अक्षत, जल लेकर शिव पार्वती की पूजा की। अपार श्रद्धा भक्ति में निमग्न उन स्त्रियों को पार्वती ने पहचाना तथा उनकी भक्ति रूपी वस्तुओं को स्वीकार कर उन सबके ऊपर सुहाग रूपी हरिद्रा (हल्दी) छिड़क दिया इस प्रकार मातेश्वरी गौरी से आशीर्वाद तथा मंगल कामनाएं प्राप्त कर वे औरतें अपने-अपने घर चली आईं। तत्पश्चात् कुलवन्त स्त्रियां सोलहों श्रंगार छप्पनों प्रकार के व्यंजन सोने के थाल में सजाकर आई। तब भगवान शंकर ने शंका व्यक्त करते हुए कहा पार्वती जी। तुमने तमाम सुहाग प्रसाद तो साधारण स्त्रियों में बांट दिया। अब इन सबको क्या दोगी? पार्वती जी ने कहा आप उनकी बात छोड़ दें। उन्हें ऊपरी पदार्थों से निर्मित रस दिया है। इसलिये उनका सुहाग अक्षुण्य रहेगा परन्तु इन लोगों को मैं अपनी अंगुली चीरकर रक्त सुहाग रस दूंगी जो मेरे समान ही सौभाग्य शालिनी बन जाएंगी। अस्तु जब कुलीन स्त्रियां शिव पार्वती का पूजन कर चुकी तो देवी

पार्वती ने अपनी अंगुली चीरकर उसके रक्त को उनके ऊपर छिड़क दिया और कहा तुम सब वस्त्राभूषणों का परित्याग कर माया मोह से रहित हो तथा तन, मन, धन से पति सेवा करना तुम्हें अखंड सौभाग्य की प्राप्ति होगी। भवानी का यह आशीर्वचन सुनकर तथा प्रणाम करके कुलीन स्त्रियां भी अपने-अपने घर लौट आईं तथा पति परायण बन गई। छिड़का खून जिसके ऊपर जैसा पड़ा था उसने वैसा ही सौभाग्य प्राप्त किया। इसके पश्चात् पार्वती जी ने पति की आज्ञा से नदी में जाकर स्नान किया। बालू के महादेव बनाकर पूजन किया भोग लगाया तथा प्रदक्षिणा करके दो कणों का प्रसाद खाकर पार्वती ने मस्तक पर टीका लगाया उसी समय उस पार्थिव लिंग से शिव जी प्रकट हुए तथा पार्वती को वरदान दिया आज के दिन से जो स्त्री मेरा पूजन तुम्हारा व्रत करेगी उनके पति चिरंजीव रहेंगे तथा अंत में उन्हें मोक्ष मिलेगा। भगवान शिव यह वरदान देकर अन्तर्धान हो गए। तत्पश्चात् पार्वती जी नदी तट से चलकर उस स्थान पर आई जहां पर, पतिदेव तथा ऋषि प्रवर नारद को छोड़कर गई थी अतएव शिव विलम्ब का कारण पूछा तो इस पर पार्वती जी ने उत्तर दिया, मेरे भाई भावज नदी के किनारे मिल गए थे। उन्होंने मुझसे दूध भात खाने तथा ठहरने का आग्रह किया, इसी कारण से नाथ मुझे आने में देर लग गई ऐसा सुनकर अन्तर्यामी भगवान शंकर स्वयं दूध भात खाने के लिए चल दिये। पार्वती जी ने जब समझा कि ढ़ोल का पोल खुल जाएगा तो अधीर होकर पति से प्रार्थना करने लगी। शंकर जी के पीछे चलती पार्वती जी ने जब

नदी की ओर देखा तो एक सुन्दर माया का एक महल दिखाई दिया। जिसमें शिव जी के साले तथा साले की पत्नी विद्यमान थे। जब भगवान शिव एवं पार्वती जी वहां पहुंचे तो उन लोगों ने अगवानी एवं स्वागत सत्कार किया। दो दिन तक आतिथ्य ग्रहण किया तीसरे दिन सुबह पार्वती जी के द्वारा चलने के अनुग्रह को ठुकरा दिया इससे देवी कुपित हो गई, और अकेली ही चल पड़ी, मजबूर होकर महादेव को साथ चलना पड़ा नारद भी साथ में थे। तीनों लोग चलते-चलते काफी दूर निकल गये। सायंकाल होने पर शिवजी ने बहाना किया कि मैं तुम्हारे मायके में अपना माला ही भूल गया। इस पर पार्वती जी माला लाने को तैयार हुईं, किन्तु शिवजी की आज्ञा से न जा सकीं। नारद जी वहां गये और देखने पर महल का कहीं नामोनिशान ही नहीं है, तो माला कहां मिले। वहां तो अन्धकार में हिंसक पशु विचरण कर रहे हैं। इस डरावनें वातावरण को देखकर नारद जी बहुत आश्चर्य में पड़े। उसी क्षण अचानक बिजली चमकने से वृक्ष पर टंगी माला दिखाई दी। माला लेकर नारद जी भयातुर अवस्था में भगवान शिव जी के पास आये। और अपनी विपत्ति का आद्योपान्त वर्णन कह सुनाया।

इस प्रसंग को सुनकर हंसते हुए शिव जी ने उसका मूल कारण सुनाया। कहा—हे नारद आपने जो कुछ भी देखा वह पार्वती की अनोखी माया का प्रतिफल है। वे अपनी मिट्टी के शिवलिंग पूजन की बात आपसे गुप्त रखना चाहती थीं।

इसलिये उन्होंने झूठा बहाना बनाया था। फिर उसे सत्या सत्य

करने के लिये उन्होंने अपने पतिव्रत धर्म की शक्ति से माया के महल की रचना की। अपितु सच्चाई को सामने लाने के लिये ही मैंने माला लाने के लिये तुम्हें दुबारा उस स्थान पर भेजा था।

ऐसा जानकर महर्षि नारद जी ने माता पार्वती के पतिव्रत प्रभाव से उत्पन्न घटना की बार-बार प्रशंसा की। जहां तक उनके द्वारा पूजन की बात को छिपाने का प्रश्न है, वह भी समीचीन ही जान पड़ता है, क्योंकि पूजन छिपकर ही करनी चाहिये। मेरा यह आशीर्वचन है कि जो स्त्रियां इस दिन को गुप्त रूप से पति का पूजन कार्य सम्पादित करेंगी, उनकी समस्त मनोकामनायें पूर्ण होंगी तथा उनके पति दीर्घायु होंगे। पार्वती जी ने इस व्रत को छिपाकर किया था, उसी परम्परा के अनुसार आज भी पूजन के अवसर पर पुरुष उपस्थित नहीं रहते।

।। इति ।।

।। अशोकाष्टमी ।।

अशोक अष्टमी चैत्र शुक्ला अष्टमी को मनाया जाता है। इस दिन अशोक वृक्ष के पूजन का महत्व बताया जाता है। इसी प्रसंग में एक प्राचीन कथा है। कि रावण की नगरी लंका में अशोक वाटिका के नीचे निवास करने वाली वियोगिनी सीता को इसी दिन हनुमान जी के द्वारा अंगूठी तथा संदेश प्राप्त हुआ था। इसलिये अशोक वृक्ष के नीचे माता सीता तथा हनुमान जी की प्रतिमा स्थापित कर विधिवत पूजा अर्चना करनी चाहिये। हनुमान जी के द्वारा सीता

खोज की कथा राम चरित मानस से सुननी चाहिये। ऐसा करने से स्त्रियों का सौभाग्य अचल रहता है। इस दिन अशोक वृक्ष की कलिकाओं का रस निकालकर पान करना चाहिये इससे शरीर के रोग, विकारों का समूल विनाश हो जाता है।

।। इति अशोकाष्टमी ।।

।। श्री राम नवमी ।।

चैत्र शुक्ला नवमी को भगवान मर्यादा पुरुषोत्तम राघवेन्द्र सरकार का प्रादुर्भाव हुआ था। मध्याह्न व्यापिनी नवमी को व्रत करना चाहिये। प्रातः नित्य कर्म से निवृत्त होकर दोपहर (मध्याह्न) में पवित्र आसन पर स्थित होकर संकल्प करें।

संकल्प इस प्रकार करें–

हाथ में जल पुष्प-चावल लेकर इस प्रकार से संकल्प करें–

अद्य श्री राम नवम्यां अमुक वासरे-अमुक गोत्रः अमुक नामोऽहं अखिल ब्रह्माण्ड नायकस्य लोकाराधानतत्परस्य श्री राघवेन्द्रस्य प्रेमोपलब्धये सपरिवार श्री राम पूजनं च करिष्ये।

जो भी सामग्री उपलब्ध हो उसी से श्रद्धापूर्वक श्रीराम का पूजन करें। तथा अखण्ड रामायण पाठ या कीर्तन या श्रीरामजी के चरित्र का चिन्तन करना चाहिये।

अगस्त्य जी ने सुतीक्ष्ण से कहा है–रामनवमी को महाद्ररिदीः दुखी, महापापी भी यदि रामजी का चिन्तन करे तो सुखी सम्पन्न निष्पाप हो जाता है। भक्तों की प्रसन्नता सिद्धि के लिये सूक्ष्म रूप

से श्री राघवेन्द्र का चरित्र चिन्तन किया जाता है।

पढ़कर श्री सीता भक्ति महारानी का शुभाशीर्वाद प्राप्त करें जिससे जीवन में आनन्द की प्राप्ति हो सके जीवन राममय बन सके।

।। इति ।।

।। श्री हनुमान जयन्ती ।।

चैत्र शुक्ल पक्ष पूर्णिमा को माता अंजना के गर्भ से श्री हनुमान जी ने जन्म ग्रहण किया। उत्सव सिन्धु एवं व्रत रत्नाकर आदि ग्रन्थों में कार्तिक कृष्ण पक्ष चतुर्दशी को माना है।

इस दिन हनुमान जी की विशेष रूप से पूजन करना चाहिये, तथा बेसन के लड्डू का भोग लगाना चाहिये, बन्दरों को हनुमान जी का प्रतिनिधि मानकर भुना हुआ या भीगा हुआ गुड़-चना खिलाना चाहिये।

श्रीराम जी की सेवा के लिये शंकर जी जब चलने लगे तो माता पार्वती ने कहा प्रभो आपकी अर्धाङ्गिनी भी आप के साथ चलना चाहती है।

शिवजी ने कहा—प्रिये इस अवतार में मैं ब्रह्मचारी रहूंगा। मेरे साथ रहना असंभव है, पार्वती जी ने कहा आपने मुझे अर्धांङ्गिनी स्वीकार किया है आप ही वचन का पालन नहीं करेंगे, तो संसार पथभ्रष्ट हो जायेगा। शिवजी ने कहा प्रिये कोई मार्ग निकालो, मां पार्वती ने कहा, प्रभों मैं आपकी पूंछ बनकर चलती हूं जिससे संसार

में आपकी पूंछ बनी रहेगी। जो आपकी सेवा करेगा, उसके सभी कार्य मैं पूर्ण करूंगी।

आज जगत में हनुमान जी की सबसे बड़ी पूछ (चाह) है।

मंदिरों में राम जी के साथ तो हनुमान जी हैं ही स्वतन्त्र भी हनुमान जी के मंदिर हैं। ऋष्य मूक पर्वत पर जब हनुमान जी ने राम जी से कहा—मेरे कंधे पर बैठ जाइये तो रामजी ने कहा, हम क्षत्रिय हैं ब्राह्मण के कंधे पर कैसे बैठे। पूंछ (पार्वती) ने सहायता की। हनुमान जी ने कहा प्रभो देख लीजिये पूछ है मैं पशु हूं चढ़नें में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये। प्रभो जनकपुर में जब आप दूल्हा बने थे तब आप घोड़े पर बैठे थे तभी भक्ति रूपा सीता की प्राप्ति हुई थी। अब आप इस पूंछ वाले पशु पर बैठेंगे तो अवश्य ही सीता मिलेगी। सोच लीजिये।

राम लखन तुरन्त कन्धों पर सवार हो गये, और हनुमान जी ने सेवा से, पराक्रम से दूत बनकर युद्ध कर सीता की प्राप्ति कराई।

श्री राम बड़े शीलवान ज्ञानियों में अग्रगण्य सोचा रावण के गुरु शंकर के अवतार हनुमान जी को भेजा जाय। भक्ति मार्ग में आ जावे मान जावे तो अच्छा है। रावण भी जान गया हमारे गुरुजी पधारे हैं, इसलिये कहा—

चौ.—हमहिं मिला कपिगुरु बड़ ज्ञानी।

परन्तु उसके अहं ने गुरु की बात स्वीकार नहीं की। राक्षस देवों से शक्ति तो प्राप्त करना चाहते हैं पर देवों को बुद्धिमान नहीं मानते।

रावण ने सोचा। मेरे को वर देने वाले शिव एवं ब्रह्मा हैं शिव के पांच (5) सिर एवं ब्रह्मा के चार (4) सिर दोनों मिलाकर नौ (9) हुए। मेरे तो दस हैं। इनसे ज्यादा बुद्धि रखता हूं। यही राक्षसत्व है। सीताजी ने मारीच को देखकर कहा मुझे ये स्वर्ण मृग चाहिये। भगवान ने कहा यह तो नकली मृग है। मैं असली सोने का शाखा मृग भेजता हूं। इसीलिये हनुमान जी को ध्यान में कहा है–

अतुलित बलधामं स्वर्ण शैला भदेहं
दनुजवन कृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकल गुण निधानं वानराणां अधीशं
रघुपति प्रिय भक्तं वात जातं नमामि।

कहां तक कहें हनुमान जी तो भगवान श्री राम के द्वार के प्रहरी हैं। हनुमान जी के कृपा के बिना एवं आज्ञा के बिना भक्ति प्राप्ति असंभव है।

।। बोलिये हनुमन्त लाल जी महाराज की जय ।।

।। वैशाख मास उत्सव ।।

लगभग 14 अप्रैल को बैशाख मास में मेष की संक्रान्ति होती है। इस दिन भगवान सूर्य नारायण अपनी उच्च राशि (मेष) में आते हैं। आज के दिन जल का घड़ा तथा सत्तू दान करना चाहिये। इस दिन से बंगाल वासियों का वर्ष प्रारंभ होता है। तथा पंजाब में भी बैशाखी उत्सव मनाते हैं।

।। संक्रान्ति महत्व ।।

स्कन्द पुराण में नन्दिकेश्वर कहते हैं, जो व्यक्ति प्रत्येक संक्रान्ति को अष्टदल कमल पर सूर्य पूजन करके कलश में जल भरकर ऊपर सुवर्ण रखकर दान करता है। वह सभी पापों से मुक्त होकर हजारों जन्म तक धन-धान्य पुत्र आदि से सम्पन्न और सुख प्राप्त करता है। वर्ष के अन्त में गोदान भी करना चाहिये।

।। इति ।।

।। अक्षय तृतीया ।।

वैशाख शुक्ल पक्ष तृतीया को अक्षय तृतीया (अक्षय तीज) कहते हैं। इस पर्व पर वृन्दावन में बांके बिहारी जी के चरण दर्शन होते हैं एवं बद्रिकाश्रम में नर-नारायण के दर्शन प्राप्त होते हैं।

संसार के मंगल के लिये नि:स्वार्थ तपस्या में लीन प्रभु (नर-नारायण) के पट खुलते हैं। भगवान के एवं छ: (6) महीनें निरन्तर जलने वाली दीप के दर्शन होते हैं। भगवान के दर्शन करके तथा उनकी कल्याणमयी भावना का स्मरण करने से सांसारिक दुख दारिद्र्य विपत्ति का कष्ट भी सुख में परिवर्तित हो जाता है तथा दिव्य शान्ति प्राप्त होती है।

नवद्वीपों के भिन्न-भिन्न देवता हैं, तथा भिन्न-भिन्न उपासक हैं। श्री मद्भागवत जी में वर्णन आया है, भारत वर्ष में नर-नारायण देवता हैं। दीपावली से अक्षय तृतीया तक श्री नारद जी ये छ: महीनों

सेवा का कार्य करते हैं (उपासना) तथा अक्षय तृतीया से दीपावली (छः महीनें पर्यन्त) तक मनुष्य सेवा पूजा करते हैं। अब आप नरनारायण के दिव्य चरित्र का मनन कीजिये।

एक बार सब ऋषि मुनि इकट्ठे होकर क्रोध में भरकर भगवान नारायण के दिव्य धाम में सत्याग्रह के लिये पधारे और इन्कलाब जिन्दाबाद प्रारंभ हुआ। दो दल बन गये।

प्रथम दल का नारा था—त्याग तपस्या बन्द अब सुख भोगेंगे।

दूसरे दल का नारा था—हमारे पतन का कारण तुम होंगे। सत्य समझ लो।

भगवान नारायण तो देखकर हक्के-बक्के रह गये। क्षमा मांगी भगवन् मेरा अपराध तो बताये? मैं अपनी भूल को सुधारूंगा। ऋषियों ने कहा क्या-क्या बतावें। हमसे कहते हो तप करो काठ की स्त्री को भी पैर से मत छुओ और आप अपने पत्नी का सुख भोगों। लक्ष्मी को हृदय में बसा लिया, सूकर अवतार लिये तो जल में से पृथ्वी देवी को साथ में ले आये। इस अवतार में भी बिना पत्नी के नहीं रह सके। रामावतार में पत्नी के लिये इतने रोये कि आंखें सूज गई, पागल हो गये वृक्षों से पूछते थे (हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी। तुम देखी सीता मृग नयनी) पशु-पक्षियों से पूछते फिरते थे।

ऋषियों ने कहा—महाराज क्या कहें? कृष्ण अवतार में तो हद ही कर दी 16108 से भी संतोष नहीं हुआ। हमसे जरा सी भूल हो जाये तो दण्ड दे देते हैं। और अपने मनमानी करते हैं। भगवान ने क्षमा मांगी, इस अवतार में आदर्श जीवन होगा। आप सब प्रसन्न

होइये। ऐसी वाणी सुनते ही ऋषि संतुष्ट हुए। अपने-अपने स्थान को लौट आये।

अब आइये नर नारायण के चरित्र में प्रवेश करें।

सत्य युग के प्रारंभ में ब्रह्माजी के हृदय से धर्म का प्रादुर्भाव हुआ। धर्म की पत्नी मूर्ति देवी थीं। मूर्ति देवी अपने पति (धर्म) में पूर्णतः समर्पण भाव था। अपना जीवन समर्पित कर दिया। जो स्त्री पति को ही अपना भगवान मानती हो तो प्रभु को प्रेम विवश आना ही पड़ता है। धर्म और मूर्ति के संयोग से सुन्दर दो बालक हुए—एक बालक नीलकमल की आभा लिये था तो दूसरा तप्त सुवर्ण के समान दिव्य गौर वर्ण का था। धर्म और मूर्ति दोनों ही देख-देखकर आनन्द में निमग्न हो रहे थे। दर्शन पिपासा बढ़ती ही जा रही थी। इन बालकों की हंसी मुस्कान में दिव्य सुख था। वास्तव में यह दिव्य सुख भाग्यशाली को ही प्राप्त होता है। सबके भाग्य में कहां। दो वर्ष के होते ही मातृ-पितृ सेवा परायण हो गये। गर्मी में माँ मूर्ति सोई हुई है, आंख खुली तो देखा नारायण बेटा पंखा झल रहा है और नर बेटा सुराही का ठंडा जल गिलास में लिये खड़ा है, माँ प्यास लग रही है, जल पियो। मां देखकर निहाल हो जाती है। भोजन के समय नर नारायण पिता (धर्म) जी की एक-एक खड़ाऊं सिर पर लेके पूजाघर के समीप आते हैं, कहते हैं, पिता जी भोजन तैयार है, प्रसाद पाइये, खड़ाऊँ पहनकर चलिये।

रात को माता-पिता की सेवा करते, माता पिता बच्चों की श्रद्धा देखकर निहाल हो जाते। पांच वर्ष के होते-होते माता-पिता को

सेवा से संतुष्ट कर दिया। एक दिन मूर्ति मां से बच्चों की सेवा देखकर रहा नहीं गया। बोली—मेरे लाल मैं तुम पर परम प्रसन्न हूं, जो चाहो सो मांग लो। बच्चों ने छोटे-छोटे हाथों को जोड़कर कहा मां हम संसार के कल्याण की भावना को लेकर तप करना चाहते हैं। सुनते ही मां उदास हो गई। नारायण ने कहा मां आपको अच्छा न लगा हो तो जाने दो। मूर्ति मां ने कहा, मेरे लाल तपस्या सब कुछ त्याग कर एकान्त में होती है। पुत्र माता पुत्र का बिछोह होगा। मेरा संसार सूना हो जायेगा। पुत्रों ने कहा मां तप करने नहीं जायेंगे। मां ने कहा—बेटा सतयुग है मैंने वचन दिया है—जाओ तप करो उस समय नैमिषारण्य बड़ा भयानक जंगल था। जंगली जानवरों के कारण वहां कोई जाता नहीं था। वहां पर नर-नारायण ने कुटिया बनाई एक-एक प्रहर संसार के कल्याणार्थ तप करने लगे।

जब नारायण तप करते तब नर धनुष बाण लेकर बाहर पहरा देते। नर तप करते तो नारायण रक्षा का कार्य संभालते। इसी समय में एक ऋषि नर्मदा सागर के संगम में जल में खड़े होकर समाधी में लीन जप कर रहे थे। सुतल लोक का नाग पैर पकड़कर सुतल लोक ले गया। जिसकी फुंफकार मात्र से शरीर भस्म हो जाता था। ऋषि को ऐसे विषधर नागों ने काटा परन्तु ऋषि को कोई अन्तर नहीं पड़ा। उसी अवस्था में रहे। नागों ने राजा बली से यह सारा वृतान्त कह सुनाया एवं ऋषि को राजसभा में ले आये। ऋषि की यथा समय समाधी खुली, बलि एवं प्रह्लाद चरणों में मुनि को प्रणाम किया तथा मुनि से हाथ जोड़कर प्रार्थना पूर्वक बोले प्रभो

आपको विषधर नागों ने काटा और आप पर विष का कोई प्रभाव नहीं पड़ा क्या कारण है? ऋषि हंसे और बोले राजन् मस्तिष्क के ब्रह्माण्ड में सहस्र दल (1000) कमल पर प्रभू नारायण विराजमान हैं, वहां से अमृत टपकता है, मेरी जीवात्मा सर्पिणी रूप में निरन्तर अमृत पान कर रही है। तो यह सांसारिक विष मेरा क्या बिगाड़ सकता है। यह सुनकर भक्त राज बली और प्रह्लाद परम सन्तुष्ट हुए। प्रह्लाद जी ने हाथ जोड़कर पूछा मेरा मन तीर्थ यात्रा के लिये लालायित हो रहा है। आप बताइये इस समय भारत में सर्वश्रेष्ठ तीर्थ कौन है। ऋषि ने बताया—नैमिषारण्य तीर्थ इस समय श्रेष्ठ है, बलि के आज्ञानुसार ऋषि को यथा स्थान पहुंचा दिया गया। और प्रह्लाद जी तीर्थ यात्रा नैमिषारण्य के लिये चल पड़े। वन में कुछ दूर जाने के बाद प्रह्लाद जी को एक कुटिया दिखाई पड़ी, नारायण तप कर रहे थे तथा नर ऊर्ध्व पुण्ड धारण किये हुए हाथ में धनुष बाण लिये रक्षक बन कर खड़े थे।

देखते ही देखते प्रह्लाद जी ने सोचा ये लोग निश्चित ही डाकू हैं। वैष्णव तिलक और अस्त्र-शस्त्र का क्या मेल तथा डांटकर बोले सच-सच बताओ तुम कौन हो? शेषावतार नर को भी आवेश आ गया वे बोले भाग जाओ यदि जीवन चाहिये। प्रह्लाद जी को तो नृसिंह भगवान के वरदान से अहं बढ़ा हुआ था।

प्रह्लाद जी ने कहा हम राजा है, तेरे जैसे डकैतों को सजा देते फिरते हैं, बातों ही बातों में युद्ध शुरू हो गया दो घड़ी में ही प्रह्लाद जी के शस्त्र कुण्ठित हो गये। प्रहर पूरा होते ही नर भीतर गये और

नारायण बाहर आये। प्रह्लाद ने सोचा इसके साथी को ही मारकर संतोष करो। युद्ध हुआ पर आश्चर्य यह हुआ कि अब अस्त्र ही सारे ध्वस्त हो गये।

प्रह्लाद जी ने सोचा भगवान विष्णु बड़े छलिया हैं, सदा दैत्यों को धोखा देते हैं, नृसिंह भगवान ने वरदान भी झूठा दिया। इसी कारण आज यह दशा हो रही है। अब यह बाण मारेगा और जीवन लीला समाप्त। प्रह्लाद ने आंखें बन्द कर ली। ऊपर को हाथ करके पुकार लगाई है नृसिंह देव भगवन रक्षा कीजिये। सामने से सिंह की दहाड़ सुनाई पड़ी। आंखें खुली तो देखा सामने नृसिंह भगवान हैं। चरणों में गिर गये और बोले प्रभु आपने ठीक समय पर बचा लिया नहीं तो ये दुष्ट मार ही डालता प्रभु को हंसी और बोले इस समय नारायण के रूप में मैं ही यहां अवतरित हूं। यह सुनकर प्रह्लाद ने संतोष की सांस ली। इष्टदेव से हारने में कोई हानि नहीं अगर आगे गये इज्जत गई तो अच्छा नहीं। नहीं-नहीं वापिस लौट चलें। भगवान के चरणों में गिर गये, प्रभो आपके दर्शन से समस्त तीर्थों का फल प्राप्त हुआ श्री नृसिंह देव ने सुतल लोक को जाने की आज्ञा दी।

श्री नारायण ने सोचा और भाई नर से सलाह की भाई अब यहां रहना उचित नहीं, किस-किससे झगड़ा करेंगे। अब कोई एकान्त स्थान खोजना चाहिये।

ध्यान से देखा तो आज जहां बद्री नारायण का मंदिर है वहां शंकर जी का कनक (स्वर्ण) भवन था। यह सारा उत्तरा खण्ड पार्वती को दहेज में हिमालय ने दिया था। केदारखण्ड के नाम से प्रसिद्ध था।

इसीलिये प्रवेश द्वार को हरद्वार कहते थे।

इसे प्राप्त करने के लिये श्री नारायण जी ने एक योजना बनाई। एक दिन प्रातः काल अलकनन्दा में स्नान के लिये कनक भवन से बाहर आये। एक अद्भुत दृश्य देखा। एक हिमखण्ड के शिला पर एक दिव्य बालक को देखा और वह बालक रो रहा था। भोले नाथ अपने स्वामी को पहचान कर मन से प्रणाम किया और हंसते हुए आगे चल दिये। पार्वती को दुःख हुआ, कहती है पुरुष बड़े निष्ठुर होते हैं, मां पार्वती के आंखों से आंसू बहने लगे।

शंकर जी ने कहा क्या देखती हो, चलो देर हो रही है। हाथ पकड़कर खींचने लगे। भगवती मां पार्वती वहीं बैठ गयी। और बोली स्तन तो पुरुषों के भी होते हैं, लेकिन प्रेम के बिना सूखे रहते हैं। स्त्रियों में वात्सल्य प्रेम की पराकाष्ठा है। इसलिये प्रभु अपने क्षीर सागर से प्रेम का तार जोड़ देते हैं। बच्चा पैदा होने के समय स्तन में दूध भी आ जाता है। ऐसा कहते-कहते बालक (नारायण) को छाती से लगा लिया। बालक चुप हुआ। महल में ले गई, पालने में सुलाया और बाघम्बर डाल दिया। बच्चा सोने लगा तथा युगल दम्पति अलकनन्दा से स्नान करके जब द्वार पर आये तो दरबान जय विजय बैठे थे और बोले। ए भिखमंगे भीतर कहां जा रहे हो। सुनकर शंकर जी हंसने लगे। अब पार्वती को बड़ा रोष हुआ। भीतर जाने लगी। दरबानों ने पुनः डाँट लगाई। कंगाली स्वर्ण महल में रहना चाहती है सुनते ही शंकर जी खिलखिला कर हंस पड़े। अब तो पार्वती का क्रोध बढ़ गया कि धर्म पत्नी का इतना बड़ा अपमान

और ऊपर से हंस रहे हैं। भोले-नाथ ने कहा यह सब तुमने किया है, इसमें मेरा क्या दोष, उमा ने कहा मैंने क्या किया शिवजी ने कहा जिस बालक को पालने में पौढ़ा कर गयी थी वो साक्षात् नारायण हैं, जब तुमने दे दिया तो मुझे स्वीकार करना पड़ा, पार्वती जी अति प्रसन्न हुई जब नारायण ने कृपा करके स्वीकार कर लिया तब तो मेरा देना सफल हुआ।

अपना दूसरा स्थान (केदार) खण्ड देख लेंगे। नारायण प्रभु सुरक्षित स्थान पाकर जगत के कल्याणार्थ तप में लीन हो गये। एक दिन नारायण के पिता धर्म देव ने देखा मूर्ति देवी रो रही है। पूछा देवी क्या हुआ मूर्ति मां ने कहा, प्रभो आज मेरा पतन हो गया मैं किसी लायक नहीं रही मैंने तो अपने आपको पति देव के चरणों में समर्पित कर चुकी हूं। पर आज पति को छोड़कर पुत्र याद आ रहे हैं। धर्म देव ने हंसते हुए कहा देवी तुम्हारे जैसे बेटे हों तो मन जाने पर भी पतन नहीं बल्कि परम उत्थान होता है। मूर्ति मां ने कहा प्रभो अब प्राण उत्क्रमण करना चाहते हैं।

अब रहा नहीं जाता धर्म देव ने कहा देवी तेरा प्रेम अकथनीय है। देवी तेरी कृपा से इस पामर प्राणी को भी दर्शन हो जायेंगे। मूर्ति मां बड़ी प्रसन्न हुई अब तो अपनी सुरक्षा की कोई चिन्ता नहीं। चल पड़े पुत्रों के दर्शन के लिये। छः (6) महीने में पैदल चलते-चलते प्रातः काल बद्रिका आश्रम पहुंचे। उधर नारायण की पत्नी लक्ष्मी भी कई दिनों से उदास है। वो भी नमक सत्तू बांध कर खोजते हुए बद्रिका आश्रम पहुंची। सास-ससुर को देखकर लज्जा वस घूंघट

निकालकर बैठ गई। नर नारायण अर्ध्य देने बाहर निकले बाहर देखा मां और पिता जी आये हैं। सूर्य अर्ध्य देकर दौड़कर मां के पैरों में दोनों भाई बैठ गये। प्रेम का समुद्र उमड़ पड़ा मूर्तियां ने आसुंओं से दोनों बच्चों के सिर को भिगो दिया। एक प्रहर तो प्रेम के मारे बेहोश रहे जब होश आया तो नारायण ने पूछा मां किसलिये पधारी। माँ ने कहा बेटा तुम्हें देखने के लिये नारायण ने कहा मां लौट जाओ तप में विघ्न होता है।

मां ने कहा हाय रे तपस्या माँ ने कहा बेटा वर्ष में मुझे एक बार आकर मिलो, नारायण ने कहा ठीक है, वामन द्वादशी को नारायण अपनी मां मूर्ति से मिलते हैं।

नारायण तपस्या करने चले गये। मां फूट-फूटकर रोने लगी लगता है प्राण छोड़ देगी। धर्म देव ने कहा देवी तुम धन्य हो तुने पुत्रों को प्यार दिया, तथा पुत्रों ने भी प्रेम अश्रुओं से तेरा आंचल भिगो दिया। तुम्हारी गोदी में बैठे थे। अभागा तो मैं हूं मुझे प्रणाम भी नहीं किया। मैंने दर्शन अवश्य किया। इसी से सन्तोष कर जीवन धारण कर रहा हूं। पति देव के वचनों से शान्ति मिली। तथा पुत्रों की दर्शन की लालसा में बद्रिकाश्रम से तीन मील दूर मणि ग्राम में आज भी पुत्रों की कुशलता के लिये तप कर रही है। धर्म देव ने देखा पुत्र भी यहां पत्नी भी यहां अब घर जाकर क्या करेंगे। धर्म देव बद्रिकाश्रम से आगे वसुधारा में आज भी खड़े-खड़े तपस्या कर रहे हैं। तपस्या का फल पुत्रों को अर्पण कर रहे हैं।

मां ने अंक में बैठाया पिता ने दर्शन किये; पुराने जमाने की बहू

शर्म के मारे मुंह फेर कर दर्शन भी न कर सकी। अकेली रह गई कनक भवन के सामने एक पैर से खड़ी दोपहर तक प्रतीक्षा करती रही थी। नारायण देव मध्यान्ह का अर्ध्य देने बाहर निकलें देवी जी प्रभु नारायण की ओर लपकी। नारायण ने डांटा दूर-दूर दूर रहना। स्पर्श नहीं करना, लक्ष्मी जी ने कहा—क्या मैं छूने योग्य नहीं रह गयी। अभी स्नान करके आयी हूं, प्रणाम करने दो, चरण छूने दो। नारायण ने कहा ऋषि को स्त्री स्पर्श नहीं करती। लक्ष्मी जी से रहा नहीं गया, बोली क्या मति मारी गयी है? दूसरे की पत्नी को छूने का दोष है। नारायण देव ने कहा देवी पाठ न पढ़ाओ। मैं पढ़ा लिखा हूं दूर रहो। तथा तपस्या करने चले गये।

हाय रे तपस्या। बेचारी लक्ष्मी क्या करती। बद्रिकाश्रम से ऊपर भूर्जपत्र वन में आज भी खड़ी-खड़ी तपस्या कर रही है। तथा फल नारायण को अर्पण कर रही है।

नारायण देव अपने सारे परिवार के साथ तपस्या कर रहे हैं और फल संसार के कल्याण के लिये अपर्ण कर रहे हैं।

इनकी तपस्या को देखकर इन्द्र को भय हुआ। कहीं इन्द्रासन न ले ले। काम देव और अप्सराओं को भेजा पर वे लुभा न सके। क्रोध ने नारायण के कान में आकर कहा, आपको कष्ट देते हैं। कहें तो भस्म कर दूं। नर ने कहा भैया यह काम का बड़ा भाई है। तपस्या लूटने चला आता है। इसके फेर में नहीं आना चाहिये। श्री नारायण देव ने प्रसन्न मन से कामदेव सहित सबको बुलाया। डरो मत अपनी ऊरु (जंघा) को चीरकर एक दिव्य अप्सरा निकाल कर दिया। ले

जाओ इन्द्र को देना सब बहुत लज्जित हुए। अक्षय तीज को श्री विग्रह या शालिग्राम पर बद्री नारायण का पूजन कर समर्पण बुद्धि से चरणों में प्रणाम निवेदन करना चाहिये।

।। बोलिये बद्री नारायण भगवान की जय ।।

।। वैशाख मास स्नान एवं अक्षय तृतीया ।।

वैशाख मास के एक (1) महीने सूर्योदय से पहले स्नान करके भगवान नारायण का पूजन करना चाहिये। (तुला मकर मेषेषु प्रातः स्नानं विधीयते) कार्तिक, माघ, वैशाख में स्नान का विशेष महत्व है।

स्नान का मंत्र

माधवे मेषगे भानौ मुरारे मधु सूदन।
प्रातः स्नानेन मे नाथः फलदः पापहा भवेत्।।

पुराणों के अनुसार अक्षय तृतीय से सत्य युग प्रारंभ होता है। इस तिथि को युगादि तिथि भी कहते हैं। यहाँ पर विद्धा लेनी चाहिये। छ घड़ी से कम हो तो द्वितीया भी ले लेनी चाहिये। यह तिथि भगवान को बहुत प्रिय है। भगवान कृष्ण कहते हैं। आज का किया गया सत्कर्म, स्नान, दान, तर्पण, देव पितर सेवा सब अक्षय तृप्ति शान्ति देने वाले हैं। आज के दिन भगवान का अर्चन पूजन अवश्य करना चाहिये। मध्यान्ह में तर्पण पिण्डदान के पश्चात सत्तू, दही, पंखा, जूता, छाता, जल, कलश, मिठाई, शर्करा (शक्कर) दक्षिणा

आदि ब्राह्मण को अवश्य देना चाहिये।

आज के दिन सायंकाल में भगवान परशुराम जी का प्रादुर्भाव हुआ था।

श्री परशुराम भगवान की कथा

भृगु वंश के ऋचीक नाम के एक बड़े तपस्वी ऋषि थे। पूर्व काल में जब किसी ऋषि की विवाह करने की इच्छा होती तो राजा से कन्या मांग लेते और विवाह कर लेते। उस समय ऋचीक ऋषि गाधी राजा के पास पहुंचे। कहा आपकी बेटी सुन्दरी है, मेरे साथ विवाह कर दीजिये। ऋषि बड़े कुरुप व काले थे। राजा बड़े दु:खी हुए। एक उपास निकाला राजा ने कहा यदि आप श्वेत अश्व (घोड़ा) जिसका कान श्याम हो ऐसे घोड़े 1000 की संख्या में शुल्क रूप में दे तो मैं अपनी कन्या का विवाह आपसे कर दूंगा। ऋषि ने वरुण से घोड़े लाकर दिये और सत्यवती से विवाह कर लिया। एक दिन सत्यवती की मां आई, और बोली बेटी तुम्हें भी कोई सन्तान नहीं है और मेरे भी कोई पुत्र नहीं है, ऋषि से प्रार्थना करो। प्रार्थना करने पर ऋषि ने दो चरु बनाये एक श्वेत दूसरा लाल वर्ण। श्वेत वर्ण का चरु अपनी पत्नी को और लाल वर्ण का चरु, गाधि पत्नी को दिया। मां ने सोचा अपनी पत्नी को श्रेष्ठ दिया होगा। बोली बेटी बदल लो बदलकर चरु भक्षण कर लिया। जब ऋषि को पता चला बड़ा पश्चाताप हुआ और ऋषि ने कहा तुम्हारा बेटा घोर क्षत्रिय धर्म वाला होगा और तुम्हारा भाई ब्रह्मवेत्ता होगा सत्यवती

चरणों में गिर गई, प्रभो ऐसा नही तो कहा अच्छा पुत्र नहीं पौत्र होगा। इसलिये भाई विश्वामित्र हुआ और पुत्र जमदग्नि और पौत्र परशुराम हुए। एक समय सहस्रार्जुन ऋषि जमदग्नि की गाय काम धेनु को छीन ले गया। परशुराम जी सहस्रार्जुन को मार कर अपनी गाय छीन ली। सहस्रार्जुन के पुत्र एक दिन आश्रम में आये। और ऋषि जमदग्नि का मस्तक काट कर ले गये। परशुराम जी की माता रेणुका ने 21 बार छाती पिटी। परशुराम जी लकड़ी लेकर आये यह सब देखकर अपने परशु को उठाया और 21 बार धरती को छत्रियों से विहीन किया, तथा कुरुक्षेत्र में क्षत्रियों के रक्त से कुण्ड भर दिये।

उस रक्त से तर्पण कर पिता श्री जमदग्नि को सप्तऋषि मण्डल पर स्थापित किया। यह उनकी सर्वशक्तिमयी भगवत्ता है। भगवान नारायण ही दुराचार मिटाने तथा शस्त्र बल से संसार को संयत करने के लिये परशुराम भगवान हुए। ये 24 अवतारों में से एक हैं।

॥ वैशाख शुक्ला चतुर्दशी ॥

॥ श्री नृसिंह चतुर्दशी व्रत ॥ (नृसिंह जयन्ती)

जब भगवान भक्तों को सुख देने के लिये अवतार ग्रहण करते हैं तब वह तिथि मास भी पुण्य के कारण बन जाते हैं। जिनके नाम का उच्चारण करने वाला मनुष्य मोक्ष को प्राप्त होता है। वे परमात्मा कारणों के भी कारण हैं। वे सम्पूर्ण विश्व की आत्मा है। विश्वस्वरूप वे ही सबके प्रभु हैं। वे ही अविनाशी प्रभु प्रह्लाद की रक्षा के लिये नृसिंह रूप में प्रकट हुए थे। जिस तिथि को भगवान् नृसिंह का

प्राकट्य हुआ था, वह तिथि महोत्सव बन गयी। जब हिरण्य कश्यपु नामक दैत्य का वध करके भगवान् नृसिंह देव सुख पूर्वक विराजमान हुए तब उनकी गोद में बैठे हुए प्रह्लाद जी ने इस प्रकार प्रश्न किया। हे सर्वव्यापी जगदीश्वर नृसिंह का अद्भुत रूप धारण करने वाले आपको नमस्कार है।

हे सुरश्रेष्ठ मैं आपका भक्त हूं, अत: यथार्थ बात जानने के लिये आपसे पूछता हूं। स्वामिन् आपके प्रति मेरी अभेद भक्ति अनेक प्रकार से स्थिर हुई है। प्रभो मैं आपको इतना प्रिय कैसे हुआ इसका कारण बताइये।

नृसिंह भगवान् ने कहा—वत्स तुम पूर्व जन्म में ब्राह्मण के पुत्र थे। फिर भी तुमने वेदों का अध्ययन नहीं किया। उस समय तुम्हारा नाम वसुदेव था। उस जन्म में तुमसे कुछ भी पुण्य नहीं बन सका।

केवल मेरे व्रत के प्रभाव से मेरे प्रति तुम्हारी भक्ति हुई। पूर्व काल में ब्रह्मा जी ने सृष्टि रचना के लिये इस व्रत का अनुष्ठान किया था मेरे व्रत के प्रभाव से उन्होंने चराचर जगत् की रचना की है। स्त्री या पुरुष कोई भी इस व्रत को करता है तो उसे मैं भोग और मोक्ष दोनों फल प्रदान करता हूं।

प्रह्लाद ने पूछा—भगवन् मैं आपकी प्रीति और भक्ति प्रदान करने वाले नृसिंह चतुर्दशी नामक उत्तम व्रत की विधि जानना चाहता हूं। प्रभु आप बताने की कृपा करें।

भगवान् नृसिंह बोले बेटा प्रह्लाद यह व्रत मेरे प्रादुर्भाव से सम्बन्ध रखता है। अत: वैशाख शुक्ला चतुर्दशी को इस व्रत को करना

चाहिये। इससे मुझे बड़ा सन्तोष होता है।

हे! पुत्र-भक्तों को सुख देने के लिये जिस प्रकार मेरा आविर्भाव हुआ वह प्रसंग सुनो। पश्चिम दिशा में एक विशेष कारण से मैं प्रकट हुआ था। वह स्थान अब मुलतान नाम से प्रसिद्ध है। जो परम पवित्र और समस्त पापों का नाशक है। उस क्षेत्र में हारीत नामक एक ब्राह्मण रहते थे। जो वेदों के परम जानकार थे। उनकी पत्नी का नाम लीलावती था। लीलावती एक सती रूपा और पति के अनुकूल चलने वाली थी। उन दोनों ने इक्कीस युगों तक मेरी तपस्या की तब मैं प्रकट होकर उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन दिया। उस समय उन्होंने वरदान मांगा कि आपके समान पुत्र मुझे प्राप्त हो। बेटा प्रह्लाद उनकी बात सुनकर मैंने उत्तर दिया। 'ब्रह्मन् निस्संदेह मैं आप दोनों का पुत्र हूं। किन्तु मैं संपूर्ण विश्व की सृष्टि करने वाला हूं। मैं साक्षात् परमात्मा हूं अत: गर्भ में निवास नहीं करूंगा। तब हारीत ने कहा ऐसा ही ठीक है। तब से मैं भक्त के कारण वहीं निवास करता हूं। जो हारीत और लीलावती के साथ मेरे बाल रूप का ध्यान करके रात्रि में मेरा पूजन करता है। वह नर से नारायण हो जाता है। बेटा प्रह्लाद वैशाख शुक्ला चतुर्दशी को नित्य क्रिया से निवृत्त हो लोभ हीन ब्राह्मण को आचार्य बनावें और शास्त्रोक्त विधि से मेरी पूजा करें। तुलसी दल आदि अर्पित करें।

लोक और परलोक दोनों पर विजय पाने के लिये ब्राह्मणों को गौ, भूति, तिल, सुवर्ण, ओढ़ने, बिछौने आदि के सहित चारपाई, सप्त धान्य तथा अन्यान्य वस्तुएं दान करना चाहिये। शास्त्रोक्त फल

पाने की इच्छा हो तो धन होने पर धन की कृपणता नहीं करनी चाहिये। अन्त में ब्राह्मणों को भोजन करायें और उन्हें उत्तम दक्षिणा दे। धन हीन मनुष्यों को भी चाहिये कि वे इस व्रत को अनुष्ठान करें और शक्ति के अनुसार दान दें। मेरे व्रत में सभी वर्ण के मनुष्यों का अधिकार है। मेरी शरण में आये हुए भक्तों को विशेष रूप से इसका अनुष्ठान करना चाहिये।

सर्वेषामेव वर्णानामधिकारोऽस्ति मद्व्रते।
मद्भक्तैस्तु विशेषेण कर्तव्यं मत्परायणै:।।

नृसिंह: भगवान् से प्रार्थना करें–हे दया सिन्धो–काल रुद्र, और अग्नि आपके ही स्वरूप है यह जगत् भी आपसे भिन्न नहीं है। नर और सिंह का रूप धारण करने वाले आपको नमस्कार है। हे देवेश मेरे वंश में जो मनुष्य उत्पन्न हो चुके हैं और जो उत्पन्न होने वाले हैं, उन सबको दु:खदायी भवसागर से उद्धार कीजिये। शेषशायी देवेश्वर मुझे अपने हाथों का सहारा दीजिये और इस व्रत से प्रसन्न हो मुझे भोग और मोक्ष प्रदान कीजिये। इस प्रकार प्रार्थना कर विधिपूर्वक देवताओं का विसर्जन करें।

जो मध्यान्ह काल में यथाशक्ति इस व्रत का अनुष्ठान करता है, और लीलावती देवी के साथ हारीत मुनि एवं नृसिंह भगवान का पूजन करता है। वह नृसिंह भगवान् के प्रसाद से सदा मनोवांछित वस्तुओं को प्राप्त करता है। इतना ही नहीं, उसे सनातन मोक्ष की प्राप्ति होती है।

।। इति ।।

।। गंगा दशहरा ।।

ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष दसमी बुधवार हस्त नक्षत्र में गंगा देवी का अवतरण हुआ था। यह दस प्रकार के पापों का नाश करती है। शरीर से होने वाले तीन पाप–चोरी, हिंसा परस्त्री सेवन तथा चार पाप वाणी से होने वाले, कठोर वचन, झूठ, चुगली (दूसरों की निन्दा) बिना मतलब के बोलना तथा तीन प्रकार के पाप मन के द्वारा दूसरे की वस्तु की चाह, दूसरे के अनिष्ट का चिन्तन करना, व्यर्थ का आग्रह करना आदि ये दस पाप हैं। इस दिन गंगा स्नान से ये दसों प्रकार के पाप खत्म हो जाते हैं।

गंगा अवतरण की कथा श्रीमद् भागवत में नवम स्कन्ध के नवमें अध्याय में सुन्दर ढंग से वर्णित है।

इन्हें कोई भागीरथी, विष्णुपदी, जटा संकरी आदि नामों से जानते हैं। भगवती गंगा की महिमा अपरंपार है, शास्त्रों में लिखा है–

गंगा गंगेति यो ब्रूयात योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्व पापेभ्यो विष्णु लोकं स गच्छति।।

गंगा गंगा यह शब्द चार सौ कोस दूर से भी कोई बोले तो सब पापों से छूटकर भगवान विष्णु के धाम को जाता है।

।। इति ।।

।। निर्जला एकादशी ।।

ज्येष्ठ शुक्ला एकादशी को निर्जला एकादशी कहते हैं। इस दिन सभी भक्त बिना जल लिये ही व्रत करते हैं, और भगवान नारायण

की उपासना करते हैं। इस दिन प्याऊ आदि, मीठा जल बांटना चाहिये। मंदिरों में पंखा, घड़ा, शक्कर, आदि दान देने का भी प्रचलन है।

।। इति ।।

।। वट सावित्री व्रत एवं कथा ।।

वट सावित्री व्रत एवं पूजन प्रायः स्त्रियां ही करती हैं। दक्षिण भारत की स्त्रियां ज्येष्ठ शुक्ला पूर्णिमा को वट सावित्री का पूजन करती हैं। और राजस्थान आदि की स्त्रियां ज्येष्ठ अमावश्या को वट सावित्री का पूजन एवं व्रत करती हैं। दोनों का विधान है।

यह व्रत सौभाग्य, सुख, पुत्र, पौत्र, धन-सम्पत्ति आदि सभी सुखों को प्रदान करने वाला है। बड़ी-बड़ी विपत्तियों को दूर कर सुख और शान्ति देता है। इस व्रत को एक वर्ष तक करने का विधान है।

उद्यापन के समय तीन रात्रि उपवास करना चाहिये। अथवा त्रयोदशी की रात्रि में भोजन करें, चतुर्दशी को बिना मांगे जो मिले उसी को खा लेना चाहिये, तथा पूर्णिमा को व्रत उपवास तथा प्रतिपदा की ब्राह्मण भोजन आदि के पश्चात् सायं चन्द्रमा को अर्ध्य देकर भोजन करना चाहिये।

पूजन विधि—वट (बरगद) के समीप पूर्व की ओर मुख करके बैठे। गणेश पूजन करके संकल्प सहित वट पूजन करें। हाथ में जल, चावल, सुपारी लेकर संकल्प इस प्रकार करें—अद्य मम भर्तुः पुत्राणां च आयुः आरोग्यतां प्राप्तये सौभाग्य सुख प्राप्तये सावित्री

व्रतं करिष्यते। पढ़कर संकल्प छोड़ दें। तत्पश्चात् वट के मूल में ब्रह्माजी का ध्यान करें, वट के मध्य में विष्णु तथा पत्तों पर शिव का ध्यान करें और सावित्री (गायत्री) वट में है ऐसा ध्यान करें। मैं अमृत जल से सींचती हूं। रोली, चावल, पुष्प आदि से पूजन करें। तथा वट को सात बार सूत (कलावा) से लपेट दें। तथा नमस्कार करें इसके पश्चात् वट के मूल में ब्रह्मा, सावित्री का आवाहन (बुलाना) करें। तथा सत्यवान सावित्री का आवाहन करें। एवं यमराज का भी आवाहन करें। इसके पश्चात् शरीर के अंगों का ध्यान करते हुए चावल के द्वारा (ब्रह्मा एवं सावित्री) पूजन करें। सर्वप्रथम चरणों का ध्यान करते हुए चावल छोड़े। निम्नलिखित अंगों का क्रमशः ध्यान करते हुए चावल पुष्प के द्वारा अर्चन करें।

1. चरणौ पूजयामि
2. जंघां पूजयामि
3. कटिं पूजयामि
4. उदरं पूजयामि
5. कण्ठं पूजयामि
6. मुखं पूजयामि
7. शिरः पूजयामि

ब्रह्मा—

1. चरणौ पूजयामि
2. जंघा पूजयामि
3. ऊरुं पूजयामि
4. मेढं पूजयामि
5. कटिं पूजयामि
6. नाभिं पूजयामि
7. हृदयं पूजयामि
8. बाहुं पूजयामि
9. कण्ठं पूजयामि
10. मुखं पूजयामि
11. शिरः पूजयामि
12. सर्वाङ्गं पूजयामि।।

इसके पश्चात् धूप-दीप भोग आदि सामग्री अर्पित करके प्रार्थना करें। हे सावित्री देवी आप ब्रह्मा की प्रिया हो मेरी की हुई पूजा को स्वीकार करो मैं नमस्कार करती हूं।

पूजन के पश्चात् तीन बार अर्ध्य दें।

1. प्रथम अर्ध्य इस भाव से दे–हे देवी ओंकार पूर्व में रहनें वाली, सब दुखों को दूर करने वाली, सब दु:खों को दूर करने वाली हे वेद माता मुझे सुख-सौभाग्य दें।
2. दूसरी बार अर्ध्य दें–ऐसे भाव से हे अग्नि से प्रकट होने वाली देवी पति को प्रिय बोलने वाली अर्ध्य ग्रहण करें।
3. तीसरी बार अर्ध्य इस भाव से दें–हे मां मुझे सुख सौभाग्य दीजिये। तथा पुत्र-पौत्र एवं ग्रहस्थों का सुख दीजिये हे जननी मेरे अर्ध्य को ग्रहण करो।

प्रार्थना करें–हे देवी! जैसे आपका पति से कभी वियोग नहीं होता ऐसा ही मुझे भी आशीर्वाद दें।

फिर ब्रह्मा जी को इस भाव से अर्ध्य दें–आप जगत को बनाने वाले हो, सत्यव्रत को धारण करने वाले हो, ब्रह्म रूप हो मेरे अर्ध्य को ग्रहण करो, मैं आपको नमस्कार करती हूं। तत्पश्चात् एक बांस की पिटारी में फल, वस्त्र तथा सौभाग्य सामग्री रखकर इस भाव से ब्राह्मण को वायना दें। इस पूजन में जो त्रुटि रह गई हो वह पूर्ण हो।

इसके पश्चात् कथा सुनकर आरती करें। ब्राह्मण से प्रसाद ग्रहण करें।

॥ कथा ॥

सनत् कुमार जी ने शिवजी से पूछा–प्रभो स्त्रियों को सुख-सौभाग्य देने वाला पुत्र, पौत्र, और धन धान्य बढ़ाने वाले व्रत को कहिये। शिवजी बोले–मद्र देश में धर्मात्मा अश्वपति नाम के राजा थे, सभी सुख से पूर्ण, लेकिन कोई सन्तान नहीं थी, राजा ने सावित्री देवी की उपासना की देवी प्रसन्न होकर प्रगट हुई और कहा वर मांगों, राजा ने कहा मां सन्तान दीजिये, सावित्री ने कहा मेरे नाम वाली एक कन्या तुम्हारे घर में होगी दोनों कुलों का उद्धार करेगी। देवी अन्तर्ध्यान हुई।

दसवें महीने में राजा के यहां दिव्य कन्या का जन्म हुआ। वह दिनोदिन चन्द्रमा की भांति बढ़ने लगी 10 वर्ष की हुई दिव्य कन्या के सन्मुख राजा लोग श्रीहत हो गये। किसी का साहस उससे विवाह करने का नहीं हुआ। राजा अश्वपति ने कहा बेटी अब तुम्हीं भूमण्डल में अपने लिये योग्य पति चुनो। मंत्रीगण रक्षक के रूप में साथ हो लिये वह कन्या भूमंडल में घूमती हुई राज्य के समीप वन में सत्यवान को देखकर मुग्ध हो गई। लौटकर पिता के पास आई। उसी समय नारद मुनि पधारे नारद जी ने कहा कन्या का विवाह क्यों नहीं करते? राजा ने कहा। आप ही पूछिये कि पति रूप में किसका वरण किया। पूछने पर सावित्री ने सत्यवान को पति के योग्य बताया। नारद जी ने कहा अनर्थ हो गया। सत्यवान की आयु एक वर्ष की शेष है। राजा ने कहा दूसरा पति चुनो। सावित्री ने कहा

पिताजी–कन्या अपना मन एक बार ही समर्पण करती है। मुझे तो वही पति रूप में चाहिये। नारद जी की आज्ञा से राजा सत्यवान के पिता द्युमत्सेन के पास गये उनके चरणों में प्रणाम किया। अर्ध्य आदि संस्कार के बाद पूछने पर ज्ञात होने पर द्युमत्सेन ने कहा–महलों में रहने वाली सुकुमारी यहां कैसे जीवन यापन करेगी? अश्वपती ने कहा महाराज मेरी कन्या सहनशील और सेवा पारायण है कन्या का विवाह आदि संस्कार सम्पन्न हुआ। तत्पश्चात अश्वपति राजधानी लौट आये। सावित्री को पति के आयु की बड़ी चिन्ता हुई। प्रतिदिन पूजन, व्रत करती समय नजदीक आता जाता था। सावित्री ने 3 दिन का उपवास व्रत किया। जब सत्यवान वन में लकड़ी लेने चला तो कहा–प्रभो मुझे भी साथ ले चलें। मैं आज आपको अकेला नहीं छोड़ सकती सत्यवान ने कहा मैं स्वतंत्र नहीं हूं। माता-पिता से पूछिये। सावित्री ने सास-ससुर से आज्ञा लेकर पति के साथ वन को गई। वन में सत्यवान ने लकड़ी का गठ्ठर बनाया। सिर में भयंकर पीड़ा हुई तथा सावित्री की गोद में सिर रखकर मूर्छित हो गया। उसी समय यमराज प्रकट हुए और बोले–इसकी आयु समाप्त हो गई, इसे छोड़ दे। सावित्री ने कहा–मैंने सुना है आपके दूत लेनें आते हैं, आप कैसे पधारे। यमराज ने कहा–धर्माचरण माता-पिता के आज्ञाकारी सत्यवान को मेरे दूत स्पर्श नहीं कर सकते, इसलिये मैं आया हूं। यमराज पाश में बांधकर यातना शरीर को लेकर चले सावित्री भी पीछे-पीछे चली। यमराज ने कहा, अब तुम इसका अन्तिम संस्कार कर अपने धर्म का पालन करो। सावित्री ने कहा

जहां मेरे प्रियतम जायं वहां मुझे भी जाना चाहिये। यही सनातन धर्म है। पति प्रेम तप, तथा गुरु भक्ति से आप जैसे सज्जनों की कृपा से सब लोकों में जा सकती हूं। मेरी गति को कोई रोक नहीं सकता। फिर सात पद साथ-साथ चलने पर मैत्री कही है उसी बल पर मैं आपसे कहती हूं। मैं पति धर्म के रास्ते चल रही हूं। आप संसार को धर्म मार्ग पर चलाते हैं और मुझे धर्म मार्ग से अलग करना चाहते हैं आप धर्मराज हैं ऐसा आप कैसे कर सकते हैं।

सावित्री की बातों को सुनकर धर्मराज बोले देवी सत्यवान के जीवन को छोड़ कर जो मांगना हो सो मांग ले। सावित्री ने वर मांगा मेरे सास-ससुर अंधे हैं, राज्य शत्रुओं ने छीन लिया है अपने आप राज्य प्राप्त हो जाय और अचक्षु दृष्टि प्राप्त हो जाय, तथा वृद्धावस्था दूर होकर बलवान हों। यमराज ने कहा ऐसा ही हो। अब आप आश्रम को लौट जाओ। आपको बहुत परिश्रम हो रहा है। सावित्री ने कहा पति के साथ चलने में मुझे कष्ट नहीं परम आनन्द आ रहा है। पति जहां ले जायेंगे वहीं मैं चलूंगी। कारण-सज्जनों के साथ सत्संग की सभी इच्छा रखते हैं। सज्जनों का संग कभी निष्फल नहीं होता। इसलिये सदा ही सज्जनों के साथ चलना चाहिये। फिर मुझे क्यों रोकते हो। यमराज ने कहा सत्यवान को छोड़ दूसरा वरदान मांग–सावित्री ने पुनः वरदान मांगा मेरे पिता के 100 पुत्र हों। यमराज बोले ऐसा ही होगा। अब लौट जाओ। सावित्री ने कहा–मन वाणी से किसी से वैर भाव नहीं रखना चाहिये। दान देना, आग्रह का त्याग सज्जनों का धर्म है। शक्तिशाली सज्जन बैरियों पर कृपा

करते हैं। यमराज बोले–जैसे प्यासे को शीतल जल तृप्त कर देता है, देवी वैसे ही तेरे वचन हैं–सत्यवान के जीवन को छोड़कर कोई दूसरा वरदान मांगों, मेरे श्वसुर का वंश कभी नष्ट न हो मेरे सत्यवान से औरस 100 पुत्र हों। यमराज ने कहा ऐसा ही हो। अब लौट जाओ। सावित्री ने कहा–आप प्रतापी सूर्य के पुत्र हो, सूर्य सबको बराबर दृष्टि से देखते हैं वो सबका मंगल करते हैं। उनके सुपुत्र आप धर्म पारायण हैं, सज्जनों की निष्ठा सदा धर्म परायण पर होती है। संत कभी दु:खी नहीं होते। सज्जनों से कभी भय नहीं होता। सत्य के आधार पर सूर्य चलते हैं। सत्य से पृथ्वी स्थिर है। यमराज बोले सावित्री तुम्हारे वचनों से मुझे आत्म शान्ति मिल रही है। सावित्री ने हाथ जोड़कर कहा प्रभो आपने 100 पुत्र सत्यवान से औरस पुत्र प्राप्त हों ऐसा वरदान दिया है। आप धर्म के स्वरूप हैं, सत्यवान के बिना 100 पुत्र कैसे होंगे तो जगत तो यही कहेगा। यमराज नरक के अधिपति हैं, धर्म के नहीं। यमराज ने लाचार होकर सत्यवान को जीवन प्रदान किया।

400 वर्ष की आयु प्रदान की। सुखी सफल जीवन होगा ऐसा वरदान दिया। सत्यवान उठा तथा घर को चले। द्युमत्सेन पुत्र को देखना चाहे। तो दृष्टि प्राप्त हो गई। शरीर स्वस्थ और बलवान तथा युवा हो गया। तब तक सावित्री, सत्यवान ने आकर प्रणाम किया। मुनियों ने पूछा यह सब आश्चर्य और सत्यवान जीवित कैसे हुए। सावित्री ने विनम्र भाव से कहा सब आप लोगों की कृपा से ये सब हुआ। इसी समय प्रजा के लोग आये और निवेदन किया जिस मंत्री

ने आपका राज्य छीना था वह मर गया। अब आप सिंहासन पर विराजें।

सनत कुमारों ने उद्यापन की विधि पूछी।

शिवजी बोले–जब एक वर्ष व्रत करते पूर्ण हो, तब 3 दिन उपवास कर पूर्णिमा को सर्वतो भद्र वेदी पर कलश स्थापन कर चांदी का रथ एवं सोने की ब्रह्मा सावित्री की मूर्ति विराजमान कर चंदन का गठ्ठर पिंटक, कुठार रखना चाहिये। सुहाग पोटरी भी प्रदान करें। विद्वान ब्राह्मण द्वारा पूजन कराके रात्रि जागरण करें। दूसरे दिन हवन करके सोलह जोड़ा- जोड़ी विप्रों को भोजन करायें। सायंकाल चन्द्रमा को अर्ध्य देकर मंडप सहित आचार्य को दान देना चाहिये। इस प्रकार करने से सौभाग्य सुख, पुत्र-पौत्र, सम्पत्ति सुख, सावित्री देवी की कृपा से प्राप्त होती है।

।। वट सावित्री कथा समाप्त ।।

।। ज्येष्ठाभिषेक ।।

ज्येष्ठ पूर्णिमा को भगवान का विशेष उत्सव मनाना चाहिये, प्राण प्रतिष्ठित मूर्ति हो जिनका प्रतिदिन स्नान न कराते हों। उनके स्नान का एक वर्ष का पूर्ण फल आज मूर्ति को या शालग्राम जी को प्रतिनिधि मानकर बारह महीनों के हिसाब से 365 कलश या लौटे से स्नान कराना चाहिये। शुक्ल यजुर्वेदीय पुरुष सूक्त के द्वारा भगवान को स्नान कराना चाहिये तथा भजन कीर्तन द्वारा प्रभु को प्रसन्न कर प्रसाद ग्रहण करना चाहिये।

।। ज्येष्ठाभिषेक समाप्त ।।

॥ श्री जगन्नाथ रथ यात्रा ॥

आषाढ़ शुक्ल पक्ष की द्वितीया को पुष्य नक्षत्र में श्रीकृष्ण बलराम और सुभद्रा जी को रथ में बिठाकर उत्सव मनाना चाहिये।

श्लोक–

आषाढस्य सिते पक्षे द्वितीया पुष्य संयुता।
तस्यां रथे समारोप्य रामं सौभद्रया सह॥

इस दिन जगन्नाथ पुरी में रथयात्रा विशेष रूप से बड़ी धूमधाम के साथ मनाया जाता है। देश देशान्तर के नर-नारियों द्वारा दर्शन करके तथा रथ को खींचकर जीवन को सार्थक करते हुए बड़े ही उत्साह के साथ मनाया जाता है।

॥ इति ॥

॥ देव शयनी एकादशी ॥

आषाढ़ शुक्ल एकादशी को पद्मा एकादशी भी कहते हैं। इस दिन भगवान विष्णु शयन करते हैं, इसलिये इसे हरि (देव) शयनी एकादशी कहते हैं। फिर कार्तिक शुक्ल पक्ष की एकादशी को उठते हैं।

॥ इति ॥

॥ चातुर्मास्य व्रत ॥

आषाढ़ शुक्ल एकादशी को साधु संत एवं व्रत पारायण जन, चार मास के लिये एक स्थान पर रहकर कार्तिक शुक्ल द्वादशी को

इस व्रत का समापन करते हैं। तथा व्रत प्रारंभ करते समय प्रार्थना करते हैं, हे अच्युत मुझ पर प्रसन्न हों प्रभु ऐसी शक्ति दो जिससे यह चातुर्मास्य व्रत पूर्ण हो। आपके जागने तक नियम द्वारा व्रत का पालन कर सकूं। तथा व्रत करने वाले को श्रावण में शाक, भादों में दही-आश्विन (कुवार) में दूध कार्तिक में दाल का परित्याग करना चाहिये, तथा हो सकें तो मौन रहें। लिखित या इशारे से बात करें। या दिन में मौन रहें, या मौन न रह सकें तो व्यर्थ संभाषण न करें। निन्दा आदि से दूर रहना चाहिये। ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए धरती पर शयन करना चाहिये।

॥ इति ॥

पवन (वायु) परीक्षा एवं व्यास (गुरु) पूर्णिमा

आषाढ़ शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा को व्यास या गुरु पूर्णिमा कहते हैं। आज के दिन सूर्यास्त के समय वायु परीक्षा करनी चाहिये। पूर्व की वायु चले तो वर्षा ठीक होगी, धन-धान्य प्रचुर मात्रा में होगा। अग्नि कोण से चले तो अग्नि भय। दक्षिण वायु से अल्प (थोड़ी) वर्षा पश्चिम वायु से दुर्भिक्ष (अकाल) उत्तर वायु से सब सुखी तथा ईशान कोण की वायु से धान्य एवं सस्य उत्तम हो।

॥ गुरु पूर्णिमा ॥

आज के दिन गुरु पूजा निश्चित रूप से करनी चाहिये। गुरु ही ब्रह्मा है, गुरु ही विष्णु हैं, गुरु ही शंकर हैं, गुरु ही साक्षात् परब्रह्म

हैं। ऐसे गुरु को नमस्कार करता हूं। आज के दिन वर्ष पर्यन्त की गई गलतियों की क्षमायाचना करके गुरु से आशीर्वाद प्राप्त करना चाहिये।

।। इति ।।

।। व्यास पूर्णिमा ।।

एक समय पाराशर ऋषि ने संसार की भलाई के लिये एक अनुष्ठान प्रारंभ किया। प्रभु से प्रार्थना की प्रभो संसार को ज्ञान रूपी प्रकाश दिखाने के लिये अवतार ग्रहण करें। अनुष्ठान पूर्ण हुआ महर्षि पाराशर वन से घर की ओर लौट रहे थे। गंगा पार करने के लिये नौका पर बैठे, केवट की कन्या नौका चला रही थी। ऋषि ने पूछा तुम्हारा पेशा क्या है, कन्या ने कहा, नौका ही हमारा पेशा है।

ऋषि ने कहा इससे क्या लाभ! मैं तुमको पुत्र का ऐसा वरदान देता हूं कि जो ज्ञान के प्रकाश द्वारा संसार सागर से पार उतार दे।

केवट कन्या ने लज्जित होकर कहा महाराज मैं तो कुवांरी हूं।

ऋषि ने कहा तुम्हारा कुमारापन नष्ट नहीं होगा।

ऋषि के आशीर्वाद से गंगा के बीच गंगा में केवट कन्या को व्यास रूप पुत्र रत्न प्राप्त हुआ उसी समय व्यास जी तपस्या करने चल दिये।

मातृ प्रेम उमड़ा बोली मैं जानती हूं चूहे का बच्चा बिल ही खोदेगा। ऋषि का बेटा तपस्या ही करेगा। पर लोक लज्जा से

भयभीत कठोर हृदय मां का क्या होगा? व्यास जी ने कहा—माँ जब तुम याद करोगी पुत्र उपस्थित होगा। इसी दिन व्यास जी का जन्म हुआ अतः इसे व्यास पूर्णिमा भी कहते हैं।

।। इति ।।

।। श्रावण ।। (मंगला गौरी व्रत)

यह व्रत श्रावण में मंगलवार को विवाह के प्रथम वर्ष में माता के घर में करना चाहिये। इसके पश्चात् पांच वर्ष तक सोलह मंगलवार ससुराल में करना चाहिये। तत्पश्चात् उद्यापन करना चाहिये।

संकल्प आदि करके गणेश, कलश, पूजन करके मंगलागौरी का षोऽशोपचार से पूजन कर चौमुखा सोलह तार वाली बत्ती का दीपक दिखावे।

फिर नैवेद्य अर्पण करें। पश्चात् वायना दें।

वायना देते समय इस प्रकार से कहें।

सौभाग्य आरोग्य के लिये तथा धन सम्पत्ति सन्तान एवं मनोकामना पूर्ति के लिये पार्वती और शंकर जी की प्रसन्नता के लिये वायना दे रही हूं।

वायना में एक पिटारी में वस्त्र, लड्डू, और रुपया देवी की प्रसन्नता के लिये वायना सास या ब्राह्मण को देना चाहिये।

मन्त्र—पुत्रान् देहि धनं देह सौभाग्यं देहि मंगले।
अन्यांश्च सर्व कामाश्च देहि देवि नमोस्तुते।।

अर्थ—हे देवी पुत्र दीजिये, धन दीजिये सौभाग्य दीजिये और

मेरी सभी शुभ कामनाओं को पूर्ण कीजिये। मैं आपको नमस्कार करती हूं। फिर गेहूं के आटे के सोलह दीपक, सोलह-सोलह तार की बत्ती को प्रज्जवलित कर आरती करें। फिर कथा सुनें रात्रि में जागरण करें, तथा दूसरे दिन मंगल गौरी का विसर्जन करें।

मंगला गौरी की कथा

एक बार धर्मराज युधिष्ठिर ने भगवान श्री कृष्ण से पूछा—हे गोपाल मैंने बहुत कथायें सुनी, अब कोई सुख-सौभाग्य सुख पुत्र धन सम्पत्ति तथा सब प्रकार से मंगल करने वाले व्रत को (कथा को) कहिये।

भगवान कृष्ण बोले—तात् मैं सौभाग्य एवं संतति व सुख आदि प्रदान करने वाले व्रत को कहता हूं। सावधान होकर सुनों। कुण्डिनपुर नगर में ब्राह्मण भक्त धर्मपाल नामक एक सेठ रहता था। उसके कोई सन्तान नहीं थी। सेठ के घर एक भिक्षुक आता था। परन्तु जिसके घर सन्तान न हो उसके घर से भिक्षा नहीं लेनी चाहिये। इसलिये वह भिक्षा नहीं लेता था।

इनकी धर्मपत्नी बड़ी दुखी होती। सेठ ने पत्नी से कहा—तुम छुप कर खड़ी हो जाओ। जब वह भिक्षा मांगे, उसके पात्र में स्वर्ण डाल देना। सेठानी ने ऐसे ही किया। क्रोधित होकर साधु ने कहा तेरे सन्तान नहीं होगी। सेठानी ने क्षमा याचना की साधु ने कहा मेरी आज्ञा मानों तो तेरा पति नीले घोड़े पर नीले वस्त्र पहनकर उत्तराखण्ड की ओर जाये। जहां घोड़ा गिर जाये वहीं खोदने पर एक मंदिर

दिखेगा। वहां पूजा करने से पुत्र प्राप्ति होगी।

सेठ ने ठीक ऐसा ही किया। उत्तराखण्ड गया, घोड़ा गिरा खोदने पर मंदिर दिखाई दिया। मंदिर में देवी जी का बड़े वैभव के साथ पूजन किया। देवी प्रसन्न होकर बोली बेटा जो चाहो मांग लो मैं तुम पर प्रसन्न हूं। धर्मपाल ने कहा मां धन बहुत है, पितरों के उद्धार के लिये पुत्र चाहिये। देवी ने कहा तेरे भाग्य में संतान सुख नहीं है, अतः विधवा कन्या या अन्धा पुत्र या अल्प आयु का पुत्र मांग लो। धर्मपाल ने कहा मां अल्पआयु पुत्र दो। पितरों का उद्धार हो जावे। देवी ने कहा सामने आम के वृक्ष से फल तोड़कर पत्नी को देना। और सुनों गणेश पर चढ़कर तोड़ना। सेठ ने कई बार तोड़ा पर एक ही रहता था गणेश जी ने क्षुब्ध होकर श्राप दिया। तेरे पुत्र को सर्प काट लेगा, एक फल लेकर आया। पत्नी को दिया। फल स्वरूप नवमें महीने में पुत्र उत्पन्न हुआ। बेटे का जातक आदि संस्कार कराये। आठवें वर्ष में यज्ञोपवीत संस्कार कराया। दसवें वर्ष में पत्नी ने कहा इसका विवाह भी अब कर दीजिये। सेठ ने कहा मैंने संकल्प लिया है, काशी से पढ़कर जब वापस आयेगा तब विवाह करूंगा। अपने साले को बहुत सा धन देकर काशी विदा किया। बालक काशी तथा मामा प्रतिष्ठान नगर में आये। वहां कुछ कन्यायें खेल रहीं थीं। उन कन्याओं में एक बहुत सुन्दरी, सुशीला नाम की कन्या से उसकी सखी से झगड़ा हो गया।

सखी सुशीला को रांड-रांड कहकर गाली देने लगी। सुशीला ने कहा—मेरी मां मंगला गौरी का व्रत करती है। उसके पूजन के

धूप की गन्ध जहां-जहां जाती है, वहां-वहां मंगल होता है। मेरे संबंध में भी कोई स्त्री विधवा नहीं हो सकती। मैं तो उनकी पुत्री हूं तेरा रांड कहना व्यर्थ है। मामा ने सोचा सुशीला के साथ शिव का विवाह हो तो इसकी आयु बढ़ सकती है। वहीं ठहर गये। कुछ दिन पश्चात् सुशीला के पिता हरी ने सुशीला का विवाह निश्चित किया। बारात आई, वर अयोग्य था। वर के पिता ने शिव के मामा से याचना की। आप इस बालक को दे दीजिये। विवाह होने के बाद कल इसे लौटा देंगे। मामा ने बड़ी प्रसन्न्ता के साथ शिव को दे दिया। शिव एवं सुशीला का विवाह हो गया एवं सुशीला के साथ शयन किया। स्वप्न में मंगला गौरी ने कहा तेरे पति को काटने भयंकर काला सर्प आ रहा है। पीने के लिये दूध रखो और साथ में एक कलश भी रखो। जब दूध पीकर सर्प कलश में चला जाये तो ऊपर से एक कपड़ा बांध देना तथा सुबह स्नान करके मां को वायना दे देना। सुशीला ने वैसे ही किया। पश्चात् शिव उठा। बोला मुझे बड़ी भूख लगी है। सुशीला ने लड्डू खाने को दिये। शिव ने सोने की कटोरी में अपनी सोने की अंगूठी रखी और कहा इसे एकान्त में रखो। सुबह सुशीला ने वह कलश मां को वायने में दिया कलश के अन्दर सोने का हार मिला। मां ने सुशीला को आशीर्वाद में हार दिया। सुबह उठकर शिव मामा के पास गया दोनों काशी गये।

दूसरे दिन जब सुशीला से जुआं खेलने दूसरा ''हर'' नाम का लड़का आया तो सुशीला ने कहा यह मेरा पति नहीं है। इसके साथ

मैं नहीं खेलूंगी। बारात निराश लौट गई सुशीला के पिता ने सुशीला के पति को खोजने का प्रयत्न किया। तथा अन्नदान सदाव्रत आदि आरंभ किया। पति पहचानने के लिये सुशीला चरण धोती थी। मां जलधारा देती थी। भाई-चंदन तथा पिता ताम्बूल देते थे। इधर शिव एवं मामा काशी पहुंचे। बड़ा दान दिया, संन्यासियों को भगवा वस्त्र दिये। सबने आशीष दिया चिरंजीवी हो। पांच वर्ष में पढ़कर काशी विश्वनाथ की पूजा कर घर को चले। मार्ग में शिव ने कहा मामा मेरा जी बहुत घबरा रहा है, और मूर्छित हो जमीन पर गिर पड़ा। यमदूत प्राण ले जाने लगे। तो मंगला गौरी सिंह पर चढ़ कर आई। उनसे युद्ध हुआ। यमदूत परास्त हुए। मंगला गौरी ने नया जीवन प्रदान किया। शिव ने उठकर कहा मामा मैंने मंगला गौरी और यमदूतों का युद्ध देखा है।

मामा ने कहा बीती बात की याद मत करो, तथा प्रतिष्ठानपुर नगर में पहुंचे। सुशीला के पिता दोनों को घर ले गये। चरण धोते समय सुशीला ने कहा यही मेरा पति है। हरि ने कहा शिव तुम्हारे पास कोई प्रमाण है। शिव ने सुशीला द्वारा स्वर्ण पात्र में अंगूठी मंगाकर प्रमाण दिया। सुशीला के मंगला गौरी के पांच वर्ष पूर्ण हो गये थे। उद्यापन किया। वहां गौरी विसर्जन कर अपने नगर को चल दिये। लोगों ने धर्मपाल से कहा—तेरा पुत्र एवं पुत्रवधू व साला बहुत सा द्रव्य धन एवं बाजे के साथ आ रहे हैं।

आकर सबने प्रणाम किया। मां ने पूछा सुशीला मेरे बेटे की आयु किस व्रत के प्रभाव से बढ़ी। सुशीला ने कहा मेरी मां मंगला गौरी

का व्रत करती थी। उसी व्रत के प्रभाव से और मां मंगला गौरी के कृपा प्रसाद से आपके पुत्र की आयु बढ़ी है।

भगवान कृष्ण ने कहा हे युधिष्ठिर यह व्रत स्त्रियों को विशेष रूप से करना चाहिये।

धर्मराज युधिष्ठिर ने पूछा–प्रभो उद्यापन के बिना व्रत निष्फल है, प्रभो इसलिये उद्यापन विधि बताइये। श्री कृष्ण बोले 5 वर्ष पूर्ण होने पर आचार्य वरण करें। एक लिंगतोभद्र मण्डल की वेदी बनाकर तांबे का कलश स्थापित कर ऊपर एक प्रस्थ चावल दधि उसके ऊपर सोने की मूर्ति विराजमान करें। 16 प्रकार के सोलह-सोलह फूल तथा सोलह-सोलह प्रकार के पत्ते पूजन में अर्पण करें। देवी जी को वस्त्र आभूषण (श्रृंगार सामग्री) अर्पण करें।

रात्रि में कथा एवं जागरण करें। दूसरे दिन 108 विल्व पत्र से ''गौरीं इमाय'' मन्त्र से हवन करें। तथा 16 ब्राह्मण जोड़ा-जोड़ी या आठ या 4 जोड़ा-जोड़ी मिलाकर वस्त्र दक्षिणा देकर पश्चात् आचार्य को यथा शक्ति दक्षिणा देकर सन्तुष्ट करें। फिर आशीर्वाद लेकर प्रसाद पावें एवं गौरी जी का विसर्जन करें।

।। इति मंगला गौरी व्रत कथा उद्यापन सहिता ।।

।। श्रावण सोमवार ।।

भगवान शंकर जी के मस्तक पर चन्द्रमा है, श्रावण मास में कर्क संक्रान्ति होती है तथा कर्क राशि का स्वामी चन्द्रमा है। चन्द्रमा को शिव जी ने भाल पर धारण कर रखा है। अतः श्रावण के सोमवारों

का व्रत करना चाहिये। भगवान शिव की उपासना एवं एक समय भोजन करना चाहिये। श्रावण महीने में शिव पुराण अथवा लिङ्गपुराण की कथा सुननी चाहिये।

इस व्रत के प्रभाव से सुख सम्पत्ति सन्तान, भक्ति आदि सभी कामनायें पूर्ण होती हैं। संभव हो तो ब्राह्मणों द्वारा रुद्राभिषेक कराना चाहिये। श्रावण मास में लघुरुद्र, महारुद्र, अतिरुद्र यज्ञ का विशेष महत्व है।

।। इति ।।

।। हरियाली तीज ।।

श्रावण शुक्ल पक्ष की तृतीया को मधुश्रवा तीज भी कहते हैं। यह गुजरात में प्रसिद्ध है। इस दिन स्वर्ण गौरी का व्रत करना चाहिये। इस प्रकार करने से सभी कामनायें पूर्ण होती हैं। इस दिन माता पार्वती का पूजन करना चाहिये।

कथा–बिमला नाम की नगरी में चन्द्रप्रभा नाम के राजा रहते थे। एक दिन वन में घूमते हुए अप्सराओं द्वारा स्वर्ण गौरी के पूजन एवं व्रत को देखा। राजा ने विधि पूछी। अप्सराओं से विधि जानकर स्वर्ण गौरी का डोरा धारण किया। राजा की दो पत्नियां थी, श्री महादेवी एवं विशालाक्षी। डोरे को देखकर विशालाक्षी ने तोड़कर सूखे वृक्ष पर फेंक दिया। राजा के मना करने पर भी नहीं मानी। उधर वृक्ष हरा भरा हो गया। दूसरी पत्नी महादेवी ने डोरा उठाकर धारण कर लिया। विशालाक्षी को वनवास हुआ। बहुत दुःखी हुई

वह स्वर्ण गौरी मां की शरण ली। मां के पूजन के प्रभाव से राजा ने पुन: स्वीकार किया। तब विशालाक्षी सुखी हुई। हरियाली तीज का उत्सव प्राय: सभी जगह मनाया जाता है। व्रज में राधारानी झूला झूलती है। स्त्रियां भी झूला झूलती हैं। मेंहदी आदि लगाती हैं और मिलकर सभी स्त्रियां गीत गाती हैं। इस तीज पर तीन काम छोड़ देना चाहिये–

1. पति से छल-कपट।
2. झूठ बोलना तथा दूसरों का अपमान, मन से भी दूसरे को दु:खी न करें।
3. पर निन्दा।

सब का सम्मान करने वाली तथा बड़ों की सेवा करने वाली स्त्री का ही व्रत पूर्ण माना जाता है। इससे सदा सुहागिन पुत्रवती, एवं धन धान्य से पूर्ण रहती हैं। पहले दिन लड़कियों के सिंधारा करना चाहिये। व सौभाग्यशाली स्त्रियों को वायना निकालना चाहिये।

।। इति ।।

।। नागपंचमी ।।

श्रावण शुक्ल पक्ष पंचमी को नागपंचमी मनाना चाहिये। शास्त्रों में लिखा है–''श्रावणे पंचमी शुक्ला सम्प्रोक्ता नागपंचमी''। कोई इसे कृष्ण पक्ष में भी मानते हैं।

पहले दिन भोजन बनाकर नागपंचमी को ठंडा भोजन करते हैं। पंचमी को पट्टा पर मिट्टी से या रस्सी को काली करके। ''ॐ

अनन्तायनम:'' कहकर पूजन करना चाहिये। कच्चे दूध से एवं भीगा चना, बाजरा, मोठ से नाग देवता का पूजन करना चाहिये। सास को वायना देकर आशीर्वाद लें। पश्चात् पृथ्वी को धारण करने वाले शेष भगवान की कृपा की आकांक्षा करनी चाहिये।

नागपंचमी कथा–पुराने जमाने में एक किसान हल जोत रहा था, हल की फाल से सांप के बच्चे मर गये। नागिन ने बदला लेने के लिये किसान तथा उसकी पत्नी एवं दोनों पुत्रों को डस लिया। तब दूसरे दिन उसके लड़की को डसने के लिये गई। लड़की ने कटोरे में सामने दूध रखा। नागिन ने दूध पिया। प्रसन्न हुई तथा किसान एवं पत्नी सहित दोनों पुत्रों को जीवित कर दिया। तब से नाग पूजन होने लगा।

।। इति ।।

।। श्रावणी कर्म ।। (उपाकर्म)

श्रावण शुक्ल पक्ष पूर्णिमा को श्रावणी कर्म (उपाकर्म) प्रात: काल नदी या तालाब या गंगा जी के तट पर उपाकर्म के अनुसार संकल्प करके पंचगव्य पीकर सब शारीरिक पाप नष्ट करके जल में विविध प्रकार के गोबर मिट्टी, भस्म, दूर्वा, अपामार्ग आदि से मंत्रों द्वारा स्नान करें। एक वर्ष के जो जान अनजान में होने वाले पापों को नष्ट करके तर्पण तथा सूर्य उपस्थान करें। फिर घर में आकर गणेश, कलश, सप्तऋषि आदि का पूजन कर यज्ञोपवीत पूजन कर नया यज्ञोपवीत धारण करे।। ऋषि वंशावली का पठन

श्रवण करें। अपने से बड़ों को यज्ञोपवीत (जनेऊ) श्रद्धपूर्वक प्रदान करें। तदनन्तर हवन करके ब्राह्मण भोजन के पश्चात् स्वयं भी प्रसाद ग्रहण करें।

।। इति ।।

रक्षा विधान एवं रक्षाबंधन
(भाई बहनों का त्योहार)

एक समय युधिष्ठिर ने भगवान श्री कृष्ण से पूछा–प्रभो अब तक मैंने बहुत कथायें सुनी। प्रभो अब ऐसी कथा सुनाइये जिससे सब रोग दोष शान्त होकर एक वर्ष सुखपूर्वक व्यतीत हो सके।

भगवान ने कहा–एक समय इन्द्र राक्षसों से युद्ध कर हताश हो गये जीत नहीं मिली इन्द्र ने देव गुरु बृहस्पति की शरण ली। और कहा–गुरुदेव अब क्या करूँ? अब तो युद्ध करना ही श्रेयस्कर है।

गुरु ने कहा समय देखकर चलना चाहिये। इन्द्राणी ने कहा मैं कुछ व्यवस्था करती हूँ। इन्द्राणी ने ऋषियों से रक्षा विधान करवाकर इन्द्र के हाथ में डोरा बांध दिया। राक्षसों ने डोरा बंधा हुआ देखा, वे राक्षस डरे और भाग खड़े हुए।

भगवान ने कहा उपाकर्म के पश्चात् चौकी लगाकर कलश स्थापन कर रेशमी वस्त्र में अक्षत, सरसों, स्वर्ण खण्ड की पोटली बनाकर कलश पर रखकर रक्षा की अधिष्ठात्री देवी का पूजन कर हाथ में पोटली बांधे।

रक्षाबन्धन (श्रावण शुक्ला पूर्णिमा)

श्रावण शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा को भद्रा रहित समय में रक्षाबंधन का त्योहार मनाना चाहिये। रक्षाबंधन के पहले दिन दरवाजे के दोनों तरफ गोबर के जल से धोकर 6 × 6 इंच के आकार का उस पर सूण (पुरुष आकार) या स्वास्तिक (सातिया) गेरु से लिख देना चाहिये। पूर्णिमा को मूंग, भात या मिठाई से जिमाना चाहिए।

पहले रोली चावल से पूजा करें बाद में जिमाना चाहिये। किसी-किसी मत से भद्रा आदि में भी रक्षाबंधन उत्सव मनाते हैं। लेकिन शास्त्रों में भद्रा में दो कार्य करने के लिये मना करते हैं।

श्लोक–"श्रावणी द्वे न कर्तव्यो श्रावणी फाल्गुनी तथा।"

भोजन के उपरान्त राखी बांधना चाहिये।

बहिन भाई के हाथ में राखी बांधते हैं। बहिन दुर्गा का स्वरूप है, बहिन देवताओं से प्रार्थना करती है, मेरे भाई की सब प्रकार से रक्षा करो। भाई-बहन को रुपया देता है। परन्तु भाई का कर्तव्य है, बहिन की हर तरह से रक्षा करे।

वामन भगवान जब बलि के यहां पहरा देने लगे, लक्ष्मी माता बहुत परेशान हुई। नारद द्वारा पता चला भगवान बलि के यहां है। बलि गंगा स्नान करने के लिये आया माता लक्ष्मी भी वहां वेश बदलकर घाट के किनारे बैठ गईं और रोने लगी। बलि की नजर पड़ी पूछा देवी क्यों रो रही हो, कौन हो आप, लक्ष्मी जी ने कहा क्या करूं मेरे कोई भाई नहीं है, बलि ने कहा तुम्हारे कोई भाई नहीं

है, मेरे कोई बहिन नहीं है, चलो आज से मैं तुम्हारा भाई तुम मेरी बहिन हुई।

घर ले जाकर बलि ने राखी बंधवाई, और कहा–बहिन क्या सेवा करूं। लक्ष्मी जी ने कहा भाई इस दरबान वामन के बिना मेरा बैकुण्ठ सूना है, इसे दे दो। कहते-कहते लक्ष्मी जी के आंखों में आंसू छलक पड़े। सुनते ही मूर्छित हो गया। जब होश में आये तो भाई को दु:खी देखकर कहा–भैया दु:खी न हो, दरबान नहीं चाहिये। बलि ने कहा मेरी बहिन पति बिना दुखी हो। भाई कैसे सहन कर सकता है, वामन जी ने कृपा की, एक रूप से बैकुण्ठ गये, एक रूप में दरबान बने रहे।

पंडित जन इसी मंत्र से रक्षा सूत्र (कलावा, मौली) बांधते हैं–

मन्त्र–

येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबल:।
तेन त्वामनु बध्नामि रक्षेमाचल मा चल।।

।। इति श्रावणी, कर्म-रक्षाबंधन, भाई-बहनों का त्यौहार ।।

भाद्रपद–कृष्ण पक्ष (कज्जली तीज)

भाद्रपद कृष्ण पक्ष की तृतीया को स्त्रियां इस त्योहार को मनाती हैं। इस दिन शिव एवं पार्वती का पूजन करें। स्त्रियां इस रोज सत्तु में चीनी तथा घी मिलाकर भोग लगाती हैं। तथा सासू को वायना देती हैं। प्रसाद पाती हैं, राजस्थान में स्त्रियां श्रृंगार करती हैं, आज

के दिन हरकाली (पार्वती) देवी की पूजा करनी चाहिये। इससे सभी पापों का शमन होता है, एवं सुख-सौभाग्य सन्तान की प्राप्ति होती है। इस दिन गौ पूजन कर गाय को गुड़ खिलाना चाहिये।

कथा–विवाह के बाद एक दिन शिव पार्वती कैलाश में विरजामान थे। पर घर में कोई सास व ननंद नहीं है, दिन भर पति पत्नी में विनोद होता रहता, दिन भर हंसी का फव्वारा छूटता रहता था।

प्रात: सदा शिव हिमशिला (बर्फ शिला) पर आसन बिछाकर संध्या करके गायत्री जप कर रहे थे। पार्वती जी पीछे से आकर गलबैयां डालकर कहा–प्राणनाथ मैं कैसी लग रही हूं। शंकर जी तो कर्पूर गौरं करुणावतारं हैं। कपूर की तरह दिव्य रूपवान हैं। और पार्वती काली कलकत्ते वाली जिसके रूप को देखकर कोयल का भी रंग फीका लगे। ऐसी काली थी। अब जब माला पूर्ण हो तो भोले नाथ बोले–सोचने लगे! ऐसी लग रही हो कि मानो पूर्णिमा की चान्द को काली घटा ने घेर लिया हो। फिर सोचा ऐसा कहने पर प्राण प्रिया रूठ गई तो क्या होगा। मैं कह दूंगा चांद में क्या पड़ा है, काली घटा ही जल बरसाकर जीवन दान देती है।

पार्वजी जी ने फिर पीछे से एक झटका मारा। बताओ मैं कैसी लग रही हूं, झटके के कारण फिर सोचने लगे। शिव जी ने सोचा। कपूर की ढेरी पर मानों गोबर रख दिया हो। फिर सोचा-रूठ गई तो कह दूंगा। गोबर में लक्ष्मी का वास है। उसके बिना यज्ञ ही नहीं हो सकता। तुम तो साक्षात् गृहलक्ष्मी हो। अभी माला पूर्ण नहीं हुई थी। पार्वती ने फिर एक झटका मारा। इस बार के झटके में पीछे

की सारी बातें भूल गये और बोले तुम ऐसी लग रही हो, मानों श्वेत चन्दन के दिव्य वृक्ष को काली नागिन ने लपेट लिया हो।

इतना सुनते ही मां पार्वती दूर खड़ी हो गई क्रोध के मारे आंखें लाल हो गईं, नेत्रों से गंगा-यमुना बहने लगी। अपने को बड़ा सुन्दर समझते हो मेरी जैसी याचक का इतना बड़ा अपमान। मैंने आपको प्राप्त करने के लिये जीवन भर तपस्या की जिसका यह फल, शंकर जी ने कहा—मैंने तो विनोद (मजाक) किया था। पार्वती जी ने कहा किसी की आंख में उंगली से घोंचा मार दो और कह दो मैंने तो मजाक किया था। कड़ककर बोली, आपने जहर दिया है जो बोलते हो तो वाणी में वही उगलते हो, मैं काली हूं, तो आप महाकाल, मेरे पिता श्री दक्ष को खा गये। महाकाल देव सारे संसार को खाकर भी तृप्त नहीं होते हो। और मुझे काली कहते शर्म नहीं आती।

शंकर जी ने क्षमा याचना की देवी प्रसन्न हो जाओ भविष्य में सोच-समझकर बोलूंगा। पार्वती जी ने कहा—अब यह रूप आपकी सेवा में नहीं रहेगा। या तो गौराङ्गी बनूंगी या तो शरीर विसर्जित होगा। और चल दीं। फिर सोचा, यदि किसी सौत ने अधिकार जमा लिया तो क्या होगा, अपनी माया से रक्षक बनाकर घोर वन में उग्र तप करने लगीं। तप पूर्ण ही होने वाला था कि पवन देव ने सूचना दी शिव जी के यहां एक राक्षसी ने आपका रूप बनाकर घर पर अधिकार कर लिया है। सुनते ही माया से एक सिंह प्रगट किया। मुख में प्रवेश करने जा रही थी, कि भगवान नारायण प्रगट हुए। वरदान मांगों, मां पार्वती ने कहा अब क्या मांगू। मेरा तो घर उजड़

गया। भगवान हंसे। चिन्ता मत करो शंकर जी ने राक्षसी को मार दिया। सुनकर बड़ी प्रसन्न हुई। बोली प्रभु मुझे गौरी बना दीजिये। प्रभू ने कहा तथास्तु। ऐसी ही हो, पार्वती जी के शरीर से समस्त कालिमा लिये एक देवी चन्द्रघण्टा नाम की ऊपर चली गई। तथा पार्वती जी तपाये हुए सोने के समान गौरी हो गई। अब तक लोग काली शंकर जानते थे। आज से गौरी शंकर के नाम से आराधना करने लगे। आज के दिन पूर्ण तृतीया को हरकाली के स्मरण में तथा गौरीशंकर के गुणगान में व्रत और पूजन करते हैं।

।। इति कज्जली तृतीया व्रत ।।

हल की षष्ठी ललही छठ (हरछठ)

यह व्रत भाद्र पद कृष्ण पक्ष षष्ठी को किया जाता है। इस दिन हल मूसल धारी श्री बलराम जी का जन्म हुआ था। कुछ लोग जनक नंदिनी माता सीता का भी जन्म दिवस इस तिथि को मानते हैं, बलराम जी के मुख्य शस्त्रों में हल और मूसल उल्लेखनीय है। इसी से इनका एक नाम हलधर भी है, इन्हीं के नाम के आधार पर इसका नाम हलषष्ठी पड़ा होगा। पुत्रवती स्त्रियां ही इस व्रत को करती हैं। इस दिन महुए की दातुन करने का विधान है। पारण के समय हल से जोता बोया गया अन्न नहीं खाना चाहिए इस कारण इस व्रत का सेवन करने वाली स्त्रियां नीवार (फरनहीं) का चावल सेवन करती हैं। इस दिन गाय का दूध भी वर्जित है। विधि-विधान

में प्रात: सद्य: स्नाता की स्त्रियां भूमि (आंगन) लीपकर एक कुण्ड बनाती हैं। जिसमें बेरी, पलाश, गूलर, कुश, प्रभुत्ति टहनियां गाड़कर ललही की पूजा करती हैं। पूजन में सतनजा (गेहूं, चना, धान, मक्का, अरहर, ज्वार, बाजरे) आदि का भुना हुआ लावा चढ़ाया जाता है। हल्की से रंगा हुआ वस्त्र तथा कुछ सुहाग सामग्री भी चढ़ाई जाती है। पूजनोपरान्त निम्न मंत्र से प्रार्थना करनी चाहिए–

गंगा द्वारे कुशावर्ते विल्वके नील पर्वते।
स्नात्वा कनरवले देवि हर लब्धवती पतिम्।।

अर्थात् हे देवी–आपने गंगा द्वारा कुशावर्त विल्वक नील पर्वत और कनरवल तीर्थ में स्नान कर के भगवान शंकर को पति रूप में प्राप्त किया है। सुख और सौभाग्य देने वाली ललिता देवी आपको बार-बार नमस्कार है। आप मुझे अचल सुहाग दीजिए ऐसी प्रार्थना करें अन्त में शिवधाम की प्राप्ति होती है।

व्रत की कथा–प्राचीन काल में एक ग्वालिन थी, जिसका प्रसव काल अत्यन्त सन्निकट था। एक ओर वह पीड़ा से व्याकुल थी तो दूसरी ओर उसका चित्त गोरस विक्रय में लगा था।

उसने विचार किया कि यदि बच्चा उत्पन्न हो गया तो फिर दूध दही ऐसे ही पड़ा रह जाएगा यह सोचकर वह झट उठी तथा सिर पर गोरस (दूध, दही) की मटकिया रखकर बेचने चल दी आगे चलकर कष्ट साध्य पीड़ा के कारण एक बनवेरी की ओट में बैठ गई और वहां उसके एक बालक पैदा हुआ। अल्हड़ ग्वालिन ने नवजात शिशु वही रखकर स्वयं दूध, दही बेचने समीपस्थ गांवों को

चल दी। संयोग वश उस दिन हलषष्ठी भी थी। गाय भैंस का मिश्रित दूध होने पर भी उसने केवल भैंस का दूध बतलाकर ग्रामीणों को खूब ठगा। जिस बनवेरी में उसने बच्चे को छोड़ा था, उसी के समीप एक कृषक हल जोत रहा था। अकस्मात बैलों के भड़कने से चपेट में आकर वह बालक हल का फलक घुसने से मर गया यह घटना देखकर कृषक बहुत दु:खी तथा लाचार हुआ फिर भी उसने धैर्य धारण कर बनवेरी के कांटों से बच्चे के पेट पर टांका लगाकर घटना स्थल पर छोड़ दिया। तत्क्षण ग्वालिन भी विक्रय करके वहां आ गई। बच्चे की यह दशा देखकर उसने अपने ही किये पाप का प्रतिफल समझा फिर वह मन में सोचने लगी कि यदि मैंने हलषष्ठी के दिन दूध-दही विक्रय हेतु मिथ्या भाषण करके उन ग्रामीण नारियों का धर्म नष्ट न किया होता तो यह दशा क्यों होती इसलिए अब लौटकर सब बातें प्रकट कर प्रायश्चित करना होगा। ऐसा निश्चय कर वह उस गांव में गई जहां उसने दूध दही बेचा था वह गली-गली में घूमकर कहने लगी कि मेरा दूध गाय, भैंस का मिश्रण था। यह सुनकर स्त्रियों ने स्वधर्म रक्षार्थ उसे आशीर्वाद दिया बहुत सी युवतियों के द्वारा आशीष लेकर जब वह पुन: वन में आई तो उसका पुत्र जीवित मिला तभी से उसने स्वार्थ सिद्धि के लिए झूठ बोलना ब्रह्म हत्या के समान निकृष्ट कर्म समझकर छोड़ दिया। किन्हीं-किन्हीं प्रान्तों में ललही छठ-ललिता ब्रह्म के नाम से भी जाना जाता है। विधान उपरोक्त ही है।

।। इति ।।

श्री कृष्ण जन्माष्टमी व्रत

द्वापर युग में जब पृथ्वी पापाचार-अत्याचार से दुखी हुई माता पृथ्वी ने गौ का रूप धारण कर ब्रह्मा जी की शरण में गई तब सब देवों को साथ ले ब्रह्मा जी ने क्षीर सागर में जाकर भगवान नारायण की पुरुष सूक्त के द्वारा सुन्दर स्तुति की। प्रभु ने आदेश दिया—मैं वसुदेव के यहां देवकी के गर्भ से अवतार लूंगा। आप लोग भी व्रज में अवतार लो और मेरी लीला में सहयोगी बनना।

उग्रसेन के छोटे भाई देवक की पुत्री जब विवाह के योग्य हुई तो वसुदेव जी के साथ देवकी का विवाह किया। उग्रसेन का बली पुत्र कंस संसार में प्रेम दिखाने के लिये सारथी को हटाकर स्वयं रथ की बागडोर संभालकर चलाने लगा। प्रभु ने सोचा जिस मां के गर्भ से मेरा प्रागट्य होने वाला है, उसकी बागडोर कंस के हाथ में हो यह उचित नहीं, सभी जन समुदाय कंस की वाह-वाह कर रहे थे। कंस के हृदय में क्या है? यह प्रगट करने के लिये आकाश से आवाज आई। अस्यास्त्वाष्टमों गर्भो हन्तायांवहसे बुध। इसके आठवें गर्भ के द्वारा तेरी मृत्यु होगी। सुनते ही कंस रथ से नीचे कूद पड़ा। तलवार निकाल देवकी का सिर काटना चाहा। वसुदेव जी ने रोका और कहा (श्लाघनीयः गुणः सूरै भवान्, भोज यशस्करः)। आप जैसे प्रसंशनीय वीर को एक अबला की हत्या कर देना शोभा नहीं देता। आप को देवकी से नहीं अपितु उसके गर्भ से डर है सो मैं वचन देता हूं कि इसके जो बालक होंगे जन्म लेते ही तुम्हें समर्पित

कर दूंगा। तब आपकी जो इच्छा हो सो करना। वसुदेव की बात का विश्वास करके कंस ने देवकी को छोड़ दिया। भगवान ने शेष से एवं धर्म पत्नी से कहा अब अवतार का समय आ गया है, वासुदेव ने छः पुत्रों को कंस के हाथों में सौंप चुके हैं, और वे मारे भी जा चुके हैं। भगवान ने महामाया को आदेश दिया, देवकी के गर्भ को नन्द जी के यहां व्रज में रोहिणी के गर्भ में स्थापित करो। तथा तुम यशोदा के गर्भ से जन्म ग्रहण करो। और मैं भी आ रहा हूं। देवकी और वसुदेव कारागार में बन्द थे। प्रभु ने सोचा गोलोक धाम (बैकुण्ठ धाम) का सुख तो बहुत देखा। अब इच्छा हे, इन कारागार वासियों के दुःख दर्द को आनन्द में परिवर्तित करूं। उनको भी कृतकृत्य करना चाहिये। इसीलिये कंस के कारागार में भाद्रपद कृष्ण अष्टमी दिन बुधवार और रोहणी नक्षत्र में ठीक रात्रि के बारह (12) बजे भगवान कन्हैया का प्रादुर्भाव हुआ।

बोलिये बालकृष्ण लाल की जय।
कृष्ण कन्हैया लाल की जय।।

वसुदेव जी को भगवान ने आदेश दिया मुझे गोकुल नन्द बाबा के यहां पहुंचाओ तथा यशोदा के यहां कन्या ने जन्म ग्रहण किया है, उस कन्या को तुम ले आओ। वसुदेव जी सूप में लेकर चले। तो सब ताले खुल गये, सब सैनिक सो गये, यमुना ने मार्ग दे दिया। पानी की हल्की-हल्की बूंदे पड़ रही थीं। यहां गोकुल में भी सब सोये हुए थे। वसुदेव जी ने यशोदा के पास कृष्ण को सुलाकर कन्या को लेकर आ गये। संसार में वास्तविक चमत्कार दिखाई

दिया। प्रभु के आते ही सब बन्धन ताले खुल गये और महामाया के आते ही बन्धन ताले पुनः लग गये। कन्या कारागार में पहुंचते ही तेजी से रोई। सब जाग गये। कंस को पता चला कंस ने आकर देवकी के हाथों से कन्या को छीन पत्थर पर दे मारा। कन्या उसके हाथ से छूटकर सिर पर लात मारकर आकाश में अष्टभुजी देवी के रूप में परिणित हुई और कहा–कंस मेरे को मारने से क्या लाभ। तेरे शत्रु का तो प्रादुर्भाव हो चुका है।

इस प्रकार से दूसरे दिन गोकुल में भगवान का दिव्य जन्मोत्सव मनाया गया व्रज में भगवान श्री कृष्ण नित्य ही नयी लीला करते हुए 11 वर्ष 56 दिन के होते होते कंस का उद्धार किया। कंस के मारने के पश्चात माता-पिता को प्रणाम करने गये। प्रेम विह्वल माता-पिता आनन्दातिरेक में मग्न थे प्रजा जय-जयकार कर रही थी। सबने प्रार्थना की प्रभो आपका जन्मोत्सव न मना सके। अब आप वरदान दें। आपके जन्मोत्सव का फल एवं आनन्द प्राप्त हो सके। श्री कृष्ण ने वरदान दिया–और कहा जन्म दिन के समय मेरी व्रज लीलाओं के चित्र दीवारों पर लिखने या लगाने चाहिये। एक सूतिका गृह बनाना चाहिये। जिसमें मां देवकी बालक कृष्ण हो तथा अन्य सब हो। सब का पूजन करना चाहिये।

॥ पूजन ॥

भगवत्यै श्री देवक्यै नमः, श्री वसुदेवाय नमः, श्री बलभद्राय नमः, श्री यशोदायै नमः श्री नन्दाय नमः। श्री नन्दात्मजायै महामायायै

नमः। श्री कृष्णाय नमः। श्री कृष्णाय सपरिवाराय नमः। आवाहयामि पूजयामि।

इस प्रकार पूजन आदि कर बधाई गीत आदि गाना चाहिये। उपरान्त कृष्ण लीला चिन्तन तथा आरती करें, प्रसाद आदि ग्रहण करें।

॥ इति ॥

॥ गूगा नवमी ॥

गूगा नवमी भाद्रपद कृष्ण पक्ष में मनाते हैं। इस दिन गूगा की मिट्टी की मूर्ति की राखी रोली चावल तथा मिष्ठान से पूजा करनी चाहिये।

राजस्थान में कई जगह दीवाल पर घोड़े पर चढ़ा गूगा बनाकर उसके सामने कई सांप बना देते हैं।

कहा जाता है, कि सांप के काटने के कारण इन्होंने शरीर छोड़ा था। इनके पूजन से सांप का जहर उतर जाता है, और सर्प का भय नहीं होता।

॥ इति ॥

॥ गोवत्स पूजा ॥ (बछबारस)

भाद्रपद कृष्ण पक्ष की द्वादशी को पुत्रवती स्त्रियां पुत्र की मंगल कामना के लिये मिट्टी के गाय-बछड़ा, सिंह-सिंहनी बना कर पाटे पर रखें। तथा पूजा करें। रोली से टीका निकालें, घर में गाय

बछड़े हों तो घर में, या न हों तो बाहर दूसरे स्थान में जाकर गाय बछड़े का पूजन करें, और गुड़-मिठाई खिलावें।

मिट्टी की मूर्ति पर भीगा बाजरा, दूध, चावल, चढ़ावें। एवं कथा सुने भगवान कृष्ण की। इस दिन बाजरे की ठंडी रोटी खाते हैं।

गाय का दूध-दही तथा गेहूं चावल न खावें।

भैंस आदि का दूध खावें। यह व्रत पुत्र होने के बाद किया जाता है। अपने कुंवारे बेटे की कमीच पर सातिया बनाकर पहनावें एवं कुंए का पूजन करें। इसी दिन भगवान कृष्ण ने बछड़े चराने शुरू किये थे। इसलिए सवत्सा गौ पूजन एवं कृष्ण कथा सुननी चाहिये।

उद्यापन विधि–घर में पुत्र का जन्म या विवाह हो तो उजमन हो तो उस दिन पहले 11 सेर बाजरा दान दे। एक थाली में 13 मुठ्ठी बाजरे की ढेरी बनाकर उसपर दो मुठ्ठी बाजरे का आटा जिसमें घी एवं चीनी मिली हो रखें। साड़ी के आंचल (कोने) में रुपया रखकर तथा हाथ फेर कर सासू जी के पैरों में लगाकर देवें। पीछे गाय बछड़े की पूजा करें, तथा कुएं का पूजन करें। मंगल गीत गायें। ब्राह्मणों को दक्षिणा देवें।

।। इति ।।

।। कुशोत्पाटनी अमावस्या ।।

भाद्रपद अमावस्या को (मंत्र ॐ हुं फट् स्वाहा) इस मन्त्र से कुशा उखाड़ें। जो कुशा अमावस्था के अतिरिक्त तिथियों को उखाड़ी जाती है, वह उसी दिन ही काम आती है। अमावस्या की उखाड़ी

हुई कुशा एक महीने तक काम में आती है। लेकिन भाद्रपद की अमावस्या को उखाड़ी हुई कुशा एक वर्ष पर्यन्त पवित्र रहती है। (एक वर्ष पर्यन्त काम में आती है)

भाद्रपद अमावस्या को शनि ग्रह का जन्म हुआ था, इसलिये शनि पूजा भी करनी चाहिये।

इसी दिन संयोगवश यदि सोमवती अमावस्या हो एवं ग्रहण हो ता इस दिन की उखाड़ी हुई कुशा सदा पवित्र और कार्य में आने वाली है। इसी दिन सती पूजा करनी चाहिये। इन दिनों पितरों का पूजन करना चाहिये। इस दिन झुंझनू (राजस्थान) तथा अन्य स्थानों में सती पूजन अवश्य करनी चाहिये।

।। इति ।।

।। भाद्रपद शुक्ल पक्ष ।। (हर तालिका व्रत)

भाद्रपद शुक्ल पक्ष तृतीया को हर तालिका व्रत करना चाहिये। चौकी पर वस्त्र बिछाकर शंकर-पार्वती की मूर्ति स्थापित कर पूजन करना चाहिये। एवं निराहार व्रत करें। इसी दिन पार्वती जी सखियों के साथ पति रूप में भोलेनाथ की प्राप्ति के लिये वन में तपस्या करने गईं थीं। तथा तप के प्रभाव से शिव जी ने मनोवांछित वर दिया था। उद्यापन में 16 जोड़ा ब्राह्माणों को जिमाना चाहिये। रात्रि में स्वर्ण की शिव पार्वती की प्रतिमा का पूजन करना चाहिये। एवं सुबह दूसरे दिन हवन करके देवी से प्रार्थना करनी चाहिये। हे करुणामयी वात्सल्यमयी मां गौरी मां मेरे अपराधों को क्षमा कीजिये एवं

लोक-परलोक का सुख प्रदान कीजिये।

॥ हरतालिका व्रत ॥

मिट्टी के शंकर-पार्वती जी को बनाकर स्नान कराकर संकल्प आदि करके पूजन कर कथा श्रवण करें।

हरितालिका व्रत की संक्षिप्त कथा

हरितालिका व्रत की कथा लिङ्ग पुराण से ली गयी है, इस कथा को शिवजी ने पार्वती जी के विशेष आग्रह से उन्हें कैलाश पर्वत पर सुनाया था। एक बार कैलाश शिखर पर बैठे हुए शिव जी से मां पार्वती जी ने कहा-हे नाथ यदि आप मुझ पर प्रसन्न हों तो अत्यन्त गोपनीय व्रत जो अत्यन्त फलदायक हो उसे सुनाइये।

भगवान भोलेनाथ ने कहा-मैं उस अत्यन्त गोपनीय एवं उत्तम फल देने वाले व्रत को कहता हूं, मन को एकाग्र करके सुनो।

भाद्रपद शुक्ला हस्त नक्षत्र के होने पर इस व्रत को करने से सभी प्रकार के पाप ताप नष्ट हो जाते हैं।

पार्वती जी ने पूछा-मैंने किस व्रत को किया था? शिव जी ने कहा-पर्वतों के राजा हिमवान हैं, जहां सिद्ध चारण गन्धर्व आदि का निवास है, उसी हिमालय पर तुमने बाल्य अवस्था में कठिन तापस्या की थी। तुम्हारे कठिन तप को देखकर तुम्हारे पिता हिमवान को चिन्ता हुई कि इस कन्या को किसे प्रदान करूं। उसी समय नारद वहां पधारे, उनका यथोचित सम्मान कर तुम्हारे पिता हिमवान

ने आगमन का कारण पूछा। श्री नारद जी ने कहा श्री वासुदेव जी के द्वारा भेजा गया आपके पास आया हूं। योग्य वर को ही कन्या देना उचित है, वे सर्वश्रेष्ठ हैं, उनके अतिरिक्त दूसरा योग्य कौन है? हिमवान ने कह दिया यदि भगवान विष्णु यदि मेरी कन्या से विवाह करना चाहते हैं तो अपनी कन्या देना मुझे स्वीकार है। इसके पश्चात् नारद जी भगवान विष्णु जी के पास जाकर सारा वृत्तान्त कह सुनाया।

यथा समय हिमवान ने गौरी से कहा कि पुत्री! तुम्हें मैं विष्णु को दान करना चाहता हूं। पिता की बात सुनकर गौरी (पार्वती) जी सखी के पास पहुंची और मूर्छित हो पृथ्वी पर गिर पड़ी। सखी ने पूछा इस प्रकार क्यों रो रही हो? पार्वती ने कहा शिव जी ही हमारे इष्ट और अभीष्ट देव हैं, पिता जी ने मुझे भगवान विष्णु को प्रदान करने का वचन दिया है अतः मैं इस शरीर को छोड़ देना चाहती हूं। सान्त्वना देकर सखी ने पार्वती को उस वन में पहुंचा दिया जिस वन को हिमवान नहीं जानते थे। पार्वती के लुप्त हो जाने पर हिमवान को बहुत दुःख हुआ। और पार्वती को उन्होंने सभी स्थानों में ढुढ़वाया, जब उन्हें भगवान विष्णु जी को कन्यादान देने की बात याद आती तब उन्हें बहुत कष्ट होता। शिवजी ने कहा पार्वती तुम सखी के साथ घोर जंगल से होते हुए एक रम्य स्थान पर पहुंची, और वहीं एक पर्वत की गुफा में प्रविष्ट हो संपूर्ण भोगों को छोड़कर घोर तप किया और भाद्रपद शुक्ला तृतीया के दिन हस्त नक्षत्र के होने पर तुमने पार्वती सहित बालू का लिंग बनाकर स्थापित किया और वाद्य

गीत के साथ मेरी पूजा की रात्रि जागरण किया। तुम्हारे उस व्रत के प्रभाव से मेरा आसन चलायमान हो गया। और सखी के साथ तुम्हें मेरा दर्शन हुआ। जब मैंने वर मांगने को कहा तुमने वर रूप में मुझे ही मांगा। ''तथाऽस्तु'' कहकर मैं अन्तर्ध्यान हो गया और तुमने दूसरे दिन प्रात:काल मेरा विसर्जन किया। उसी समय तुम्हें ढूंढ़ते हिमवान भी वहां आ पहुंचे। तुम्हें देखकर प्रसन्न हो गोदी में बैठाकर घनघोर जंगल में आने का कारण पूछा, तब तुमने पूर्व जन्म का वृत्तान्त बतलाकर मुझे पति रूप में पाने की इच्छा व्यक्त की थी। हिमवान ने घर जाकर यथासमय मेरे साथ तुम्हारा विवाह सम्पन्न किया। जिस व्रत के प्रभाव से तुमने मेरे आधे आसन को प्राप्त किया वही यह सर्वोत्तम व्रत है। इसी के अन्तर्गत पार्वती जी ने इस व्रत का विधि विधान पूछा–तब शिवजी ने कहा यह स्त्रियों का व्रत है, व्रत के दिन तोरण आदि से स्थान को सजाकर सुगन्धित द्रव्यों से युक्त गृहमण्डप में वाद्य गीत के साथ पार्वती सहित मेरी प्रतिमा की स्थापना करनी चाहिये, पश्चात् देव पूजन विधि से पूजन करके शिव-पार्वती की स्तुति करनी चाहिये। हे देवि! जो स्त्री इस व्रत को करती है, वह पापों से छुटकारा पाकर मनोवांछित फल प्राप्त करती है। तथा जो स्त्री उस दिन अन्न ग्रहण करती है, उसे जन्म-जन्मान्तर तक वैधव्य भोगना पड़ता है। ''हरितालिका व्रत'' कथा को सुनने मात्र से हजारों अश्वमेघ यज्ञ और सैकड़ों ''वाजपेय यज्ञ'' करने का फल प्राप्त होता है। इसलिये हे देवि! इस उत्तमोत्तम व्रत को मैंने तुम्हें बतलाया। जो स्त्री इस व्रत को करेगी वह सभी पापों से

छुटकारा पाकर इष्ट फल को प्राप्त करेगी, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

।। इति ।।

।। गणेश जन्म ।।

(श्री कृष्ण को चन्द्र दर्शन से मिथ्या कलंक और उसकी निवृत्ति)

भाद्रपद शुक्ला की चतुर्थी को भगवान गणेश जी का प्रादुर्भाव हुआ। शिवजी ने पुत्र प्राप्ति के लिए तप किया भगवान नारायण प्रगट हुए और बोले–बरं ब्रूहि वरदान मांगों। शिव जी ने कहा प्रभो पुत्र चाहिये। भगवान ने कहा पुत्र रूप में मैं ही आपके यहां आ रहा हूं। भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी को प्रभु पधारे।

बड़ा स्थूल (मोटा) शरीर देखकर चंद्रमा हंस पड़े। गणेश जी ने कहा। आज के दिन तुझे जो देख लेगा उसे कलंक लग जायेगा। श्राप सुनकर चन्द्रमा ने बहुत पश्चाताप किया।

भगवान श्री कृष्ण एक दिन सोचने लगे। मेरे वंशधर चन्द्र मेरे होते हुए निष्कलंक न हुए तो मेरा अवतार लेना व्यर्थ है। उसे निष्कलंक करने की व्यवस्था करने लगे। द्वारका पुरी में सत्राजित यादव थे। इन्होंने भगवान सूर्य नारायण को प्रसन्न कर स्यमन्तक मणि प्राप्त की। पृथ्वी देवी ने इनके यहां जन्म ग्रहण किया। जिस देवी का नाम सत्यभामा हुआ। युवति होने के पश्चात् पहले अक्रूर से फिर कृतवर्मा से सम्बन्ध की बात चली। स्यमन्तक मणि आठ भार सोना रोज देती थी सुन्दर कन्या तथा धन का लोभ सभी को

सताता था। सत्राजित ने सतधन्वा से सत्यभामा का सम्बन्ध कर दिया।

श्री कृष्ण ने सोचा मेरी अधिकृत पृथ्वी रूपा सत्यभामा प्राप्त होना चाहिये। यादव शुक्ला चौथ को भगवान श्रीकृष्ण ने जानते हुए भी चन्द्र का दर्शन कर लिया। फलस्वरूप भगवान कृष्ण को कलंक का सामना करना पड़ा। उधर सत्राजित ने मन में विचार किया कहीं कृष्ण इस मणि को मांग न लें। और मांग लेंगे तो वह स्मन्तक मणि अपने भाई प्रसेन को दे दी। स्यमन्तक मणि का नियम था कि अपवित्र अवस्था में जो भी इसे धारण करेगा उसकी मृत्यु निश्चित है। एक दिन प्रसेन उस मणि को कण्ठ में धारण कर भगवान कृष्ण के साथ शिकार खेलने चला गया। प्रसेन घोड़े से बैठते ही अशुद्ध हो गया। शिकार खेलते समय एक सिंह ने प्रसेन को मारकर मणि छीन ली। वह सिंह भी अशुद्ध था इसलिये जाम्बवान ने उसे मारकर वह मणि छीन ली और गुहा में ले जाकर अपनी पुत्री जाम्वती को दे दी। श्री कृष्ण भी अपने अनुयायियों के साथ द्वारिका चले गये। कृष्ण तो आ गये पर प्रसेन नहीं आया। ऐसी अवस्था में लोगों ने यह कहना शुरू कर दिया प्रसेन कृष्ण के साथ गया था आज तक वापिस नहीं आया, इससे ऐसा लगता है, कि कृष्ण ने प्रसेन को मार डाला, पापी कृष्ण ने मणि के लोभ में अपने बान्धव को मार दिया। परस्पर लोगों में यह चर्चा फैल गयी। ये सब भगवान कृष्ण को जब पता चला तो भगवान को बड़ा सन्ताप हुआ। दु:ख हुआ। इस झूठे अपवाद से बहुत ही दु:खी हो कुछ द्वारका निवासियों को ले प्रसेन

की खोज के लिये उसी जंगल की ओर चल दिये, वहां प्रसेन की खोज करने पर प्रसेन का शरीर मिला, ज्ञात हुआ किसी सिंह ने मारा है। फिर श्री कृष्ण शनै: शनै: सिंह के पद चिन्हों के सहारे कुछ आगे गये तो देखा की वह सिंह भी मारा है, अत: उस ऋक्षराज की खोज करते-करते एक भयंकर अन्धकार युक्त चार सौ कौस लम्बी गुफा देखी। अपने साथियों को वहीं रोककर अपने तेज से उस गुफा के अन्धकार को दूर करते हुए उसके भीतर घुस गये। अंदर भगवान ने मणि के साथ खेलते हुए एक कन्या को देखा। वह कन्या रूप लावण्य से सम्पन्न थी। वो झूला को हिलाती हुई इस गीत को गा रही थी कि सिंह ने प्रसेन को मारा उस सिंह को जामवन्त ने मार दिया ए सुकुमारक। तू रो क्यों रहा है? यह स्यामन्तक मणि तेरी ही है। जाम्वती ने काम ज्वर से पीड़ित हुई प्रेमपूर्वक बोली—हे सुन्दर आप यहां से जाओ। इस रत्न को लेकर शीघ्र यहां से भाग जाओ। हे सुन्दर जब तक मेरा पिता शयन कर रहा है। तभी तक तुम्हारा जीवन सुरक्षित है। तुम्हारे को यदि मणि की इच्छा है तो इसे लेकर जैसे आये हो वैसे ही प्राण बचाने के लिये भागो ठहरो मत। जाम्वती के ये वचनों को सुनकर अपना पांचजन्य शंख बजा दिया। उस शंख की ध्वनि को सुनते ही उठकर जामवन्त भगवान श्री कृष्ण से युद्ध करने लगा। उन दोनों में भयंकर युद्ध हुआ। जामवन्त के गुफा के बाहर श्री कृष्ण के अनुयायी द्वारका के जन आये थे सात दिन तक श्रीकृष्ण की प्रतीक्षा में खड़े रहे, फिर भी भगवान वापिस नहीं आये तो उन्होंने समझ लिया कि श्री कृष्ण तो

मर गये या तो किसी ने खा लिया। ऐसा निर्णय लेकर वो सब वापस द्वारका चले गये।

द्वारका में जाकर मृत समझकर पारलौकिक क्रिया की गई इधर श्री कृष्ण चन्द्र इक्कीस दिन तक बाहुप्रहार करते हुए युद्ध में जामवन्त को मृतप्राय कर दिया पर कृष्ण के अप्रतिहत पौरुष को देखकर पुरातन प्रभु रामचन्द्र जी का स्मरण करके जामवन्त बोले, कि हे समस्त देवताओं के अधिपते मेरे को कोई देवता यक्ष, राक्षस, दानव जीत नहीं सकता। पर आपने मुझे जीत लिया। अत: मैं निश्चित समझता हूं कि आप साक्षात् नारायण हैं, नारायण के तेज बिना ऐसा अक्षय पराक्रम दूसरे में नहीं हो सकता। इस प्रकार भगवान श्री कृष्ण को प्रसन्न कर वह मणि भगवान को समर्पित कर दी। अपनी पुत्री जाम्वती को भार्यार्थ श्री कृष्ण को दे दी। अपनी पुत्री का सुन्दर पाणिग्रहण के साथ श्री कृष्ण के साथ विदा कर दिया। उन दोनों को लेकर श्री कृष्ण द्वारका आकर सारा वृत्तान्त द्वारका वासियों के सम्मुख सुनाया। राजा उग्रसेन की सभा में स्वयं उपस्थित होकर स्यमन्तक मणि सत्राजित को दे दी। भगवान को स्यमन्तक हरण को जो मिथ्या दूषण लगाया था वह इस प्रकार से ऐसा करने से निवृत्त हुआ। सत्राजित ने भगवान को झूठा कलंक लगाया था ऐसा साबित होने पर भयभीत हुआ झट ही अपनी कन्या का विवाह श्री कृष्ण के साथ कर दिया शतधन्वा, अक्रूर, और जो दुष्ट हृदय के यादव थे मणि लेने के लिये सत्राजित से वैर रखने लगे। श्री कृष्ण हस्तिनापुर चले गये यहां मौका पाते ही इन लोगों

ने सत्राजित को मारकर मणि छीन ली। सत्यभामा ने अपने पिता के मरने का वृत्तान्त श्री कृष्ण के सामने कहा–

श्लोक–

कृष्णस्य पुरत: सत्या समाचष्टे विचेष्टितम्।
अन्तर्हृष्टो बहि: कोपी कृष्ण: कपट नायक:।।

कपटियों के नायक भगवान लीला पुरुषोत्तम श्री कृष्ण चन्द्र अपने श्वशुर के वध की बात सुन बाहर से नाराज और अन्दर से प्रसन्न हुए कि इसने झूठा कलंक लगाकर मुझे बहुत दुखित किया था। अत: ऐसे पापी को अपने आप ही इण्ड मिल गया। सत्यभामा को दिखाने के लिये बहुत नाराज हुए। फिर श्री बलदाऊ के सामने जाकर श्री कृष्ण ने कहा शतधन्वा सत्राजित को मारकर मणि को लेकर जा रहा है, हम शतधन्वा को मारकर मणि ले लेंगे और उससे राष्ट्र का कल्याण होगा।

इधर शतधन्वा भय के मारे अक्रूर को अपने पास बुला स्यमन्तक मणि उसे दे दी। और स्वयं घोड़ी पर बैठ दक्षिण दिशा की ओर भागा, बलदाऊ जी के साथ श्रीकृष्ण रथ में बैठ शतधन्वा के पीछे दौड़े। शतधन्वा की घोड़ी चार सौ कोस तक ही दौड़ सकती थी विशेष दौड़ने की सामर्थ्य उस घोड़ी में नहीं थी। उस घोड़ी ने चार सौ कोश के बाद अपने प्राण छोड़ दिये।

शतधन्वा अपने प्राणों को बचाने के लिये पैदल ही भागा तो भगवान ने भी पैदल होकर अपने सुदर्शन चक्र से उसके सिर को काट दिया। बलदाऊ जी रथ में ही बैठे रहे भगवान ने शतधन्वा के

पास मणि की खोज की परन्तु मणि प्राप्त नहीं हुई। बलदाऊ जी के समीप आकर श्रीकृष्ण ने कहा मणि खोजने पर भी मणि नहीं मिली। बलदाऊ जी नाराज होते हुए कहने लगे—हे कृष्ण तुम सचमुच सदा से ही कपटी हो लोभ एवं पाप कर्मकारी हो। धन के लिये अपने बान्धव को भी मारने से नहीं चूके। इसीलिये कौन ऐसा बान्धव होगा जो आपके विश्वास से सुखी रहना चाहे और आपका आश्रय ले। श्री कृष्ण ने अपने इस लांछनारोप को सुनकर बलदाऊ को अनेक शपथ खाकर प्रसन्न किया। बलदेव जी ने विचार किया, कैसी दु:ख की वार्ता है कि धन के लोभ से अपने बान्धव को भी मार डालते हैं। संसार बड़ा बुरा है।

बलदेव जी तीर्थयात्रा में चले गये। श्रीकृष्ण रथ में बैठ द्वारका लौट आये। द्वारका निवासियों ने श्री कृष्ण को वापिस आये देख श्री कृष्ण की निन्दा करने लगे। ये कृष्ण भला मनुष्य नहीं है। रत्न के लोभ से बड़े भाई को भी द्वारका से निकाल दिया। जगत पिता श्री कृष्ण मिथ्या कलंक से चिन्तातुर हो गये। अक्रूर जी द्वारका में रहना उचित नहीं समझा और तीर्थ यात्रा के बहाने काशी में परमात्मा की तृप्ति के लिये यज्ञ करने लगे। स्यमन्तक मणि के प्रभाव से सुवर्ण के अनायास मिलने से काशी में सुन्दर बहुत से मंदिरों का निर्माण कराया और सुवर्ण दान कर दीनजन एवं ब्राह्माणों को सन्तुष्ट किया। इधर भगवान बहुत दु:खी होकर रहने लगे। इसी समय नारद जी का आगमन हुआ भगवान ने आतिथ्य सत्कार किया और आसन प्रदान किया प्रश्चात् नारद जी ने कहा हे देव आप क्यों इतने दु:खी

हो रहे हैं। आपके शोक का कारण क्या है। सुनकर भगवान श्री कृष्ण ने सारा वृत्तान्त कह सुनाया। नारद बोले—हे देव जिस कारण आपको लांछन लगा है उसे मैं जानता हूं आपने भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी का दर्शन कर लिया था। इसी कारण आपको झूठा कलंक लगा है। ऐसा सुनकर भगवान श्री कृष्ण कहने लगे कि हे नारद—चौथ के चन्द्र दर्शन से क्या दोष होता है। यह मुझे शीघ्र सुना दीजिये। नारद जी ने कहा—अपनी सुन्दरता पर अभिमान करने वाले चांद को गणेश जी ने श्राप दिया था कि आज (चौथ) का चन्द्र जो देखेगा उसे मिथ्या कलंक लगेगा। चन्द्रमा तथा देवताओं की प्रार्थना सुनकर श्री गणपति ने चन्द्रमा को श्राप मुक्त किया। पुन: गणेश जी ने कहा जो लोग भाद्र शुक्ला चतुर्थी को चन्द्र दर्शन करेगा वह वर्ष पर्यन्त अवश्य ही अपयश का भागी बनेगा। किन्तु जो द्वितीया के चन्द्र का दर्शन कर चौथ के चांद का दर्शन करता है, उसे मिथ्या चन्द्र दर्शन का दोष नहीं लगता। पूजन विधि पूछने पर गणेश जी ने कहा भाद्र शुक्ल पक्ष चतुर्थी को मेरी स्वर्ण प्रतिमा की शक्ति न हो तो मिट्टी की प्रतिमा लेकर विद्वान ब्राह्मण द्वारा पूजन एवं कथा आदि करवाये, मोदक (लड्डू) का भोग लगावे, और दूर्वा चढ़ावें, इससे मैं संतुष्ट होता हूं।

जो भाद्र शुक्ल पक्ष की चतुर्थी का व्रत करता है और पूजन करता है, हे चन्द्र उनकी सदा ही जय होती है। उसको मैं धन धान्य की सम्पत्ति प्रदान करता हूं। और पुत्र सुख भी बढ़ाता हूं। इस प्रकार पूजन विधि बताकर गणपति अन्तर्ध्यान हो गये।

नारद जी ने कहा हे कृष्ण तुम भी गणपति का व्रत करो एवं पूजन करो इससे तुम्हारी भी सिद्धि होगी। भगवान श्री कृष्ण ने व्रत एवं पूजन कर मिथ्या कलंक से निवृत्त हुए। नारद जी ने कहा हे कृष्ण जो लोग तुम्हारे इस स्यमन्तक आख्यान को सुनेंगे उन लोगों को भाद्र शुक्ला चतुर्थी के दर्शन जन्य दोष स्पर्श नहीं करेगा। जब भी किसी के जीवन में मिथ्या कलंक लगे तो इस आख्यान को सुने तो मिथ्या कलंक से मुक्ति प्राप्त होगी।

और जब मन में व्याकुलता खड़ी हो कोई संदेह उपस्थित हो तब इस संकट निवारण स्यमन्तक आख्यान को सुने।

इस व्रत को करने से मन चाहे सब कार्य सिद्ध होते हैं।

विघ्नराज गणेश जी के प्रसन्न होने पर कुछ भी कठिन नहीं है।

किसी भी कार्य में विघ्न उपस्थित नहीं होता।

महाराष्ट्र प्रान्त में इस उत्सव को लोग बड़ी धूमधाम के साथ मनाते हैं।

इसी पर्व को गणपति बब्बा मोरया के नाम से लोग जानते हैं।

।। जय गणपति ।।

।। ऋषि पंचमी व्रत ।।

भाद्रपद शुक्ल पक्ष की पंचमी को 'ऋषि पंचमी' का व्रत किया जाता है। यह व्रत ज्ञात-अज्ञात पापों के शमन के लिये किया जाता है। अत: स्त्री विशेष रूप से इस व्रत को करती हैं। पुरुष भी इस

व्रत को करते हैं। रजस्वला अवस्था में घर में पात्रादि (बर्तन) वस्त्र आदि स्पर्श हो जाते हैं। इससे होने वाले पाप के शमन के लिये इस व्रत को स्त्रियां करती हैं। इस व्रत में सात ऋषियों के सहित अरुन्धती का पूजन होता है, इसीलिये इसे ''ऋषि पंचमी'' कहते हैं।

व्रत की विधि–इस दिन व्रत करने वाले को चाहिये कि वह प्रात:काल से मध्यान्ह पर्यन्त उपवास करके मध्यान्ह के समय किसी नदी या तालाब पर जाये। वहां अपामार्ग (चिड़चिड़ा) की दातून से दन्तधावन करें। मिट्टी लगाकर स्नान करें। इसके बाद पंचगव्य (दूध, दही, घी, गोबर, गोमूत्र) का पान करें। तत्पश्चात् घर आकर सुन्दर शास्त्र विधान से किसी विद्वान से पूजन आदि कराकर कथा सुनें। इस व्रत में नमक खाना वर्ज्य है। इस दिन प्राय: लोग दही और साठी का चावल खाते हैं। हल से जुते हुए खेत का अन्न खाना वर्जनीत है। दिन में एक बार ही भोजन करना चाहिये।

कलश आदि पूजन सामग्री को ब्राह्मण को दान देना चाहिये।

पूजन के पश्चात् ब्राह्मण भोजन कराकर स्वयं प्रसाद पाना चाहिये।

सप्तऋषि–

1. कश्यपाय नम:
2. अत्रये नम:
3. भारद्वाजाय नम:
4. विश्वामित्राय नम:
5. गौतमाय नम:
6. जमदग्नये नम:
7. वशिष्ठाय नम:, रुन्धत्यै नम:।

कथा शास्त्रानुसारेण–राजा सिताश्व ने ब्रह्मा जी से पूछा हे देव देवेश मैंने आपके मुख से बहुत से व्रत सुनें। अब मेरे मन में

किसी एक पाप विनाशक व्रत के बारे में जानने की अभिलाषा है। कृपा करके आप उस व्रत को कहें।

ब्रह्माजी ने कहा–राजन् मैं उस व्रत कथा को कहता हूं जो समस्त पापों का विनाशक है। राजन् उस व्रत का नाम ऋषि पंचमी व्रत है।

इसी प्रसङ्ग में महात्मा लोग पुरानी बात कहा करते हैं। कि विदर्भ देश की राजधानी में उत्तंग नामक एक ब्राह्मण रहता था उसकी सुशीला नाम की भार्या (पत्नी) थी वह पति सेवा में पारायण थी। सुशीला के गर्भ से दो सन्तानें उत्पन्न हुई एक पुत्र दूसरी पुत्री, पुत्र सर्वगुण सम्पन्न था, वेद आदि का अच्छा अध्ययन किया था। उत्तंग ब्राह्मण ने अपनी कन्या का विवाह अच्छे कुल में कर दिया। पर हे राजन् प्रारब्ध योग से वह लड़की विधवा हो गयी। अपने पतिव्रत धर्म का पालन करती हुई अपने पिता के घर में ही समय व्यतीत करने लगी। उत्तंग ब्राह्मण उस दु:ख से दु:खी हो पुत्र को घर पर ही छोड़ अपनी पत्नी तथा पुत्री को ले गंगा जी के तट पर निवास करने लगा। वहां जाकर शिष्यों को वेदाध्ययन कराने लगा। वह लड़की अपने पिता की सेवा सुश्रूषा करने लगी। एक दिन वह लड़की पिता की सेवा करते-करते हार गयी। और एक पत्थर पर जाकर सो गई शयन करते ही उसके शरीर में कीड़े लग गये सारा शरीर कृमिमय हो गया।

गुरु पुत्री की ऐसी दशा को देखकर बड़े ही दु:ख के साथ गुरु पत्नी के पास जाकर निवेदन करते हुए कहा। हे मात: हम कुछ

नहीं जानते उस सत् चरित्र वाली आपकी पुत्री को क्या हो गया। ऐसी दशा क्यों हुई। आज उसका शरीर दिखाई नहीं देता। मात्र कृमियां ही दिखाई दे रही है। मां को ये वचन व्रजाघात से भी ज्यादा लगे। मां तुरन्त अपने पुत्री के समीप गई ऐसी अवस्था को देख बहुत विलाप करने लगी। छाती पर हाथ पिटती हुई पृथ्वी पर गिर पड़ी और मूर्छित हो गई। कुछ देर में जब होश आया तो पुत्री को खड़ी कर आंचल से पोंछकर अपनी दोनों भुजाओं का सहारा देकर उसके पिता के पास ले आई और बोली हे स्वामिन् देखिये यह अर्धरात्री का समय है, यह सो रही थी सोते समय इसके शरीर में कीड़े पड़ गये कुछ कहा नहीं जा सकता, यह सुन महात्मा समाधिस्थ हो उस लड़की के पूर्व जन्म के पापों को देखकर बोले हे प्रिये–यह पूर्व जन्म में ब्राह्मणी ही थी उस जन्म में रजस्वला होकर भोजन आदि के पात्रों को स्पर्श आदि का विचार नहीं किया सभी को हाथ लगाया उसी पाप के कारण इसका शरीर कीड़ों से ढक गया है। हे प्रिये रजस्वला के समय स्त्री पापिन होती है। पहले दिन-चाण्डालिन दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी, तीसरे दिन धोबिन चौथे दिन शुद्ध होती है। उसी जन्म में अपनी सखियों के दु:संग से ऋषिपंचमी के व्रत को देखकर भी उसका अपमान किया। दर्शन के प्रभाव से इसे पुन: ब्राह्मण कुल में जन्म मिला है। सुशीला ने कहा हे स्वामी ऐसे प्रभावी व्रत को हमें भी बतायें जिसके करने से महान पुण्य की प्राप्ति होती है।

ऋषि ब्राह्मण ने कहा देवी ध्यान लगाकर सुनों–यह व्रत तीनों

प्रकार के पापों का शमन करने वाला है, स्त्रियों को सौभाग्य प्रदान करने वाला है, और धन सम्पत्ति प्रदान करने वाला है, इस व्रत में संदेह नहीं करना चाहिये।

देवी भाद्रपद शुक्ल पक्ष की पंचमी को किसी जलाशय में जाकर अपामार्ग का दातून कर मिट्टी के लेप से स्नान कर व्रत नियम का धारण करना चाहिये पश्चात् सप्तऋषियों का शास्त्रोक्त पद्धति के आधार पर पूजन करना चाहिये। ऋषियों को सुन्दर अधोवस्त्र, यज्ञोपवीत, उपवस्त्र से अलंकृत करना चाहिये। अच्छे-अच्छे फल नैवेद्य लेकर इनके साथ अर्ध्यदान करें। उस समय कश्यप, अत्रि, भारद्वाज, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि और वशिष्ठ ये सात ऋषि हैं। ये सब मेरे दिये गये अर्ध्य को स्वीकार करें। इससे प्रसन्न हो, इस व्रत में शाग का भोजन करना चाहिये। सभी तीर्थों में स्नान आदि से जो फल प्राप्त होता है, वो सभी फल मात्र इस एक व्रत के प्रभाव से मिल जाता है।

जो स्त्री इस व्रत को करती है, वह सुखियारी, रूपवती, पूर्ण शरीर वाली एवं पुत्र-पौत्रादि से सदा सम्पन्न होती है और इस लोक में सुख भोगकर परलोक में बैकुण्ठ की प्राप्ति होती है, यह कथा ब्रह्माण्ड पुराण से ली गई है।

ऋषिपंचमी कथा—सत्य युग में श्येनजित नामक एक राजा राज्य करता था। उसके राज्य में सुमित्र नामक एक ब्राह्मण रहा करता था। वह ब्राह्मण वेदों में पारांगत था। वह ब्राह्मण खेती द्वारा जीवन निर्वाह व परिवार का भरण-पोषण करता था। उसकी पत्नी

जयश्री सती साध्वी थी, वह खेती के कार्यों में भी पति का सहयोग करती थी। एक बार रजस्वला अवस्था में अनजाने में उसने घर का सब कार्य किया और पति का भी स्पर्श कर लिया। दैवयोग से पति पत्नी का शरीरान्त एक साथ ही हो गया।

रजस्वला अवस्था में स्पर्श आदि का विचार न करने से स्त्री कुतिया और पति ने बैल की योनि प्राप्त की। परन्तु पूर्व जन्म में किये गये धार्मिक कर्मों के कारण पूर्व जन्म की स्मृति उन्हें बनी रही।

संयोग से इस जन्म में भी अपने ही घर में साथ-साथ अपने पुत्र और पुत्रवधू के साथ रह रहे थे।

ब्राह्मण के पुत्र का नाम सुमति था, वह भी पिता की भांति वेदों का विद्वान था पितृपक्ष में उसने अपने माता-पिता के श्राद्ध के उद्देश्य से पत्नी से कहकर खीर बनवायी और ब्राह्मणों को निमन्त्रण दिया। उधर एक सर्प ने आकर उस खीर को विषाक्त कर दिया। कुतिया बनी ब्राह्मणी सब देख रही थी उसने सोचा यदि इस खीर को ब्राह्मण खायेंगे तो मर जायेंगे। और सुमति को पाप लगेगा। ऐसा विचार कर सुमति की पत्नी के सामने ही जाकर खीर को छू दिया। इस पर सुमति की पत्नी बहुत क्रोधित हुई और चूल्हे से जलती हुई लकड़ी निकालकर उसकी पिटाई कर दी। उस दिन उसने कुतिया को भोजन भी नहीं दिया।

रात्रि में कुतिया ने बैल से सारी घटना बतायी। बैल ने कहा आज तो मुझे भी कुछ खाने को नहीं दिया, जबकि सारे दिन भर काम

लिया। सुमति हम दोनों के ही उद्देश्य से श्राद्ध कर रहा है, और हमें भूखों मार रहा है, इस तरह हम लोगों के भूखे रह जाने से तो इसका श्राद्ध करना व्यर्थ ही हुआ। सुमति द्वार पर लेटा इन दोनों की वार्ता को सुन रहा था। वह पशुओं की बोली भली-भांति समझता था। उसे यह जानकर अत्यन्त दु:ख हुआ कि मेरे माता-पिता इस निकृष्ट योनि में पड़े हुए हैं।

वह दौड़ता हुआ एक ऋषि के पास पहुंचा और सारा वृत्तान्त सुना कर अपने माता-पिता के इस योनि में पड़ने का कारण और मुक्ति का उपाय पूछा। ऋषि ने ध्यान और योग बल से सारा वृत्तान्त जान लिया। ऋषि ने सुमति से कहा तुम भाद्र शुक्ला पंचमी का व्रत करो उस दिन बैल के जोतने से उत्पन्न कोई भी अन्न नहीं खाना। इस व्रत के प्रभाव से तुम्हारे माता-पिता की मुक्ति निश्चित हो जायेगी। मातृ पितृ भक्त सुमति ने ऋषिपंचमी का व्रत किया। जिसके प्रभाव से इसके माता-पिता को पशु योनि से मुक्ति मिल गयी।

यह व्रत शरीर के अशुद्ध अवस्था में किये गये स्पर्शास्पर्श तथा अन्य पापों के प्रायश्चित के रूप में किया जाता है।

इस व्रत से स्त्रियों को रजस्वला (मासिक धर्म) अवस्था में स्पर्शास्पर्श का विचार रखने की शिक्षा लेनी चाहिये। साथ ही पुरुषों को भी इन दिनों संयमपूर्वक रहना चाहिये।

नोट–यह तिथि मध्यान्ह व्यापिनी होनी चाहिये यदि दोनों दिन मध्यान्ह व्यापिनी हो तो पूर्व विद्धा लेनी चाहिए।

।। इति ।।

॥ पुत्र की दीर्घायु के लिये-मुक्ता भरण सप्तमी ॥

यह व्रत भाद्र शुक्ला सप्तमी को किया जाता है। यह तिथि मध्यान्ह व्यापिनी ग्रहण की जाती है। यदि दोनों दिन मध्यान्ह व्यापिनी हो तो दूसरे दिन की तिथ का ग्रहण होता है, यह व्रत अखण्डित कुल वाले पुत्र पौत्रों की वृद्धि के लिये शिव एवं पार्वती का पूजन करना चाहिये। शंकर एवं पार्वती का पूजन शास्त्रीय पद्धति के अनुसार षोड्शोपचार से करना चाहिये।

इस व्रत में व्रती को चाहिये कि सात ग्रन्थियों का सूत पूजन कर के अपने हाथ में बांधना चाहिये।

सूत्र बांधते समय यह प्रार्थना करनी चाहिये कि हे जगद्गुरो सूत्र की ग्रन्थियों में स्थित आपके उस स्वरूप को सात साम भी स्तवन किया करते हैं। मैं इसी को हाथ में नित्य धारण करती हूं। आप इसी सूत्र ग्रंथि में विराजमान रहें। ग्रन्थि जीर्ण होने पर किसी जलाशय में विसर्जित कर दें।

भगवान शिव पार्वती की शरणागति स्वीकार करते हुए मुक्ता भरण (संतान सप्तमी) की दिव्य कथा सुनें।

कथा–श्री कृष्ण युधिष्ठिर जी से कहते हैं एक बार लोमश ऋषि मथुरा पधारे। देवकी वसुदेव ने प्रीतिपूर्वक पूजन आदि किया। भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि नाना प्रकार की पुण्य कथाओं का श्रवण करते हुए इस कथा को सुनने लगे। जो तुम्हारे सम्मुख मैं कह रहा हूं ध्यान से सुनो। लोमष ऋषि कहते हैं–हे देवकी तुम्हारे बहुत

पुत्र उत्पन्न हुए पर जैसे-जैसे उत्पन्न हुए वैसे ही दुरात्मा कंस ने मार दिया। इस प्रकार पुत्रों के मारे जाने से मृतवत्सा गऊ की भांति दु:खित हो। पहले नहुष राजा की स्त्री बहुत दीन रहती थी। उस चन्द्रमुखी ने व्रत किया। उस व्रत को करने से वो अमृतवस्ता हो सुखियारी हो गई। व्रत के प्रभाव से जैसे इस स्त्री के पुत्र मरे नहीं अपितु निरोगी और दीर्धायु हो गये। वैसे ही यदि तुम इस व्रत को करोगी तो तुम्हारे पुत्र भी अमर रहेंगे। उन्हें कोई मार नहीं सकेगा। इसमें संशय नहीं है देवकी ने कहा वह नहुष एवं उसकी प्यारी चंद्रमुखी कौन थी?

ऋषिवर उसने कौन-सा व्रत किया था जिसके करने से पुत्र सुख होता है, हे विभो आप उस व्रत को कहें।

लोमश मुनि बोले—अयोध्या पुरी में परम विख्यात नहुष राजा था, उसकी चंद्रमुखी मुख्य रानी थी। उसकी राजधानी में विष्णुगुप्त नाम का ब्राह्मण रहता था। उसके दो स्त्रियां थी एक का नाम गुणवती दूसरी का नाम भद्रमुखी था। दोनों में बहुत ही प्रसंशनीय प्रेम था। दोनों स्नान करने को सरयू तट पर गयीं, उस समय बहुत सी स्त्रिया स्नान करने के लिये सरयू तट पर आ गईं। स्नानोंपरान्त सरयू तट पर ही मण्डल बनाकर मध्य में पार्वती जी के साथ ही अव्याक्तात्मा शंकर जी के स्वरूप को लिखकर गन्ध, अक्षत पुष्पादि से पूजन करके प्रणाम किया। प्रणाम करके जब घर को जाने के लिये तैयार हुई तो गुणवती और भद्रमुखी ने ब्राह्मणियों से पूछा—हे आर्यायो आपने क्या किया है? इस व्रत का क्या नाम है? क्या महिमा है?

उन स्त्रियों ने कहा हमनें पार्वती सहित महादेव जी का पूजन किया है, इस डोरे में वे स्वयं रहते हैं। अत: हमने अपने हाथ में बांधकर अपने आपको शंकर जी को भेंट कर दिया। इस व्रत का नाम मुक्ताभरण है। इसके करने से सन्तान सुख बढ़ता है। हे सहेलियों हम लोग प्रतिवर्ष इस व्रत को करती हैं। क्योंकि यह सुख और सौभाग्य को देने वाला है।

लोमश मुनि बोले—हे देवकि दोनों ब्राह्मणियों ने संकल्प करके व्रत किया वैसे ही पूजन किया और अपनी भुजाओं में डोरे बांध अपने घर की राह ली। और सब स्त्रियों सहेलियों के साथ अपने-अपने घर को वापिस चली आयीं। पीछे समय बीतने पर चन्द्रमुखी को धन के सुख के प्रमत्त होने से व्रत भूल गयी। चन्द्रमुखी ने जो बाहु में डोर बांध रखा था प्रमाद के कारण कहीं गिर गया। भद्रमुखी ब्राह्मणी भी व्रत का जो नियम लिया था डोरे को जीवन पर्यन्त धारण करने की प्रतिज्ञा की थी वे सब विस्मृत हो गयी। कुछ दिन बाद चन्द्रमुखी मरकर बंदरी बनी। और भद्रमुखी मुर्गी (कुक्कुटी) बनी। पूर्व जन्म के व्रत के प्रभाव से इस जन्म में भी बंदरी और कुक्कुटी बनी चन्द्रमुखी और भद्रमुखी को पूर्व जन्म की स्मृति बनी रही। कि हमारे ही प्रमाद के कारण ये निकृष्ट योनि हमें प्राप्त हुई।

पूर्व जन्म की यादगारी होने से वे दोनों दोष निवृत्ति की चेष्टा करती हुई भी कुछ न कर सकीं। मिलकर केवल पश्चाताप और मन में भगवान शंकर का ध्यान एवं उपवास करती रहीं।

समय पर शरीर त्याग कर वे दोनों जहां नदी आदि वृहज्जलाशय

था ऐसे गोकुल देश में उत्पन्न हुईं। ब्राह्मणी भद्रमुखी ब्राह्मणी हुई चन्द्रमुखी (क्षत्राणी) क्षत्रिया हुई। रानी इस जन्म में भी राजा की प्यारी स्त्री हुई। इनमें चन्द्रमुखी का नाम इस जन्म में ईश्वरी नाम हुआ। ब्राह्मणी भद्रमुखी इस जन्म में भूषणा नाम वाली हुई।

इसके पिता ने उसका विवाह अग्निमीढ नाम के पुरोहित के साथ कर दिया। यह भी उस राजा के पुरोहित अग्निमीढ की परम वल्लभा हुई। इस भूषणा को भूषण धारण करने का बहुत चाव था। इससे सदैव यह सुन्दर अलंकारों से अलंकृत रहा करती थी। इस भूषण से सर्वगुण सम्पन्न आठ पुत्र उत्पन्न हुए। जो अपनी माता के समान सुन्दर और पिता के समान धर्मनिष्ठ हुए। रानी ईश्वरी और ब्राह्मणी भूषणा को इस जन्म में भी पूर्व जन्मों का स्मरण बना रहा। इससे ये दोनों सहेलियां बनी रहीं। इनका प्रेम भी अटल रहा। बहुत समय बीतने पर मध्यावस्था में भी ईश्वरी के जब कोई पुत्र नहीं हुआ तो इसने सन्तान होने की आशा छोड़ दी। यौवन भी उसका गिर गया। समय बीतने पर ईश्वरी के एक पुत्र हुआ वह भी सदा रोगी रहता और गूंगा भी था। हे देवकी ईश्वरी का पुत्र नौ वर्ष का होते ही मर गया। ईश्वरी पुत्र दुःख से बहुत दुःखी रहने लगी। सखी भाव होने के कारण सम्वेदना प्रगट करने भूषणा अपने पुत्रों के साथ आई। भूषणा आज मोतियों का हार नहीं पहनी थी। ईश्वरी अपने समीप भूषणा को देखकर क्रोध से आग बबूला हो गई, क्रोध से ही उसे अपने घर लौट जाने को कहा। और ईश्वरी ने भूषणा के पुत्रों को मारने का निश्चय कर लिया। और ऐसा ही किया। एक

दिन ईश्वरी ने भूषणा के पुत्रों को भोजन के निमित्त बुलाया और भोजन में विष मिलाकर उन्हें भोजन करा दिया। भूषणा के पुत्र भोजन कर प्रसन्न सुख हुए और अपने घर लौट गये। भूषणा ने इस जन्म में मुक्ताभरण व्रत का परित्याग नहीं किया। अतः माता के व्रतराज के प्रभाव से वे मृत्यु को प्राप्त नहीं हुए। रानी के नीच नौकरों ने बालकों को यमुना जी में फेंक दिया। व्रत के प्रभाव से यमुना जी का जल घुटने तक हो गया। पुनः रानी ने शस्त्रों के द्वारा भूषणा के पुत्रों को मारना चाहा। माता के प्रभाव से बालकों पर शस्त्रों के प्रभाव का कोई असर नहीं पड़ा।

रानी ईश्वरी ने बड़े-बड़े उपायों से बालकों को मरवानें का प्रयत्न किया किन्तु माता के व्रतराज के प्रभाव से बालक जिन्दा हो जाते थे। रानी को बहुत विस्मय हुआ। भूषणा को बुलाया और बहुमान से श्रेष्ठ आसन पर बिठा कर पूछने लगी। महा भागे आपने ऐसा कौन-सा व्रत कर्म किया है, जिसके प्रभाव से आपके पुत्र मारने पर भी जिन्दा हो जाते हैं, और मेरे पुत्र जिलाने पर भी नहीं जिये। आप यथार्थ रूप से कहिये। ऐसा, कोई दान, व्रत, तप शुश्रूषण है जिससे आपके बहुत पुत्र हैं, और सब जीवित हैं और तू कभी आभूषणों का भी त्याग नहीं करती, तथा पति के मन में भी विराजी रहती है। हे भद्रे आप अत्यन्त सुन्दरी लगती हैं, जैसे नीले-नीले बादलों में बिजली अच्छी लगती है, यह सुन भूषणा बोली। मैं जन्मान्तर की कथा कहती हूं। सावधान होकर सुनो।

क्या उन बातों की भूल गयी जो अयोध्या में की थी। हे देवी

हम दोनों ने प्रमत्त होकर व्रत बिगाड़ दिया था। उस दोष से तुम दूसरे जन्म में वानरी और मैं मुरगी हुई। तुम बानरी थी इसलिये स्वाभाविक चपलता के कारण यथार्थ रूप से व्रत नहीं हो सका। किन्तु मैंने व्रत नहीं छोड़ा मन में भगवान शंकर का ध्यान किया और पश्चाताप भी किया। कब इस योनि से छूटूं और भगवान की सेवा करूं। मैंने उस जन्म में भी शंकर भगवान का यथार्थ पूजन न कर सकने का अनुताप प्रकट किया था। और कुछ भी मेरे इस सुख-सम्पत्ति की स्थिरता में कारण नहीं है।

लोमश मुनि बोले—हे देवकी उन वचनों से ईश्वरी ने पूर्व जन्म की चेष्टा का स्मरण किया। और भूषणा के साथ मिलकर मुक्ताभरण का व्रत किया। इस व्रत के प्रभाव से उसके भी बहुत से पुत्र-पौत्र हो गये। उनके अतुल सुख को भोगकर कैलाश पहुंच गई। हे देवी तुम भी इस व्रत को करो। इस दिव्य व्रत के करने से तुम्हारे भी पुत्र जीवित रहेंगे। देवकी बोली कि हे ब्रह्मन् आप इस सुखकारी शंकर भगवान के व्रत का निरूपण करिये। जिस व्रत के करने से पुत्र पौत्रादि सुख और कैलाश सुख मिलता है। लोमश मुनि बोले कि हे भद्रे-भाद्रपद शुक्ला सप्तमी को जलाशय में स्नान करके तट पर एक मण्डल लिखें। उसके मध्य में पार्वती और महादेव जी इन दोनों के आकार को बनावें। फिर स्थापना करें, सम्यक् प्रकार से पूजा करें नियम करके डोरा धारण करें। नियम यह करना चाहिये कि मैंने जीवन पर्यन्त अपनी आत्मा को महादेव जी के चरणों में अर्पित कर दिया इस प्रकार प्रतिज्ञा करके उसी समय से डोरे को

चाहे वो सुवर्ण का हो चाहे चांदी का हो चाहे सूत का हो, पार्वती शंकर स्वरूप समझती हुई धारण करें। फिर प्रतिमास या प्रतिपक्ष अथवा प्रतिवर्ष सप्तमी के दिन मालपुए और जलेबियों का दान करें। आप भी उन्हीं मण्डलक वेष्टकों का भोजन करें। हे शुभे यदि व्रत भंग होता है, तो प्रतिपक्ष यह व्रत करना चाहिये। किन्तु शुक्ल पक्ष की सप्तमी को इस व्रत को अवश्य करें। हे देवकी वर्ष बीतने पर व्रत के अन्त में पारणा के समय अपनी शक्ति अनुरूप सुवर्ण या रजत की अंगूंझी बनवा उसे तोमड़ी के घर ब्राह्मण के लिये। यदि संभव हो तो आचार्य के लिये सुवर्ण की ही अंगूठी समर्पण करं। उस अंगूठी के साथ कुंकुम, सिन्दूर, ताम्बूल, अंजन और सुवर्ण-चांदी या सूत के डोरे का दान करें।

व्रत की पूति के लिये सुवासिनी को भी पूजें। जो स्त्री इस पूर्वोक्त विधि से सन्तति सुख बढ़ाने वाले व्रत को करती है। वह सब बातों से निर्मुक्त होकर निष्कण्टक सौभाग्य सुख को भोगती है। इस लोक में सन्तति सुख भोगकर परलोक में महादेव जी के पद में प्रतिष्ठा प्राप्त करती है। ऐसे मैंने देवी तुम्हारे सम्मुख विधि और उसका माहात्म्य वर्णन किया। अब हे देवकी तुम विधि पूर्वक मुक्ता भरण व्रत को करो जिससे जीवत्पुत्र हो जाओ श्री कृष्ण युधिष्ठिर जी से बोले हे राजन् इतना कहकर लोमश मुनि वहीं अन्तर्ध्यान हो गये।

जिस विधि से व्रत करने के लिये महात्मा लोमश मुनि ने कहा था तदनुसार हमारी माता दवेकी ने यह व्रत किया। उस व्रत के

प्रभाव से देवकी के हम पुत्र चिरायु हुए। हे पार्थ इससे यह व्रत पुरुषों और विशेष करके स्त्रियों को करना चाहिये। यह व्रत पापों का विनाशक और सुख एवं सन्तान को बढ़ाने वाला है। जो भक्ति के साथ इस व्रत को करता है, एवं जो इस व्रत को करने का उपदेश करता है, कथा सुनाता है, और विधि बताता है, वह भी सब पापों से छूट जाता है।

ऐहिक एवं पारलौकिक सुख और मोक्ष पद की कामना रखती हुई जो स्त्री अन्त:करण में माहेश्वर भगवान का ध्यान धर इस व्रत को करके कथा श्रवण करती है, वह इस लोक में जो दु:ख है, उन सब दु:खों से छूटकर चिरंजीवी पुत्रों वाली अवश्य ही होती है।

यह भविष्य पुराण से कहा गया मुक्ताभरण सप्तमी का व्रत पूरा हुआ।

।। इति ।।

।। राजस्थानी त्योहार–दुबड़ी सातें ।। (दुबड़ी सप्तमी)

यह व्रत मुख्य रूप से राजस्थान का त्योहार है। भाद्रपद शुक्ला सप्तमी को प्राय: स्त्रियां उसे सन्तान की मंगल कामना के लिये मनाती हैं। इस दिन दुबड़ी माता की पूजा की जाती है।

एक काष्ट पट्ट पर दुबड़ी (कुछ बच्चों) की मूर्ति, सर्पों की मूर्ति, एक मटका एक औरत का चित्र मिटटी से बना लिया जाता है। उनको चावल, जल, दूध, रोली, आटा, घी और चीनी मिलाकर लोई बनाकर उनसे पूजा जाता है। दक्षिणा चढ़ाई जाती है। और भीगा हुआ

बाजरा चढ़ाया जाता है। मोठ बाजरे का बायना निकालकर सासुजी के पैर छूकर उन्हें दिया जाता है। फिर दुबड़ी सातें की कहानी सुनी जाती है। इस दिन ठंडी रसोई खाई जाती है। यदि इसी साल किसी लड़की का विवाह हुआ हो तो वह उजमन (उद्यापन) करे। उजमन में मोठ बाजरे की तेरह कुड़ी लेकर तथा एक रुपया एवं साड़ी रखकर, हाथ फेरकर अपनी सासुजी को प्रणाम कर उन्हें देना चाहिये।

दुबड़ी सातें की कथा–एक साहूकार के सात बेटे थे, परन्तु वह जिस भी बेटे का विवाह करता वही मर जाता था। इस प्रकार क्रमश: छ: बेटे मर गये। अन्त में सातवे बेटे का भी विवाह तय हो गया। सभी नाते रिश्तेदारों को आमंत्रित किया गया। विवाह में शामिल होने के लिये लड़के की बुआ भी आ रही थी। रास्ते में उसे एक बुढ़िया मिली। बुआ ने बुढ़िया के चरण छुई तो उसने पूछा कि बेटी कहां जा रही हो? बुआ के बताये जाने पर बुढ़िया ने कहा लड़का तो मर जायेगा। वह जैसे ही बारात के लिये घर से निकलेगा, घर का दरवाजा गिर जायेगा। यदि उससे बचेगा तो भी जिस पेड़ के नीचे बारात रुकेगी वह पेड़ गिर जायेगा वहां से बचने पर जब वह ससुराल में प्रवेश करेगा तो वहां का भी दरवाजा गिर जायेगा, उससे भी यदि बच जायगा तो सातवीं भाँवर पड़ते समय नाग आकर डस लेगा।

बुआ बोली–हे माता यह एक ही भतीजा बचा है, जब आपने इतने अनिष्टों की बात बताई है तो कृपा करके रक्षा का उपाय भी बतायें।

बुढ़िया जो स्वयं दुबड़ी माता थीं–वे बोलीं, बेटी! उपाय तो है

पर है बहुत कठिन। बुआ ने कहा माता कितना भी कठिन उपाय हो भतीजे की रक्षा के लिये जरूर करूंगी। बुढ़िया बोली बेटी जब लड़का विवाह करने जाने लगे तो उसे दरवाजे से न निकालकर दीवार फोड़कर निकालवाना, उसके बाद किसी पेड़ के नीचे बारात न रुकने देना। इसी प्रकार ससुराल में भी दरवाजे से न निकालकर दीवार फोड़कर ही घर में प्रवेश कराना। तथा भाँवरों के समय में कटोरे में दूध भरकर रख देना, जब नाग आकर दूध पीने लग जाय तो उसे तांत के फांस में फंसा लेना। जब नागिन आकर अपने नाग को मांगे तो तुम भी अपने छहों भतीजों को मांग लेना।

इस तरह तुम्हारा यह भतीजा तो जीवित बच ही जायेगा, पहले मरे हुए भतीजे भी जीवित हो जायेंगे, परन्तु इस बात को किसी से बताना नहीं। अन्यथा सुनने और कहने वाले दोनों मर जायेंगे और भतीजे की भी मृत्यु हो जायगी।

बुढ़िया बनी दुबड़ी माता ने जैसे कहा था मायके जाकर बुआ ने वैसे ही किया। सभी घटनाएं दुबड़ी माता ने जैसे बताईं थीं, वैसे ही घटी, परन्तु रक्षा उपाय बता देने के कारण भतीजे की रक्षा तो हो गयी और पहले मर चुके छहों भतीजें भी जीवित हो गये। दुबड़ी माता की कृपा से सब सानन्द हो गया। बारात लौटने पर बुआ ने सप्तमी को दुबड़ी माता की पूजा करायी।

प्रार्थना की–हे दुबड़ी मैया! जैसे तुमने बुआ को सातो भतीजे दिये वैसे ही सबको संतान सुख देना।

।। इति ।।

।। दशावतार व्रत ।।

यह व्रत भाद्रपद शुक्ला दशमी को किया जाता है, इस दिन किसी पवित्र जलाशय या नदी में स्नान कर, देवता और पितरों का तर्पण करना चाहिये और अपने हाथ से पूए बनाकर भगवान नारायण के दस अवतारों–मत्स्य, कूर्म, वाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध और कल्कि की मूर्ति का यथा विधि से पूजन करें। तथा पूओं (अपूप) का भोग लगायें। दस (अपूप) देवता के लिये, दस ब्राह्मण के लिये और दस अपने लिये रखकर भोजन करें। इस प्रकार दस वर्ष तक यह व्रत करना चाहिये। पूआ की जगह प्रति वर्ष बदल बदल कर पदार्थों का भोग लगाया जाता है। इस प्रकार विधान पूर्वक दस वर्ष तक यह व्रत करने से भगवान नारायण के धाम बैकुण्ठ लोक की प्राप्ति होती है।

भगवान से इस प्रकार प्रार्थना करें–

मत्स्यं कूर्मं वराहं च नारसिंह च वामनम्।
रामं रामं च कृष्णं च बौद्धं चैव सकल्किनम्।।
गतोऽस्मि शरणं देवं हरिं नारायणं विभुम्।
प्रणतोऽस्मि जगन्नाथं समेविष्णुः प्रसीदति।।

मत्स्य, कूर्म, वाराह, नरसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बौद्ध और कल्कि अवतार को धारण करने वाले दुःखों के नष्ट करने वाले नारायण देव की मैं शरण हूं। जगन्नाथ को प्रणाम करता हूं। मैं भगवान नारायण की शरण हूं, प्रभु प्रसन्न हो और अपनी वैष्णवी

माया को दूर करें, मैं अपने आपको उस परमात्मा को दे दिया।

।। इति दशावतार व्रतम् ।।

।। श्री वामन द्वादशी व्रत ।। (वामन जयन्ती)

भाद्रपद शुक्ल पक्ष की द्वादशी को वामन भगवान ने जन्म ग्रहण किया था इसलिये इसे वामन द्वादशी कहते हैं।

''श्री मद्भागवत महापुराण'' के अनुसार जिस समय वामन भगवान ने जन्म ग्रहण किया, उस समय चन्द्र श्रवण नक्षत्र पर थे। भाद्रपद शुक्ल पक्ष की श्रवण नक्षत्र वाली द्वादशी तिथि थी। अभिजित मुहूर्त में भगवान वामन का जन्म हुआ था। सभी ग्रह नक्षत्र तथा तारे भगवान् के मंगलमय जन्म को सूचित कर रहे थे। उस समय विजया द्वादशी तिथि थी और सूर्य नारायण आकाश के मध्य भाग में स्थित थे।

श्रोणायां श्रवणद्वादश्यां मुहूर्तेऽभिजिति प्रभुः।
सर्वेनक्षत्रताराद्याश्चक्रुस्तज्जन्म दक्षिणम।।
द्वादश्यां सवितातिष्ठन्मध्यन्दिनगतो नृप।
विजया नाम सा प्रोक्ता यस्यां जन्म विदुर्हरेः।।

श्री मद्भागवत (8/18/5-6)

व्रत की विधि–वामन द्वादशी का व्रत करने वाले को चाहिये कि द्वादशी को मध्यान्ह के समय भगवान वामन का षोडशोपचार विधि से पूजन करें तथा वामन भगवान के जन्म की कथा सुनें। तदनन्तर एक मिट्टी के पात्र में दही, चावल एवं शक्कर रखकर ब्राह्मण को

दान दे। इस दिन फलाहार कर दूसरे दिन त्रयोदशी को पारणा करनी चाहिये।

कथा–सत्य युग में प्रह्लाद के पौत्र दैत्य राजा बलि ने स्वर्गलोक पर अधिकार कर लिया। समस्त देवता स्वर्गभ्रष्ट हो इन्द्र को आगे कर भगवान विष्णु के पास गये। और उन्हें अपनी दशा का वृतान्त कह सुनाया। भगवान ने कहा मैं स्वयं देव माता आदिति के गर्भ से उत्पन्न हो तुम्हें स्वर्ग का राज्य दिलाऊंगा।

भगवान् की अमोघ वाणी सुनकर देवगण हर्षित हो माता अदिति के पास आकर भगवान के अवतार की प्रतीक्षा करने लगे। उधर दैत्यराज बलि ने भृगुवंशी ब्राह्मणों को बुलाकर नर्मदा नदी के तट पर अश्वमेघ यज्ञ करना आरंभ किया। इधर भगवान् के अवतार का समय जान सभी ग्रह नक्षत्र अपनी शुभ स्थिति में आ गये। आकाश में शंख, ढोल, नगाड़े, दुन्दुभियां बजने लगीं। और इस प्रकार अजन्मा भगवान श्री हरि का भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष की द्वादशी को मध्यान्ह के समय वामन भगवान का अवतार हुआ। बोलि वामन भगवान की जय।

पैर और शरीर छोटा पर सिर बड़ा था, सुन्दर बाल-स्वरूप की झांकी थी। हाथ, पैर और उदर बहुत ही छोटा थ जंघा उरु और कंधरा भी छोटी थी। पैदा हुए वामन को देख अतिदि को बड़ी प्रसन्नता हुई। दैत्य डरे और देवताओं को सन्तोष हुआ। ब्रह्मा जी के साथ कश्यप जी ने स्वयं जातक आदि संस्कार करा दिये। संस्कारान्तर वामन भगवान, मेखला बांधकर जटा बना, यज्ञोपवीत,

कुश, मृगचर्म धारण कर कमण्डलु हाथ में लिये बलवान बलि के भारी यज्ञ में पहुंचे, उनके तेजोमय स्वरूप को देखकर बलि ने अर्ध्य, पाद्य आसन आदि देकर उनका षोडशोपचार से पूजन किया और चरणोदक ग्रहण किया। वन्दना (प्रार्थना) आदि करके बलि बोले–हे ब्रह्मन् आप, गौ, स्वर्ण, भूमि, रथ, अश्व, गज आदि जो कुछ भी चाहें मांग लें। आपको जो अभीष्ट हो आप मांग लें।

वामन भगवान ने कहा–हे दैत्येन्द्र आप प्रह्लाद वंश के हैं मुंह मांगी वस्तु देने वालों में श्रेष्ठ हैं, इसलिये मैं आपसे थोड़ी सी पृथ्वी वो भी अपने पैर से नापकर तीन पग पृथ्वी मांगता हूं। मैं आपसे अधिक और कुछ नहीं चाहता, क्योंकि आवश्यकता से अधिक संग्रह करना या लेना पाप है।

भगवान की बात सुनकर बलि हंसता हुआ बोला–अच्छी बात है, जितनी आपकी इच्छा हो ले लो। यह कहकर वे जैसे संकल्प करने चले, वैसे ही दैत्यगुरु शुक्राचार्य ने उन्हें रोकते हुए कहा–ये साक्षात् भगवान विष्णु हैं, तीन पग में सारा ब्रह्माण्ड नाप लेंगे और तुम्हें राज्य एवं श्री से हीन कर देंगे। इस पर बलि ने कहा गुरुवर मेरे तो दोनों हाथों में लड्डू हैं। यदि साक्षात् भगवान हैं, तो त्रिलोकी को लूट कर ले जायें, मुझे इसकी परवाह नहीं लोग यही कहेंगे कि भगवान ने भी बलि के यहां भिक्षा मांगने गये थे। भगवान न होकर ये यदि साधारण ब्राह्मण है, तो तीन से सवा तीन भी ले सकता ये मेरा विश्वास है।

वामन भगवान बोले तुम क्या वार्ता करने लगे देना है, तो दे दो।

बलि ने कहा लीजिये ना महाराज जी, इस पर शुक्राचार्य जी ने बलि को श्राप दे दिया कि मेरी आज्ञा का उल्लंघन करने के कारण तुम श्री हीन हो जाओगे।

इस पर भी बलि दान देने के लिये भगवान के चरण धोने लगे तो देवता, ऋषि, गन्धर्व, सिद्ध, चारण उनकी प्रशंसा करने लगे। और दिव्य पुष्पों की वर्षा की। इसके बाद वामन भगवान् ने संकल्प कराकर अपने एक पैर से ऊपर के सभी लोकों (महः जनः तपः सत्यं) आदि सातों लोकों को नाप लिया। दूसरे पैर से नीचे के सारे लोकों को नाप लिया। तीसरे पग के लिये स्थान ही नहीं, भगवान ने दो ही पग में त्रिलोकी को नापकर बलि के सामने उपस्थित हो गये और बोले क्यों त्रिलोकी नाथ जी? बड़ा अभिमान करते थे जो चाहो मांग लो, तुमने तीन पैर पृथ्वी देने का संकल्प किया है, दो पैर में त्रिलोकी को नाप लिया बताओ तीसरा पैर कहां रखूं। जो व्यक्ति वचन करके उसको सत्य नहीं करता, वो दण्ड का अधिकारी होता है। इसलिये प्रभु ने गुरुड़ जी को आदेश दिया और गरुड़ जी ने बलि को बांध कर डाल दिया। और कहा तुम्हें नरक में जाना पड़ेगा।

बलि ने हाथ जोड़कर भगवान से कहा–भगवन् एक बात बताइये धन बड़ा होता है, कि धन का मालिक भगवान बोले धन का जो मालिक है वो धन से सौ गुना बड़ा होता है।

बलि ने तुरन्त कहा–

यद्युत्तमश्लोक भवान् ममेरितं वचोव्यलीकं सुरवर्यमन्यते।
करोम्यृतं तन्न भवेत् प्रलम्भनं पदं तृतीयं कुरु शीर्ष्णि में निजम्।।

अभी तक आपने मेरे धन को नापा है, धन का मालिक तो बाकी है भगवन् तीसरे चरण को मेरे सिर पर रखें और वचनों को सत्य करें। प्रभु नरक में जाने से मुझे डर नहीं लगता। डरता हूं। तो केवल एक बात से कि किसी ब्राह्मण को दिया हुआ वचन कभी झूठा न हो जाय। और किसी चीज से मैं डरता नहीं। तीसरा चरण मेरे सिर पर रखो।

बलि राजा के सिर पर प्रभु नारायण ने तीसरा चरण रखा और उनके नेत्रों से आंसू की धार बह चली। वाह रे बलि आया था तुम्हें छलने लेकिन तुमने मुझे छल लिया।

भगवान् ने बलि को सुतल लोक का राजा बना दिया और सुदर्शन चक्र को उसकी रक्षा में नियुक्त कर दिया। यही नहीं राजा बलि ने सदैव दर्शन देने का वरदान भी प्राप्त कर लिया।

नित्यं दृष्टासि मां तत्र गदा पाणिं अवस्थितम्।

वामन भगवान के इस अद्भुत अवतार चरित्र को जो श्रावण करता है वह परमगति को प्राप्त होता है।

।। इति ।।

।। श्री राधा जी का पाकट्य एवं प्राकट्य कारण ।।

गर्ग संहिता में लिखा है—राजा बहुलाश्व के पूछने पर श्री नारद जी ने कहा—'तुम्हारा यह कुल धन्य है, क्योंकि इस कुल में राजा निमि हो चुके हैं। वे भगवान श्री कृष्ण के एक श्रेष्ठ भक्त थे। फिर इसी कुल में तुम भी उत्पन्न हुए हो। अतः इसे पूर्णरुपेण गौरव प्राप्त

हो गया। राजन् तुम्हारा स्वभाव बड़ा विलक्षण है, क्योंकि तुम संसार से संबंध रखते हुए भी त्यागी हो। अब तुम उन लीला पुरुषोत्तम भगवान् श्री कृष्ण की लीला का श्रवण करो। वह पवित्र एवं कल्याण स्वरूप हैं। केवल कंस का संहार ही भगवान् के अवतार में हेतु नहीं है। वे पृथ्वी पर संतों की (सन्तजनों) रक्षा के लिये भी पधारे थे।

राजन्—भगवान् ने ही अपनी महाशक्ति को प्रेरणा दी। अतः महाशक्ति ने वृषभानु की पत्नी के हृदय में प्रवेश किया और वे ही वृषभानु के यहां राधिका नाम से प्रकट हुईं राधा जी का अवतार एक भव्य भवन में हुआ। वह स्थान यमुना के तट पर निकुंज वन में था। उस समय भाद्र पद का महीना था। शुक्ल पक्ष एवं अष्टमी तिथि थी। दोपहर का समय था। आकश में मेघ छाये हुये थे। देवताओं ने उस समय फूलों की वर्षा की। वे फूल उन्हें नन्दन वन से उन्हें प्राप्त हुए थे। उस समय राधिका जी के पृथ्वी पर प्रकट होने पर नदियां स्वच्छ हो गयीं। संपूर्ण दिशाओं में आनन्द फैल गया। शीतल मन्द सुगन्ध हवा बहने लगी। तत्पश्चात् वृषभानु पत्नी-कीर्ति को एक कन्या दिखायी दी। शरत्कालीन चन्द्रमा की भांति उसकी कान्ति थी। रूप मन को हरने वाली थी। अतः वे आनन्द में भर गयीं। तुरन्त उन्होंने मंगल विधान करवाया और पुत्री के कल्याण की कामना से दो लाख गौएं ब्राह्मणों को दान कीं। श्रेष्ठ देवताओं को भी जिनका दर्शन दुर्लभ है, मनुष्य करोड़ों जन्मों तक तप करते हैं, परन्तु साक्षात्कार नहीं कर पाते, वे ही श्री राधिका जी वृषभानु के यहां स्वयं प्रकट हुईं। गोपियों ने उनका लालन पालन किया। यह

प्रायः सभी जानते हैं, सखियां पालने में राधिका जी को झुलाया करती थीं।

प्रेङ्खे खचिद्रत्नमयूख पूर्णे सुवर्णयुक्ते कृत चन्दनाङ्गे।
आन्दोलिता सा ववृधे सखी जनैर्दिने दिने चन्द्रकलेव भाभिः।।
श्री रासरङ्गस्य विकास चन्द्रिका दीपावलीभिर्वृषभानुमन्दिरे।
गोलोकचूड़ामणिकण्ठ भूषणां ध्यात्वा परां तां भुति पर्यटाम्यहम्।।

(गर्ग संहिता 1/8/11-12)

वह पालना सुवर्ण से बनाया गया था। उसमें रत्न जड़े हुए थे। चारों ओर चन्दन छिड़का गया था। प्रतिदिन श्री राधिकाजी का श्री विग्रह बढ़ता जाता था। ठीक उसी प्रकार जैसे शुक्ल पक्ष की चन्द्रमा की कलाओं का विस्तार हो जाता है। जो रास मण्डल को अह्लादित करने वाली स्वच्छ चांदनी हैं, जिन्होंने वृषभानु के भवन को अनन्त उज्जवल दीपावलियों के समान प्रकाशित कर दिया है। तथा जो गोलोक में चूड़ामणि के रूप में विराजमान श्री कृष्ण के गले की हार हैं उन पूज्यनीय राधिका जी का ध्यान करके मैं पृथ्वी पर विचर रहा हूं।

॥ श्री राधा जन्माष्टमी व्रत ॥

'नारद पुराण' पूर्वभाग अध्याय 117 में श्री राधाजन्माष्टमी व्रत का वर्णन करते हुए सनातन मुनि ने कहा है–

भाद्रपद शुक्ला अष्टमी को मनुष्य 'राधा व्रत' करें।

कलश (स्थापन करके ऊपर श्री राधा की स्वर्णमयी प्रतिमा का

पूजन करना चाहिये। मध्यान्हकाल में श्री राधा जी का पूजन करके एक मुक्त व्रत करें। विधिपूर्वक राधाष्टमी व्रत करने से मनुष्य व्रज का रहस्य जान लेता है। तथा राधा परिकरों में निवास करता है।

॥ श्री राधाजन्माष्टमी व्रत एवं महिमा ॥

जैसे सच्चिदानन्द घन परमात्मा श्री कृष्ण नित्य हैं अविनाशी हैं समय समय पर आविर्भाव एवं तिरोभाव हुआ करता है, वैसे ही भगवती श्री राधा जी भी नित्य हैं, भगवान की निज शक्ति स्वरूपा होने के कारण श्री कृष्ण से सर्वथा अभिन्न हैं। और समय-समय पर लीला के लिये आविर्भूत (प्रगट) तिरोभूत हुआ करतीं हैं।

यथा ब्रह्मस्वरूपश्च श्री कृष्णः प्रकृते परः।
तथा ब्रह्मस्वरूपा च निर्लिप्ता प्रकृतेः परा।।

जैसे श्री कृष्ण ब्रह्मस्वरूप हैं और प्रकृति से परे हैं, वैसे ही श्री राधा जी भी ब्रह्मस्वरूप हैं, निर्लिप्त तथा प्रकृति से अलग हैं। वस्तुतः राधा भी श्री हरि के सदृश नित्य और सत्य स्वरूप हैं।

इसी प्रकार इनका जन्म महोत्सव तथा उसका महत्व भी प्राचीनतम और नित्य है। पद्म पुराण, ब्रह्मखण्ड के सप्तम अध्याय में श्री नारद और ब्रह्मा के संवाद रूप में एक इतिहास मिलता है, उसमें श्री नारद जी के पूछने पर ब्रह्मा जी श्री राधा जन्माष्टमी व्रत के महान् माहात्म्य का वर्णन करते हुए एक प्राचीन प्रसंग सुनाते हैं।

ब्रह्माजी ने कहा–नारद पहले सत्य युग में एक मृगनयनी अति सुन्दरी लीलावती नाम की वीराङ्गना थी। उसने बहुत बड़े-बड़े

पाप किये थे। एक दिन धन की लालसा में अपने नगर से निकलकर एक-दूसरे नगर में गयी। वहां उसने एक जगह बहुत से लोगों को एकत्रित देखा। वे लोग एक सुन्दर देवालय में राधाष्टमी व्रत का उत्सव मना रहे थे। गन्ध, धूप, दीप, नैवेद्य तथा वस्त्र एवं नाना प्रकार के फल आदि थे। भक्तिपूर्वक आदि शक्ति राधा रानी की श्रेष्ठ मूर्ति की पूजा कर रहे थे। कोई गा रहे थे कोई नाच रहे थे, कोई उत्तम स्तव पाठ कर रहे थे। कोई बड़ी प्रसन्नता से तालमृदङ्ग और वेणु बजा रहे थे। इस प्रकार उन लोगों को उत्सव मनाते देखकर वीराङ्गना लीलावती ने उन लोगों के पास जाकर पूछा–

हे भगवत् प्रेमियों आप हर्ष में भर कर यह क्या कर रहे हैं, कृपा करके मुझे बताइये। उत्तर में राधा रानी के भक्तों ने कहा–भाद्रपद शुक्ल पक्ष की अष्टमी को दिन में वृषभनु के यहां यज्ञ भूमि पर श्री राधा जी का प्रादुर्भाव हुआ था। हम लोग उसी का व्रत करके महोत्सव मना रहे हैं। इस व्रत के प्रभाव से बड़े से बड़े पापों का नाश हो जाता है। उनकी बातों को सुनकर लीलावती ने भी व्रत का निश्चय कर व्रत किया। दैवयोग से उसे सर्प ने डंस लिया, इससे उसकी मृत्यु हो गयी। उसके पाप करने के कारण हाथों में पाश तथा मुद्गर लिये भयानक यमदूत आ गये। उसे बांधने लगे। इसी बीच शङ्ख चक्र, गदा, धारण करने वाले भगवान विष्णु के दूतों ने आकर यम पाश को काट दिया। वह वीराङ्गना लीलावती सर्वथा पापों से मुक्त हो गयी और उसे विष्णु दूतों ने विमान पर चढ़ाकर गोलोक धाम को ले गये।

ब्रह्मा जी ने कहा–वत्स नारद, इस प्रकार पापों का नाश करने वाले राधामाधव को अत्यन्त प्रिय राधाष्टमी व्रत को जो लोग नहीं करते हैं, वे मन्दबुद्धि हैं। उन स्त्री-पुरुषों को यम लोक में जाकर नरकों में गिरना पड़ता है। और पृथ्वी पर जन्म लेने पर घोर दु:ख भोगने पड़ते हैं। वास्तव में श्री राधिका जी भगवान श्री कृष्ण की ही अभिन्न मूर्ति हैं। इनकी पूजा सदा से होती आई है और होनी चाहिये।

प्रत्येक मानव को चाहिये कि वह सर्वत्र श्री राधा जन्माष्टमी व्रत करने तथा महोत्सव मनाने का सत्प्रयास करें।

शुद्ध हृदय से उत्साह पूर्वक स्वयं मनाये तथा लोगों को प्रेरणा देकर मनवायें। इससे उसका और जगत् के उन जीवों का, जो इस व्रत का सेवन करेंगे, कल्याण होगा, इसमें कोई भी संदेह नहीं है।

।। इति ।।

।। अनन्त चतुर्दशी व्रत एवं रहस्य ।।

भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को अनन्द चतुर्दशी कहते हैं। इस दिन अनन्त भगवान की पूजा की जाती है। और नमक रहित व्रत किया जाता है। इसमें उदय व्यापिनी तिथि ली जाती है। पूर्णिमा का संयोग होने से इसका फल और भी बढ़ जाता है।

पौर्णमास्या: समायोगे व्रतंचानन्तकं चरेत।।

व्रत का विधान–व्रती को चाहिये कि पक्वान्न का नैवेद्य लेकर किसी पवित्र नदी पर जाये (या सरोवर पर) और वहां स्नान

के बाद इस प्रकार व्रत का संकल्प करें–

मम अखिल पाप क्षयपूर्वक शुभफल वृद्धये श्रीमद् अनन्तप्रीति कामनया अनन्त व्रत संकल्पं अहं करिष्ये।।

इस प्रकार संकल्प कर नदी तट पर भूमि को गोबर से लीप कर वहां अष्टदल बनाकर कलश स्थापित करें तथा कलश की पूजा करें। पश्चात् कलश पर शेषशायी भगवान नारायण की मूर्ति रखे और मूर्ति के सामने चौदह ग्रन्थियुक्त अनन्त सूत्र रखे। फिर षोडशोपचार से अनन्त सहित अनन्त सूत्र का पूजन करें। इसके बाद उस पूजित अनन्तसूत्र (डोरा) को निम्न मन्त्र पढ़कर पुरुष दाहिने हाथ में और स्त्री बांये हाथ में बांध ले।

मन्त्र–

अनन्त संसारमहासमुद्रे मत्र्नान् समभ्युद्धरवासुदेव।
अनन्त रूपे विनियोजितात्माह्यनन्तरुपाय नमो नमस्ते।।

अनन्त सूत्र बांधने के पश्चात् ब्राह्मण को नैवेद्य देकर स्वयं ग्रहण करना चाहिये। और भगवान नारायण का ध्यान करते हुए घर जाना चाहिये। पूजा के पश्चात् अपने परिजनों के साथ कथा सुननी चाहिये। इस मन्त्र से अनंत भगवान की प्रार्थना करें।

दाता च विष्णुर्भगवाननन्तः प्रतिग्रहीता चस एव विष्णुः।
तस्मात्त्वया सर्वमिदं ततं च प्रसीद देवेश वरान् ददस्व।।

अनन्त व्रत कथा–प्राचीन काल में सुमन्तु नाम के एक वशिष्ठ गोत्रीय मुनि थे। उनकी पुत्री का नाम शीला था। पुत्री अत्यन्त सुशील थी। सुमन्तु ने अपने पुत्री का विवाह कौण्डिन्य मुनि के साथ किया

था। शीला ने भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को अनन्त भगवान का व्रत किया और अनन्त सूत्र अपने बांये हाथ में बांध लिया। भगवान अनन्त की कृपा से शीला और कौण्डिन्य के घर में सभी प्रकार की सुख–समृद्धि आ गई और उनका जीवन सुखमय हो गया दुर्भाग्य वश एक दिन कौण्डिय मुनि क्रोध में आकर शीला के हाथ में बंधा अनन्त सूत्र तोड़कर आग में फेंक दिया। इससे उनकी सब धन संपत्ति नष्ट हो गई और वे बहुत दुःखी रहने लगे।

एक दिन दुःखी होकर कौण्डिन्य मुनि वन में चले गये और वहां लता वृक्ष, जीव–जन्तुओं से अनन्त भगवान का पता पूछने लगे। दयानिधि भगवान अनन्त वृद्ध ब्राह्मण के रूप में कौण्डिन्य मुनि को दर्शन दिया और अनन्त व्रत करने को कहा। शीला और कौण्डिन्य मुनि ने अनन्त व्रत को किया और वे पुनः सुखपूर्वक रहने लगे। इस व्रत को करने से भुक्ति और मुक्ति दोनों की उपलब्धि होती है।

।। इति ।।

।। महालक्ष्मी व्रत ।। (सोरहिया व्रत)

भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष की अष्टमी से लेकर अश्विन कृष्ण पक्ष अष्टमी तक भगवती महालक्ष्मी का 'श्री महालक्ष्मी व्रत' होता है। यह व्रत सोलह दिनों का होता है। शास्त्रों पुराणों में इस व्रत का बहुत महत्व बताया गया है।

इस व्रत का अनुष्ठान करने वाले अपनी कामनाओं को ही नहीं अपितु चारों पुरुषार्थों को भी प्राप्त कर लेते हैं।

जिस प्रकार तीर्थों में प्रयाग, नदियों में गंगा जी श्रेष्ठ हैं, उसी प्रकार व्रतों में यह महालक्ष्मी व्रत श्रेष्ठ है।

व्रत विधान–भाद्र पद शुक्ला अष्टमी को प्रातः उठकर सोलह बार हांथ मुंह धोकर स्नान आदि से निवृत्त होकर चन्दन आदि से निर्मित भगवती महालक्ष्मी की प्रतिमा का स्थापन करे। उसके समीप सोलह सूत्र के डोरे में सोलह गांठ लगाकर 'महालक्ष्म्यै नमः' इस नाम मन्त्र से प्रत्येक गांठ का पूजन करके लक्ष्मी जी की प्रतिमा का षोडशोपचार से पूजन करें। इसके पश्चात् इस मन्त्र से डोरे को दाहिने हाथ में बांध लें।

मन्त्र–

धन्यं धान्यं धरां हर्म्यं कीर्तिमायुर्यशः श्रियम्।
तुरगान् दन्तिनः पुत्रान् महालक्ष्मि प्रयच्छ मे।।

सोलह दूर्वा और सोलह अक्षत लेकर कथा सुने। इस प्रकार सोलह दिन तक व्रत करके आश्विन कृष्ण पक्ष की अष्टमी को रात्रि जागरण कर विसर्जन करें। सोलहवें दिन डोरे को खोलकर लक्ष्मी जी के पास रख देना चाहिये। इस व्रत में एक बार फलाहार किया जाता है। तथा आटे के सोलह दीपक बनाकर दक्षिणा के साथ ब्राह्मणों को दान किया जाता है।

कथा–एक लोक कथा के अनुसार एक राजा के दो रानियां थी। बड़ी रानी के अनेक पुत्र थे। परन्तु छोटी रानी के एक ही पुत्र था। बड़ी रानी ने एक दिन मिट्टी का हाथी बनाकर उसका पूजन किया। किन्तु छोटी रानी इससे वंचित रहने के कारण उदास हो गई।

उसका लड़का मां को उदास देख इन्द्र से ऐरावत हाथी मांग लाया, और बोला माँ तुम सचमुच के हाथी का पूजन करो।

रानी ने ऐरावत की पूजा की। जिसके प्रभाव से उसका पुत्र विख्यात राजा हुआ। अतः इस दिन लोग हाथी की भी पूजा करते हैं। काशी में लक्ष्मी कुण्ड पर सोलह दिन का महालक्ष्मी का मेला लगता है। जो सोरहिया मेला कहलाता है। यहां भक्तगण नियमपूर्वक लक्ष्मी जी का दर्शन करते हैं।

।। इति ।।

।। पितृ पक्ष ।।

(आश्विन कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा से अमावश्या तक)

आश्विन कृष्ण पक्ष के पंद्रह दिन 'पितृपक्ष' के नाम से विख्यात हैं। इन पन्द्रह दिनों में लोग अपने पितरों को जल देते हैं तथा उनकी मृत्यु तिथि पर श्राद्ध करते हैं।

पितरों का ऋण श्राद्धों द्वारा चुकाया जाता है, पितृ पक्ष श्राद्धों के लिये निश्चित पंद्रह तिथियों का एक समूह है, वर्ष के किसी भी मास तथा तिथि में स्वर्गवासी हुए पितरों के लिये पितृ पक्ष की उसी तिथि में श्राद्ध किया जाता है। पूर्णिमा पर देहान्त होने पर भाद्रपक्ष शुक्ल पूर्णिमा को श्राद्ध करने की विधि है। इसी दिन से महालयारम्भ भी माना जाता है।

''श्राद्ध'' का अर्थ है–श्रद्धा से जो कुछ दिया जाय (श्रद्धां दीयते यत् तत् श्राद्धम्) पितृ पक्ष में श्राद्ध करने से वर्ष भर पितर

प्रसन्न रहते हैं। पितृ पक्ष में श्राद्ध तो मुख्य तिथियों में ही होते हैं, किन्तु तर्पण प्रतिदिन किया जाता है। देवताओं तथा ऋषियों को जल देने के पश्चात् पितरों को जल देकर तृप्त किया जाता है।

यद्यपि प्रत्येक पितरों के लिये परम फलदायी है इसी प्रकार पितृ पक्ष की नवमी को माता के श्राद्ध के लिये पुण्यदायी माना है। श्राद्ध के लिये सबसे पवित्र स्थान गया तीर्थ है, जिस प्रकार पितरों के मुक्ति निमित्त गया को पुण्य दायी माना है, उसी प्रकार माता के लिये काठियावाड़ सिद्धपुर स्थान परम फलदायी माना है। इस पुण्य क्षेत्र में माला का श्राद्ध करके पुत्र अपने मातृ ऋण से सदा-सर्वदा के लिये मुक्त हो जाता है। यह स्थान मातृ गया के नाम से प्रसिद्ध है।

पितृ पक्ष में श्राद्ध की महिमा–

आयुः पुत्रान् यशः स्वर्गं कीर्तिं पुष्टिं बलं श्रियम्।
पशून सौख्यं धनं धान्यं प्राप्नुयात् पितृपूजनात्।।

धर्म शास्त्रों में कहा है, कि पितरों का पिण्डदान करने वाला गृहस्थ दीर्घायु, पुत्र पौत्रादि, यश, स्वर्ग, पुष्टि, बल, लक्ष्मी, पशु, सुख साधन तथा धन धान्यादि की प्राप्ति करता है। यही नहीं पितरों की कृपा से सब प्रकार की समृद्धि, सौभाग्य, राज्य तथा मोक्ष प्राप्ति होती है। पितृपक्ष में पितरों को आशा लगी रहती है, कि हमारे पुत्र-पौत्रादि हमें पिण्डदान तथा तिलाजलि प्रदान कर सन्तुष्ट करेंगे। यही आशा लेकर पितृलोक से वे पृथ्वी लोक पर आते हैं। अतएव प्रत्येक हिन्दू सद् गृहस्थ का धर्म है, कि वह पितृ पक्ष में अपने

पितरों की तृप्ति के लिये श्राद्ध, तर्पण, अवश्य करें। तथा अपनी शक्ति के अनुसार फल-मूल जो भी संभव हो पितरों के निमित्त प्रदान करें। पितृ पक्ष पितरों के लिये पर्व का समय है। अतएव इस पक्ष में श्राद्ध, तर्पण किया जाता है।

पितृ विसर्जनी अमावस्या–आश्विन कृष्ण अमावस्था को अमावस्या अथवा महालया कहते हैं। जो व्यक्ति पितृ पक्ष के प्रदंह दिनों तक श्राद्ध तर्पण आदि नहीं करते हैं, वे अमावस्या को ही अपने पितरों के निमित्त श्राद्धादि सम्पन्न करते हैं। जिन पितरों की तिथि याद न हो, उनके निमित्त श्राद्ध, तर्पण, दान आदि इसी अमावस्या को किया जाता है। आज के दिन सभी पितरों का विसर्जन होता है। अमावस्या के दिन पितर अपने पुत्र आदि के द्वार पर पिण्ड दान एवं श्राद्धादि की आशा में जाते हैं। यदि वहां उन्हें पिण्ड दान या तिलांजलि आदि नहीं मिलती है तो वे शाप देकर चले जाते हैं। अतः एकदम श्राद्ध का परित्याग न करें, पितरों को सन्तुष्ट अवश्य करें।

श्राद्ध कर्ता को पूरे पंद्रह दिनों तक क्षौर कर्म नहीं करना चाहिये। पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये। प्रतिदिन स्नान के बाद तर्पण करना चाहिये। तेल, उबटन आदि का उपयोग नहीं करना चाहिये। दौहित्र (पुत्री का पुत्र) मध्यान्ह का समय और तिल श्राद्ध में अत्यन्त पवित्र हैं। क्रोध करना, श्राद्ध करके एक स्थान से दूसरे स्थान में जाना एवं श्राद्ध करने में जल्दीबाजी ये तीन वर्जित हैं। (निर्णय सिन्धु) इस पक्ष में पिता की तिथि को पार्वण श्राद्ध करना चाहिये। 'पर्वणि भवः पार्वणः'। महालय में एकोद्दिष्ट श्राद्ध नहीं

होता। जो पार्वण श्राद्ध न कर सके, वह कम से कम पंच बली निकालकर ब्राह्मण भोजन ही कराये।

बहुत से व्यक्ति तर्पण श्राद्ध नहीं कराते केवल ब्राह्मण भोजन ही कराते हैं, तो उन्हें चाहिये कि योग्य ब्राह्मण द्वारा संकल्प आदि कराकर (1) गोबलि पत्ते पर, (2) श्वान बलि पत्ते पर (3) काक बलि पृथ्वी पर, (4) देवादि बलि पत्ते पर, (5) पिपीलिकादि बलि पत्ते पर। इस प्रकार पंच बलि निकालकर कौआ के निमित्त निकाला गया अन्न कौआ को, कुत्ता का अन्न कुत्ता को और सब गाय को देकर पश्चात् ब्राह्मणों के पैर धोकर ब्राह्मण भोजन करायें।

भोजनोपरान्त उन्हें, अन्न, वस्त्र और द्रव्य दक्षिणा देकर तिलक करके नमस्कार करें। तत्पश्चात् नीचे लिखे वाक्य यजमान और ब्राह्मण दोनों बोले–

यजमान बोले–शेषान्नेन किंकर्तव्यम्–श्राद्ध में बचे अन्न का क्या करूं।

ब्राह्मण कहे–इष्टैः सहभोक्तव्यम्–अपने इष्ट मित्रों के साथ भोजन करें। इसके बाद अपने परिवार वालों के साथ स्वयं भी भोजन करे तथा निम्न मंत्र से भगवान नारायण को नमस्कार करें–

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषुयत्।
स्मरणा देव तद्विष्णोः सम्पूर्णां स्यादिति श्रुतिः।।

श्राद्ध के अधिकारी–श्राद्ध का अधिकार पुत्र को है, या दौहित्र को पौत्र प्रपौत्र भी श्राद्ध के अधिकारी हैं। पिता जीवित हो तो मुण्डन, एवं पिण्डदान श्राद्ध नहीं करना चाहिये। पिता परदेश में हो

तो पौत्र श्राद्ध कर सकता है। यदि पुत्र पौत्र न हो तो कुल वाले भाई के पुत्र पौत्र आदि करें। यदि वे भी न हो केवल विधवा स्त्री हो तो वह सब श्राद्ध आदि करे। उसका पूर्ण अधिकार है।

नोट–स्त्री के श्राद्ध में स्त्री को जिमाना शास्त्र विरुद्ध है, ऐसा नहीं करना चाहिये। यदि ऐसा करते हैं तो पितर दुःखी होते हैं।

श्राद्ध में तो सदाचारी निष्ठावान् ब्राह्मण ही श्राद्ध में जिमाना चाहिये।

।। इति ।।

।। जीवित्पुत्रिका व्रत ।।

आश्विन कृष्ण पक्ष की अष्टमी को यह व्रत किया जाता है, इस व्रत के प्रभाव से पुत्र की आयु बढ़ती है व आरोग्यता प्राप्त होती है।

धर्मशास्त्रकारों ने इसे जीवित्पुत्रिकाः जितिया या जीमूतवाहन व्रत कहा है। प्रायः स्त्रियां इस व्रत को करती हैं। यह व्रत प्रदोष व्यापिनी अष्टमी को किया जाता है। यदि दो दिन प्रदोष व्यापिनी हो तो पर दिन का ग्रहण करना चाहिये। (कुर्यात् अपरे हनि) व्रत का पारणा व्रत के दूसरे दिन करें।

पवित्र होकर संकल्प के साथ व्रती प्रदोष काल (सायंकाल) में गोबर से लीपकर स्वच्छ करें। तथा छोटा-सा तालाब भी जमीन में खोद कर बना ले। तालाब के निकट पाकड़ की डाल लाकर खड़ा कर दें।

शालिवाहन राजा के पुत्र धर्मात्मा जीमूत वाहन की कुश निर्मित मूर्ति जल में या मिट्टी के पात्र में स्थापित कर पीली और लाल रुई से अलंकृत करें। तथा धूप, दीप, अक्षत (चावल) फूल माला एवं विविध प्रकारों के नैवेद्य से पूजन करें। मिट्टी तथा गाय के गोबर से चिल्ली या चिल्होणिन (मादा चील) और सियारिन की मूर्ति बनाकर उनके मस्तक को सिन्दूर से भूषित कर दें। अपने वंश की वृद्धि के लिये उपवास कर बांस के पत्रों से पूजन करना चाहिये। तदनन्तर व्रत माहात्म्य की कथा का श्रवण करना चाहिये।

अपने पुत्र पौत्रों की लम्बी आयु एवं सुन्दर स्वास्थ्य की कामना से महिलाओं को विशेषकर सधवा (सुहागिन) स्त्री को इस व्रत को अवश्य करना चाहिये।

कथा—वैशम्पायन ऋषि कहते हैं, बहुत पहले रमणीय कैलाश पर्वत के शिखर पर भगवान् शंकर और माता पार्वती प्रसन्न मुद्रा में बैठे हुए थे। परम दयालु माता गौरी ने महादेव जी से पूछा—प्रभो किस पूजन व व्रत से सौभाग्यशालिनी स्त्रियों के पुत्र जीवित एवं चिरंजीवी बने रहते हैं? त्रिकालज्ञ भगवान शंकर ने जीवित्पुत्रिका-जितिया व्रत के विधान, महत्व तथा माहात्म्य की कथा बताते हुए कहा—दक्षिणा पथ में समुद्र से निकट नर्मदा नदी के तट पर कांचनावती नाम की एक सुन्दर नगरी थी। वहां के राजा मलयकेतु थे, उनके पास चतुरंगिणी सेना थी एंव उनकी नगरी धन-धान्य से परिपूर्ण थी। नर्मदा के पश्चिम तट पर बाहूट्टार नामक एक मरुस्थल था। वहां घाघू नाम वाला एक पाकड़ का वृक्ष

था। उसकी जड़ में एक बड़ा सा कोटर था। उसमें छिपकर एक सियारिन रहती थी। उसकी डाल पर घोंसला बनाकर एक चिल्होड़िन भी रहती थी। रहते-रहते दोनों में मित्रता हो गयी। संयोगवश उसी नदी के किनारे उस नगर की सधवा स्त्रियां अपने पुत्रों की आयु और कल्याण की कामना से जीमूतवाहन का व्रत एवं पूजन कर रही थीं। उनसे सब कुछ जानकर चिल्होड़िन और सियारिन ने भी व्रत करने का संकल्प लिया। व्रत करने के कारण भूख लगनी स्वाभाविक थी। चिल्होड़िन ने भूख सहन कर रात बिता ली परन्तु सियारिन भूख से छटपटाने लगी। वह नदी के किनारे जाकर एक अधजले मुर्दे का मांस भरपेट खाकर और पारणा के लिये मांस के कुछ टुकड़े लेकर फिर कोटर में आ गयी। डाल के ऊपर से चिल्होड़िन सब कुछ देख रही थी। चिल्होड़िन ने नगर की सधवा औरतों से अंकुरित केलाय लेकर पारणा ठीक से कर ली। सियारिन बहुत धूर्त थी, और चिल्होड़िन अधिक सात्विक विचार वाली थी।

कुछ दिनों बाद दोनों ने प्रयाग आकर तीर्थ सेवन शुरू किया। वही पर चिल्होड़िन ने 'मैं महाराज के महामंत्री बुद्धसेन की पत्नी बनूंगी—इस संकल्प एवं मनोरथ के साथ अपने प्राणों को छोड़ दिया। उधर सियारिन ने भी 'मैं महाराज मलयकेतु की रानी बनूंगी' इस मनोरथ और संकल्प के साथ अपने प्राणों को त्याग दिया।

दोनों का जन्म भास्कर नामक विद्वान ब्राह्मण के घर में हुआ। दोनों कन्याओं में नाग कन्या और देव कन्या के असाधारण गुण लक्षित हो रहे थे चिल्होड़िन का नाम जहां शीलवती रखा गया वही

सियारिन का नाम कर्पूरावती रखा गया। शीलवती का विवाह मन्त्री बुद्धसेन से हुआ और कूर्परावती का विवाह राजा मलयकेतु के साथ हुआ। राजा और मंत्री दोनों धर्मात्मा एवं न्याय वादी थे। प्रजा को राजा पुत्रवत चाहता था और प्रजा भी खूब चाहती थी। समय के अनुसार शीलवती और कर्पूरावती को सात-सात पुत्र हुए। शीलवती के सातों पुत्र जीवित थे पर कर्पूरावती के सातों पुत्र एक-एक करके काल के गाल में समाते गये। कर्पूरावती बहुत दु:खी रहने लगी। उधर शीलवती के सभी पुत्र हमेशा राजा की सेवा में हाजिर रहते थे। वे सब बड़े विनयी और राजा के आज्ञाकारी थे। रानी उन्हें देखकर जलती रहती थी। उसे ईर्ष्या होती थी कि शीलवती के सभी पुत्र जीवित हैं।

एक दिन रानी ने रूठकर खाना-पीना और बोलना भी बंद कर दिया। राजा से दूर किसी एकान्त कोठरी में पड़ी हुई थी। राजा को जब यह मालूम हुआ तो वे उसे मनाने गये तब उसने एक न सुनी। आखिर परेशान राजा ने कहा कि जो तुम कुछ कहोगी मैं वही करूंगा। तुम उठो और खाना खाओ। यह सुनकर वह क्रूर रानी ने कहा यदि यह सत्य है, तो अमुक दरवाजे पर एक चक्र रखा हुआ है, आप शीलवती के सभी पुत्रों का सिर काटकर ला दीजिये। ऐसा नहीं चाहते हुए भी आखिर राजा ने वही किया जो रानी चाहती थी। रानी ने सात (बांस के बने) डाला या बर्तन में एक-एक सिर रखकर और उसे कपड़े से ढककर शीलवती के पास भेज दिया। इधर जीमूतवाहन ने उनकी गर्दन को मिट्टी से जोड़ कर एवं अमृत

छिड़कर जीवित कर दिया। सौगात के रूप में भेजे गये सभी सिर ताल के फल बन गये। यह जानकर तो रानी आग-बबूला हो गयी। वह क्रोध के मारे अत्यन्त कुपित हो गयी। और डंडा लेकर शीलवती को मारने पहुंच गयी। लेकिन भगवान की दया से शीलवती को देखते ही उसका क्रोध शान्त हो गया। शीलवती उसे लेकर नर्मदा के तट पर चली गयी। दोनों ने स्नान किया। बाद में शीलवती ने पूर्व जन्म की याद दिलाते हुए उसे बताया कि तुमने सियारिन के रूप में व्रत को भंग कर मुर्दा खा लिया था। उसे सब कुछ याद आ गया। ग्लानि और संताप से उसके प्राण निकल गये। राजा को जब यह मालूम हुआ तो उसने अपना राज्य मंत्री को सौंप दिया और स्वयं तप करने चला गया। शीलवती अपने पति अैर पुत्रों के साथ प्रसन्नतापूर्वक रहने लगी। जितिया व्रत के प्रभाव से उसके सभी मनोरथ पूर्ण हो गये।

इस प्रकार माहात्म्य की कथा बताने के बाद भगवान शंकर ने कहा हे उमा जो सौभाग्यवती स्त्री जीमूतवाहन को प्रसन्न करने के लिये व्रत एवं पूजन करती है एवं कथा सुनकर ब्राह्मण को दक्षिणा देती है, वह अपने पुत्रों के साथ सुखपूर्वक समय बिताकर अन्त में भगवान नारायण के धाम को प्राप्त करती है।

अन्ते च भजते देवि विष्णु लोकं सनातनम्।।

।। इति ।।

॥ शारदीय नवरात्र ॥

आश्विन शुक्ल पक्ष की पड़वा (1) से नवमी तक शारदीय नवरात्र मनाया जाता है। दक्षिण में चैत्र, आषाढ़, आश्विन, तथा माघ में चार नवरात्र मनाते हैं। परन्तु शारदीय (आश्विन) नवरात्र का विशेष महत्व है। वैसे चैत्र एवं आश्विन नवरात्र में सभी देवी उपासना करते हैं। नवरात्र में महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती तथा दुर्गा सप्तशती का पाठ करना चाहिये। स्वयं सप्तशती पाठ न कर सके तो योग्य ब्राह्मण द्वारा, गणेश, कलश, नवग्रह, षोडश मातृका एवं सर्वतोभद्र बेदी आदि का पूजन कराकर मध्यम स्वर से पाठ करना चाहिये। प्रतिदिन बटुक कुमारी का पूजन होना चाहिये। नवमी को हवन करना चाहिये। ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये। एक समय भोजन करना चाहिये। पूजन में कन्या दस वर्ष तक की ही होनी चाहिये। इन नवरात्रों में देव उपासना भी होती है। श्री मद्भागवत, रामायण आदि का पाठ भी होता है।

पूजन का विधान विद्वान् ब्राह्मण द्वारा जान लें।

नवरात्रों में सरस्वती शयन भी मनाया जाता है।

मूल नक्षत्र में सरस्वती जी का आह्वान करें तथा पुस्तक को शयन कराकर प्रतिदिन पूजन करें। श्रवण नक्षत्र में विसर्जन करें सप्तमी से दसमी तक पठन पाठन बन्द रखें।

नवरात्र में प्रतिदिन सिद्ध कुञ्जिका स्तोत्र का पाठ करने से सप्तशती पाठ करने का पूर्ण फल प्राप्त होता है।

॥ महा अष्टमी ॥

आश्विन शुक्ला अष्टमी को देवी का प्रादुर्भाव हुआ है। इस दिन देवी उपासना का विशेष फल है। स्त्रियां कढ़ाई करती हैं, कन्या पूजन करती हैं, और देवी कवच का पाठ करती हैं।

॥ विजया दशमी ॥ (दशहरा)

यह पर्व आश्विन शुक्ला दशमी को मनाया जाता है। इस पर्व के लिये श्रवण नक्षत्र युक्त, प्रदोषव्यापिनी, नवमी विद्धा दशमी प्रशस्त होती है। विजया दशमी का त्योहार वर्षा ऋतु की समाप्ति तथा शरद् के आरम्भ का सूचक है–

क्षत्रियों का यह बहुत बड़ा पर्व है। इस दिन ब्राह्मण लोग सरस्वती पूजन एवं क्षत्रिय शस्त्र पूजन करते हैं। दुर्गा विसर्जन, अपराजिता पूजन एवं क्षत्रिय शस्त्र पूजन तथा नवरात्र पारण इस पर्व के महान् कर्म हैं। इस दिन संध्या के समय नीलकण्ठ पक्षी का दर्शन शुभ माना जाता है। इस दिन प्रातः काल देवी का विधिवत् पूजन करके नवमी विद्धा दशमी में विसर्जन तथा नवरात्र पारण करना चाहिये। इस दिन विधिपूर्वक अपराजिता देवी के साथ जया तथा विजया देवियों का पूजन होता है। और सायंकाल में दशमी पूजन तथा सीमोल्लंघन का विधान है। भारत वर्ष के कोने-कोने में इस पर्व से कुछ दिन पहले रामलीलाएं शुरू हो जाती है। सूर्यास्त होते ही रावण, कुम्भवर्ण, तथा मेघनाथ के पुतले जलाये जाते हैं।

इस पर्व को भगवती विजया के नाम पर विजया दशमी कहते हैं। साथ ही इस दिन भगवान श्री राम ने रावण का वध कर विजय प्राप्त की थी, इसलिये भी इस पर्व को विजयादशमी कहते हैं।

प्राचीन काल में राजा लोग इसीलिए अपनी विजय यात्रा आरम्भ करते थे। वैश्य अपने बही खातों का पूजन भी इसी दिन करते थे। राजस्थान आदि कुछ प्रदेशों की परम्परा के अनुसार इस दिन घरों में भी गेरू से दशहरा माँडकर जल, रोली, चावल से पूजा की जाती है। पूजन में चावल मूली तथा गुबारफली चढ़ाई जाती है। और दीप धूप से आरती होती है।

दशहरा पर जो दो गोबर की हांडी रखी जाती है, उनमें से एक में रुपया तथा दूसरी में फल, रोली एवं चावल रखकर दोनों हंड़ियों को ढंक दिया जाता है। दीपक जलाकर परिक्रमा देकर प्रणाम किया जाता है। थोड़ी देर में हांड़ी मे से रुपया निकाल कर आलमारी में रख लिया गया है। बही बसने की भी पूजा करके रोली, चावल चढ़ाया जाता है। बहियों पर नवरात्र का नवयवाङकुर (जवारा) भी चढ़ाया जाता है।

।। इति ।।

॥ कोजागर व्रत ॥

आश्विन मास की पूर्णिमा को माता लक्ष्मी रात्रि में यह देखने के लिये घूमती है, कि कौन जाग रहा है। जो जाग रहा होता है, उसे धन देती है। लक्ष्मी जी के ''को जागर्ति'' कहने के कारण इस व्रत

का नाम कोजागर पड़ा है।

निशीथे वरदा लक्ष्मी: को जागर्तीति भाषिणी।
जगति भ्रमते तस्यां लोकचेष्टावलोकिनी।।
तस्मै क्तिं प्रयच्छामि यो जागर्ति महीतले।।

इस व्रत में रात्रि व्यापिनी पूर्णिमा लेनी चाहिये तथा ऐरावत पर आरुढ़ इन्द्र और महालक्ष्मी का पूजन करना चाहिये। और उपवास करना चाहिये। रात्रि के समय घृत पूरित और गन्ध पुष्प आदि से पूजित एक सौ या जितनी शक्ति हो उतने दीपक प्रज्जवलित कर देव मंदिरों, बाग-बगीचों, तुलसी और पीपल के वृक्षों के नीचे तथा भवनों में रखना चाहिये। प्रात:काल स्नानादि करके इन्द्र का पूजन कर ब्राह्मणों को खीर का भोजन कराना चाहिये। और वस्त्र दक्षिणा और स्वर्ण के दीपक देने से अनन्त फल की प्राप्ति होती है। इस दिन श्री सूक्त, लक्ष्मीस्तोत्र का पाठ ब्राह्मणों द्वारा कराकर, कमलगट्टा, बेल अथवा मेवा या खीर द्वारा दशांश हवन कराना चाहिये।

कथा—मगध देश में बलित नामक एक अयाचक व्रती ब्राह्मण रहता था। उसकी पत्नी चण्डी अति कर्कशा थी। वह ब्राह्मण को रोज ताना देती कि मैं किसी दरिद्र के घर आ गयी हूं। वह संपूर्ण लोक में पति की निन्दा करती थी।

पति के विपरीत आचरण करना ही उसने अपना धर्म बना लिया था। वह पापिनी रोज पति को राजा के यहां से चोरी करके धन लाने को उकसाया करती।

एक बार श्राद्ध के समय उसने पिण्डों को उठाकर कुएं में फेंक

दिया। इससे अत्यन्त दुखित होकर ब्राह्मण जंगल में चला गया वहां उसे नाग कन्याएं मिलीं। उस दिन आश्विन मास की पूर्णिमा थी। नाग कन्याओं ने ब्राह्मण को रात्रि जागरण कर कोजागर व्रत करने को कहा। और बताया इससे लक्ष्मी जी शीघ्र ही प्रसन्न होती हैं। कोजागर व्रत के प्रभाव से ब्राह्मण के पास अतुल धन सम्पत्ति हो गयी। और माता लक्ष्मी की कृपा से उसकी पत्नी चण्डी की भी मति निर्मल हो गयी। और वे दम्पति सुखपूर्वक रहने लगे।

।। इति ।।

॥ आश्विन पूर्णिमा ॥ (शरत्पूर्णिमा)

आश्विन मास की पूर्णिमा को शरद् पूर्णिमा कहते हैं। इस व्रत में प्रदोष और रात्रि व्यापिनी दोनों समय में होने वाली पूर्णिमा ग्राह्य है। यदि पहले दिन निशीथ व्यापिनी और दूसरे दिन प्रदोष व्यापिनी न हो तो पहले दिन व्रत करना चाहिये। शरद् पूर्णिमा की रात्रि में चन्द्रमा की चांदनी में अमृत का निवास रहता है। इसलिये उसकी किरणों से अमृतत्व और आरोग्य की प्राप्ति सुलभ होती है।

व्रत-विधान—इस दिन प्रातः काल अपने आराध्य देव (जिसकी आप पूजा करते हैं) को वस्त्र आभूषण से सुशोभित करके उनका यथा विधि से पूजन करना चाहिये। अर्धरात्रि के समय गोदूध से बनी खीर का ठाकुर जी को भोग लगाना चाहिये। खीर से भरे पाम (बर्तन) को रात में खुली चांदनी में रखना चाहिये। इसमें रात्रि के समय चन्द्र किरणों के द्वारा अमृत गिरता है। पूर्ण चन्द्र जब मध्य

आकाश में स्थित हो तब उनका पूजन कर अर्ध्य प्रदान करना चाहिये।

इस दिन कांस्य पात्र में घी भरकर सुवर्ण सहित ब्राह्मण को दान देने से मनुष्य ओजस्वी होता है। अपरान्ह में हाथियों का नीराजन करने का विधान है।

भगवान् श्री कृष्ण ने इसी तिथि को रासलीला की थी इसलिये व्रज में इस पर्व को विशेष उत्साह के साथ मनाया जाता है। इसे 'रासोत्सव' या कौमुदी-महोत्सव भी कहते हैं।

।। इति ।।

॥ करक चतुर्थी ॥ (करवा चौथ)

कार्तिक मास कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को करक चतुर्थी एवं करवा चौथ कहते हैं। विशेष रूप से इस व्रत को दक्षिण देश में करते हैं। इस व्रत को करने का केवल स्त्रियों को ही अधिकार है।

''अत्र स्त्रीणामेवाधिकारः''

व्रत-विधान—पहले आचन आदि करके संकल्प में ऐसी धारणा कर मन में कहें। कि मैं अपने सौभाग्य एवं पुत्र-पौत्रादि तथा निश्चल सम्पत्ति की प्राप्ति के लिये करक चतुर्थी के व्रत को करूंगी। संकल्प के पश्चात् एक वट वृक्ष का चित्र अंकित करें, बड़ के मूल भाग में महादेव जी, गणेश जी, और स्वामी कार्तिकेय सहित माता पार्वती जी का आकार अंकित करें। तत्पश्चात् प्रतिष्ठा आदि कर षोडशोपचार विधि से पूजन कर प्रार्थना करें।

इसके पीछे पकवान और अक्षतों के साथ दस करवे ब्राह्मण को देने चाहिये। तथा पिष्टक का नैवेद्य निवेदन करें। पीछे चन्द्रोदय होने पर चन्द्रमा को अर्ध्य देना चाहिये। इसके बाद भोजन ग्रहण करें।

एक और विधान—इस दिन राजस्थान में चीनी का करवा बनवाकर कहानी सुनती है। इस वर्ष में जिस लड़की का विवाह हुआ है। वह 13 चीनी का करवा लेकर कहानी सुनती है। तथा एक करवा अपने पति के लिये भी रखती है, फिर 14 करवा लड़की के ससुराल भेजे देते हैं। रात्रि को चन्द्रमा के उदय होने पर चन्द्रमा को अर्ध्य देकर भोजन करती हैं। सासु के लिये तीयल होती है, मिट्टी के करवें में गेहूं भरकर ऊपर ढक्कन में चीनी रखकर कथा सुनें।

अथ कथा—मान्धाता कहते हैं—कि जब अर्जुन इन्द्रकील पर्वत पर तप करने चला गया उस समय द्रौपदी का चित्त कुम्हिला गया, और चिन्ता करने लगी। कि अर्जुन ने बड़ा कठिन काम करना प्रारंभ कर दिया है, यह निश्चय है कि मार्ग में विघ्न डालने वाले बहुत से बैरी हैं। कृष्ण की इच्छा है कि पति के काम में कोई विध्न न आये इस प्रकार चिन्ता करती हुई द्रौपदी-जगद्गुरु श्री कृष्ण से पूछा।

हे जगन्नाथ आप एक अत्यन्त गोप्य व्रत बताइये, जिसके करने से सब ओर के विघ्न दूर हो जायें। श्री कृष्ण ने कहा हे महाभागे जैसा आपने मुझसे पूछा है, उसी प्रकार पार्वती जी ने महादेव जी से पूछा थ। पूछने पर शिवजी ने कहा हे विरारोहे सुनो, तुम्हें सब

विघ्न हारिणी चतुर्थी व्रत को कहता हूं।

स्वर्ग से भी रमणीय इन्द्रप्रस्थ पुर में वेद शर्मा नामक विद्वान ब्राह्मण रहता था। उसकी पत्नी का नाम लीलावती था। उस ब्राह्मण के परम तेजस्वी सात पुत्र थे। और एक सर्व लक्षण सुलक्षणा वीरावती नाम की एक कन्या उत्पन्न हुई। सुन्दरी कन्या वीरावती जब विवाह के योग्य हुई, तब वीरावती का विवाह विद्वान् विप्र कुमार से कर दिया।

विवाहोपरान्त वीरावती ने कार्तिक कृष्ण पक्ष की चतुर्थी (करक चतुर्थी) का व्रत किया। और सन्ध्या के समय वट वृक्ष लिखकर उसके मूल में शिव पार्वती, गणेश, कार्तिकेय का गन्ध पुष्प धूप दीप नैवद्य आदि से पूजन किया। तथा रात्रि में चन्द्रमा के उदय की सब प्रतीक्षा करने लगी। बालिका वीरावती क्षुधा (भूख) से व्याकुल हो मूर्च्छित हो गयी। सभी उसको होश कराने लगे। जल छिड़कने लगे। बान्धव लोग सब व्याकुल हो रोने लगे। उसका भाई सोच-विचारकर जलती मसाल लेकर पेड़ पर चढ़ गया। सबने कहा चन्द्रोदय हो गया।

उसने उसे चांद समझ दु:ख छोड़ विधिपूर्वक अर्ध्य देकर भाव के साथ भोजन किया। इसी दोष से उसका पति मर गया। धर्म दूषित हुआ वीरावती ने पति को मरा हुआ देख शिवजी का पूजन किया। फिर उसने एक साल तक निराहार व्रत किया पर उसकी भाभियों ने संबत्सर बीत जाने पर व्रत किया। पहले कहे हुए विधान के अनुसार सुन्दर मुख वाली वीरावती ने भी व्रत किया। उस समय

कन्याओं से घिरी हुई शची देवी इसी व्रत को करने के लिये स्वर्ग लोक से चली आई और वीरावती के भाग्य से उसके पास अपने आप पहुंच गई। शची देवी ने उस मानुषी को देख सब बातें पूछी, एवं वीरावती ने नम्रता पूर्वक सब बातें कही। वीरावती ने पूछा ये मेरे किस पाप का फल है, इन्द्राणी ने कहा तुम्हारा यह (करक चतुर्थी) का व्रत भंग हुआ है इसी कारण तुम्हारा पति मर गया है। यदि पुनः तुम इस व्रत को करो तो तुम्हारा पति तुमको प्राप्त हो जायेगा। श्री कृष्ण ने कहा हे द्रौपदी इन्द्राणी ने उसके व्रत के पूर्ण होने पर अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार एक चुल्लू जल लेकर वीरावती के पति की मरण भूमि पर छिड़कर उसके पति को जीवित कर दिया। वो पति-देवता के समान हो गया। वीरावती अपने घर पर आकर अपने पति के साथ क्रीड़ा करने लगी। भगवान् लीला पुरुषोत्तम श्री कृष्ण ने कहा हे द्रौपदी इसी व्रत को तुम भी करो। सूत जी शौनक आदि मुनियों से कहते हैं, कि इस प्रकार श्रीकृष्ण चन्द्र भगवान के वचनों को सुनकर द्रौपदी ने करक चतुर्थी व्रत को किया। इसी व्रत के प्रभाव से कौरवों को संग्राम में पराजित करके उसके पति पाण्डव सब दुःखों को मिटाने वाली अतुल राज्य संपत्ति पा गये। और जो स्त्रियां इस व्रत को संध्या काल में करेंगी और रात्रि को चन्द्र अर्ध्य देकर भोजन करेगी। उन स्त्रियों को पुत्र, धन, धान्य, सौभाग्य और अतुल यश की प्राप्ति होगी।

दुग्ध या जल से भरे हुए रत्न समेत करवे मैं दान करती हूं, इससे मेरा पति चिरंजीवी हो, इस प्रकार कहकर योग्य ब्राह्मण के लिये

देना चाहिये। और इस व्रत में सुहागिन स्त्रियों के लिये ही देना चाहिये, सुहागिन स्त्रियों से ही लेना चाहिये।

इस प्रकार जो स्त्री अपने सौभाग्य सुख-सम्पत्ति के लिये इस व्रत को करती हैं उसका सौभाग्य पुत्र-पौत्र आदि तथा निश्चल सम्पत्ति मिलती है।

।। यह कथा वामन पुराण से ली गई है ।।

।। अहोई अष्टमी व्रत ।।

यह व्रत कार्तिक मास कृष्ण पक्ष की अष्टमी को होता है। जिस वार को अहोई होगी लगभग उसी वार को दीपावली होगी। यह व्रत पुत्रवती स्त्रियाँ करती हैं। जिसके पुत्र सन्तान है, वह चांदी की अहोई बनवावे, तथा 2 मनका चांदी का बनवावे। स्त्रियाँ दिन में अहोई मांडकर पूजा करती हैं। एक पट्टे पर जल का लोटा रखकर उस पर सातिया (स्वास्तिक) बनाकर रोली चावल से पूजा करें। एक कटोरा में वायना के लिये सीरा रखें। चांदी की बनी अहोई, तथा 2 मनका चांदी का (दाना) की पूजा करें। पीछे कहानी सुनें। कहानी सुनकर मनका गले में पहल ले। सायंकाल तारा उदय होने पर अर्ध्य देकर भोजन करें। जब-जब पुत्र होवे, उस स्याऊ (अहोई) में दो-दो मनका डालती जावे। वायना सासुजी को दें फिर दीपावली के बाद किसी दिन गले से उतारकर जल का छींटा देकर गुड़ का भोग लगा देवे। सायंकाल चन्द्रमा को अर्ध्य देकर भोजन करें। पुत्र का जन्म या विवाह हुआ हो तो उजमन करें।

॥ गोवत्स द्वादशी ॥

कार्तिक कृष्ण पक्ष की द्वादशी को सायंकाल में गाय एवं बछड़े का पूजन करना चाहिये। पूजन करके प्रार्थना करें।

सर्व देव मयी देवी सर्व देवैः अलङ्कृते।
मातर्ममाभिलषितं सफलं कुरु नन्दिनी।।

हे गो माता आप सब देवों के द्वारा पूजित हो सब देव आपके शरीर में निवास करते हैं, माँ मेरे मनोरथ सफल करिये। उस दिन गाय का दूध दही घृत आदि का भोजन में उपयोग नहीं करना चाहिये।

॥ इति ॥

॥ धन्वन्तरी जयन्ती ॥

यह जयन्ती कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को सायंकाल में मनाई जाती है। संत दुर्वाशा मुनि के श्राप से देवता श्री (लक्ष्मी) हीन हो गये। सब देवताओं ने ब्रह्माजी को आगे कर भगवान विष्णु की शरण गही। भगवान् के पूछे जाने पर देवताओं ने कहा प्रभु-हम सब आपकी कृपा का आश्रय चाहते हैं। प्रभु ने कहा—निकम्मे को कभी कुछ प्राप्त नहीं हो सकता। उद्योग एवं उत्साह ही मेरा स्वरूप है। क्यों बैठे हो—जाओ दैत्यों से संधि करके मन्दराचल पर्वत से समुद्र को मथ डालो उससे अमृत निकलेगा। पीकर सब फिर सबल हो जाओगे। देवताओं ने कहा—प्रभु-समुद्र मंथनें पर अमृत तो मक्खन की तरह

फैल जायेगा। भगवान् ने कहा—चिन्ता मत करो, अमृत कलश लेकर मैं स्वयं धन्वन्तरी रूप से निकलूंगा। मेरे नाम मात्र से रोग नष्ट होंगे। स्मरण मात्रार्तिनाशनः मोहिनी रूप धर कर सब तुमको पिला दूंगा। इस कलश का बड़ा महत्व होगा। इसके पूजन के बिना सिद्धि नहीं होगी। इसकी पूजा करने से सब मनोरथ सफल होंगे।

देवदानवसंवादे मथ्यमानेमहोदधौ।
उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतोविष्णुना स्वयम्।।
त्वत्प्रसादादिमं यज्ञं कर्तुमीहे जलोद्भव।
सान्निध्यं कुरुमे देव प्रसन्नो भव सर्वदा।।

तेरी प्रसन्ता के लिये पूजन कर राहा हूं। आप प्रसन्न होइये। सायंकाल में धंवन्तरी जी का पूजन करना चाहिये। एवं उत्सव मनाना चाहिये।

॥ यमदीप धनतेरस ॥

कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी को सायंकाल में घृत का दीपक जलाकर सपरिवार-धान की खीली तथा बताशा रोली चावल आदि से दीपक का पूजन करें। इससे लक्ष्मी प्रसन्न होती है। फिर घर के बाहर आकर गोबर से चौका लगाकर चावल रख कर उसके ऊपर तिल के तेल का दीपक रखकर पूजन करें और श्रद्धाभाव से यमराज की प्रसन्नता के लिये यह दीप अर्पण करें। इससे दुर्मृत्यु का नाश होता है। तथा यमराज एवं पितर गण प्रसन्न होते हैं। उनको प्रकाश दिखाई पड़ता है। इस मन्त्र से प्रार्थना करें।

मन्त्र–

मृत्युना पाशहस्तेन कालेन भार्यया सह।
त्रयोदश्यां दीपदानात् सूर्यजः प्रीयतामिति।।

पाश हाथ में लिये हुए काल रूप यम पत्नी के सहित त्रयोदशी में दीप दान से सूर्य पुत्र यमराज प्रसन्न हों। इस समय विप्र को छाता पादुका देने का फल है।

नोट–इस दिन लोग बाजार से स्वर्ण आभूषण या बर्तन आदि जो जिसकी समर्थ्यता है, उसी आधार पर कुछ न कुछ खरीद कर घर पर लेकर प्रति वर्ष आते हैं।

।। नरक चतुर्दशी ।।

कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को नरक चतुर्दशी कहते हैं। सनत्कुमार संहिता के आधार पर इसे पूर्व विद्धा लेनी चाहिये। इस दिन अरुणोदय से पहले प्रत्यूष काल में स्नान करने से मनुष्य को यम लोक के दर्शन नहीं करना पड़ता। यद्यपि कार्तिक मास में तेल नहीं लगाना चाहिये, फिर भी इस तिथि विशेष को तेल लगाकर स्नान करना चाहिये। जो व्यक्ति इस दिन सूर्योदय के बाद स्नान करता है, उसके शुभ कर्मों का नाश हो जाता है। स्नान के पूर्व शरीर पर अपामार्ग का भी प्रोक्षण करना चाहिये। अपामार्ग को इस मन्त्र से मस्तक पर घुमाना चाहिये।

मन्त्र– सितालोष्ठसमायुक्तं सकण्टकदलान्वितम्।
हर पापमपामार्ग भ्राम्यमाणः पुनः पुनः।।

स्नान करने के बाद शुद्ध वस्त्र धारण कर तिलक लगाकर दक्षिणाभिमुख होकर निम्न मन्त्रों से तीन–तीन जलांजलि देनी चाहिये। यह यम तर्पण कहलाता है। इससे वर्ष भर के पाप नष्ट हो जाते हैं। ''ॐ यमाम नमः', ॐ धर्म राजाय नमः, ॐ मृत्यवे नमः, ॐ सर्वभूतक्षयाय नमः, ॐ औदुम्बराय नमः, ॐ दध्नाय नमः, ॐ नीलाय नमः, ॐ परमेष्ठिने नमः, ॐ वृकोदराय नमः, ॐ चित्राय नमः, ॐ चित्रगुप्ताय नमः।

इस दिन देवताओं का पूजन कर दीप दान करना चाहिये। मंदिरों में गुप्त ग्रहों में, रसोई घर में, स्नान घर, देव वृक्षों के नीचे, सभा भवन, नदियों के किनारे, चारदीवारी, बगीचे, बावली, गली–कूचे, गोशाला आदि प्रत्येक स्थान पर दीपक जलाना चाहिये। यमराज के उद्देश्य से त्रयोदशी से अमावस्या तक दीप जलाने चाहिये।

कथा–वामन अवतार में श्री हरि ने संपूर्ण पृथ्वी नाप ली। बलि के दान और भक्ति से प्रसन्न होकर वामन भगवान् ने उनसे वर मांगने को कहा, उस समय बलि ने प्रार्थना की कि कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी सहित इन तीन दिनों में मेरे राज्य का जो भी व्यक्ति यमराज के उद्देश्य से दीप दान करे उसे यम की यातना न हो। और इन तीन दिनों में दीपावली मनाने वाले का घर लक्ष्मी जी कभी न छोड़ें। भगवान् ने कहा–'एवमस्तु' जो मनुष्य इन तीन दिनों में दीपोत्सव करेगा, उसे छोड़कर मेरी प्रिया लक्ष्मी कहीं नहीं जायेगी।

॥ हनुमान जन्म-महोत्सव ॥

कार्तिक कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को सायंकाल मेष लग्न में शिव जी ने अपने इष्टदेव की सेवा करने के लिये अवतार ग्रहण किया।

ऊर्जे कृष्ण चतुर्दश्यां भौमेस्वात्यां कपीश्वरः।
मेष लग्नेऽञ्जनागर्भात् प्रादुर्भूतः स्वयं शिवः॥

कार्तिक कृष्ण पक्ष चतुर्दशी भौमवार की अर्धरात्रि में अञ्जना देवी के उदर से हनुमान जी का जन्म हुआ। अतः हनुमत भक्तों को चाहिये कि वे प्रातः काल नित्य क्रिया से निवृत्त होकर षोडशोपचार से हनुमान जी का पूजन करें। गन्धपूर्ण तेल में सिन्दूर मिलाकर उससे मूर्ति पर चर्चित करें। सुन्दर पुष्पहार पहनावें तथा नैवेद्य में घृतपूर्ण चूरमा या घी में सेके हुए शर्करा मिले हुए आटे का मोदक एवं केला, अमरूद आदि अर्पण कर 'सुन्दरकाण्ड' हनुमान चालीसा का पाठ करें। रात्रि के समय घृत पूर्ण दीपकों की दीपावली का प्रदर्शन कराये। यद्यपि अधिकांश उपासक इसी दिन हनुमान जयन्ती मनाते हैं। और व्रत करते हैं परन्तु शास्त्रानुसार में चैत्र शुक्ल पूर्णिमा को हनुमज्जन्म का उल्लेख है। कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी को हुनमान जयन्ती मनाने का यह कारण है कि लङ्का विजय के पश्चात् श्री राम अयोध्या आये। पीछे श्री रामचन्द्र और माता सीता जी ने वानरादि को विदा करते समय यथा योग्य पारितोषित दिया था।

उस समय इसी दिन (का. कृ 14) को सीता जी ने हनुमान जी को अपने गले की माला पहनायी, जिसमें बड़े-बड़े बहुमूल्य

मोती और अनेक रत्न थे, परन्तु उसमें राम नाम न पाने से हनुमान जी उससे संतुष्ट न हुए। तब भगवती जानकी ने अपने ललाट पर लगा हुआ सौभाग्य सिन्दूर प्रदान किया। और कहा-'इससे बढ़कर मेरे पास अधिक महत्व की कोई वस्तु नहीं है। अतएव तुम इसे हर्ष के साथ धारण करो और सदैव अजर-अमर रहो। यही कारण है कि कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी को हनुमज्जन्म-महोत्सव मनाया जाता है और तेल सिन्दूर चढ़ाया जाता है।

॥ दीपावली महोत्सव ॥

कार्तिक कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को यदि अमावस्या आ जावे तो चतुर्दशी को, न आवे तो अमावस्या को दीपावली महोत्सव मनाना चाहिये। वामन भगवान ने आज के दिन सब देवों एवं लक्ष्मी को बलि राजा के कारागार से मुक्त किया था। अतः सूर्यास्त के समय अमावास्या में प्रदोष के समय देवताओं इन्द्र कुबेर एवं लक्ष्मी पूजन करना चाहिये। तथा तीन रात्रि तक कमल शय्या बनाकर लक्ष्मी जी को शयन कराना चाहिये। इससे लक्ष्मी स्थिर हो जाती है।

सनत्कुमार संहिता में लिखा है-

बलिकारागृहाद्देवा लक्ष्मीश्चापि विमोचिता।
लक्ष्म्यासार्धं ततो देवा नीताः क्षारोदधौपुनः॥
तत्र सम्पूजये लक्ष्मीं देवांश्चापि प्रपूजयेत्।
तदह्नि प्रद्यशय्यां यः पद्मा सौख्यं विवृद्धये।
कुर्यात्तस्य गृहं मुक्त्वा तत्पद्मा क्वापिनं ब्रजेत्॥

आज के दिन दिन दिन भर व्रत करके सायं दीपावली पूजन करने से भोजन करने से लक्ष्मी जी की बड़ी कृपा होती है। जो व्यक्ति आलस्य या करने से लक्ष्मी जी की बड़ी कृपा होती है। जो व्यक्ति आलस्य या प्रमाद बस दीपावली महोत्सव नहीं मनाता वह मनुष्य जन्मजमान्तर तक दरिद्री होता है। इसी दिन गणेश, वशनापूजन, महाकाली (दावात्) पूजन, लक्ष्मी पूजन, महासरस्वती (बही खाता) पूजन एवं दशदिक्पाल, कुबेर आदि का पूजन करते हैं। महा काली पूजन से रोग की निवृत्ति जीवन रक्षा होती है। महालक्ष्मी पूजन से सुख सम्पत्ति शान्ति की प्राप्ति होती है। तथा सरस्वती पूजन से बुद्धि का योग प्रत्येक में ठीक-ठीक होता है। समय-समय पर बुद्धि से सब कार्य सफल होते हैं। दीपावली उत्सव से पहले घर की कूड़ा आदि निकाल दिया जाता है, घर को स्वच्छ बनाया जाता है ऐसा करने से मन में नूतन उत्साह जागृत होता है। पूजन के पश्चात् बड़े-बड़े थाल में 21 या 51 दीपक तेल के तथा एक बड़ा दीपक थाल के बीच में घी का रखें उसे प्रज्जवलित करके धान की खील बताशा से पूजन करें। एवं लक्ष्मी जी की आरती उतारे। घर में सब जगह गोशाला भंडार गृह चौका छत पर तथा गृह द्वार पर जलते हुए दीपक सजा कर रखें। आज के दिन दीपक प्रकाश से जीवन में उत्साह तथा उन्नति के मार्ग प्रकाशमय दिखाई देते हैं।

॥ बलि पूजा-गोवर्धन अन्नकूट ॥

कार्तिक मास की प्रतिपदा को बलि राजा की पूजा करनी चाहिये।

जो मनुष्य इस दिन बलि की पूजा करता है, वह वर्ष भर सुखपूर्वक रहता है। शालग्राम की शिला में सभी देवी देवताओं का पूजन हो सकता है।

॥ गोवर्धन पूजन ॥

इस दिन चौकी में मनुष्य के आकार का गिरिराज बनाकर पूजन करना चाहिये। रात्रि में गौ पूजन एवं बछड़े का पूजन तथा गायों को गुड़ मिठाई खिलाना चाहिये। ऐसा करने से गिरिराज भक्ति प्रदान करते हैं। गिरिराज पूजन गोपों से कराकर भगवान् कृष्ण ने एक नया वास्तविक दर्शन कराया। जब गोपों के द्वारा कन्हैया ने गोवर्धन पूजन कराया तब इन्द्र क्रोधित होकर मेघों द्वारा वज्र के द्वारा व्रत को नष्ट करना चाहा तब तो गोपाल ने बायें हाथ की सबसे छोटी अंगुली पर धारण कर सबकी रक्षा की। इन्द्र ने हार मानकर क्षमा मांगी। फिर भी श्रीकृष्ण की सरलता एवं निरभिमानता देखिये। इन्द्र से बोले—आपकी पूजा का परित्याग कर गोवर्धन पूजन किया। आपने जो दण्ड देना चाहा वह उचित था। परन्तु मैं क्या करूं। मेरी शरण में सब गोप आ गये। मेरी लाचारी मैं आपका छोटा भाई हूं। यदि आप प्रसन्न हैं, तो यह उत्सव गोवर्धन पूजा के लिये गोपों को दे दीजिये। (यदि प्रसन्नों देवेश उत्सवोऽयं प्रदीयताम्)। भगवान श्री कृष्ण का दिग्दर्शन था। यह अहंकार ही पहाड़ है। इसे भी ईश्वर समझोगे तो उठा सकते हैं। ईश्वर तो हल्के से भी हल्का है। अपने आप ही उठ जायेगा। यदि ईश्वर समझोगे तो अहंकार रूपी पर्वत आपको दबाकर समाप्त

कर देगा। सर्वत्र ईश भावना रखो। प्रभु का इन्द्र के प्रति वाक्य तो देखिये। तवाज्ञापरिपालक:–मैं छोटा भाई हूं। तेरी आज्ञा का पालन करने वाला हूं।

॥ यम द्वितीया भैया दूज ॥

कार्तिक मास शुक्ल पक्ष की द्वितीया को यमराज एवं चित्रगुप्त का दावात् कलम का पूजन करना चाहिये। यह कायस्थ जाति का बहुत बड़ा पर्व है।

मसि भाजन संयुक्तं ध्याये च महाबलम्।
लेखिनी पट्टिका हस्तं चित्रगुप्तं नमाम्यहम्॥

इस दिन बहिन के यहां ही भोजन ग्रहण करना चाहिये। यदि सगी बहन न तो फुआ या चाचा, ताऊ, मामा की पुत्री के यहां भोजन करें। घर में भोजन नहीं करना चाहिये। इस दिन भाई–बहन दोनों यमुना जी में स्नान करें। यह विशेष विधान है। बहिन के यहां भोजन करके साड़ी रुपया आदि से बहिन का यथाशक्ति सत्कार करें। और बहिन को प्रसन्न करें। बहिन भाई की दीर्घायु की कामना से यम का पूजन करें। तथा अष्ट, चिरंजीवीयों का पूजन करें। अष्ट चिरंजीवियों से प्रार्थना करे हे प्रभु आप मरे भाई की दीर्घायु करना।

॥ भैयादूज ॥

(यम यातना काटनें की कथा–यमुना चरित)–भगवान् सूर्य समस्त प्राणियों के कल्याण के लिये निरन्तर भ्रमण करते हैं। अपनी किरणों

द्वारा जल खींचकर बरसाते हैं। धूप से संसार को जीवनदान एवं पवित्र करते हैं। इसलिये सूर्य नारायण को संसार के चराचर प्राणियों की आत्मा कहते हैं। उनका पुत्र यम नरक में दारुण यातना देने वाला तथा पुत्री यमुना भगवान् श्री कृष्ण की पटरानी वात्सल्यमयी करुणा मयी है। प्राणियों का कर्म बन्धन काटकर यम यातना से कैसे छुड़ाऊं। यही दिन रात सोचती है, बहुत बार भाई यम को आमन्त्रित किया। द्वारका बुलाया। पर वह न आये। एक बार यमुना ने बड़ा आग्रह कर बुलाया। दीपावली के 2 दिन बाद द्वितीया को महिष पर सवार यमराज द्वारिका पधारे। काल से भी युद्ध करने वाले द्वारिकावासीं यमराज के भयंकर रूप को देखकर यदुवंशियों में भगदड़ मच गई।

सब समाचार जान यमुना जी को बड़ी लज्जा आई। बड़े भाई का स्वागत सत्कार किया। विविध प्रकार के मिष्ठान्न व्यंजन खिलायें।

यम ने कहा–छोटी बहन के यहां नहीं खाना चाहिये। मैंने खा लिया है। इसके बदले में वरदान मांग ले। यमुना जी ने कहा–आज के दिन कोई बहिन भाई का सत्कार करे एवं भाई बहन का सम्मान करें उसे यमयातना न भोगनी पड़े। यमराज ने कहा–तथास्तु। ऐसा ही होगा। करुणामयी श्री यमुना जी ने यम यातना बन्धन काटने के लिये आज के दिन भाई यम को प्रसन्न किया था।

भाई बहिन का निर्मल प्रेम (सुभद्रा चरित)

द्वारिका पुरी में मैया देवकी के मन में विचार आया। कन्यादान

बिना दान व्यर्थ है। एक कन्या तो होनी ही चाहिये। भगवान श्रीकृष्ण ने अपनी मां की इच्छा पूर्ण की। एक कन्या का जन्म हुआ। होते ही रोना शुरू किया। 3 दिन 3 रात तक रोती ही रही स्तनपान भी नहीं किया। मैया देवकी ने श्याम सुन्दर को बुलाया और कहा। वत्स यह कौन से पाप का फल है। स्तनपान भी नहीं करती। निरन्तर रोती है। श्री कृष्ण ने कहा माँ मेरे नाम का कीर्तन सुनाओ। सुनते ही चुप हो गई। स्तनपान किया। बड़ी हुई, दोनों भाइयों कृष्ण बलराम से अत्यन्त स्नेह करती थी। दस वर्ष की हुई तब तक नि:संकोच गोदी मे बैठती थी। पर दिन में उपद्रव करती थी। तोड़-फोड़ करती थी। एक दिन मैया ने कहा। कृष्ण यह पढ़ती लिखती नहीं है। सीना आदि कुछ काम भी नहीं सीखती। श्री कृष्ण ने कहा सुभद्रा यह मेरा अंगरखा एवं तेरी भाभी की चोली देखकर सीकर दो। देखकर बहुत सुन्दर ठीक सी दिया। एक दिन कहा सुभद्रा मेरे एक हजार नाम लिखो। इसी में सब अक्षर मात्रा अपने आप सीख गई। अच्छी तरह ग्रन्थ पढ़ने लगी। श्री कृष्ण हंसे मां इसे सब कुछ पढ़ना आता है। तुम देख रही हो। मैया ने कहा—मुझे क्या मालूम पेट में ही सब सीखकर आई है। मैया ने कहा तुम्हारे राज्य सभा में जाकर उपद्रव करती है—श्याम सुन्दर ने कहा सुभद्रा यहां आओ। देखो। अपनी और बलराम जी की अपनी ही जैसी मूर्ति बनाई तथा उस पर रंग किया फिर पूजन करना सिखाया। मेरे जाने पर रोज मूर्ति बनाओं और पूजा करो। मेरा जप करती रहो। मेरे आने पर दोनों समुद्र में विसर्जन करो। बाद में भाइयों से प्रेम करो। अब तो इसी में प्रतिदिन

तन्मयता से मन लगाने लगी। श्री कृष्ण ने स्वयं रथ चलाना तथा शस्त्र संचालन सिखाया। एक दिन माँ ने उलाहना दिया। वत्स जब विवाह की बात करती हूं दिन भर रोती है। क्या जीवन भर भाइयों की गोदी में ही बैठती रहेगी। अब तो इसे शील-संकोच होना चाहिये। भगवान ने सुभद्रा को बुलाया और कहा मैं अपने भक्तों को भक्त नहीं मानता जो मेरे भक्तों के भक्त हैं उनको प्यार करता हूं। सुभद्रा ने पूछा—भैया तुम्हारा भक्त कौन है। श्री कृष्ण ने कहा अर्जुन। सुनकर सुभद्रा ने निश्चय किया। भाइयों का प्रेम पाने के लिये अर्जुन से विवाह करना है। बलराम जी अपने शिष्य दुर्योधन से विवाह कराना चाहते थे। एक बार त्रिदण्डी बनकर अर्जुन द्वारका आये। अर्जुन ने कहा मैं सुभद्रा के बिना जीवित नहीं रह सकता। श्री कृष्ण ने कहा कल सब यादव एवं सुभद्रा देवी के मेले में शस्त्र प्रदर्शन करेंगे। मेरे रथ से सारथी को फेंक सुभद्रा का हरण कर लेना। अर्जुन ने सबका शस्त्र प्रदर्शन देखा सुभद्रा का शस्त्र प्रदर्शन देखकर निहाल हो गया। इस शस्त्र प्रदर्शन को देखकर अपने आपको भी बौना समझने लगा। सुभद्रा के रथ में बैठने पर सारथी को रथ से गिरा अपहरण करके चल दिया। सुभद्रा ने कहा। चोरों की तरह ले जाना उचित नहीं। शस्त्र बल का प्रदर्शन करो। इसमें किसी का वध न हो। सुभद्रा को जीवन संगी मिले तथा किसी का जीवन संगी तुम्हारे शस्त्र से बिछुड़ जाय यह उचित नहीं है। अर्जुन मुख में घोड़ों की लगाम तथा हाथों में शस्त्र संचालन में असुविधा का अनुभव कर रहे थे। अर्जुन ने घोषणा की यह गाण्डीवधारी अर्जुन यदुवंशियों

का मानमर्दन कर सुभद्रा हरण कर रहा है। सब यदुवंशी अर्जुन पर टूट पड़े। अब सुभद्रा से रहा न गया। रथ की बागडोर स्वयं सम्हाली अर्जुन सब शस्त्रों को काटते हुए बाहर आ गये। द्वारका पुरी से बलराम जी हल-मूसल लेकर दौड़े। कन्हैया भी पीछे-पीछे दौड़े। बलराम जी ने प्रहार के लिये मूसल उठाया। श्री कृष्ण ने पीछे से पकड़ लिया। भैया पूछो यह कौन है। किसके कहने से अपहरण किया है। अर्जुन ने कहा मैं तुम्हारी बुआ का बेटा अर्जुन हूं। मैंने श्रीकृष्ण के कहने से सब किया है। बलराम जी ने कृष्ण को डांटा। तुम्हारी बचपन वाली आदत उधम करने की नहीं गई। घर में ही आग लगा रहे हो। श्री कृष्ण ने कहा भैया तुम देखते नहीं हो अर्जुन ने अपने जीवनरथ की बागडोर सुभद्रा के चरणों में अर्पित कर दी है। एवं सुभद्रा ने स्वीकार करके रथ का संचालन किया है। इस कायर दुर्योधन को वो कभी स्वीकार नहीं करेगी। समझाकर ले चलो। मां-बाप को कन्यादान की इच्छा पूर्ण करो। ले गये विधिपूर्वक कन्यादान हुआ, श्री कृष्ण ने कहा बहिन भैयादूज को स्वयं बनाकर खिलाओ सुभद्रा ने बड़े प्रेम से बनाया और खिलाया। श्री कृष्ण की रानियों ने कहा—कैसा भोजन बना। चीनी की जगह नमक डाला होगा। नमक की जगह चीनी। खीर में हींग का छोंक लगाया होगा। दोनों भाइयों ने कहा—ऐसा स्वादिष्ट भोजन जीवन में कभी नहीं खाया। आज तृप्त हुए। रानियों ने ज्यों ही चखा परमानन्द का उदय हुआ। श्रीकृष्ण ने कहा भोजन में स्वाद नहीं प्रेम में होता है। देख लो। रानियां लज्जित हुईं। अर्जुन के साथ सभी घर वाले सुभद्रा की

इच्छा जानना चाहते हैं। बड़ी गंभीर एवं सेवा परायण थी सुभद्रा। कभी किसी को सेवा का मौका न दिया। सभी तरसते थे। सुभद्रा कुछ कहे। एक दिन गंधर्व चित्रसेन ने विमान से पान का पीक थूका वह गालव ऋषि के ऊपर पड़ा। जाकर श्रीकृष्ण से निवेदन किया। श्री कृष्ण ने प्रतिज्ञा की कि कल सूर्यास्त से पहले चित्रसेन का वध कर दूंगा। चित्रसेन सब देवताओं एवं पाण्डवों की शरण में गया। पर किसी ने शरण नहीं दी। गंगा जी में डूबकर प्राण देना चाहा। नारद जी आ गये। दुःखी देखकर कहा, अभी सुभद्रा स्नान करने के लिये आने वाली है। उनसे अभय मांगों। सुभद्रा आई गंधर्व ने चरण पकड़कर कहा—त्राहि मां शरणागतम्। सुभद्रा ने अभय वरदान दिया। और पूछा क्या संकट है, गन्धर्व ने कहा श्री कृष्ण से रक्षा करो। सुभद्रा ने आकर पाण्डवों से निवेदन किया, सबने श्री कृष्ण से लड़ने के लिये अस्वीकार कर दिया। हम उनके उपकार के भार से दबे हैं। उनसे युद्ध किस मुंह से करें। सुभद्रा ने कहा मैं शस्त्र उठाती हूं। आज भाई के द्वारा मेरा जीवन सफल हो जायेगा। अर्जुन घबड़ाये प्रिये तुमसे पहले मैं इस संसार को छोड़ना चाहता हूं। परन्तु मेरी लाचारी है महाभारत मैंने श्री कृष्ण के रथ संचालन से जीता है। वैसा सारथी मिले तो मैं तैयार हूं। सुभद्रा ने कहा मैं रथ का संचालन करूंगी। दूसरे दिन युद्ध प्रारंभ हुआ। सुभद्रा का रथ संचालन देखा, सभी चकित थे। सूर्यास्त होने जा रहा था, भगवान श्रीकृष्ण ने नारायणास्त्र उठाया। अर्जुन ने पशुपतास्त्र का संधान किया। संसार त्राहि-त्राहि करने लगा।

प्रलय देख गंधर्व भयभीत होकर गालव ऋषि के चरणों में गिर गया ऋषि ने क्षमा किया, युद्ध रोका। अर्जुन एक बार श्रीकृष्ण का समाचार लेने द्वारका पुरी जाने लगे। आज सुभद्रा परमव्याकुल हो रही थी। अर्जुन से कहा, प्राणनाथ मुझे भी भाई से मिलने साथ ले चलो न। अर्जुन एवं पाण्डव आज बड़े प्रसन्न हुए। अर्जुन सुभद्रा के साथ द्वारका पधारे। सबसे मिले महामाया भगवती सुभद्रा को भाई श्री कृष्ण के परमधाम सिधारने की इच्छा ज्ञात हुई। दूसरे दिन सुभद्रा स्नान एवं श्रृंगार करके श्री कृष्ण एवं अर्जुन के पास आई। आज भाई को पहले प्रणाम किया। अर्जुन के चरणों में माथा टेक कर फबक फबक कर रोती हुई बोली। प्राणनाथ जान अनजान में मेरे से जो भी अपराध हुए हों उन्हें क्षमा कर दीजिये यह मेरा अन्तिम प्रणाम है। सुनकर अर्जुन के प्राण सूख गये। सुभद्रा की विकलता देख कह दिया। क्षमा किया। तथा सुभद्रा ने भाई के चरणों में प्रणाम कर प्राण विसर्जन किया। सुभद्रा में भाई का परलोक गमन देखने की हिम्मत नहीं थी। चरणों में सशरीर समा गई। आज भी भाई बहिन के दिव्य प्रेम की झांकी जगन्नाथ पुरी में दर्शन करके भक्त लोग अपने को धन्य समझते हैं। यह भारत भूमि प्रेम भूमि है। यहां दिव्य प्रेम भाई बहिन का। भाई-भाई का। पति-पत्नी का, हृदय में प्रेम का संचार होकर जीवन में शान्ति सुख की प्राप्ति होती है। सुभद्रा बहिन भाई-बहिन को दिव्य प्रेम का आशीर्वाद प्रदान करने वाली है।

॥ सूर्य षष्ठी ॥ (डाला छठ)

भारत के बिहार प्रानत का सर्वाधिक प्रचलित एवं पावन पर्व है सूर्य षष्ठी। सूर्य षष्ठी मुख्य रूप से भगवान् सूर्यनारायण का व्रत है। इस व्रत में सर्वतोभावेन भगवान् सूर्य की पूजा की जाती है। ब्रह्मवैवर्त पुराण के आधार पर प्रकृति देवी के एक अंश को देवशेना कहते हैं। जो सबसे श्रेष्ठ मातृका मानी मानी जाती हैं। ये समस्त लोकों के बालकों की रक्षिका देवी हैं। प्रकृति का छठा अंश होने के कारण इन देवी का एक नाम 'षष्ठी' भी है।

षष्ठांश प्रकृतेर्याच साच षष्ठी प्रकीर्तिता।
बालकाधिष्ठातृदेवी विष्णुमाया च बालदा।।

विष्णुमाया षष्ठी देवी बालकों की रक्षिका एवं आयुप्रदा है। षष्ठी देवी के पूजन का प्रचार पृथ्वी पर कबसे हुआ इस संदर्भ में एक कथा इस पुराण में आयी है। प्रथम मनु पुत्र प्रियव्रत को कोई संतान न थी। एक बार महाराज प्रियव्रत ने कश्यप मुनि से अपना दु:ख व्यक्त किया। कश्यप जी ने राजा को पुत्रेष्टि यज्ञ करने का परामर्श दिया। यज्ञ के फल से मालिनी नाम की महारानी ने यथावसर एक पुत्र को जन्म दिया किन्तु वह शिशु मरा हुआ था। महारानी को मृत प्रसव हुआ इस समाचार से सारे नगर में शोक छा गया। महाराज प्रियव्रत के ऊपर मानो वज्रपात ही हुआ हो। शिशु के मृत शरीर को अपने हृदय से लगा प्रलाप कर रहे थे। किसी में साहस नहीं था कि वह और्ध्वदैहिक क्रिया के लिये राजा से बालक का शव अलग

कर सके। तभी एक आश्चर्य हुआ देखा कि आकाश से एक विमान पृथ्वी पर उतरा है। विमान में एक दिव्याकृति नारी बैठी हुई थी। राजा के द्वारा पूजित होने के उपरान्त देवी ने कहा मैं ब्रह्मा की मानस पुत्री षष्ठी देवी हूं। मैं विश्व के समस्त बालकों की रक्षिका हूं। एवं पुत्रों को आयु प्रदान करती हूं।

इतना कहकर देवी ने शिशु के मृत शरीर का स्पर्श किया जिससे वह बालक जीवित हो उठा। महाराज बहुत प्रसन्न हुए देवी की अनेक प्रकार से राजा ने पूजा कर स्तुति की। देवी ने भी प्रसन्न होकर राजा को कहा तुम ऐसी व्यवस्था करो। जिससे पृथ्वी पर सभी हमारी पूजा करें। इतना कहकर देवी अन्तर्धान हो गई। राजा की आज्ञा से सभी शुक्ल पक्ष की षष्ठी तिथि को प्रतिमास षष्ठी महोत्सव मनाने लगे।

इसी समय से लोग शिशु के जन्म से छठे दिन छठी पूजन बड़े धूमधाम से करते हैं। प्रसूता को प्रथम स्नान भी इसी दिन कराने की परंपरा है। पुराणों में इन्हीं देवी को कात्यायनी देवी कहा है। जिनकी पूजा नवरात्रों में षष्ठी तिथि को होती है,

यथा– षष्ठं कात्यायनीति च।

कार्तिक शुक्ला षष्ठी को उपवास करके सप्तमी को पुनः सूर्य पूजन करे। षष्ठी के दिन स्नान आदि करके पवित्र होकर संकल्प करें।

संकल्प–श्री सूर्य नारायण प्रीत्यर्थं श्री सूर्यषष्ठी व्रतं करिष्ये।

किसी नदी या तालाब में खड़े होकर एक बांस के सूप में या

डलिया में केला, फल, मिष्ठान, ईख, अलोना पदार्थ रखकर पीले वस्त्र से ढक कर, सूर्य पूजन करें। धूप दीप दें। सूप को हाथ में लेकर अर्ध्य दें।

अर्ध्य मन्त्र–

ॐ एहि सूर्य सहस्रांशो तेजो राशि जगत्पये।
अनुकम्पय मांभक्त्या गृहाणार्ध्यं दिवाकर।।

रात्रि में जागरण करें फिर सुबह स्नान आदि से निवृत्त होकर इसी प्रकार सूर्य अर्ध्य देकर व्रत का पारण करें।

सर्वप्रथम इस व्रत को च्यवन ऋषि की धर्मपत्नी सुकन्या ने अपने अन्धे पति के आरोग्य लाभ के लिये किया था। इससे च्यवन ऋषि को नेत्र ज्योति प्राप्त हुई। तथा वे युवा हो गये। सूर्य के पुत्र देवों के वैद्य अश्विनी कुमारों ने आकर युवावस्था प्रदान की। इस व्रत को 12 वर्ष करने वाला व्रती जन्म–जन्मान्तर तक सौभाग्यशाली रहता है। काशी में यह व्रत डाला छठ के नाम से प्रसिद्ध है। बड़े उत्साह से एवं श्रद्धा भाव से इस व्रत को करके सूर्य अर्ध्य देते हैं।

।। गोपाष्टमी ।।

कार्तिक शुक्ला अष्टमी को यह दिव्य पर्व मनाया जाता है। गौमाता के शरीर में सब देवता तथा गोबर में लक्ष्मी और गौमूत्र में गंगा जी का निवास है। अतः गौ पूजन से हमारा जीवन परम पवित्र होता है, गौ माता की कृपा से समस्त शुभ फल प्राप्त होते हैं। इस दिन गौ माता की पूजा करके गुड़ चने की दाल एवं मिष्ठान खिलाना

चाहिये। तथा मेंहदी या रंग से शरीर को जगह-जगह रंग कर सजाकर उनकी चरण धूलि मस्तक पर धारण कर सच्चे हृदय से प्रार्थना करनी चाहिये।

गावो में अग्रतः सन्तु गावो में सन्तु पृष्ठतः।
गावो में सर्वतः सन्तु गवां मध्ये वसाभ्यहम्।।

गौ माता दर्शन देने के लिये मेरे सन्मुख हों, वह मेरी रक्षा मेरे पीछे हो, मेरे चारों ओर गौ माता हो। गौ माता साक्षात् वात्सल्य स्नेह की दिव्य मूर्ति है। हमको दूध पिलाती है, तथा गायों के बीच वास करता हूं। घर में गाय अवश्य रखनी चाहिये। मानव जीवन का धर्म है। यदि घर में गाय न हो तो वहां जाकर जहां गौ हो निश्चित रूप से पूजन करना चाहिये। गौशालाओं में यथाशक्ति घास चारा दान करें और चरवाहों को भी संतुष्ट करें। जो गौ पूजन करता है उसे इस संसार में सभी सुख प्राप्त होते हैं।

गोपाष्टमी कथा–तथा गोपालक श्रीकृष्ण

एक दिन कन्हैया बाबा नन्द एवं मैया यशोदा के सामने मचल गये। अब मैं बड़ा हो गया गैया चराऊँगा। माँ ने समझाया–लाला बड़ी-बड़ी सींग वारी गैया मरखनी होंय। लाला तू अभी छोटो है, गर्ग जी से मुहूर्त निकलवाय के गौपूजन के पश्चात् तोय गाय चराइबे जान देंगे। प्रभु प्रेरणा से गर्ग ऋषि सामने से आते हुए दिखाई दिये। नन्द ाबा ने कहा–महाराज 2-4 वर्ष बाद कोई अच्छा मुहूर्त निकाल देना। पंचांग देख लीजिये। गर्ग जी नन्द बाबा की बात भूल गये।

पंचांग देखकर बोले–आज कार्तिक शुक्ला अष्टमी का मुहूर्त सर्वश्रेष्ठ है। आज गौ पूजन से गौ माता की कृपा से वृज के सब संकट दूर होंगे। बड़े हर्ष से गौ पूजन किया। लाला को तिलक कियो। आज कन्हैया गोचारण के लिये गोपाल बनकर चले। मैया ने कहा लाला पैरों में पगरसी (जूती) पहन ले वन में कांटे कंकड़ बहुत होते हैं। लाला ने बहुत सुन्दर जवाब दिया। माँ मेरौ देवता गाय जिनकी सेवा के लिये जा रहा हूं, वो सब नंगे पैर जा रहीं हैं, तब मैं कैसे पहन सकता हूं।

माँ सेवा धर्म बड़ा कठिन है, प्रभु ने पादुकाओं को पहनना अस्वीकार कर दिया। गौ माता की सेवा में प्राण न्यौछावर करने के लिये सदा प्रसन्न रहते थे। इन्द्र कोप करके आया। लाला ने गोवर्धन धारण कर सभी की रक्षा की। इन्द्र ने लाला श्याम सुन्दर के प्रभाव को समझा गौमाता को आगे कर क्षमा मांगने आया। गौ माता को देख कृष्ण का कोप शान्त हो गया। कामधेनु सुरभि माता ने स्तनों के दुग्ध से श्रीकृष्ण का अभिषेक किया। और उन्हें गोविन्द की उपाधि दी। माँ के अश्रु देख। गौमाता से बोले–माँ इतनी अधीर क्यों हो–गौ माता ने कहा लाला अब गौ रक्षा का भार तुम्हीं सम्हालो। श्री कृष्ण ने कहा–माँ क्यों-गौमाता ने कहा-लाला अब द्वापर के पश्चात् कलियुग आने वाला है। हिरण्य कश्यप ने सिंहासन पर बैठते ही कहा था–सारे गोप और गौशालाओं को नष्ट कर दो। कोई राम नाम न लेने पावें, यज्ञ, पूजा, पाठ सब बन्द कर दो। प्रभो हिरण्यकश्यप के वंशज-गौ वधशाला, (कसाई खाना) खोलेंगे।

पृथ्वी पाप के भार से दबती है। तब पृथ्वी गौ का रूप धारण कर दया की पात्र बन कर देवों के साथ अवतार लेने के लिये प्रार्थना करती है, तब आपका अवतार होता है, त्रेता में एक पृथ्वी पुत्री सीता का अपहरण हुआ था। कलियुग में घर-घर रावण हो जायेंगे। तथा कंस के ससुर जरासंघ के मानस पुत्र नगर में गाय को रहने ही नहीं देंगे। कुत्ते के लिये कोई रोक नहीं होगी, कुत्ते को प्रत्येक घर में सम्मान दिया जायेगा। आपको गोविन्द (गांविन्दति) गौ रक्षक की उपाधि प्रदान की है। आप कृपा करके समय-समय पर किसी को महान् पुरुष बनाकर उनके हृदय में प्रेरणा करके गौ रक्षा कराइयेगा। यही आपसे मेरी विनती है। इस दिन प्रत्येक मानव समाज का धर्म बनता है कि गौ पूजन कर गोपालन एवं गौ रक्षा का संकल्प लें।

प्रार्थना—नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च। नमो ब्रह्म सुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः। गवांअङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दशं। यस्मात्त्स्माच्छिवं से स्यादिह लोके परत्र च।।

अक्षय नवमी - आँवला नवमी - (कूष्माण्डा नवमी)

कार्तिक शुक्ल पक्ष की नवमी को कूष्माण्ड नवमी कहते हैं। इस दिन भगवान् विष्णु ने कूष्माण्ड नाम के राक्षस का वध किया था। इस दिन कूष्माण्ड (कुम्हड़ा) में सोना पंचरत्न या द्रव्य रखकर उसकी पूजा करनी चाहिये।

संकल्प इस प्रकार करें—मम सकल पापक्षय पूर्वक सुख सौभाग्य आदीनां उत्तरोत्तर वृद्धये कूष्माण्ड दानं करिष्ये।

प्रार्थना मन्त्र—

कुष्माण्डं बहुबीजाढ्यं ब्राह्मणा निर्मितं पुरा।
दास्यामि विष्णवेतुभ्यं पितृणांतारणय च।।

इस प्रकार पूजन आदि कर ब्राह्मण को दान दे दें।

॥ आँवला नवमी ॥

इसी नवमी को आँवला के वृक्ष के जड़ के पास बैठकर "धात्र्यै नमः" कहकर आह्वान करें। जल से पाद्य से अर्ध्य से आचमन आदि के निमित्त वृक्ष के मूल में जल चढ़ायें। फिर दूध की धारा दें। दूध के पश्चात् पुनः जल चढ़ायें। फिर मन्त्र उच्चारण पूर्वक सूत्र (धागा) लपेटे।

मन्त्र—

दामोदर निवासायै धात्र्यै देव्यै नमोनमः।
सूत्राणानेन बध्नामि धात्रि देवि नमोस्तुते।।

चन्दन, पुष्प, धूप, नैवेद्य आदि से पूजन करके आरती एवं परिक्रमा करें। धात्री मूल जल को नेत्रों में लगावे। और प्रणाम करें। आज के दिन भोजन में आंवला अवश्य होना चाहिये। तथा आंवले के वृक्ष के नीचे ब्राह्मणों को भोजन कराके स्वयं प्रसाद ग्रहण करें।

॥ अक्षय नवमी ॥

ब्रह्माजी ने उत्कृष्ट तप किया। भगवान् ने प्रसन्न होकर दर्शन दिये दर्शनानन्द से प्रेमाश्रु टपके, इसी से आंवले की उत्पत्ति हुई।

पुराणों में निर्देश दिया है, यह परम पवित्र आमलकी फल उदर (पेट) में हो तो–यमदूत स्पर्श नहीं करते। मृत्यु के पश्चात् तुलसी या आंवला, गंगा जल से मनुष्य भगवद्धाम का अधिकारी होता है। आंवले के दर्शन पूजन भक्षण से प्रभु प्रेम की प्राप्ति होती है। भोजन के पश्चात् आंवले के चूर्ण भक्षण से मुखशुद्धि होकर मुख की झूठन दूर होती है।

धर्म शास्त्र का विधान है आयुर्वेद की दृष्टि से त्रिदोष नाशक होने से सभी रोग नष्ट होते हैं। आंवले के चूर्ण का सेवन करने वाले को हृदय रोग, कैंसर, नेत्र रोग, पागलपन, ब्लडप्रेशर नहीं हो सकता। इस दिन जप, तप, पूजन करने वाले को अक्षय पुण्य की प्राप्ति होती है। इसलिये यह अक्षय नवमी भी कहलाती है।

नोट–इसी दिन मथुरा वृन्दावन में जुगल जोड़ी की परिक्रमा भी होती है।

॥ देव प्रबोधनी एकादशी ॥ (देव उठनी एकादशी)

कार्तिक शुक्ल पक्ष की एकादशी को भगवान नारायण शयन से उठते हैं। इस दिन भगवान को सायंकाल के समय शंख घंटा घड़ियाल के द्वारा जगाना चाहिये।

प्रार्थना करनी चाहिये–

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द उत्तिष्ठ गरुडध्वज।
उत्तिष्ठ कमला कान्त त्रैलोक्यं मंगलं कुरु।।

प्रभो उठिये और त्रिलोकी का मंगल करिये। तथा उठाकर भगवान

की पूजा तुलसी पुष्प आदि से करें। तथा कथा श्रवण करें। शास्त्रों में कहा है, भगवत् कथा से सौ कुलों का उद्धार होता है।

(कुलानां तारयेत् शतम्)

सुमेरु के समान भी पाप इसके व्रत के प्रभाव से नष्ट हो जाते हैं। देवोत्थापिपी एकादशी को रात्रि जागरण करने पर अश्वमेघ यज्ञ के फल की प्राप्ति होती है।

॥ तुलसी विवाह ॥

एक मत से–कार्तिक शुक्ला नवमी से एकादशी तक तुलसी विवाह मनाते हैं। एक मत से कार्तिक शुक्ला एकादशी से पूर्णिमा तक तुलसी जी का विवाह मनाते हैं।

सर्वमान्य देवोत्थापिनी एकादशी को ही तुलसी जी का विवाह शालग्राम भगवान् से करना चाहिये।

अतः कार्तिक शुक्ल पक्ष की एकादशी को तुलसी जी का विवाह शालग्राम शिला से कराना चाहिये। 2–3 महीने पहले तुलसी वृक्ष को गमले में लगानी चाहिये। तथा प्रतिदिन जल से सींच गंध, पुष्प से पूजन करना चाहिये। फिर का. शु. ए. से का. शु. पूर्णिमा तक किसी दिन भी जैसे अपनी कन्या का विवाह करते हैं वैसे ही गमले को गेरु से पोतकर सजाकर तुलसी जी को साड़ी पहनाकर मेंहदी रोली अर्पण करें। तथा सायंकाल में ईख से मण्डल तैयार करें। मन प्रसन्न कर उत्साह पूर्वक भगवान नारायण से प्रार्थना करें।

आगच्छ भगवान्देव अर्चयिष्यामि केशव।
तुभ्यं ददामि तुलसीं सर्वकाम प्रदोभव।।

हे भगवान् पधारिये मैं आपकी पूजा करूंगा तथा आपको तुलसी अर्पण करूंगा। आप मेरी सब कामना पूर्ण करिये। इसके पश्चात् विद्वान् ब्राह्मण के द्वारा विवाह विधि से पाद्य, अर्ध्य, मधुपर्क आदि से पूजा करें। तथा कन्यादान, शाखोच्चार, मंगलाष्टक करें। अग्नि स्थापन, हवन करके अग्नि की तुलसी जी को आगे कर 1 प्रदशिणा एवं शालग्राम जी को आगे कर 3 प्रदशिणा करें। तथा विवाह विधि पूर्ण करें। एवं भगवान का तिलक कर सदक्षिणा भगवान् को तुलसी जी अर्पित करें। सब विधि पूर्ण करें। इस प्रकार शालग्राम जी के साथ तुलसी जी का विवाह करने वाला भगवान् के धाम में प्रभु का सान्निध्य प्राप्त कर आनन्द प्राप्त करता है।

॥ भीष्मपञ्चक व्रत ॥

कार्तिक मास में एक मास का व्रत व स्नान न कर सके तो वह कार्तिक शुक्ल एकादशी से पूर्णिमा तक सूर्योदय से पूर्व स्नान एवं व्रत करने से कार्तिक मास का पूर्ण फल प्राप्त करता है। पुष्कर तीर्थ में जहां ब्रह्माजी ने यज्ञ किया था। श्रद्धालु आज भी जाकर नियम पूर्वक स्नान करते हैं एवं व्रत करते हैं। नारद जी ने ब्रह्मा जी से पूछा–इसका इतना बड़ा फल क्या है। ब्रह्मा जी ने कहा–वत्स शरशय्या पर सोये हुए भीष्म के पास सबको लेकर श्री कृष्ण गये और कहा–अब ज्ञान का सूर्य अस्त होने चला है। इनसे धर्म के

विषय में पूछ लीजिये। तब सब ऋषि-मुनियों की सन्निधि, दान धर्म मोक्ष धर्म स्त्री धर्म-और यश धर्म इन्हीं पांच दिनों में पूछा एवं भीष्म जी ने उसका वर्णन किया। अतः श्री कृष्ण की साक्षी एवं मोक्ष धर्म वर्णन के कारण ये दिन सर्वश्रेष्ठ है, इसी से इसे भीष्म पंचक कहते हैं।

भीष्म जी को इस मन्त्र से सव्य होकर अर्ध्य देना चाहिये।

मन्त्र–

सत्यव्रताय शुचये गांगेयाय महात्मने।
भीष्मायै तद्ददाम्यर्घ्यं आजन्म ब्रह्म चारिणे।।

जो पुरुष या स्त्री कार्तिक मास का व्रत करें, वो व्रती भीष्म पंचक व्रत को न करें अन्यथा सब फल निष्फल हो जाता है। इस (भीष्म पंचक) व्रत को करके पूर्णिमा को पाप पुरुष का दान करना चाहिये। जो सन्तानहीन है, उसे इस व्रत के प्रभाव से एक वर्ष में अवश्य पुत्र प्राप्ति होती है।

भीष्म पंचक व्रत करने से भगवान् विष्णु प्रसन्न होते हैं।

॥ बैकुण्ठ चतुर्दशी ॥

कार्तिक कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को नरक चतुर्दशी कहते हैं, इसमें यमराज का पूजन होता है। और कार्तिक शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को बैकुण्ठ चतुर्दशी कहते हैं। बैकुण्ठ चतुर्दशी को प्रणवेश (विष्णु) केदारेश (शंकर भगवान) की पूजा करनी चाहिये। इस दिन कमल पुष्प से पूजन किया जाय तो सर्वश्रेष्ठ है।

प्रातः स्नान आदि से निवृत्त हो दिन भर व्रत रखें, तथा रात्रि में भगवान विष्णु की पूजा करें। फिर शंकर जी की पूजा करें। दूसरे दिन स्नान आदि से निवृत्त हो शिवजी का पूजन करके ब्राह्मणों को जिमाकर स्वयं प्रसाद ग्रहण करना चाहिये। ऐसा करने से भगवान विष्णु भक्ति एवं भगवान शिव सुख संपत्ति देते हैं। लोक परलोक दोनों सुधरता है।

कथा—एक समय भगवान विष्णु ने कार्तिक शुक्ला चतुर्दशी को ब्रह्म मुहूर्त में मणिकार्णिका (यह घाट काशी विश्वनाथ में स्थित है) घाट में स्नान कर पार्वती का पूजन करके शिव जी का पूजन किया। तथा एक हजार कमल पुष्पों से अर्चन का संकल्प कर पुष्प चढ़ाने लगे। परीक्षार्थ एक पुष्प शिव लीला से कम हो गया। भगवान ने सोचा मेरे भक्त मुझे कमलनयन कहते हैं। झट से नेत्र चढ़ाने के लिये निकालने को उद्यत हुए, भोलेनाथ ने प्रगट होकर हाथ पकड़ लिया और वरदान मांगने को कहा। विष्णु भगवान ने कहा—प्रभु, राक्षसों से रक्षार्थ आयुध सूर्य की प्रभा वाला सुदर्शन चक्र प्रदान किया। और कहा जो मेरी भक्ति करता है, और विष्णु से द्वेष करता है, वह घोर नरकों में वास करता है। मुझे विष्णु अतिशय प्रिय है। बैकुण्ठ से आकर चतुर्दशी को पूजन किया है, इसलिये इसका नाम बैकुण्ठ चतुर्दशी होगा।

इस दिन जो पहले भगवान् नारायण का पूजन कर भगवान् भूत-भावन चन्द्र मौलीश्वर भोलेनाथ का पूजन करता है, उसे बैकुण्ठ धाम प्राप्त होता है इसमें कोई संशय नहीं है।

॥ काल भैरव अष्टमी ॥

शिव पुराण की रुद्र संहिता के अनुसार सदा शिव ने मार्गशीर्ष (अगहन) मास के कृष्ण पक्ष की अश्टमी को भैरव रूप में अवतार लिया। अतः उन्हें साक्षात् भगवान् शंकर ही मानना चाहिये।

भैरवः पूर्णरुपो हि शङ्करस्य परात्मनः।
मूढास्तं वै न जानन्ति मोहिताश्शिव मायया॥

व्रत विधि—भैरव जी का जन्म मध्यान्ह में हुआ था, इसलिये मध्यान्ह व्यापिनी अष्टमी लेनी चाहिये। इस दिन प्रातः काल उठकर नित्यकर्म से निवृत होकर व्रत का संकल्प करना चाहिये। तथा भैरव जी के मंदिर में जाकर वाहन सहित उनकी पूजा करनी चाहिये।

ॐ भैरवाय नमः

इस नाम मन्त्र से यथालब्धोपचार विधि से पूजन करना चाहिये। भैरव जी का वाहन श्वान है। अतः इस दिन कुत्तों को मीठे पदार्थ खिलाना चाहिये।

इस दिन उपवास करके भगवान काल भैरव के समीप जागरण करने मनुष्य सभी पापों से मुक्त हो जाता है।

भैरव जी का पूजन कर अर्ध्य देना चाहिये।

अर्ध्य मन्त्र—

भैरवार्ध्यं गृहाणेश भीमरुपात्यया नघ।
अनेनार्ध्य प्रदानेन तुष्टो भव शिव प्रिय॥

काल भैरव काशी के कोतवाल हैं (नगर रक्षक हैं) काशी में

भैरव जी के अनेक मंदिर हैं। जैसे काल भैरव, बटुक भैरव, आनन्द भैरव आदि। भैरवाष्टमी यदि मंगल या रविवार को पड़े तो उसका महत्व और बढ़ जाता है।

॥ विवाह पंचमी ॥ (श्री जानकी विवाह)

मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम का विवाह मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष की पंचमी को जनकपुर में सम्पन्न हुआ। सीता स्वयंबर में भगवान् के द्वारा धनुष तोड़ने के पश्चात् जनक जी के द्वारा अयोध्या दूत भेजने पर महाराज दशरथ बारात लेकर जनक पुर आये। उसके बाद विवाह की विधि पंचमी को सम्पन्न हुई। इसलिये आज भी अयोध्या में तथा जनकपुर में विवाह पंचमी का महोत्सव बड़े धूमधाम से प्रत्येक मंदिर में मनाया जाता है। भक्त गण भगवान की बारात निकालते हैं, तथा भगवान् की मूर्तियों द्वारा रात्रि में भगवती जानकी की मूर्ति के साथ में फेरा (भंवरी) कराते हैं। परम्परा के अनुसार विवाह के पूर्व तथा बाद की सारी विधियां, कुवँर मेला, सजनगोठ आदि संपन्न कराते हैं। सीता स्वयंबर की लीला भी कई स्थानों में इस अवसर पर दिखाई जाती है। देश के विभिन्न भागों में राम भक्त अपने-अपने ढंग से आनन्द और उल्लास पूर्वक मनाते हैं।

॥ दत्तात्रेय जयन्ती ॥

भगवान् दत्तात्रेय जी का जन्म मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष पूर्णिमा को प्रदोष काल (सायंकाल) की बेला में हुआ था। महायोगीश्वर दत्तात्रेय

जी भगवान् विष्णु के अवतार हैं, अतः इस दिन बड़े उत्साह के साथ दत्त जयन्ती का उत्सव मनाया जाता है। महर्षि अत्रि के तप करने पर भगवान् ने कहा मैं अपने आपको तुम्हें देता हूं। भगवान विष्णु ही अत्रि मुनि के यहां पधारे अतः इन्हें आत्रेय कहते हैं। दत्त और आत्रेय के संयोग से दत्तात्रेय कहलाये। इनकी माता का नाम सती अनुसूया है। जो सती शिरोमणि है, तथा उनके पातिव्रत्य की गाथा सारा संसार जानता है।

(दत्तो मयाहमिति यद् भगवान् स दत्तः)

॥ गीता जयन्ती ॥

मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष की मोक्षदा एकादशी को भगवान लीला पुरुषोत्तम श्री कृष्ण के श्री मुख से गीता का प्रादुर्भाव हुआ। जो सब शास्त्रों वेद उपनिषदों का सार है। विश्व में आज इसके समान उच्च कोटि का ग्रन्थ नहीं है। सभी धर्म प्रेम इस परम पवित्र ग्रन्थ को पढ़कर इसे पढ़कर मनन कर वास्तविक स्थिति का दर्शन करते हैं।

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्रविस्तरैः।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुख पद्मात् विनिश्रिताः।।

सभी धर्मावलम्बियों को तो इस ग्रन्थ का साक्षात्कार तो करना ही चाहिये। इस दिन भगवान् श्री कृष्ण एवं श्री मद्भगवद् गीता का पूजन एवं आद्योपान्त गीता का पाठ करना चाहिये। एवं मनन, सत्संग, कीर्तन भी साथ में करे, ऐसा करने से गोलोक धाम की प्राप्ति होती है।

।। जय श्री कृष्ण ।।

॥ पौष मास शुक्ला तृतीया ॥

यह व्रत पौष शुक्ला तृतीया को किया जाता है। इस महान् तिथि को जगत् माता गौरी जी का राजोपचार से पूजन किया जाता है। यह प्रधानतया स्त्रियों का पर्व है। गौरी पूजन के प्रभाव से पति-पुत्र चिरंजीवी होते हैं तथा परम धाम भी सुगम हो जाता है।

॥ माघ मास के पर्व एवं उत्सव ॥

माघ स्नान–भारतीय संवत्सर का गयारहवाँ चान्द्र मास और सौर मास का दसवाँ माघ मास कहलाता है। इस महीने में मघा नक्षत्र युक्त पूणिमा होने से इसका नाम माघ पड़ा है। धार्मिक दृष्टि से इस मास का बहुत अधिक महत्व है। इस मास में शीतल जल के भीतर डुबकी लगाने वाले मनुष्य पाप मुक्त हो स्वर्ग लोक को जाते हैं।

'माघे निमग्नाः सलिले सुशीते विमुक्त पापास्त्रिदिवं प्रयान्ति।'

माघ स्नान में प्रयाग में स्नान, दान, भगवान् विष्णु के पूजन और हरि कीर्तन का महत्व वर्णन करते हुए गोस्वामी तुलसीदास जी ने श्री रामचरितमानस में लिखा है–

माघ मकर गत रवि जब होई। तीरथ पतिहिं आव सब कोई।।
देव दनुज किंनर नर श्रेनीं। सादर मज्जहिं सकल त्रिबेनीं।।
पूजहिं माधव पद जलजाता। परसि अखय बटु हरषहिं गाता।।

पद्म पुराण के उत्तर खण्ड में माघ मास के माहात्म्य का वर्णन करते हुए कहा गया है–कि व्रत, दान और तपस्या से भी भगवान्

श्री हरि को उतनी प्रसन्नता नहीं होती, जितनी प्रसन्नता माघ स्नान मात्र से होती है। इसलिये पापों से मुक्ति और भगवान् वासुदेव की प्रीति प्राप्त करने के लिये प्रत्येक मनुष्य को माघ स्नान करना चाहिये। इस मास में पूर्णिमा को जो ब्रह्मवैवर्त पुराण का दान करता है, उसे ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है।

पुराणं ब्रह्मवैवर्तं यो दद्यान्माघमासि च।
पौर्णमास्यां शुभ दिने ब्रह्म लोके महीयते।।

पौष पूर्णिमा से माघ स्नान प्रारम्भ होता है–यह दिवस का प्रथम पवित्र संस्कार है। सूर्योदय से पहिले स्नान करना सुख-स्वास्थ्य, परमार्थ, लोक, परलोक के लिये आनन्द का द्वार है। फिर स्नान के पश्चात् भगवान् की पूजा में बैठना जीवन को धन्य बनाता है। प्रयाग राज में एक मास का कल्पवास होता है। प्रयाग में माघ स्नान का सर्वाधिक महत्व है। वाराह भगवान् जब पृथ्वी को लाये थे। तब हिरण्याक्ष से युद्ध हुआ था। राक्षस को मारकर ब्रह्मावर्त प्रदेश में अपना शरीर हिलाया उनके रोम से गिरने से कुश तथा पसीने से तिल हुआ है। अतः कुशा धारण करने से तर्पण पूजन का पूर्ण फल प्राप्त होता है। तथा तिल सभी को प्रिय है। इस महीने में तिल का दान तथा तिल के लड्डू दान करने चाहिये।

॥ संकष्टी चतुर्थी ॥ (संकट नाशन चौथ)

संकष्टी चौथ का व्रत माघ मास की कृष्णा चतुर्थी को किया जाता है।

सूत जी शौनक आदि ऋषियों से कहते हैं, पाण्डु पुत्र युधिष्ठिर अपने चारों भाई (भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव) एवं द्रौपदी के साथ जंगल में निवास करते थे। एक दिन चारों भाइयों के साथ एवं द्रौपदी के साथ में युधिष्ठिर सुखपूर्वक बैठे हुए थे। उसी समय उनसे मिलने वेदव्यास जी आये। राजा युधिष्ठिर ने झट खड़े होकर आसन दिया और पाद्य अर्ध्य आदि से उनका पूजन किया। और व्यास जी के चरणों में निवेदन किया, प्रभु आज मेरा जीवन धन्य हो गया। मैं अपने दु:ख से दुखित नहीं हूं। मैं इन बान्धवों से बहुत दुखित हूं। ये मेरे भाई दूसरों के तेज को सहन नहीं कर सकते और न कोई इन्हें जीत ही सकता। क्योंकि ये बड़े पराक्रमी हैं। पर मेरी आज्ञा के वश में हैं। और यह साध्वी द्रौपदी द्रुपदराज की पुत्री है। अत: यह भी राजसुख भोगने योग्य है पर दु:ख भोग रही है। इसलिये मैं आपसे पूछता हूं कि मैंने ऐसा कौन सा पाप कर्म किया है, जिसके कारण मेरे साथ से सब कष्ट भोग रहे हैं। मेरे हिस्सेदारों ने जुएं में कपट से मेरे राज्य को छीन लिया है। हे ब्रह्मन् हम अपने बान्धवों के साथ में सब हार गये हैं। हमें नगर से निकालकर जंगल भेज दिया गया है। हे स्वामिन् जब ऐसे तिरस्कार किये गये हम वन में चले आये और जबसे हम जंगल में दु:ख भोग रहे हैं। तबसे आप जैसे पूज्य महात्माओं के दर्शन भी नहीं कर पाता। यदि कोई सब संकटों को दूर करने वाला व्रत हो तो हे ब्रह्मन् मुझे उसका उपदेश करें। मैं दुखित हूं, मुझ पर आप महात्माओं को दया करनी चाहिये। धर्म पुत्र राजा युधिष्ठिर को प्रसन्न करते हुए भगवान् वेदव्यास जी

ने संकट नाशन उत्तम व्रत का उन्हें उपदेश किया। वेदव्यास जी बोले–हे राजन् तुम्हारे समान इस पृथ्वी पर कोई भी धर्मनिष्ठ नहीं है, इसलिये आज मैं तुम्हें व्रतों में उत्तम व्रत को कहता हूं। पृथ्वी भर में संकष्ट नाशन नामक व्रत के समान दूसरा कोई भी व्रत नहीं है। इस व्रत को करने से सब काम सिद्ध हो जाते हैं। इस संकष्ट नाशन व्रत के प्रभाव से विधार्थी विद्या, धनार्थी धन, पुत्रार्थी पुत्र का लाभ प्राप्त करता है। राजन् इस प्रसंग में एक इतिहास है। उसको सुनो–मनुवंश में एक राजा था, जब उसको दुष्ट ग्रहों ने दबा लिया तब वह भी संकटों से घिर गया। मन्त्री पुत्र, पत्नी राजा को अत्यन्त प्रेम करते थे। लेकिन दैव योग से शत्रुओं ने उसका राज्य छीन लिया। खजाना, सेना आदि सब नष्ट भ्रष्ट कर दिया तब राजा अपने बान्धवों और रानी रत्नावली के साथ राज्य से निकलकर जंगल की ओर चले गये। वह वन में क्षुधा, प्यास से कृश हो गया। धारण करने के लिए वस्त्र भी एक ही रह गया। राजा धूप में घूमता घामता अत्यन्त व्याकुल हुआ।

हे राजन् ऐसे पत्नी के साथ वह राजा वन में दु:ख भोगने लगा। एक दिन सूर्यास्त के बाद चारों ओर श्रृगालों ने उपद्रव करना शुरू किया। बाघ भी भयंकर शब्द करने लगे। वर्षा भी होने लगी, काटों ने रानी के चरण बींध दिये। जिससे रानी घबराकर रोने लगी। राजा–रानी को दु:ख में पड़े देख और भी दुखित हो गया। प्रभातकाल होने पर अचानक मार्कण्डेय ऋषि का दर्शन हुआ। राजा ने दण्डवत प्रणाम किया। और अपने दु:ख का कारण पूछने लगा–हे स्वामिन्

मैंने ऐसा कौन सा पाप कर्म किया है, जिसके कारण इतना संकट मेरे जीवन में आया है। लक्ष्मी राज्य से विमुख होना पड़ा। मार्कण्डेय ऋषि ने कहा–राजन् पूर्व जन्म में तुमने दुष्कर्म किया है। उसे तुम सुनो। पूर्व जन्म में तुम व्याध थे जंगल में जाकर निरपराध जीवों को मारते थे। उसी जंगल में माघ कृष्णा चतुर्थी के दिन रात को घूमते हुए कृष्णा नदी का सुन्दर तालाब देखा। उसके किनारे पर लाल कपड़ा पहिने गणेश जी को पूजती हुई नागकन्याओं का समूह व्रत में लगा हुआ देखा हे राजन् धीरे-धीरे जाकर उनसे पूछा हे पूज्याओं यह तुम क्या करती हो? नाग कन्याओं ने कहा–कि हम गणेश जी का पूजन कर रही हैं, उन्हीं का व्रत कर रही हैं। यह व्रत समस्त कामनाओं को पूर्ण कर समस्त व्याधियों का शमन करता है।

राजन् तुम्हारे इस व्रत की विधि पूछने पर नाग कन्याओं ने कहा–जब कभी भक्ति उपजे तो माघ कृष्णा चतुर्थी को लाल पुष्प से गणपति जी का पूजन करें। और भक्ति भाव से इकट्ठे किये हुए धूप, दीप नैवेद्य आदि उपचारों से पूजन करें। और नाना विधि-मूंग, चने, तिल आदि के लड्डू और घी की पूड़ियों का एवं छः रस वाले पदार्थों का भोग लगावे। हे राजन् उन नाग कन्याओं से तुमने सांगोसांग विधि जानकर, तुमने भी उस संकष्ट नाशन् चौथ का व्रत किया। जिसके प्रभाव से तुम्हें पुत्र, पौत्र, धन, धान्य की अमित सम्पत्ति प्रदान करने वाला संकटों से छुटकारा दिलाने वाला व्रत भूलकर छोड़ दिया। फिर आयु पूर्ण होने पर तुम्हारी मृत्यु हो गई। तुम्हारे द्वारा पूर्व जन्म के व्रत के प्रभाव से इस जन्म में तुम्हारा जन्म राजवंश

में हुआ। और बड़े राज्य की प्राप्ति हुई। किन्तु तुमनें धन के मद से उस व्रत की अवज्ञा की थी। इसी दोष से संकट प्राप्त हुआ है।

राजा ने प्रार्थना की प्रभो अब मुझे क्या करना चाहिये। कोई व्रत कहिये जिसके करने से मुझे राज्य मिल जाय। मार्कण्डेय मुनि बोले हे राजन् तुम अब उसी व्रत को करने का जल्दी ही संकल्प करो, आप सन्देह न करो आप को व्रत के प्रभाव से आपका राज्य पुनः प्राप्त हो जायेगा। मार्कण्डेय मुनि इतना कहकर अन्तर्ध्यान हो गये। राजा ने मुनि के बताये हुए संकष्ट नाशन व्रत को पवित्र मन से किया जिसके प्रभाव से बिछड़े हुए सभी मंत्री, बान्धव, किंकर, और सैनिक फिर आ गये उनको उसी समय गणेश जी की कृपा से अपने साथ ले अपने राज्यको आ गया। और पुत्र पौत्रों के साथ राजा सुख के साथ सम्पत्ति को भोगने लगा। देवव्यास जी कहते हैं, हे धर्मपुत्र आपको भी वही व्रत करना चाहिये। पुरुषों को भी करना चाहिये, स्त्रियों को विशेष रूप से सिद्धि देने वाला है। यह सुन राजा युधिष्ठिर ने निवेदन किया आप कृपा करके संकष्ट नाशन व्रत को यथार्थ रूप से वर्णन करें।

वेदव्यास जी बोले–कि जब मनुष्य बहुत संकटों से दुःखी हो तभी माघ मास की कृष्णा चतुर्थी को गणपति पूजन करना चाहिये। हे राजन् श्रावण कृष्ण चतुर्थी के दिन चन्द्रोदय होने के पश्चात् इस व्रत को ग्रहण करना चाहिये। अथवा माघ कृष्णा चतुर्थी को चन्द्रमा उदय होने पर उसमें चौथ हो तो उस दिन इस व्रत को ग्रहण करना चाहिये। इस दिन सफेद तिलों से स्नान करके शुद्ध वस्त्रादि धारण

कर पूजा करें। जैसी अपनी शक्ति हो उसी के अनुसार सोने की मूर्ति बनाकर रत्नों से जड़ित कलश पर स्थापित कर शास्त्रोक्त विधि षोडशोपचार द्रव्यों से पूजन करना चाहिये। राजन् अब महीनों के नियम सुनों। श्रावण में सात लड्डू, भाद्रपद में दधि भोजन, क्वार में उपवास, कार्तिक में दूध पान, मार्गशीर्ष में निराहार, पौष में गौमूत्र पान, माघ में तिल, और फाल्गुन में घी और शक्कर का भोजन चैत्र में पंचगव्य, वैशाख में दूब रस, ज्येष्ठ में पल भर घी, और आषाढ़ में मधु भोजन करना चाहिये। इस प्रकार मासों के नियमों को करके मनुष्य संकटों से छूट जाता है। यदि ऐसा न कर सके तो सात ग्रास खाकर सुखपूर्वक रह जाय। राजन् नाना विधि से गणपति को नैवेद्य अर्पित करे। दश तिलों के लड्डू बनावे। उनमें से पांच गणपति के आगे रखें। पांच लड्डू ब्राह्मण को दे दे। ब्राह्मण को लड्डू देने के पहले देवता की तरह भक्तिपूर्वक आचार्य की पूजा करें। शक्ति के अनुसार दक्षिणा दे पर लड्डू पांच ही दें। फिर गणपति जी से इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये। हे लम्बोदर हे सुमुख मैं सदैव सांसारिक दुखों से दु:खी रहता हूं आप मुझ पर प्रसन्न होकर मेरी रक्षा कीजिये। मेरे संकटों को नष्ट करिये संकटों के विनाशक आपके लिये बारम्बार प्रणाम है।

गणेश जी की प्रार्थना के पश्चात् चन्द्रमा को अर्ध्य प्रदान करें। फिर गणेश जी की प्रसन्नता के लिये ब्राह्मण भोजन करावें। पीछे बान्धवों के साथ आप भी पांच ही लड्डुओं को खाकर रह जायं। यदि न रह सकें तो दधि के साथ एक अन्न पदार्थ का भोजन कर

लें। अथवा हे पाण्डुनन्दन व्रत के दिन एक ही बार भोजन करके रहना चाहिये। व्रत के दिन पृथ्वी पर शयन करें। क्रोध को आने न दें। एवं लोभ व दम्भ को भी पास में न आने दें। प्रतिमा में आवाहित देवता की कला का विसर्जन कर आचार्य को दे दें। और व्रत पूर्ण होने पर माघ वही चतुर्थी को उद्यापन करना चाहिये।

उद्यापन विधि—सर्वप्रथम विद्वान ब्राह्मण को बुलाकर वरण करें। तत्पश्चात् पूजन, हवन, के पश्चात् इक्कीस ब्राह्मणों को वस्त्राभूषण दान कर गौर सुवर्ण आदि से पूजा करके मोदकों का भोजन कराना चाहिये। इसके पश्चात् आचार्य का भी पूजन कर गौ पृथ्वी, वस्त्र आदि एवं भूषण देकर सपत्नीक आचार्य का पूजन करें। जिससे गणपति प्रसन्न हो जायं (सपत्नीकं सुवर्णाद्यैर्गोभूवस्त्रादि भूषणै: आचार्य पूजयेत् राजन् गणेशस्य तु तुष्टये।) इस प्रकार विधि विधान के साथ उद्यापन पूजन जो मनुष्य करता है, गणेश जी उसके ऊपर प्रसन्न हो जाते हैं। इसमें कोई संशस नहीं है। जो तीन वर्ष या एक वर्ष प्रतिमास अथवा जीवन पर्यन्त इस व्रत को करता है, उसके दु:ख, दरिद्रता, और संकट कभी भी नहीं आते। संवत्सर बीतने पर बारह ब्राह्मणों को भोजन करायें। विद्यार्थी को विद्या, धनार्थी को धन, पुत्रार्थी को पुत्र और स्त्री को सौभाग्य प्राप्त होता है। जो इस व्रत की कथा का श्रवण करते हैं। उनके मनोरथ अनायास ही पूर्ण हो जाते हैं। भगवान् वेदव्यास जी राजा युधिष्ठिर से ऐसा कहकर वहां ही अन्तर्धान हो गये। पाण्डु नन्दन युधिष्ठिर ने उक्त विधि से संकष्ट नाशन व्रत को किया। उस व्रत के प्रभाव से अपने शत्रुओं

को कुरुक्षेत्र में मारकर राज्य को प्राप्त हो गये। यह नारदीय पुराण में कही हुई संकट हरण चतुर्थी गणपति के व्रत की कथा समाप्त हुई।

।। जय गणपति ।।

।। मकर संक्रान्ति ।।

सूर्य का मकर राशि में प्रवेश करना ''मकर सक्रान्ति'' कहलाता है। इसी दिन से सूर्य उत्तरायण हो जाते हैं। शास्त्रों में उत्तरायण को देवताओं का दिन कहा जाता है। तथा दक्षिणायन को देवताओं की रात्रि कहा जाता है, इस तरह मकर संक्रान्ति एक प्रकार से देवताओं का प्रभाव काल है। इस दिन स्नान, दान, जप, तप, श्राद्ध तथा अनुष्ठान आदि का अत्यधिक महत्व है। कहा जाता है कि इस अवसर पर किया गया दान सौ गुना होकर प्राप्त होता है। इस दिन घृत, कम्बल, के दान को विशेष महत्व है।

इसका दान करने वाला संपूर्ण भोगों को भोग कर मोक्ष को प्राप्त होता है।

माघे मासि महादेव यो दद्याद् घृतकम्बलम्।
स भुक्त्वा सकलान् भोगान् अन्ते मोक्षं च विन्दति।।

मकर संक्रान्ति के दिन गंगा स्नान तथा गंगा तट पर दान की विशेष महिमा है। तीर्थराज प्रयाग एवं गंगासागर का मकर संक्रान्ति का पर्व स्नान को प्रसिद्ध ही है।

मध्यप्रदेश एवं उत्तर प्रदेश में इस व्रत को 'खिचड़ी' कहते हैं।

इसलिये इस दिन खिचड़ी खाने तथा खिचड़ी तिल दान देने का विशेष महत्व मानते हैं। महाराष्ट्र में विवाहित स्त्रियां पहली संक्रान्ति पर तेल, कपास, नमक आदि वस्तुएं सौभाग्यवती स्त्रियों को प्रदान करती हैं। बंगाल में इस दिन स्नान कर तिल दान करने का विशेष प्रचलन है। दक्षिण भारत में इसे पोंगल पर्व कहते हैं। आसाम में आज के दिन बिहू का त्योहार मनाया जाता है। राजस्थान की प्रथा के अनुसार इस दिन सौभाग्यवती स्त्रियां तिल के लड्डू, घेवर तथा मोतीचूर के लड्डू आदि पर रुपया रख कर वायना के रुप में अपनी सास को प्रणाम कर देतीं हैं। तथा प्राय: किसी भी वस्तु का चौदह की संख्या में संकल्प कर चौदह ब्राह्मणों को दान करती हैं। इस प्रकार देश के विभिन्न भागों में मकर-संक्रान्ति पर विविध परम्परायें प्रचलित हैं।

।। लोहिड़ी पर्व ।।

पंजाब एवं जम्मू कश्मीर में ''लोहड़ी'' के नाम से मकर संक्रान्ति के दिन कंस ने श्री कृष्ण को मारने के लिये लोहिता नाम की एक राक्षसी को गोकुल भेजा था। जिसे श्री कृष्ण ने खेल-खेल में ही मार डाला था। उसी घटना के फलस्वरूप लोहिड़ी का पर्व मनाया जाता है। सिन्धी समाज भी मकर संक्रान्ति के एक दिन पूर्व इसे ''लाल लोही'' के रूप में मनाता है।

भारतीय ज्योतिष के अनुसार मकर-संक्रानित के दिन सूर्य के एक राशि में हुए परिवर्तन को अन्धकार से प्रकाश की ओर हुआ

परिवर्तन माना जाता है। मकर संक्रान्ति से दिन बढ़ने लगता है। और रात्रि की अवधि कम हो जाती है। स्पष्ट है कि दिन बड़ा होने से प्रकाश अधिक होगा। और रात्रि छोटी होने से अन्धकार की अवधि कम होगी। यह सभी जानते हैं कि सूर्य ऊर्जा का अजस्र स्रोत है इसके अधिक देर चमकने से प्राणि जगत् में चेतनता और उसकी कार्य शक्ति में वृद्धि हो जाती है। इसीलिये हमारी संस्कृति में मकर संक्रान्ति पर्व मनाने का विशेष महत्व है।

।। इति मकर-संक्रान्ति-लोहिड़ी पर्वः ।।

।। मौनी अमावस्या ।।

माघ मास के कृष्ण पक्ष की अमावस्या की ''मौनी अमावस्या'' के रूप में प्रसिद्धि है। इस पवित्र तिथि पर मौन रहकर अथवा मुनियों के समान आचरण कर स्नान, दान करने का विशेष महत्व है। मौनी अमावस्या को यदि सोमवार आ जाय तो इस तिथि का और भी महत्व बढ़ जाता है। इस तिथि को त्रिवेणी प्रयाग राज में तीन करोड़ दस हजार अन्य तीर्थों का समागम होता है। इसलिये प्रयाग राज में स्नान दान की अपार महिमा है।

मौनी अमावस्या को नित्य कर्म से निवृत्त हो स्नान करके तिल के लड्डू तिल का तेल, आंवला, वस्त्र आदि का दान करना चाहिये। इस दिन साधु, महात्मा तथा ब्राह्मणों के सेवन के लिये अग्नि प्रज्जवलित करना चाहिये तथा उन्हें कम्बल आदि जोड़े के वस्त्र देने चाहिये। इस दिन गुड़ में काला तिल मिलाकर लड्डू

बनाना चाहिये तथा उसे लाल वस्त्र में बांधकर ब्राह्मणों को देना चाहिये।

स्नान-दानादि पुण्य कर्मों के अतिरिक्त इस दिन पितृ श्राद्ध आदि करने का विधान है। मौनी अमावस्या को यदि रविवार व्यतीपात योग और श्रवण नक्षत्र हो तो 'अर्धोदय योग' होता है। इस योग में सभी स्थानों का जल गंगा तुल्य हो जाता है। और सभी ब्राह्मण ब्रह्मसंनिभ शुद्धात्मा हो जाते हैं। अतः इस योग में यत् किञ्चित् किये हुए स्नान- दानादि का फल भी मेरु के समान हो जाता है।

।। गौरी चतुर्थी व्रत ।। (तिल चौथ-वरद चौथ)

गौरी चतुर्थी का व्रत माघ शुक्ला चतुर्थी के दिन होता है। माघ मास के शुक्ल पक्ष की चौथ उमा ने अपने अंगों से अपने ही गुणों द्वारा फिर वही सृष्टि रच दी जो कि पहिले योगिनियों के साथ रची थी। इस कारण इस चतुर्थी को सब मनुष्यों को चाहिये कि उसको पूजे। पर स्त्रियों को तो इस व्रत को अवश्य ही करना चाहिये। भक्ति भाव से इकट्ठे किये गये कुंकुम और अलक्तक एवं कंकड़ के साथ रक्त सूत्रों से लाल पुष्प धूप, दीप और बलि के पूजन करना चाहिये। गुड़, अदरख, दूध, नमक के साथ पालकों से अनेक स्त्रियों तथा सुशील ब्राह्मणों का पूजन करना चाहिये। अपने सौभाग्य को बढ़ाने के लिये पीछे बन्धु वर्गों के साथ भोजन करना चाहिये।

वरद चतुर्थी—माघ शुक्ला चौथ के दिन वरद चतुर्थी का व्रत किया जाता है। माघ शुक्ला चौथ के दिन जो रात का व्रत करते हुए

जो गणपति का पूजन करता है उसको देवता भी अपना पूज्य मानते हैं। एक साल तीर्थ यात्रा करके पीछे इस चौथ के दिन व्रत करें। व्रत की समाप्ति में सफेद तिलों के लड्डू (गुड़ के साथ मिलाकर) बना कर भोग लगाके स्वयं खाना चाहिये। यह चौथ प्रदोष व्यापिनी होनी चाहिये। यह वरद चौथ का व्रत पूरा हुआ।

॥ बसन्त पञ्चमी ॥

विद्या की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती पूजन-महोत्सव

माघ मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी को 'बसन्त पंचमी' (सरस्वती) पूजन एवं महोत्सव मनाना चाहिये।

इस दिन विशेष रूप से देवी सरस्वती का पूजन करना चाहिये। प्रत्येक मानव समाज का परम कर्तव्य है कि वह माघ शुक्ला पंचमी को प्रातः काल उठकर शौच आदि नित्य क्रिया से निवृत्त हो शुद्ध वस्त्र धारण कर गणेश-गौरी का पूजन कर कलश स्थापन करना चाहिये। और उस कलश में वाग्देवी का आह्वान करें तथा शास्त्रोक्त विधि के अनुसार देवी सरस्वती का पूजन करना चाहिये। पूजन कार्य में स्वयं सक्षम न हो तो किसी विद्वान् ब्राह्मण द्वारा पूजन कार्य सम्पन्न कराना चाहिये।

ब्राह्मण ग्रन्थों के अनुसार वाग्देवी ब्रह्मस्वरूपा, कामधेनी तथा समस्त देवों की प्रतिनिधि हैं। ये ही विद्या, बुद्धि और सरस्वती हैं। श्री मद्देवी भागवत के आधार पर आद्याशक्ति के ये तीनों

रूप-महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती के नाम से जगत् विख्यात् हैं।

ब्रह्मवैवर्त पुराण के अनुसार-सृष्टि काल में ईश्वर की इच्छा से आद्याशक्ति ने अपने को पांच भागों में विभक्त कर लिया था। वे राधा, पद्मा, सावित्री, दुर्गा और सरस्वती के रूप में भगवान् श्री कृष्ण के विभिन्न अंगों से प्रकट हुई थीं। उस समय श्री कृष्ण के कण्ठ से उत्पन्न होने वाली देवी का नाम सरस्वती हुआ।

बाधिष्ठात् या देवी शास्त्र ज्ञान प्रदा सदा।
कृष्ण कण्ठोद्भवा साच या च देवी सरस्वती।।

वसन्त पंचमी को देवी सरस्वती का आर्विभाव दिवस माना जाता है। भगवती सरस्वती की उत्पत्ति हुई थी, इनकी आराधना एवं पूजा में प्रयुक्त होने वाली उपचार सामग्रियों में अधिकांश श्वेत वर्ण की होती है। भगवती सरस्वती जी की महिमा अपार है। शास्त्रों में वर्णन मिलता है कि-महर्षि बाल्मीकि, व्यास, वशिष्ठ, विश्वामित्र तथा शौनक आदि ऋषि इनकी ही कृपा से कृतार्थ हुए।

व्यास जी की थोड़ी ही साधना से प्रसन्न होकर देवी सरस्वती ने प्रकट होकर कहा-व्यास तुम मेरी प्रेरणा से रचित बाल्मीकि रामायण पढ़ो। वह मेरी शक्ति के कारण सनातन बीज बन गया है। उसमें श्री रामचरित के रूप में में साक्षात् मूर्तिमयी शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित हूं।

पठ रामायणं व्यासं काव्य बीजं सनातनम्।
यत्र रामचरितं स्यात् तदहं तत्र शक्तिमान्।।

भगवती सरस्वती के अद्‌भुत विश्व विजय कवच को धारण करके ही व्यास, ऋष्यश्रृंग, भारद्वाज, देवल तथा जैगीषव्य आदि ऋषियों ने सिद्धि पायी थी।

भगवती सरस्वती की उपासना करके ही कवि कुल गुरु कालिदास ने ख्याति पायी। गोस्वामी जी कहते हैं कि देवी गंगा और सरस्वती दोनों एक समान ही पवित्रकारिणी हैं। एक पापहारिणी और एक अविवेक हारिणी है। भगवती सरस्वती विद्या की अधिष्ठातृ देवी हैं। और विद्या को ही सभी धनों में प्रधान धन कहा गया है।

(विद्याधनं सर्व धनं प्रधानम्) विद्या से ही अमृतपान किया जाता है। भगवती सरस्वती के उपासकों के लिये कुछ विशेष नियम भी हैं। जिनका पालन अत्यन्त आवश्यक होता है। इन नियमों के पालन करने वाले व्रत कर्ता पर भगवती शारदा विशेष प्रसन्न होती है। नियम इस प्रकार हैं—वेद, पुराण, रामायण, गीता आदि सद्‌ग्रन्थों का आदर करना चाहिये। उन्हें देवी की साक्षात् मूर्ति समझना चाहिये और पवित्र स्थान पर रखना चाहिये। अपवित्र स्थान पर नहीं रखना चाहिये। अपवित्र अवस्था में छूना (स्पर्श) नहीं चाहिये।

काष्ठ फलक आदि पर ही रखना चाहिये। नियमपूर्वक प्रातः काल उठकर देवी सरस्वती का ध्यान करना चाहिये। विद्यार्थियों के लिये तो सरस्वती देवी की स्तुति वन्दना आदि तो निश्चित् रूप से करना चाहिये। इस प्रकार वागेश्वरी देवी की महिमा अपार है।

देवी सरस्वती बारह नामों से जगत् विख्यात हैं। दिन के तीनों सन्ध्यायों में इनका पाठ करने से माता सरस्वती उस मनुष्य के

जिह्वाग्र में आ जाती है।

सरस्वती जी के द्वादश नाम—

प्रथमं भारती नाम द्वितीयं च सरस्वती।
तृतीय शारदा देवी चतुर्थं हंस वाहिनी।।
पंचम जगती ख्याता षष्ठं वागीश्वरी तथा।
सप्तमं कुमुदी प्रोक्ता अष्टमं ब्रह्मचारिणी।।
नवमं बुद्धि दात्री च दशमं वर दायिनी।
एकादशं चन्द्र कान्तिः द्वादशं भुवनेश्वरी।
द्वादशैतानि नामानि त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः।
जिह्वाग्रे वसते नित्यं ब्रह्म रूपा सरस्वती।।

॥ रथ सप्तमी ॥ (पुत्र सप्तमी)

माघ शुक्ला सप्तमी को पाप का निवारण तथा पुत्र प्राप्ति के लिये रथ सप्तमी का व्रत करना चाहिये। तालाब, नदी या तीर्थ में जाकर ईख के डण्डे से जल को हिलाकर मस्तक पर पंच पत्ते आक के तथा पांच पत्र बेर के सिर पर रखकर सप्तमी को स्नान करें।

यह मन्त्र बोले—

यज्जन्म कृतं पापं मया सप्तसु जन्मसु।
तन्मे रोगं च शोकं च भास्करी हन्तु सप्तमी।।

सात जन्म तक मेरे द्वारा जो भी पाप हों तथा पापों के द्वारा जो रोग या शोक होने वाला हो। हे सूर्य सप्तमी ये सब पाप नष्ट करें। इसके पश्चात् सूर्य को अर्घ्य दें। तथा सप्तमी को निराहार रहकर

अष्टमी को पारण करें तो सब रोग दोष दूर हो जाते हैं।

कथा–श्री कृष्ण धर्मराज युधिष्ठिर से कहते हैं, कि कम्बोज देश में यशोवर्मा नाम के राजा थे। वृद्धावस्था में उन्हें पुत्र प्राप्ति हुई। किन्तु बालक बहुत रोगी रहता था। यशोवर्मा ने ऋषियों के पास जाकर इसका कारण पूछा। तब ऋषियों ने कहा यह पूर्व जन्म में महाकंजूस वैश्य था। जीवन में कोई दान या धर्म का आचरण नहीं किया। परन्तु रथ सप्तमी के व्रत करते हुए लोगों का दर्शन किया था। उसी पुण्य के प्रभाव से आपके यहां आकर जन्म ग्रहण किया। यह रथ सप्तमी का स्नान तथा व्रत करे तो शीघ्र ही स्वस्थ होकर राज्य सिंहासन पर बैठने का अधिकारी होगा। राजा ने विधिपूर्वक स्नान करके व्रत किया व्रत के प्रभाव से बालक निरोगी तथा भाग्यशाली हो गया। इस व्रत को करने से पुत्र प्राप्ति एवं रोगों से छुटकारा मिलता है। जो इस व्रत को करते हैं, उन्हें निश्चित रूप से पुत्र प्राप्ति एवं निरोगी काया प्राप्त होती है।

॥ भीष्माष्टमी ॥

भीष्माष्टमी माघ मास की शुक्लाष्टमी को मनाया जाता है। इस तिथि को भीष्म जी का तर्पण एवं श्राद्ध करें। मद्रास तमिलनाडु में पुत्र प्राप्ति के लिये श्राद्ध तर्पण करते हैं। उनके मन की अभिलाषा भी पूर्ण होती है। इस दिन अगर भीष्म पितामह को अर्ध्य तथा तर्पण न करें तो दोष लगता है। इस दिन तर्पण अवश्य करना चाहिये।

॥ माघी पूर्णिमा ॥

माघ शुक्ला पूर्णिमा को प्रयाग राज में एक मास का कल्पवास पूर्ण होता है। जो एक मास गंगा स्नान न कर सके, तो पूर्णिमा को ही सूर्योदय से पूर्व स्नान करें। तिल कम्बल आदि का दान करें तो महत् पुण्य की प्राप्ति होती है। इस प्रकार माघ महीने में गंगा स्नान एवं दान आदि धर्म से पितरों को एवं देवताओं को अक्षय तृप्ति होती है।

॥ महाशिवरात्रि व्रत ॥

यह व्रत फाल्गुन कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी के दिन होता है। शिवरात्रि का अर्थ वह रात्रि है, जिसका शिव तत्व के साथ घनिष्ठ संबंध है। भगवान् शिव जी की अतिशय प्रिय रात्रि को शिव रात्रि कहते हैं। शिवार्चन और रात्रि जागरण ही इस व्रत की विशेषता है। इसमें रात्रि भर जागरण एवं रुद्राभिषेक का विधान है। पार्वती के पूछने पर भगवान शिव जी ने बताया कि फाल्गुन कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी शिवरात्रि कहलाती है। जो उस दिन उपवास करता है वह मुझे प्रसन्न कर लेता है।

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी तिथि में चन्द्रमा सूर्य के समीप होता है। अतः वही समय जीवन रूपी चन्द्रमा का शिव रूपी शिव के साथ मिलन होता है। ईशान संहिता के अनुसार फाल्गुन कृष्णा चतुर्दशी की रात्रि को आदि देव भगवान् शिव करोड़ों सूर्यों के समान प्रभाव वाले लिंग रूप में प्रकट हुए।

महाशिव रात्रि पर्व परमात्मा शिव के दिव्य अवतरण का मंगलसूचक है। उनके निराकार से साकार रूप में अवतरण की रात्रि ही महाशिवरात्रि कहलाती है। वे हमें काम, क्रोध आदि विकारों से दूर कर सुख शान्ति एवं ऐश्वर्य प्रदान करते हैं।

अत: इस चतुर्दशी को शिव पूजा करने से जीव को अभीष्टतम पदार्थ की प्राप्ति होती है। यही शिवरात्रि का रहस्य है। इस दिन शिव भक्तों को चाहिये कि किसी प्रतिष्ठित शिवालय में रुद्राभिषेक अथवा पार्थिव शिव लिंग की रचना कर के रात्रि के चारों प्रहरों में चार बार वेद विधि से पूजन एवं अर्चन करें।

॥ शिवरात्रि की महिमा ॥

प्राचीन काल में एक भील अपने परिवार के साथ रहता था। उसका नाम गुरुद्रुह था। उसका कर्म-चोरी एवं वन में पशुओं का वध करना था। इसी प्रकार कर्म में लीन रहते एक बार शिवरात्रि का पर्व आया। उस दिन उस पापी के घर खाने को कुछ भी नहीं था।

उसके परिवार के लोग एवं माता-पिता आदि सभी भूखे थे। सबने उससे कहा—हम भूखे हैं, कुछ खाना लाओ। तब वह धनुष बाण ले शिकार करने वन की ओर चला। भाग्य की बात उस दिन शाम तक जंगल में घूमता रहा किन्तु उसे कहीं भी शिकार नहीं मिला। रात में वह भील व्याकुल हो गया। खाली हाथ कैसे लौटूं परिवार के लोगों को खाने के लिये क्या दूंगा। तब वह बहुत विचार

करके एक तालाब के किनारे एक वृक्ष पर रात बिताने को ठहर गया संयोग से वह वृक्ष विल्व का था। उसने एक पात्र में जल लाकर उसी विल्व वृक्ष पर चढ़ गया। उसने सोचा रात में कोई भी पशु जल पीने आयेगा। मैं तभी उसका शिकार करूंगा। रात्रि के प्रथम प्रहर को धनुष चढ़ाया। धनुष के झटके से उसी समय जल तथा बेल पत्र झड़कर नीचे गिर पड़े। वहां नीचे शिव जी का ज्योतिर्लिंग विद्यमान था। इससे अनजान में ही भील गुरुद्रुह के द्वारा शिवजी के पहले प्रहर की पूजा हो गई। और भील के पापों का नाश हो गया। भील के धनुष की टंकार सुनकर हिरणी ने कहा हे भील तुम यह क्या करना चाहते हो? भील ने कहा—मेरा परिवार भूखों मर रहा है। मैं उन्हें भोजन देना चाहता हूं। इससे तुम्हारा वध करुंगा। हिरणी बोली—तुम लोग बहुत अन्यायी हो तुम्हें तनिक भी दया नहीं आती। हे भील यदि मेरे मांस से तेरे परिवार की भूख मिट जाय तो मेरा शरीर धन्य है। दूसरों के कष्ट निवारण से ही जीव की प्रशंसा होती है। अब तुम थोड़ी देर और ठहर जाओ। मैं अपने घर जाकर अपने बच्चों को अपनी बहिन के पास करके आती हूं। तब तुम मुझे मार कर ले जाना। मैं झूठ नहीं कह रही मेरा विश्वास करो। यदि नहीं आऊं तो मुझे वह पाप लगे जो विश्वासघाती को लगता है। हिरणी के विश्वास दिलाने पर वह भील बातों में आ गया।

हिरणी अपने घर चली आयी। इस प्रकार उस भील का प्रथम प्रहर का जागरण हो गया।

इसके पश्चात् हिरणी की बहिन उसे तलाशती हुई वहां आ

पहुंची। उसे देखकर भील ने झट धनुष पर बाण चढ़ाया। दूसरे प्रहर का पूजन हो गया। क्योंकि इस बार भी बेल पत्र तथा जल शिव लिंग पर गिर पड़े थे। धनुष की टंकार सुनकर वह हिरणी भी बोली हे भील राजा, तुम यह क्या कर रहे हो। भील ने उससे भी वही बात कही जो पहले वाली हिरणी से कही थी। हिरणी ने कहा–हे भीलराज! थोड़ी देर के लिये मुझे घर जाने की आज्ञा दे दो। मैं अपने बच्चों को देखकर अभी लौट आऊंगी नहीं तो वे मेरा इन्तजार करेंगे। भील ने उसे भी जाने की आज्ञा दे दी। इस प्रकार जागते-जागते भील का दूसरा प्रहर भी जागरण के रूप में बीत गया।

तीसरे प्रहर के समय एक मोटा ताजा हिरण जल पीने वहां आया उसे देख भील ने पुनः धनुष पर बाण चढ़ाया। जिससे फिर नीचे शिवलिंग पर बेलपत्र तथा जल गिर पड़ा। उसके चढ़े हुए बाण को देखकर हिरन ने पूछा यह आप क्या कर रहे हो। भील ले उसे वही उत्तर दिया जो पहले हिरणी को दिया था। इस पर हिरन ने बड़े विनयपूर्वक कहा–हे भीलराज मैं अपने बच्चों तथा पत्नियों को समझा बुझाकर अभी आता हूं। मैं शपथ पूर्वक कहता हूं, कि मैं अवश्य आऊंगा। भील ने उसे भी जाने दिया। इस प्रकार भील के तीसरे प्रहर का भी जागरण हो गया।

जब वे तीनों घर पहुंचे तो सबने आपस में अपना-अपना समाचार सुनाया। तीनों ही भील के पास जाने की शपथ खाकर आये थे। अतः तीनों बच्चों को समझा-बुझाकर भील के पास चल दिये। उनके साथ उनके बच्चे भी लग लिये। कि जहां माता-पिता जीवन

देंगे वहीं हम भी अपने प्राण देंगे। इस तरह सभी वहां पहुंचे जहां भील बैठा था। भील ने उन सबको आया देख झट धनुष बाण चढ़ाया तभी कुछ जल तथा बेलपत्र झड़कर पुनः नीचे शिवलिंग पर चढ़ गये। इससे उसे ज्ञान प्राप्त हुआ। यह चौथे प्रहर का पूजन हो गया। उन सभी मृग परिवार ने भील के पास जाकर कहा हे भीलराज! हम आ गये हैं। आप हमारा वध कीजिये जिससे हमारा शरीर सफल हो जाय।

इस पर भील शिव कृपा से ज्ञानपूर्वक सोचने लगा–अरे मुझसे तो यह अज्ञानी पशु धन्य हैं। जो परोपकार के लिये अपना शरीर भी दे रहे हैं। एक मैं हूं जो मानव शरीर पाकर भी हत्यारा बना हुआ हूं। वह बोला हे मृगियों आप लोग धन्य हैं, आपका मैं वध नहीं करूंगा। तुम निर्भय होकर लौट जाओ। तभी वहां भोले शंकर प्रकट हो गये। भील शिवजी के चरणों में गिर गया भोले शंकर ने जब वरदान मांगने को कहा–भील ने भक्ति का वरदान मांगा। शिवजी ने भक्ति के साथ श्रृंगवेर पुर में भेजकर भगवान् राम के साथ मित्रता होने का वरदान दिया। बाद में यही निशादराज गुह हुआ और रामजी के कृपा प्रसाद से मोक्ष को प्राप्त हुआ। हे ऋषियों यह महाशिवरात्रि की महिमा का कथन है। यह व्रत महान् फलदायक है।

इस प्रकार यह शिव पराणोक्त महाशिवरात्रि की महिमा पूर्ण हुई।

।। इति ।।

॥ होलिका उत्सव ॥

फाल्गुन मास की पूर्णिमा को होलिका उत्सव मनाया जाता है। भविष्य पुराण में युधिष्ठिर जी के प्रश्न पर श्री कृष्ण ने रघु के प्रति जो वचन हैं उनको सुनाया है। वशिष्ठ जी बोले–हे राजन् फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा के दिन सब मनुष्यों को अभय दे दीजिये। वशिष्ठ जी ने कहा इस दिन बालक निर्भय होकर काठ के टुकड़े लेकर चले जायं। बीच में प्रह्लाद स्वरूप गड़े स्तम्भ के चारों तरफ लगा दें। उपलों का ऊंचा ढेर बनायें उसमें रक्षोघ्न मन्त्रों के द्वारा विधि के साथ अग्नि दे। और बनाये हुए अपने देश के अनुसार गोबर के सूजर, चन्दा, ढाल तलवार, अग्नि (होली) में डालने चाहिये।

होलिका-निर्णय–इसमें भद्रा रहित प्रदोष व्यापिनी पूर्णिमा ही लेनी चाहिये होली दिन में, भद्रा में, रिक्ता और प्रतिपदा में होलिका दहन नहीं करना चाहिये। भद्रा के मुख को छोड़कर होलिका पूजन करें। यदि दो दिन प्रदोष व्यापिनी हो तो पर का ग्रहण करना चाहिये। भद्रा में होली जलाने से राष्ट्र भंग होता है। नगर को भी ठीक नहीं होता। रात्रि में स्त्रियां पूजा करके व्रत पूर्ण कर करती हैं। उनका ऐसा विश्वास है, होलिका जल गई और प्रहलाद जी बच गये। भक्त प्रहलाद के बच जाने पर व्रत का पारण करती हैं। होलिका दहन के समय जौ, गेहूं, चना आदि की बलि होली में सेंक कर लाते हैं।

पूजा से पूर्व संकल्प करना चाहिये।

संकल्प–देश कालौ संकीर्त्य–मम राकुटुम्बस्य ढुण्ढा राक्षसी पीड़ा परिहारार्थं पूजनं च करिष्ये।

"ॐ होलिकायै नमः"

कहकर पूजन करना चाहिये। तथा यह मन्त्र पढ़कर जलाना चाहिये।

ॐ असृक्याभय संतप्तै कृत्वा त्वं होलि वालिशैः।
अतस्त्वां पूजयिष्यामि भूते भूति प्रदाभव।।

होली मुझे मंगल देने वाली हो। ऐसा कहकर होलिका में अग्नि लगा दें भगवान् ने होलिका के गोद में बैठे प्रह्लाद को बचा लिया। ऐसा ध्यान करें। पीछे इसकी तीन परिक्रमा करें। दूसरे दिन उसको प्रणाम करके, उसकी राख ग्रहण करें। होलिका को प्रह्लाद जैसे भक्त को गोद में बैठाने तथा अंग स्पर्श का सौभाग्य प्राप्त हुआ। अतः इसकी भस्म शंकर जी नें स्वयं लगाई। इसलिये यह मन्त्र पढ़कर प्रार्थना करें।

वन्दितासि सुरेन्द्रेण ब्रह्मणा शंकरेणच।
अतस्त्वं पाहिनो देवि विभूतिर्भूतिदाभव।।

इन्द्र, ब्रह्मा, शंकर जी के द्वारा तुम पूजित हो अभिनन्दित हो अतः आपकी भस्म हमारी रक्षा करें। यह कहकर भस्म ग्रहण करें।

कथा–राक्षस राज हिरण्यकश्यपु ने प्रहलाद को मारने के लिये बहुत उपाय किये, समुद्र में डुबोया, विष पिलाया, पर्वत से गिराया, सर्पों से डसाया जब न मरा तो बड़ा दुःखी हुआ। बहिन होलिका ने कहा–चुप रहो मेरे भाई का लड़का है। इस पर मेरा पूरा हक है।

बड़ी भारी चिता तैयार हुई। होलिका प्रह्लाद को गोदी में लेकर बैठ गई। अग्नि लगाई गई। भक्त लोगों का हृदय चीत्कार करने लगा सभी के आंखों से आंसू बरस पड़े। बादल छा गये घनघोर वर्षा प्रारंभ हुई। मेरे नारायण लम्बी-लम्बी सांस लेने लगे। तो आंधी चल पड़ी चिता भयंकर रूप से प्रज्जवलित थी। हिरण्यकश्यपु ने पूछा भयंकर अग्नि की ज्वाला हमको सहन नहीं हो रही है। प्रह्लाद तुम्हें कैसे लग रहा है। प्रह्लाद ने कहा पिताश्री लहरों वाले समुद्र के कमल पर बैठा हूं। शीतलता का अनुभव हो रहा है। होलिका ने गोद से प्रह्लाद को धक्का मारकर अग्नि में फेंक दिया। पवन देव ने होलिका का दुपट्टा उड़ाकर प्रह्लाद पर डाल दिया। दुपट्टे के प्रभाव से प्रह्लाद शान्तिपूर्वक बैठे हरे। होलिका जलने लगी। बचाओ बचाओ चिल्लाई। प्रज्जवलित अग्नि में होलिका स्वाहा हो गई। प्रह्लाद निकलकर बाहर आ गये। हिरण्यकश्यपु का मुख सूख गया। बहिन स्वाहा हो गई। राक्षसों ने हार मान ली। भक्त लोग मन ही मन भक्त प्रह्लाद की जय-जयकार करने लगे।

॥ होलिकोत्सव-धुलैण्डी-छारंडी ॥

होलिका दहन के दूसरे दिन चैत्र कृष्णा की प्रतिपदा को भक्तों ने प्रह्लाद की रक्षा का प्रत्यक्ष अनुभव कर बड़ा उत्सव मनाया। अबीर गुलाल उड़ाया। तथा एक-दूसरे से मिलकर उत्सव का अभूतपूर्व प्रदर्शन किया। जहां-जहां भी भारत भूमि में भक्त हैं। इस उत्सव को रंग खेलकर बड़े आनन्द से मनाते हैं। औश्वपच चाण्डाल सभी

में भगवद् दर्शन बड़े प्रेम से छाती से छाती मिलाकर मिलते हैं। इस दिन राक्षस भी जो श्वपच रूप में थे। भगवान से प्रह्लाद को बचाने की प्रार्थना करते थे। आज धन्य हो गये। सभी भक्तों ने भक्त प्रह्लाद को कण्ठ से लगाया इसलिये आज श्वपच स्पर्श का विधान है। व्रज में होली का उत्सव बड़े धूमधाम से मनाया जाता है। रसिया गीत गाये जाते हैं। और बांके बिहारी जी के ऊपर अबीर गुलाल उड़ाते हैं। बरसाने की लठ्ठ मार होली तो जगत् प्रसिद्ध है। आज के दिन चाहे वो शत्रु ही क्यों न हो उसे भी गले लगाकर वैर भाव मिटा देना चाहिये।

॥ शीतला अष्टमी ॥ (बासोड़ा)

यह व्रत चैत्र कृष्ण अष्टमी या चैत्र मास के प्रथम पक्ष में होली के बाद में पड़ने वाले पहले शनिवार या वीरवार (गुरुवार) को किया जाता है। इस व्रत के प्रभाव से व्रत करने वाले के घर में (कुल में) दाहज्वर, पीतज्वर, विस्फोटक, दुर्गन्ध, फोड़े, नेत्रों के समस्त रोग, शीतला के फुंसियों के चिन्ह तथा शीतला जनित दोष दूर हो जाते हैं। इस व्रत के करने से शीतला देवी प्रसन्न होती है।

व्रत की विधि—अष्टमी व्रत करने वाले व्रती को पूर्व विद्धा अष्टमी तिथि का ग्रहण करनी चाहिये। इस दिन प्रातःकाल शीतला माँ को जल से स्नान करना चाहिये।

इस व्रत की विशेषता है कि शीतला देवी को भोग लगाने वाले सभी पदार्थ एक दिन पूर्व ही बना लिये जाते हैं। अर्थात् शीतला

माता को एक दिन का बासी (शीतल) भोग लगाया जाता है। इसलिये लोक में यह व्रत बासौड़ा के नाम से भी प्रसिद्ध है। भोग के लिये मिठाई, पुआ, पूरी, दालभात, लपसी आदि एक दिन पहले से ही बनाये जाते हैं। जिस दिन व्रत रहता है। उस दिन चूल्हा नहीं जलाया जाता।

इस व्रत में रसोई घर की दीवार पर पांचों अंगुली घी में डुबोकर छापा लगाया जाता है। उस पर रोली चावल चढ़ाकर शीतला माता के गीत गाये जाते हैं। सुगन्धित गन्ध पुष्प से पूजन कर शीतला माता की कहानी सुननी चाहिये। रात्रि में दीपक जलाना चाहिये। एक थाली में भात, रोटी, दही, चीनी, जल का गिलास, रोली, चावल, मूंग की दाल का छिलका, हल्दी, धूपबत्ती तथ मोठ, बाजरा आदि रखकर घर के सभी सदस्यों को स्पर्श कराकर शीतला माता के मंदिर में चढ़ाना चाहिये। इस दिन चौराहे पर भी जल चढ़ाकर पूजन करने का विधान है। फिर मोठ, बाजरा का वायना निकालकर उस पर रुपया रखकर अपनी सासु जी के चरण छूकर उन्हें देने की प्रथा है। इसके बाद किसी वृद्धा को भोजन कराकर दक्षिणा देनी चाहिये। यदि घर में (या परिवार में) शीतला माता के कुंडारे भरने की प्रथा हो तो एक बड़ा कुण्डारा तथा दस छोटे कुंडारे मंगाकर छोटे कुंडारों को बासी व्यंजनों से भर कर बड़े कुंडारे में रख दें। फिर उसकी हल्दी से पूजा कर दें। इसके बाद सभी कुण्डारों को शीतला माता के स्थान पर जाकर चढ़ा दें। जाते और आते समय शीतला माता के गीत भी गाये जाते हैं।

पुत्र जन्म और विवाह के समय जितने कुंडारे हमेशा भरे जाते हैं उतने और भरने चाहिये।

॥ शीतला माता की लोक कथा ॥

किसी गांव में एक औरत रहती थी। वह बासौड़े के दिन शीतला माता की पूजा करती और ठंडी रोटी खाती थी। उसके गांव में और कोई शीतला मां का पूजन नहीं करता था। एक दिन उस गांव में आग लग गयीं। जिसमें उस औरत की झोपड़ी छोड़कर सबकी झोपड़ियां जल गयीं। जिससे सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। सब लोगों ने उस औरत से इस चमत्कार का कारण पूछा। उस औरत ने कहा कि मैं तो बासौड़े के दिन ठंडी रोटी खाती हूं। और शीतला माता का पूजन करती हूं। तुम लोग यह काम नहीं करते थे। इसी पूजन के प्रभाव से मेरी झोपड़ी बच गयी। और तुम सब की झोपड़ियां जल गयीं। तबसे बसोड़े के दिन पूरे गांव में शीतला माता की पूजा होने लगी।

पूजन करने वाले को चाहिये कि शीतला माता की पूजा करने के उपरान्त इस प्रकार से प्रार्थना करनी चाहिये। हे शीतला माता जैसे आपने उस औरत की रक्षा की वैसे ही सबकी रक्षा करना।

वन्देहं शीतलां देवीं रासभस्थां दिगम्बराम्।
मार्जनी कलशो पेतां शूर्पालङ्कृत मस्तकाम्।।

बारह महीनों में होने वाली एकादशियों की व्रत कथा

॥ चैत्र शुक्ला-कामदा एकादशी ॥

युधिष्ठिरजी के पूछने पर भगवान श्री कृष्ण ने कहा—चैत्र शुक्ल पक्ष में होने वाली एकादशी का नाम कामदा एकादशी है। यह सब पापों को नष्ट कर पिशाचत्व से मुक्ति दिलाती है। पुत्र देने वाली है। पूर्व काल में भोगिपुर नामक नगर में पुण्डरिक नाम के एक राजा रहते थे। उनके यहां ललित नामक गन्धर्व तथा ललिता नाम की अप्सरा राजसभा में गायन किया करते थे। दोनों ही परस्पर एक-दूसरे पर आसक्त थे। एक दिन प्रिया के बिना सभा में ललित गायन कर रहा था। प्रिया को भी याद कर रहा था। गायन ठीक हो नहीं पा रहा था। राजा ने शाप दिया। जाओ राक्षस हो जाओ। वह गंधर्व शाप से बहुत भयंकर राक्षस हो गया। ललिता दुःखी हो उसके पीछे-पीछे वनों में रोती हुई घूमती थी। एक दिन ऋष्यश्रृंग मुनि के आश्रम में गई आौर प्रणाम करके पति के मुक्ति का उपाय पूछा मुनि ने कहा चैत्र शुक्ला कामदा एकादशी का व्रत करने से राक्षसत्व से छूट जायेगा। ललिता ने वही कामदा एकादशी का व्रत किया। द्वादशी को पारण किया। जिसके प्रभाव से ललित गंधर्व ने शाप से छूटकर दिव्य शरीर धारण किया। यह व्रत ब्रह्महत्या आदि दोषों को दूर करने वाला एवं पापों का नाश करने वाला है। इस एकादशी व्रत करने से बजपेय यज्ञ का फल प्राप्त होता है।

श्री वाराह पुराणोक्त कामदा एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ वैशाख कृष्णा वरुथिनी एकादशी ॥

धर्मराज युधिष्ठिर जी ने भगवान कृष्ण से पूछा, हे वासुदेव वैशाख एकादशी का क्या नाम है। श्रीकृष्ण बोले इस लोक और परलोक में सुख प्रदान करने वाली एकादशी का नाम वरुथिनी एकादशी है। धुन्धुमार और मान्धाता इस व्रत के प्रभाव से स्वर्ग में हैं। हजार वर्ष तप से जो फल प्राप्त होता है, वह पुण्य इस व्रत के प्रभाव से प्राप्त हो जाता है। कुरु क्षेत्र में जो स्वर्ण दान करने का फल है वह फल एक एकादशी के व्रत से मिल जाता था। राजन् अन्नदान और दान से श्रेष्ठ हैं। इससे भी कन्यादान श्रेष्ठ है। इससे श्रेष्ठ गौदान है। लेकिन विद्यादान सबसे श्रेष्ठ है। वरुथिनी एकादशी के व्रत से विद्यादान का फल प्राप्त होता है। दशमी में कांस्य, उड़द, मसूर, चना, कोदो, शाक, मधु, परान्न, दो बार भोजन और मैथुन का त्याग करें। एकादशी को जुआ, दिन में सोना, दातून, पान, निन्दा, चुगली, चोरी, हिंसा, मैथुन, क्रोध, असत्य का त्याग करना चाहिये। द्वादशी को कांस्य, उड़द, मसूर, शराब, मधु, तैल, पतितों से वार्तालाप, व्यायाम परस्त्री गमन, मैथुन, मांस, क्षौर, परान्न, द्वादशी को न करे।।

भविष्य पुराणोक्त वरुथिनी एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ वैशाख शुक्ला मोहिनी एकादशी ॥

युधिष्ठिर जी ने श्री कृष्ण जी से पूछा भगवन् वैशाख शुक्ल

एकादशी का क्या नाम है। उसके विधान एवं फल को कहें। श्री कृष्ण बोले श्री राम ने जो गुरु वशिष्ठ से प्रश्न किया था। वही सुनाता हूं। राज जी ने पूछा–गुरुदेव सीता के विरह से अत्यन्त दु:खी हूं। भयभीत हो रहा हूं। सर्व पापक्षय एवं दु:खक्षय करने वाला व्रत कहिये वशिष्ठ जी बोले–आपने संसार के हित के लिये यह प्रश्न किया है। वैशाख शुक्ला एकादशी का नाम मोहिनी एकादशी है। इसके करने से सब पाप एवं दु:ख नष्ट होते हैं। भद्रावती नगर में धृतिमान नाम का राजा था, उसी नगरी में परम वैष्णव धनपाल नामक धर्मात्मा वैश्य था। वह मंदिर, कुआं, धर्मशाला बनवाता था। उसके पांच लड़के थे। छोटा लड़का बड़ा दुष्ट था। एक दिन पिता ने उसे वेश्या के साथ देखा, पिता ने घर से निकाल दिया। परिजनों ने भी परित्याग कर दिया। कुछ दिनों बाद दु:ख के संकट में प्रभु कृपा की अनुभूति हुई। मन पुण्य की ओर झुका। प्रभु कृपा से उसे कौडिन्य मुनि के दर्शन हुए। उन्होंने इसे मोहिनी एकादशी का व्रत बताया। धृष्ट बुद्धि ने बड़ी श्रद्धा के साथ मोहिनी एकादशी का व्रत किया। सारे पाप तापों से छूट कर भगवद्धाम को गया।

श्री कूर्म पुराणोक्त मोहिनी एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ ज्येष्ठ कृष्ण अपरा एकादशी ॥

एक समय महाराज युष्ठिर ने भगवान श्री कृष्ण से पूछा–प्रभो ज्येष्ठ कृष्णा एकादशी का क्या नाम है, उसकी क्या महिमा है। भगवान् श्री कृष्ण ने कहा–इस एकादशी का नाम अपरा है। तथा

समस्त पापों को नष्ट करने वाली है। इसके व्रत से ब्रह्महत्या भ्रूण हत्या आदि पापों की निवृत्ति होती है। तथा पुण्य की प्राप्ति होती है। प्रयाग में मकर संक्रान्ति पर स्नान करने से काशी में शिवरात्रि में अनुष्ठान जागरण पूजन करने से गया में पिण्डदान करने से तथा गोदावरी में स्नान करने से तथा बद्री नारायण, केदार नाथ के दर्शन करने से जो पुण्य फल प्राप्त होता है। वही फल–वही पुण्य अपरा एकादशी के व्रत करने से प्राप्त होता है।

ब्रह्माण्ड पुराणोक्त अपरा एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ ज्येष्ठ शुक्ला निर्जला एकादशी ॥

युधिष्ठिर जी ने भगवान श्री कृष्ण से पूछा–ज्येष्ठ शुक्ला एकादशी का क्या नाम है, तथा उसका क्या माहात्म्य है। भगवान ने कहा इसका फल एवं महिमा श्रीमान् व्यास जी बताते हैं। व्यास जी उस समय सभा में उपस्थित थे। व्यास जी बोले–इस एकादशी का नाम निर्जला एकादशी है। इसमें जल भी ग्रहण नहीं करना चाहिये। सुनकर भीमसेन पीपल के पत्ते की तरह कांपने लगे। व्यास जी ने कहा दोनों पक्षों की एकादशियों को भोजन का त्याग करना चाहिये। अन्न में पाप का निवास है। जनना शौच और मरणा शौच में भी अन्न का ग्रहण करना वर्जित है। भीमसेन बोले पितामह–सब परिवार के कभी एकादशी को भोजन (अन्न) ग्रहण नहीं करते। किन्तु मेरे पेट में वृक नाम की अग्नि है। इसलिये मेरा नाम एक वृकोदर भी है। मुझे सदा ही भूख सताती रहती है। अत: मैं बिना खाये रह नहीं

सकता। मुझे कोई एक ही एकादशी बताइये। जिससे मेरा कल्याण हो। जिसके अनुष्ठान से समस्त पापक्षय होकर पुण्य का भागी बनूँ।

व्यास जी ने भीमसेन को इसी निर्जला एकादशी का व्रत करने के लिये कहा इसलिये इस एकादशी को भीमसेनी एकादशी भी कहते हैं। व्यास जी ने कहा इस एकादशी व्रत में स्नान और आचमन के जल लेने से व्रत खण्डित नहीं होता। व्यासाज्ञानुसार भीमसेन ने बड़े साहस के साथ निर्जला का एक यह व्रत किया। जिसके परिणामस्वरूप प्रातः होते-होते चेष्टाहीन हो गये तब पाण्डवों ने गंगा जल तुलसी चरणामृत प्रसाद देकर उनकी मूर्छा दूर की। तभी से भीमसेन पाप मुक्त हुए।

निर्जला एकादशी को लोग मीठा जल, घड़े में भरकर, पंखा, रुहअफजा फल आदि ब्राह्मणों को दान करते हैं।

पद्म पुराणोक्त निर्जला एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ आषाढ़ कृष्णा-योगिनी एकादशी ॥

युधिष्ठिर के पूछने पर श्री कृष्ण ने कहा—आषाढ़ कृष्ण में होने वाली एकादशी का नाम योगिनी एकादशी है। राजाधिराज कुबेर का एक सेवक हेम माली था। वह कुबेर जी के यहाँ शिव पूजन के लिये पुण्य चयन कर लाकर देता था। हेममाली अपनी पत्नी में बहुत आसक्त था। उसे पुष्प चयन करके देना भी बड़ा भारी मालूम होता था। पत्नी के चिन्तन में आसक्त होने के कारण उसमें भी विलम्ब करता था। एक समय मानसरोवर से पुष्प ले आया। पर पहुंचा न

सका। बीच में ही पत्नीसे मिलने चला गया। तथा पत्नी से मिलने के पश्चात् पुष्प पहुंचाना भूल गया। कुबेर शिवजी के समीप पूजा के लिये बैठे थे। पुष्प न पहुंचने पर हेममाली को बुलाया और डांटा, श्राप दिया, जाओ तुम कुष्टरोगी हो जाओ। तथा पत्नी से भी वियोग हो जायेगा। तुमने भगवान शिव जी की बड़ी अवहेलना की है। श्राप के कारण उसे कुष्ठ रोग हो गया और अपने घर से बहुत दूर चला गया। किन्तु शिव पूजन के प्रभाव से पूर्व स्मृती बनी रही। वह रोता-विलखता इधर-उधर घूमता था। शिव कृपा के प्रभाव से उसे मार्कण्डेय मुनि के दर्शन हुए। उन्होंने दयावश इसे आषाढ़ कृष्णपक्ष की योगिनी एकादशी का व्रत करने के लिये कहा। इस व्रत को सच्ची निष्ठा से हेममाली ने किया इस व्रत के प्रभाव से हेममाली का कोढ़ दूर हो गया। स्त्री विरह भी समाप्त हो गया। तथा कुबेर जी ने अनुकम्पा करके पुनः अपने पास रख लिया।

ब्रह्मवैवर्तपुराणोक्त योगिनी एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ आषाढ़ शुक्ला पद्मा एकादशी ॥

युधिष्ठिर जी ने भगवान श्री कृष्ण से पूछा आषाढ़ शुक्ला एकादशी का क्या नाम है। तथा आप उसके माहात्म्य को भी कहें। श्री कृष्ण ने कहा एक बार नारद ऋषि ने ब्रह्मा जी से यही प्रश्न किया था। ब्रह्मा जी ने कहा आषाढ़ शुक्ल पक्ष में पद्मा नाम की एकादशी होती है। एक मान्धाता नाम के राजा थे। धर्म एवं आचार से परिपूर्ण थे। वे पुत्र की तरह प्रजा का पालन करते थे। एक बार 3 वर्ष तक वर्षा

नहीं हुई। राजा के ही पाप से प्रजा को कष्ट होता है। परन्तु वे अपने पाप को समझ नहीं पाये। वन में ऋषियों के पास पूछने गये। वहां अंगिरा ऋषि से वर्षा होने के लिये अनुष्ठान पूछा ऋषि ने कहा–आषाढ़ कृष्णा पद्मा एकादशी का व्रत करो। राजा ने व्रत किया व्रत के प्रभाव से वर्षा हुई और सब सुखी हुए।

ब्रह्माण्ड पुराणोक्त पद्मा एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ हरि शयनी ॥

भगवान विष्णु आषाढ़ शुक्ला एकादशी को शयन करते हैं। इस एकादशी से चातुर्मास्य व्रत भी प्रारंभ होता है, और कार्तिक शुक्ला एकादशी को जागते हैं, चार मास सोये रहते हैं, अतः चातुर्मास में मनुष्य को भूमि में शयन करना चाहिये।

श्रावण में हरा शाक, भाद्रपद में दही, आश्विन में दूध, कार्तिक में दाल नहीं खाना चाहिये। गृहस्थ के लिये कृष्ण पक्ष एकादशी वर्जित है, किन्तु चौमासे में करनी चाहिये। ऐसा विधान है।

भविष्य पुराणोक्त हरिशयनी एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ श्रावण कृष्ण कामिका एकादशी ॥

एक समय युधिष्ठिर जी ने भगवान श्री कृष्ण से पूछा प्रभो श्रावण कृष्णा एकादशी का क्या नाम है। तथा उसका क्या फल है? भगवान् श्री कृष्ण ने कहा–एक समय नारद जी ने ब्रह्मा जी से पूछा था। वही कहता हूँ, इस एकादशी का नाम कामिका है, यह समस्त

पापों को नष्ट करने वाली है। इस दिन भगवान् विष्णु का तुलसी पत्र–मंजरी–पुष्प आदि से पूजन करना चाहिये गंगा, काशी, नैमिषारण्य, पुष्कर के तीर्थ का जो फल होता है। वह फल इस एकादशी के व्रत करने से मिल जाता है। भगवान् नारायण मोती माणिक्य से उतना प्रसन्न नहीं होते जितना तुलसी चढ़ाने से होते हैं। एक भार स्वर्ण या चार भार चांदी की पूजा से जो फल प्राप्त होता है, वह केवल तुलसी से पूजन करने पर प्राप्त होता है। जिसने तुलसी की मंजरी से विष्णु भगवान का पूजन कर कामिका एकादशी का व्रत करता है, उसने अपने समस्त पापों को समाप्त कर दिया।

श्री ब्रह्मवैवर्त पुराणोक्त श्रावण कृष्णा कामिका एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ श्रावण शुक्ला पुत्रदा एकादशी ॥

युधिष्ठिर जी ने भगवान् श्री कृष्ण से पूछा–भगवन् श्रावण शुक्ला एकादशी का क्या नाम है? तथा क्या माहात्म्य है। भगवान् ने कहा, श्रावण शुक्ला में होने वाली एकादशी का नाम पुत्रदा एकादशी है। हे धर्मराज एक समय महिष्मती नगरी के महीजित नाम के राजा थे। उनके कोई सन्तान नहीं थी। प्रजा को बुलाकर पूछा–इस जन्म का मेरा कोई पाप नहीं है। आप लोग मेरे लिये सन्तान की व्यवस्था करें। प्रजा आज से ही ऋषियों की खोज में लग गये। एक दिन लोमेश ऋषि के दर्शन हुए। तब प्रजा ने हाथ जोड़कर राजा के सन्तान के विषय में पूछा। तब ऋषि ने ध्यान के द्वारा देखा। और

बोले यह राजा किसी अन्य जन्म से सुकृत हुआ है। परन्तु पूर्व जन्म में यह धनहीन, लोभी था लोगों से धन चूसने वाला था। एक दिन जंगल से बहुत प्यासा जा रहा था, एक जलाशय में प्यासी गाय को हटाकर पानी पिया। इसी का फल है, यह श्रावण शुक्ला पुत्रदा एकादशी का व्रत करें तो पुत्र प्राप्ति निश्चित ही होगी। प्रजा ने इस एकादशी का व्रत करके, राजा को व्रत का फल दिया। इस व्रत के प्रभाव से राजा को पुत्र हुआ। इस एकादशी के व्रत के प्रभाव से पुत्र प्राप्ति होती है। इसी से इस एकादशी का नाम पुत्रदा है।

श्री भविष्योत्तर पुराणोक्त श्रावण शुक्ला पुत्रदा एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ भाद्रपद कृष्णा अजा एकादशी ॥

युधिष्ठिर जी के पूछने पर श्री कृष्ण ने कहा–राजन् भाद्रपद कृष्णा एकादशी का नाम 'अजा एकादशी' है। सत्ययुग में हरिश्चन्द्र नाम के राजा थे। कर्मयोग की रक्षा के लिये, अपना राज्य ऋषि विश्वामित्र को दे दिया। ऋषि ने कहा दान तो दिया परन्तु सांगता सिद्धार्थ और दान दीजिये। तब काशी में जाकर अपनी पत्नी सहित अपने आपको बेचकर ऋषि को धन दिया। हरिश्चन्द्र श्मशान में कफन वस्त्र कर में लेते थे, और भगवद् भक्ति में लीन रहते थे। भगवान ने गौतम ऋषि को भेजा। ऋषि ने कहा तुम भाद्रपद कृष्णा अजा एकादशी का व्रत करो। राजा ने श्रद्धापूर्वक अजा एकादशी का व्रत किया। इस व्रत के प्रभाव से उनका रोहित नाम का पुत्र जो

कि सर्पदंश से मृत्यु को प्राप्त हो गया था, वह जीवित हो गया। और सब कष्ट दूर हो गये। सब देवों के साथ भगवान् ने दर्शन दिया। और देवों ने फूल बरसाये। अन्त में सारे नगर के साथ भगवान् के धाम में गये।

श्री ब्रह्माण्ड पुराणोक्त अजा एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ भाद्रपद शुक्ला जया एकादशी ॥

युधिष्ठिर जी के पूछने पर भगवान श्री कृष्ण ने कहा–शुक्ला एकादशी का नाम जया एकादशी है। श्री कृष्ण कहते हैं–हे नरेश इसी एकादशी को वामन भगवान् ने राजा बलि को जीता था। इसलिये इसे 'वामन' एकादशी भी कहते हैं। इस एकादशी के श्रवण मात्र से ही समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। तब उन्होंने करवट बदली थी इसलिये जया एकादशी को परिवर्तिनी एकादशी भी कहते हैं। इस एकादशी में भगवान वामन का पूजन करना चाहिये।

सत्ययुग में मान्धाता नाम के प्रजापालक धर्मात्मा राजा थे। एक बार तीन वर्ष तक उनके राज्य में वर्षा नहीं हुई। घोर अकाल पड़ा। राजा मान्धाता अंगिरा ऋषि के शरण में गये। ऋषि ने कहा–राजन् भाद्रपद शुक्ला जया एकादशी का व्रत प्रजा एवं परिवार के साथ करो। व्रत के प्रभाव से सब कष्ट दूर होकर वर्षा होगी। सबने मिलकर व्रत किया, व्रत के प्रभाव से वर्षा हुई और सब सुखी हुए।

॥ आश्विन कृष्णा इन्दिरा एकादशी ॥

युधिष्ठिर जी के पूछने पर भगवान् श्री कृष्ण ने कहा—आश्विन कृष्णा एकादशी का नाम इन्दिरा एकादशी है। एक समय महिष्मती नगरी के इन्द्रसेन नाम के बड़े धर्मात्मा राजा थे। प्रभु के नामों का अहर्निस जप करते रहते थे। तथा श्रद्धापूर्वक भगवान् विष्णु का पूजन किया करते थे। एक दिन राज्यसभा में बैठे थे। उनके सामने आकाश से उतरते हुए नारद जी दिखाई दिये। राजा ने सुन्दर आसन दे पाद्य आदि से विधिवत् पूजन किया। सम्मान किया, और पूछा मेरे योग्य सेवा कहें, नारद जी ने कहा—मैं एक समय यमराज के पास गया, वहां तुम्हारे पिता थे, उन्होंने संदेश कहा—मेरे किस पाप के कारण नरक मिला। मेरे पुत्र से संदेश कहना इन्दिरा एकादशी का व्रत करके मुझे फल प्रदान करे। जिससे मैं भगवद् धाम में चला जाऊँ। राजा ने सपरिवार इन्दिरा एकादशी का व्रत करके पिता जी को फल अर्पण किया। आकाश से पुष्प वृष्टि हुई। व्रत के प्रभाव से राजा इन्द्रसेन के पिता गरुड़ पर चढ़ कर भगवान के धाम पधारे।

श्री ब्रह्मवैवर्तपुराणोक्त इन्दिरा एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ आश्विन शुक्ला पापाङ्कुशा एकादशी ॥

धर्मराज युधिष्ठिर के पूछने पर भगवान् श्री कृष्ण ने कहा—आश्विन शुक्ल पक्ष की एकादशी को पापाङ्कुशा एकादशी कहते हैं। इस

एकादशी के व्रत करने पर प्राणी नरक में नहीं जाता। पापांकुशा एकादशी पापों पर अंकुश लगाती है। व्रत के दिन में उपास करें तथा रात्रि में जागरण करें। इस प्रकार करने से बैकुण्ठ धाम प्राप्त होता है। इसके व्रत को करने वाले प्राणी की कई पीढ़ियों का उद्धार होता है।

दस पीढ़ी नाना पक्ष का तथा दश अपने कुल का तथा दस पीढ़ी ससुराल पक्ष का उद्धार होता है यह व्रत अवश्य करना चाहिये।

श्री ब्रह्माण्ड पुराणोक्त पापाङ्कुशा एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ कार्तिक कृष्णपक्ष रमा एकादशी ॥

युधिष्ठिर जी के पूछने पर—भगवान श्री कृष्ण ने कहा—कार्तिक कृष्णा रमा एकादशी है। पूर्व काल में मुचुकुन्द नाम के परम प्रतापी एवं धर्मनिष्ठ राजा थे। जिनका इन्द्र, वरुण, यम के साथ मित्र भाव था। उनकी एक कन्या थी, जिसका नाम चन्द्रभागा था। राजा ने शोभन नाम के राजकुमार से उसका विवाह कर दिया। एक दिन शोभन ससुराल में आये हुए थे, वहां पर ढिंढोरा सुनाई पड़ा कल एकादशी है। कोई भोजन न करे। शोभन ने पत्नी से कहा—मैंने कभी उपवास नहीं किया। पत्नी ने कहा आप क्षत्रिय हैं। क्या इतना भी सहन नहीं कर सकते। यहां तो पशुओं को भी एकादशी को जल तक नहीं दिया जाता। शोभन ने धैर्यपूर्वक व्रत किया परन्तु सूर्योदय होते-होते प्राणान्त हो गया। व्रत के प्रभाव से देव लोक में सम्मानित पद प्राप्त हुआ। एक समय तीर्थ यात्रा के प्रसंग ने सोमशर्मा का

सत्कार किया तथा श्वसुर एवं पत्नी का कुशल समाचार पूछा। विप्र ने कुशलक्षेम सुनाा। तथा आश्चर्य से पूछा इतना सुन्दर नगर आपको कैसे मिला। शोभन ने कहा, यह रमा एकादशी के व्रत का प्रभाव है। परन्तु यह सौन्दर्य स्थिर नहीं है। मेरी पत्नी से यह बात कह दीजियेगा। सोम शर्मा लौटकर सब समाचार चन्द्रभागा को सुनाया। चन्द्रभागा ने कहा—मुझे ले चलिये मैं उस नगर को व्रत के प्रभाव से स्थिर कर दूंगी। सोम शर्मा चन्द्रभागा को लेकर वाम देव ऋषि के पास गये। वामदेव ऋषि ने तप के प्रभाव से दिव्य शरीर प्रदान कर चन्द्रभागा को शोभन के पास पहुंचा दिया। पति-पत्नी मिलकर प्रसन्न हुए। पत्नी को वाम भाग में बैठाया। चन्द्रभागा ने कहा—नाथ मैं आठ वर्ष की अवस्था से एकादशी व्रत कर रही हूं। उस पुण्य के प्रभाव से यह नगर कल्प तक स्थिर रहेगा। व्रत के प्रभाव से चन्द्रभागा दिव्य भोग भोगने लगी।

श्री ब्रह्मवैवर्तपुराणोक्त रमा एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ कार्तिक शुक्ल पक्ष प्रबोधनी एकादशी ॥

युधिष्ठिर जी के पूछने पर श्री कृष्ण ने कहा—इस एकादशी का नाम प्रबोधनी एकादशी है। हे धर्मराज इसी उपाख्यान को ब्रह्मा जी ने नारद जी को सुनाया था। वही तुम भी सुनो।

नारद जी ने पूछा, जो एक समय फलाहार करता है। उसका फल तथा जो रात्रि में फलाहार करता है उसका फल तथा जो उपवास करता है उसका क्या फल है। ब्रह्माजी ने कहा—एक बार दिन में

फलाहार करने से एक जन्म का पाप नष्ट होता है, एक बार रात्रि में फलाहार करने से दो जन्मों के पाप नष्ट होते हैं, तथा उपवास करने से सात जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं।

इस एकादशी के दिन सायं भगवान को शंख, घण्टा, घड़ियाल बजाकर उठाना चाहिये।

प्रभो उठिये संसार का मंगल करिये, तथा उठाकर भगवान् की विधिवत् पूजा करके तुलसी, पुष्प, नैवेद्य आदि अर्पित करें, तथा कथा श्रवण करें। ब्रह्माजी कहते हैं नारद इस एकादशी का बहुत बड़ा प्रभाव है। इस व्रत को करने वाला मनुष्य, स्वर्णदान फल, भूमि दान फल, गौदान फल, अश्वमेघ यज्ञ का फल अनायास ही प्राप्त कर लेता है। इस दिन स्नान, दान, जप, तप, होम, स्वाध्याय या भगवत् पूजन, जो कुछ भी पुण्य किया जाय उसका करोड़ गुणा फल अधिक मिलता है।

द्विजा वाक्यं समृतं राजन् सम्पर्ण व्रत विद्धिदम्।

यह बस न होने पर भी ब्राह्मणों से सद्वचन ही सारी सिद्धियां देते हैं। शास्त्रों में कहा है, इस एकादशी के व्रत के प्रभाव से सौ कुलों का उद्धार होता है, सुमेरू के समान पाप पुञ्ज भी इस व्रत के प्रभाव से नष्ट हो जाते है, रात्रि में जागरण करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है।

श्री स्कन्ध पुराणोक्त प्रबोधनी एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ पुरुषोत्त मास कृष्णा परमा एकादशी ॥

युधिष्ठिर के पूछने पर श्री कृष्ण ने कहा इस एकादशी का नाम परमा है, यह सब पापों को नष्ट करके सांसारिक भोग सुख तथा मुक्ति प्रदान करती है।

भगवान् श्री कृष्ण कहते हैं राजन् पुरातन काल में सुमेधा नाम का एक धर्मवान ब्राह्मण था। उसकी पवित्रा नाम की पत्नी सदा ही पति सेवा में लगी रहती थी। किसी कारण वश वह ब्राह्मण धनहीन हो गया। अब तो ऐसी परिस्थिति आई कि भिक्षा मांगने पर भी भिक्षा नहीं मिलती। पवित्रा घर में जो भी अन्न होता उससे अपने पति एवं अतिथियों को भोजन कराती स्वयं भूखी रह जाती। वह सुन्दर नारी अपने शरीर को क्षीण करने लगी। एक दिन ब्राह्मण अपनी पत्नी से कहा–प्रिये मैं क्या करूं, धन बिना गृह कार्य नहीं चलेगा। अत: धन प्राप्ति के लिये परदेश जाने की अनुमति दो। देवी–ज्ञानी जन सदैव ही उद्यम की प्रशंसा करते हैं। अश्रुपूरित नेत्रों से पवित्रा ने कहा–आपसे अधिक ज्ञानी तो नहीं हूं तब भी आपसे आज्ञा लेकर कहती हूं। इस धरा में जो भी मिलता है वह सब प्रारब्ध से ही मिलता है, अत: हे स्वामी आप यहीं मेरे साथ रहें। मैं आपसे अलग होकर पलभर भी नहीं रह सकती। ब्राह्मण वहीं रुक गये। कुछ समय बाद कौण्डिन्य ऋषि वहाँ आये। वह ब्राह्मण पत्नी सहित ऋषि को प्रणाम किया, तथा स्वागत किया। उनकी पूजा की तथा भोजन कराया। ब्राह्मण पत्नी ने ऋषि से निवेदन किया–हे महर्षि

हमारा दारिद्र्य किस प्रकार दूर होगा। ऋषि ने कहा देवी तुम पुरुषोत्तम मास में होने वाली परमा एकादशी का व्रत करो। और ऋषि ने ब्राह्मण को भी पंच रात्रि का उत्तम व्रत बताया। हे ब्राह्मण परमा एकादशी को प्रात: काल ही पूर्वाह्न क्रिया सम्पन्न करके पंच रात्रि उपवास के नियमों का पालन करो। दोनों दम्पत्तियों को व्रत का विधान बताकर ऋषि चले गये। ब्राह्मण पत्नी सहित यह परमा एकादशी का व्रत पंचरात्रि पर्यन्त किया। व्रत पूर्ण होने पर उन दोनों ने एक राजकुमार को राजभवन से अपनी ओर आते हुए देखा। ब्रह्मा जी के आदेशानुसार उस राजकुमार ने उन दोनों पति–पत्नी को सुन्दर भवन प्रदान कर उनका निवास स्थान बनवाया। और बहुत सा धन देकर तप की प्रशंसा कर अपने स्थान को चला गया। इस परमा एकादशी के व्रत के प्रभव से अन्त में दोनों पति–पत्नी विष्णु धाम को चले गये।

जैसे मानवों में ब्राह्मण श्रेष्ठ है, पशुओं में गौ श्रेष्ठ है, देवों में इन्द्र श्रेष्ठ है, वैसे ही मासों में मलमास सर्वश्रेष्ठ होता है। इस मास की दोनों एकादशियों का व्रत करना चाहिये। अत: हे नरेश इस परमा एकादशी का उपवास यत्नपूर्वक करें। युधिष्ठिर ने पत्नी तथा भाइयों सहित इस उपवास को किया और सांसारिक सुख भोगकर अन्त में बैकुण्ठ धाम को गये।

अधिकमास कृष्णैकादशी कथा संपूर्ण।

॥ पुरुषोत्तम मास शुक्ला पद्मिनी एकादशी ॥

कुन्तु पुत्र बोले हे मधुसूदन यह अधिक मास की कौन सी एकादशी है। इसका नाम और विधि क्या है? भगवान् श्री कृष्ण ने कहा यह मलमास की पद्मिनी एकादशी है। इस एकादशी के व्रत के प्रभाव से मनुष्य पद्मनाभपुर पहुंच जाता है। पुरातन में ब्रह्मा जी ने इस एकादशी की कथा का वर्णन नारद जी से किया था, यह पाप नाशक और मोक्ष प्रदान करने वाली है।

हे नरेश दशमी को नियम पूर्वक रहो—कांसे के बर्तन में भोजन, चना, मांस, मसूर, शाक, कोदो, शहद, दूसरे का अन्न आदि नहीं खाने चाहिये। हविष्यान्न लें। खारी नमक का सेवन न करें। इस एकादशी में आमले के चूर्ण से स्नान करें। स्नानोपरान्त देव एवं पितृ तर्पण करें। हे नरेश—पंचोपचार से केशव एवं महादेव की पूजा करें। भगवान् के समक्ष नृत्य, वादन और कीर्तन करें। और पापी प्राणियों का स्पर्श न करें न वार्तालाप ही करें। भक्तों के साथ में कथा श्रवण करें। रात्रि जागरण में कीर्तन करें और बाजा बजायें। रात्रि के प्रथम प्रहर में गोले का, दूसरे प्रहर में श्रीफल का, तीसरे में बिजौरे से अर्ध्य दें। और चौथे प्रहर में सुपारी का अर्ध्य प्रदान करें। नारंगी से पूजा करना ज्यादा उचित है। इस प्रकार रात्रि जागरण करने से क्रमशः अग्निष्टोम यज्ञ, वाजपेय- यज्ञ, अश्वमेघ यज्ञ, राजसूय यज्ञ का फल प्राप्त होता है। इस उपवास के समान पुण्य और कहीं से नहीं मिलता। त्रेता युग में है हयवंशी राजा कार्तवीर्य के तप से

भगवान श्री हरि प्रसन्न नहीं हुए कार्तवीर्य की पत्नी हरिश्चन्द्र की पुत्री पद्मिनी माता अनुसूया के आदेशानुसार पद्मिनी एकादशी का व्रत किया जिसके प्रभाव से कार्तवीर्य पर श्री हरि प्रसन्न हुए एवं कार्तवीर्य ने रावण को पराजित किया।

इस व्रत को करने वाले एवं कथा सुनने वाले अन्तकाल में बैकुण्ठ धाम प्राप्त करते हैं।

पुरुषोत्तम मास शुक्ला पद्मिनी एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ मार्गशीर्ष कृष्णा उत्पन्ना एकादशी ॥

अर्जुन के पूछने पर भगवान् श्री कृष्ण ने कहा—पार्थ, इस एकादशी का नाम उत्पन्ना एकादशी है। एक समय ब्रह्मा जी से उत्पन्न तालजंघ नाम का महाबली राक्षस था। उसका मुर नाम का बड़ा बुद्धिमान एवं बलशाली बेटा हुआ। उसने अपने बाहुबल से समस्त देवताओं को परास्त कर सूर्य अग्नि, यम आदि के अधिकार छीन लिये। देव सब एकत्रित हो भगवान् शिव के शरण में गये शिव जी ने कहा—श्री विष्णु की शरण में जाओ। सब देव भगवान् श्री हरि के समक्ष पहुंचकर सुन्दर स्तुति की।

हे पुण्डरी काक्ष, हे शरणागत वत्सल मेरी रक्षा कीजिये। हे दीनानाथ आपको नमस्कार है। देवताओं ने अपनी विपत्ति सुनाई। भगवान् श्री हरि ने पूछा वह राक्षस कौन है, देवों ने कहा, वह तालजंघ नाम का राक्षस है। ब्रह्मा जी से वरदान प्राप्त किया है। भगवान् ने सब स्थिति समझी तत्पश्चात् देवताओं को आश्वासन

दिया जाओ वह राक्षस समय आने पर मारा जायेगा। भगवान् ने यथा समय उस राक्षस से युद्ध किये और अपने सुदर्शन चक्र के द्वारा उसकी सारी सेना का संहार कर दिया। तालजंघ से भयंकर युद्ध हुआ। मल्ल युद्ध भी हुआ। श्री हरि वर के प्रभाव से उसे जीत न कसे। भागकर बद्री नारायण की गुफा में जाकर सो गये। राक्षस भी पीछे-पीछे वहां आ पहुंचा और मारने के लिये शस्त्र उठाया उसी समय भगवान् के हृदय से परम सुन्दरी एक दिव्य कन्या उत्पन्न हुई। जिसे देखकर राक्षस मोहित हो गया। सशस्त्र कन्या से युद्ध हुआ। कन्या ने तालजंघ को मार गिराया। भगवान् की निद्रा भंग हुई। राक्षस को मरा हुआ देख बोले। इस बली राक्षस को कौन मारा। कन्या एकादशी बोली, प्रभो आपके हृदय से प्रगट होकर मैंने मार गिराया। श्री हरि ने प्रसन्न होकर वर मांगने को कहा—एकादशी ने कहा—पहला वर प्रभो यह दें कि हमेशा आपकी प्रिया रहूँ। आज के दिन व्रत करने वाले को आपका धाम मिले। दूसरा वर सब विघ्न एवं पापों का नाश करने वाली मैं सब तिथियों में प्रधान तिथि एवं आयु बल को बढ़ाने वाली होऊँ। तीसरा वर यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं तो भक्ति पूर्वक उपवास करने वाले को सब सिद्धियाँ प्राप्त हों। भगवान् कृष्ण ने अर्जुन से कहा—सुदामा नाम के विप्र की पत्नी दरिद्रता से दुखी हो अपने पति (सुदामा) से कहने लगी, प्रभो हम पूर्व जन्म के पाप से पीड़ित हैं, कोई साधन करिये। इसी समय नारद जी का आगमन हुआ, उन्होंने भगवान् श्री हरि के हृदय से उत्पन्न, उत्पन्ना एकादशी के व्रत को किया, जिसके प्रभाव से

धनवान, सुखी हो एवं दु:खों से मुक्त हो सम्पत्तिशाली हो गये। और अन्त में भगवद्धाम को प्राप्त हो गये।

श्री भविष्य पुराणोक्त उत्पन्ना एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ मार्गशीर्ष शुक्ला मोक्षरा एकादशी ॥

युधिष्ठिर के पूछने पर भगवान् कृष्ण ने कहा—मार्गशीर्ष शुक्ला एकादशी का नाम मोक्षदा एकादशी है। यह मोक्ष को प्रदान करने वाली है। श्री कृष्ण ने कहा—एक समय गोकुल नामक नगर में धर्म पारायण प्रजापालक, बैखानस नामक राजा थे। राजा ने स्वप्न में अपने पिता को नरक में पड़ा हुआ देखा। प्रात: सब वृत्तान्त ब्राह्मणों से निवेदन किया। विप्रों ने पर्वत ऋषि के पास राजा को भेजा। राजा ने ऋषि के चरणों में षाष्टांग दण्डवत किया। तथा अपने स्वप्न का दृश्य निवेदन किया। ऋषि ने ध्यान धर कर देखा। बोले मैं जान गया, राजन् तुम्हारे पिता के दो पत्नियां थीं। एक ऋतुमती थी। उसने बुलाया एवं याचना भी की परन्तु कामासक्त राजा प्रथम स्त्री के पास ही रहे। और ऋतुभंग किया। इसी दोष से तुम्हारे पिता नरक में वास कर रहे हैं। तुम मोक्षदा एकादशी का व्रत करो, और फल पिता को समर्पित करो तो तुम्हारे पिता की मुक्ति हो जायेगी। राजा वैखानस ने सपरिवार मोक्षरा एकादशी का व्रत करके फल पिता श्री को अर्पण किया। व्रत के प्रभाव से राजा के पिता आशीर्वाद देते हुए पुत्र तेरा कल्याण हो और भगवान् के धाम को चले गये। इस एकादशी को महाभारत में कुरुक्षेत्र की भूमि पर भगवान् श्री कृष्ण

अर्जुन को गीता सुनाकर मोह भंग किया। इस दिन भगवान कृष्ण एवं गीता का पूजन करना चाहिये। तथा गीता का पाठ करना चाहिये।

श्री ब्रह्माण्ड पुराणोक्त मोक्षदा एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ पौष कृष्ण सफला एकादशी ॥

युधिष्ठिर के पूछने पर श्री कृष्ण ने कहा—इस एकादशी का नाम सफला है, इस एकादशी को नारायण भगवान् की पूजा करनी चाहिये। पूर्वकाल में चम्पावती नगरी के माहिष्मन् नाम के राजा थे। उनके चार पुत्र थे, बड़ा पुत्र पापाचारी था, पिता ने उसे घर एवं नगरी से निकाल दिया। वह वन में भटकता हुआ बहुत दुखी था। वस्त्र सब फट गये थे। रात्रि में ठंड के कारण बेहोश हो गया। दोपहर में धूप के लगने से होश आया। कुछ फल इकट्ठा किये। और पीपल की जड़ में रख दिये। खाये नहीं, रात्रि में नींद नहीं आई, जागरण हो गया। दैव योग से उस दिन सफला एकादशी थी, सफला एकादशी के व्रत से उसकी बुद्धि शुद्ध हो गई।

सूर्योदय के समय एक दिव्य अश्व उपस्थित हुआ, और आकाशवाणी हुई। आकशवाणी ने कहा हे लुम्पक तुमने सफला एकादशी का उपवास एवं जागरण किया है, वासुदेव भगवान् तुम्हारे ऊपर प्रसन्न है।, पिता के पास जाओ, तथा निष्कण्टक राज्य करो। लुम्पक का दिव्य शरीर हो गया, और अश्व पर चढ़ पिता के पास गया पिता ने सदाचारी एवं वैष्णव जानकर पुत्र लुम्पक को राज्य दे स्वयं वन में तप करने चला गया।

सफला एकादशी व्रत करने से सारे मनोरथ सिद्ध (सफल) होते हैं।

श्री ब्रह्माण्ड पुराणोक्त सफला एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ पौष शुक्ला-पुत्रदा एकादशी ॥

धर्मराज युधिष्ठिर के पूछने पर लीला पुरुषोत्तम श्री कृष्ण ने कहा—पौष शुक्ला एकादशी का नाम पुत्रदा एकादशी है। इस एकादशी के व्रत के प्रभाव से सन्तान की प्राप्ति विशेष पुत्र की प्राप्ति होती है।

हे राजन् भद्रावती नगरी के सुकेतुमान राजा थे उनकी सेव्या नाम की पतिव्रता पत्नी थी। परन्तु पुत्र नहीं था, सन्तान न होने से वे बड़े दु:खी थे। एक दिन पत्नी ने कहा—महाराज पूर्व जन्म के पाप से सन्तान नहीं हुई। कोई उपास करिये। आपके पितर दु:खी हैं, राजा पत्नी की बात सुन घोड़े पर सवार हो गहन वन में चला गया। बड़ा भयंकर वन था, उस वन में एक दिव्य सरोवर था। जहां सब ऋषि इकट्ठे होकर भगवान की पूजा कर रहे थे। राजा ने सबको प्रणाम किया। और पूछा यह क्या पूजन हो रहा है। ऋषियों ने कहा आज पुत्रदा एकादशी है। इस दिन व्रत करने से पुत्र प्राप्त होता है। राजा ने निवेदन किया मेरे भी कोई सन्तान नहीं है। ऋषियों ने कहा आप इस व्रत को विधि विधान से कीजिये। इसके प्रभाव से अवश्य पुत्र प्राप्त होगा। राजा ने घर आकर व्रत एंव पूजन किया तथा एक ही वर्ष में व्रत के प्रभाव से रानी सेव्या को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। इस

व्रत को जो करता है, उसके पूर्व जन्म के पाप नष्ट होकर सन्तान की प्राप्ति होती है।

श्री भविष्योत्तर पुराणोक्त पुत्रदा एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ माघ कृष्णा षट्तिला एकादशी ॥

एक समय नारद जी ने पूछा—हे भगवान् माघ शुक्ला षट्तिला एकादशी का क्या फल है। क्या विधान है प्रभो दास समझ कर कहें। भगवान् ने कहा—इस एकादशी को तिल से स्नान तथा तिलों का उबटन लगाना चाहिये। और तिल ही खाना चाहिये। तथा तिल का ही दान करना चाहिये। श्री कृष्ण ने कहा—पूर्व काल में एक ब्राह्मणी श्रद्धापूर्वक मेरा पूजन व व्रत करने वाली एवं पति-कुटुम्ब सेवा परायणा थी। इसी कारण बहुत कृश (कमजोर) हो गई थी। परन्तु किसी को कोई दान नहीं दिया। एक दिन भगवान् कपाली का वेष धारण कर उसके यहां भिक्षा मांगने आये। उसने मिट्टी उठाकर दे दिया। यह स्वर्ग में गई, वहां दिव्य भवन इसके रहने को मिला, लेकिन अन्न नहीं था। मेरे पास में आकर बोली मैंने इतने व्रत व पूजन किये पर खाने को कुछ नहीं। भगवान् ने कहा—तुम अपने महल को जाओ, कुछ समय बाद वहां देवांगनायें आयेंगी पर तुम दरवाज नहीं खोलना। और इसी समय षट्तिला एकादशी का माहात्म्य जानकर व्रत करना सब सुलभ हो जायेगा। ब्राह्मणी घर गई कुछ समय पश्चात् देवांगनायें आई। और बोली—दरवाजा खोलो हम तुम्हें देखना चाहती हैं, ब्राह्मणी ने कहा पहले षट्तिला एकादशी का

पुण्य कहो। देवांगनाओं ने षट्तिला एकादशी के सुन्दर विधान एवं माहात्म्य को कहा। ब्राह्मणी ने दरवाजा खोला देखा मानुषी बैठी है। ब्राह्मणी ने षट्तिला का व्रत कि। व्रत के प्रभाव से सब प्रकार की भोग सामग्री प्राप्त हो गई। अन्त में स्वर्ग को छोड़कर भगवद्धाम को चली गई।

श्री भविष्योत्तर पुराणोक्त षट्तिला एकादशी व्रत संपूर्ण।

॥ माघ शुक्ला जया एकादशी ॥

युधिष्ठिर के पूछने पर श्री कृष्ण ने कहा इस एकादशी का नाम जया एकादशी है। एक समय इन्द्र की सभा में माल्यवान एवं पुष्पवती के अश्लील आचरण से रुष्ट होकर इन्द्र ने श्राप दे दिया। जाओ पिशाच हो जाओ। ये दोनों पिशाच योनि में बड़े दुःखी मन से हिमालय पर्वत में रहने लगे। एक दिन विचार किया, यह हमारा श्राप कैसे नष्ट हो। भगवत् कृपा प्रसाद से (दैव योग से) एक दिन यह एकादशी आई इस दिन इन्होंने न तो अन्न जल लिया न तो पत्ते आदि ही खाये न जीव हिंसा ही की, और न तो स्त्री समागम ही किया। और इस दिन 'सर्वोत्तम तिथि को रात्रि में जागरण किया इस प्रकार के करने से इनका सुन्दर रूप से जया एकादशी का व्रत हो गया। व्रत के प्रभाव से श्राप से मुक्त हो दिव्य शरीर धारण किया। और भगवान् विष्णु की कृपा से पुनः इन्द्र की सेवा में जा पहुंचे इन्द्र ने आश्चर्य किया। और पूछा यह सब कैसे हुआ, माल्यवान गन्धर्व ने बताया से जया एकादशी के व्रत का प्रभाव है। इस प्रकार

जानकर इन्द्र ने सम्मान किया।

यह एकादशी पिशाचत्व से मुक्त करके दिव्य शरीर प्रदान करती है। और भगवद्धाम को प्रदान करती है।

श्री भविष्योत्तर पुराणोक्त जया एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ फाल्गुन कृष्णा विजया एकादशी ॥

धर्मदेव युधिष्ठिर के प्रश्न पूछने पर श्री कृष्ण जी ने कहा इस एकादशी का नाम विजया एकादशी है। इसका व्रत करने से विजय मिलती है। त्रेता युग की बात है, भगवान् श्री राम वन में थे। दुर्योग के कारण सीता हरण हो गया। श्री राम सीता की खोज करते हुए हनुमान जी के प्रयास से सुग्रीव से मैत्री करके हनुमान द्वारा सीता का पता लगने पर वानर भालू सेना को लेकर समुद्र के तट पर पहुंचे। वहां अब कोई मार्ग न था। श्री राम बोले–

"सौमित्रे केन पुण्येन तीर्यन्ते वरुणालयः"

हे लक्ष्मण किस पुण्य के प्रताप से सागर पार होकर लंका पहुंचे। लक्ष्मण ने कहा, यहां वकदालभ्य नाम के मुनि रहते हैं। उनसे उपाय पूछिये। श्री राम ने जाकर मुनि के चरणों में प्रणाम करके उपाय पूछा। मुनि ने कहा–

फाल्गुनस्या सिते पक्षै विजयैकादशीभवेत्।
तस्या व्रते कृते राम विजयस्ते भविष्यति।।
निः संशयं समुद्रं च तरिष्यति स वानरः।।

फाल्गुन मास की कृष्णा विजया एकादशी का व्रत करिये। हे

राम आपकी विजय निश्चित होगी। तथा वानर सेना सहित निःसंदेह बड़ी सरलता से समुद्र पार पर लेंगे। श्री राम ने मुनि द्वारा बताये हुए विजया एकादशी के व्रत को किया। जिसके प्रभाव से वानर सेना को पार ले जाकर रावण को मार गिराया। इस तरह श्री राम की विजय हुई।

श्री स्कन्द पुराणोक्त विजया एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ फाल्गुन शुक्ला आमलकी एकादशी ॥

एक समय राजा मान्धाता ने अपने गुरु वशिष्ठ जी से पूछा गुरुदेव आमलकी एकादशी का क्या माहात्म्य है, वशिष्ठ जी ने कहा–वैदेशिक नगर में एक परम पुण्यात्मा विप्रसेवा परायण चैत्ररथ नाम के राजा थे। इनके राज्य में सभी सुखी थे। एक दिन फाल्गुन शुक्ला आमलकी एकादशी आई। सब लोग आंवले के वृक्ष के समीप बैठकर परशुराम और नारायण का पूजन तथा आंवला वृक्ष का पूजन कर रहे थे।

इस महोत्सव को एक व्याध भी मग्न होकर देख रहा था। पूजन करने वाले पूजा करके प्रार्थना कर रहे थे।

जाम दग्न्य नमस्तेस्तु रेणुकानंद वर्धनः।
आमलकी कृतच्छायः भुक्ति मुक्ति वरप्रदः।।

रेणुका के आनन्द को बढ़ाने वाले हे परशुराम जी आपको नमस्कार है। आंवले की छाया का सेवन करने वाले सांसारिक सुख तथा मोक्ष प्रदान करने वाले आपको नमस्कार है। ब्रह्माजी ने एक

बार श्री हरि की बड़ी तपस्या की। भगवान् श्री हरि ने प्रसन्न हो दर्शन दिया। दर्शन के आनन्द से आंखों से खुशी के आंसू टपक पड़े। उसी बिन्दु से आंवले की उत्पत्ति हुई। हे पापों के नाश करने वाली ब्रह्माजी से उत्पन्न हे आमलकी मेरा अर्ध्य ग्रहण करो। आपको नमस्कार है। तुम ब्रह्मस्वरूप हो। तथा श्रीराम के द्वारा पूजित हो। (त्वंतु रामेण पूजिता) प्रदक्षिणा के विधान से मेरे सब पाप नाश करना। व्याध ने सब पूजन देखा उस दिन कुछ भी नहीं खाया। व्रत के प्रभाव से व्याध जयन्ती नगरी में विदूरथ नाम के राजा के यहां वसुरथ नाम से पुत्र रूप में पैदा हुआ। और आगे चलकर बहुत पराक्रमी हुआ आमलकी एकादशी के प्रभाव से जंगल में डाकुओं के द्वारा बच गया तब आकाशवाणी के द्वारा व्रत के महत्व को सुना और इस जन्म में भी विधि पूर्वक व्रत को करने लगा।

अन्त में मोक्ष को प्राप्त हुआ।

श्री ब्रह्माण्ड पुराणोक्त आमलकी एकादशी कथा संपूर्ण।

॥ चैत्र कृष्णा पाप मोचिनी एकादशी ॥

धर्मराज युधिष्ठिर जी के पूछने पर भगवान् श्री कृष्ण ने कहा। इस एकादशी का नाम पापमोचिनी एकादशी है। एक समय वन में च्यवन ऋषि के पुत्र मेधावी ऋषि तप कर रहे थे। एक मञ्जुघोषा नाम की अप्सरा तेजस्वी मेधावी मुनि को देख मोहित हो गई। मेधावी भी अप्सरा को देखकर शिवत्व को भूल अप्सरा के साथ में रमण करने लगे। इस तरह 57 वर्ष 9 महीने 3 दिन बीत गये।

अप्सरा ने कहा—प्रभो मुझे जाने की आज्ञा दीजिये। मुनि ने कहा—अभी आई हो, कल संध्या को चली जाना। मैं संध्या कर लेता हूं। अप्सरा ने कहा प्रभो भूल कर रहे हो। मुझे बहुत वर्ष बीत गये। तब ऋषि को समय का स्मरण हुआ। ऋषि मेधावी ने कहा तूने मेरा तप भंग किया है, जाओ पिशाचिनी हो जाओ। मेधावी से कहा एक साथ सात पैर चलने से शास्त्र में मैत्री मानी है। मैं तो आपके पास 57 वर्ष रही हूं। मैत्री निभाइये, कृपा करिये। तब दयावश ऋषि ने कहा, चैत्र कृष्णा पापमोचिनी एकादशी का व्रत करो जिससे तुम्हें पिशाच योनि से छुटकारा मिल जायेगा। अप्सरा ने व्रत किया और मुक्ति प्राप्त की। मेधावी पिता के पास पहुंचे, पिता ने पाप मोचिनी एकादशी का व्रत कराकर निष्पाप किया।

पठनाच्छ्रवणाद्राजन् गोसहस्र फलं लभेत्।
ब्रह्महा भ्रूणहा चैव सुरापो गुरु तल्पगः।।
व्रतस्य चास्य करणात् पापमुक्ता भवन्ति ते।
बहु पुण्य प्रदं ह्येतत् करणात् व्रतमुत्तमम्।।

इसके पठन व श्रवण से एक हजार गौदान का फल मिलता है। गुरुस्त्री गमन, ब्रह्म हत्या, आदि दोषों से भी मुक्ति मिलती है। और अत्यधिक पुण्य की प्राप्ति होती है।

भविष्य पुराणोक्त पाप मोचिनी एकादशी कथा संपूर्ण।

सप्तवार व्रत कथा

॥ अथ रविवार व्रत ॥ (सूर्य व्रत)

अथ आश्विन आदि रविवारेषु आशादित्यव्रतम्–आश्विन मास के प्रथम रविवार से यह व्रत प्रारंभ करना चाहिये। बारह वर्ष या बारह महिनें तक प्रत्येक रविवार का व्रत बिना नमक के तथा एक अन्न का भोजन दिन में एक बार एक भुक्त व्रत करना चाहिये। कोई कष्ट या कोई ग्रह दोष हो तो किसी भी महीने में शुभ तिथि देखकर रविवार को व्रत प्रारंभ कर देना चाहिये। सूर्य प्राणि मात्र की आत्मा है। वेदों में कहा है (सूर्यऽ आत्माजगतश्तस्थुषश्च) सूर्य का मानव जीवन पर बड़ा उपकार है। सबको प्रकाश सुख एवं पवित्रता प्रदान करता है। अतः सूर्य के प्रति कृतज्ञ होकर जीवन में सूर्यनारायण की पूजा अवश्य करनी चाहिये। भगवान् सूर्य नारायण की कृपा से सब कुछ प्राप्त होता है। लाल चन्दन से ताबें के पात्र में द्वादश (बारह) पल्लव का कमल बनाकर लाल चन्दन तथा लाल पुष्प से पूजा करनी चाहिये। हस्त नक्षत्र को रविवार हो तो उस दिन से सात रविवार तक व्रत करना चाहिये।

सूर्य अर्घ्य विधान–तांबे के पात्र में लाल चन्दन एंव लाल पुष्प जल के साथ मिश्रित करके तीन बार अर्घ्य देना चाहिये।

मन्त्र–

येहि सूर्य सहस्रांसों देव-देव जगत्पये।
अनुकम्पयमां भक्त्या गृहाणार्घ्यं दिवाकर॥

अर्घ्य देकर प्रार्थना करें–

आदि देव नमस्तुभ्यं प्रसीद मम भास्कर।
दिवाकर नमस्तुभ्यं प्रभाकर नमोस्तुते॥

प्रार्थना में रक्त पुष्प चढ़ायें।

अथ रविवार व्रत कथा–एक समय द्वारिका पुरी में दुर्वासा मुनि भगवान् कृष्ण के पास पधारे। श्री कृष्ण ने उनका यथोचित सत्कार किया। जब दुर्वासा जी जा रहे थे, मुनि को देख साम्ब हंस पड़ा। दुर्वासा जी को क्रोध आ गया लेकिन कुछ बोले नहीं। जाकर नारद जी को सब बताया, नारद जी ने आकर सारा वृत्तान्त श्री कृष्ण को सुनाया। भगवान् श्री कृष्ण बहुत दुःखी हुए। और भगवान् साम्ब को श्राप दे दिया, कहा जाओ कुष्ठी हो जाओ। साम्ब ने कहा, पिता-पुत्र को प्यार करता है, आज यह शाप क्यों हुआ। भगवान् श्री कृष्ण ने कहा पुत्र तुमने एक संत का अपमान किया है, और संत का कोई अपमान या अपराध करे मुझे सहनीय नहीं है, तुमने दुर्वासा मुनि का अपमान किया है। यह उन्हीं के क्रोध का परिणाम है। तथा साम्ब के प्रार्थना पर श्री कृष्ण ने कहा भगवान् भुवनभास्कर सूर्य की उपासना करो। यह रोग दूर हो जायेगा साम्ब ने रविवार व्रत एवं सूर्योपासना की और कुष्ट रोग से मुक्त हो गया। रोग निवृत्ति के लिये सूर्य उपासना परम आवश्यक है। पूजन तथा कथा श्रवण के पश्चात् सूर्यस्तोत्र का पाठ करने से कुष्ठ रोग से छुटकारा मिल जाता है।

स्कन्द पुराणोक्त रविवार कथा संपूर्ण।

॥ सोमवार व्रत ॥

भोलेनाथ के उपासक भक्तों को सोमवार व्रत या सोमवार को श्री परमेश्वर शिव का पूजन करना चाहिये। श्रावण में तो विशेष रूप से शिव पूजन तथा व्रत करना चाहिये। प्रत्येक गृहस्थी को चाहिये कि वह प्रतिदिन शालग्राम प्रतिमा एवं शिव जी का पूजन कर, आरती कर भोग लगाये तत्पश्चात् स्वयं भोजन करे।

सोमवार का व्रत दो प्रकार का होता है। एक तो शिव पूजन करके दिन में एक बार अन्न का आहार लेते हैं। दूसरे सायं प्रदोष बेला में शिवउपासनोपरान्त रात्रि में एक बार भोजन करना चाहिये। दोनों ही प्रकार के व्रत की विधि शास्त्रोक्त है। पूजन के पश्चात् शिव जी का भजन करना चाहिये। ऐसा करने से शिव जी की विशेष कृपा प्राप्त होती है। हो सके तो सोमवार व्रत करके प्रदोष वेला में शिव उपासना करके रात्रि में भोजन करे।

कहा है—

केवलं चाऽपि ये कुर्यूः चन्द्रवारे शिवार्चनम्।
न तेषां विद्यते किंचित् इहा मुत्र च दुर्लभम्॥

सोमवार व्रत विधान—सोमवार का व्रत तीसरे प्रहर तक रखा जाता है। सोमवार व्रत करने वाला व्रती शिवजी का स्मरण कर उठे एवं नित्य कर्म से निवृत्त हो। बालक, स्त्री, युवा सभी इस व्रत को कर सकते हैं। इस व्रत में फलाहार अथवा निराहार रहने की कोई आवश्यकता नहीं। प्रदोष (सायं) वेला में शिव जी का तथा पार्वती

जी का पूजन करके भोजन कर लेना चाहिये। भोजन चौबीस घंटे में एक बार ही करना चाहिये। यदि बिना नमक के भोजन किया जाय तो सर्वोत्तम है। इस व्रत में किसी को सताना, झूठ बोलना, निन्दा करना, झूठे मुख सोना, हंसी करना, व्यर्थ सम्भाषण ये सब बातें व्रतोपवास में वर्जित हैं। इस प्रकार नियम के अनुसार व्रत करने से शिव कृपा प्राप्त होती है। तथा धन धान्य की समृद्धि प्राप्त होती है। अन्त में दुर्लभ शिव धाम प्राप्त होता है।

सोमवार कथा—आर्यावर्त देश में धर्मात्मा चित्र वर्मा नामक बड़े प्रतापी राजा थे। यज्ञ अनुष्ठान के प्रभाव से बहुत समय के बाद उनके यहां एक दिव्य कन्या उत्पन्न हुई, तथा उसका सीमन्तिनी नाम रखा गया। यह साक्षात् लक्ष्मी प्रतीत होती थी। ज्योतिषियों ने राजा चित्र वर्मा से कहा। चौदह वर्ष में यह विधवा हो जायेगी। राजा बड़े दु:खी हुए। बालिका ने वैधव्य की बात सुनकर याज्ञवल्क्य मुनि की शरण ली। सारा वृत्तान्त सुनाया। याज्ञवल्क्य मुनि ने कहा—बेटी सोमवार का व्रत करके शिव पार्वती का पूजन करो। बालिका ने बड़ी निष्ठा से सोमवार का व्रत करके शिव एवं शिवा का पूजन किया। और श्रद्धापूर्वक प्रत्येक सोमवार का व्रत करने लगी। राजा ने यथा दस वर्ष की पुत्री की अवस्थ होने पर इन्द्रसेन पुत्र चन्द्रांगद के साथ विवाह कर दिया। एक दिन चन्द्रांगद यमुना स्नान करने गया नाव में बैठकर सैर करने लगा। अचानक बाढ़ तूफान के कारण नौका भंवर में फंसकर डूब गई। सभी बन्धुजन अत्यन्त दु:खी हुए। सीमन्तिनी भी शरीर त्यागने लगी तो पिता (राजा) ने रोक लिया।

वैधव्य प्राप्त होने पर भी सीमन्तिनी सोमवार व्रत करती रही। एक नाग कन्या जल क्रीड़ा करने के लिये पाताल से आई थी। राज कुमार चन्द्रांगद को पकड़कर पाताल लोक तक्षक के पास ले गई। राजकुमार ने वहां बड़ा वैभव देखा। तक्षक ने शिव कृपा से सब वृत्तान्त जाना। राजकुमार ने कहा–आपके लोक के तथा आपके दर्शन करके आज मैं धन्य हो गया। तक्षक ने रत्न तथा दिव्य आभूषण देकर राजकुमार को विदा किया अपने पुत्र को पहुंचाने के लिये भेजा। इसी समय सीमन्तिनी स्नान करने के लिये आई, पति को देखा तथा सोमवार व्रत के प्रभाव से शिव-पार्वती को प्रसन्न जान बहुत खुशी हुई। चन्द्रांगद भी अपनी प्रिया को पा बहुत प्रसन्न हुआ। पिता ने भी इस वृत्तान्त को जान प्रसन्नता पूर्वक भगवान् शिव एवं पार्वती जी का दिव्य पूजन किया।

स्कन्द पुराणोक्त सोमवार व्रत कथा संपूर्ण।

॥ अथ षोडश सोमवार व्रत कथा ॥

दोहा–

सुमिरी भवानी शंकर ही गणपति को शीष नवाय।
सोलह सोमन की कथा कहो यथा विधि गाय।।

एक समय भगवान् शंकर जी जगदम्बा पार्वती जी के साथ मृत्यु लोक में भ्रमण करने की इच्छा से आये। भ्रमण करते-करते वे एक अत्यन्त ही रमणीक राजा विदर्भ के देशान्तर्गत अमरापुरी नाम की नगरी में पहुंचे जो कि संपूर्ण सुखों से परिपूर्ण देवराज इन्द्र की अमरावती

के समान थी। उसमें राजा के द्वारा बनवाया हुआ एक दिव्य शिवालय बनवाया हुआ था। उसमें शिवजी पार्वती जी के साथ निवास करने लगे। एक दिन पार्वती ने प्राणेश्वर महादेव जी को प्रसन्न जान कुछ मनोविनोद करने की इच्छा से बोलीं। हे नाथ आज हम और आप चौसढ़ खेलें। महादेवजी अपनी प्रिया की बात को स्वीकार कर चौसढ़ खेलने लगे। उसी समय मंदिर का पुजारी शिव जी की पूजा करने आया। तब पार्वती जी बोली हे विप्र बताओ इस बाजी में हम दोनों में से कौन जीतेगा। ब्राह्मण बिना विचारे ही बोल उठा महादेव जी जीतेंगे। जब खेल खत्म हुआ तो पार्वती जी जीत गईं। तत्पश्चात् पार्वती जी क्रोधित हो ब्राह्मण को झूठ बोलने के अपराध में शाप देने लगीं। महादेव जी ने बहुत समझाया। परन्तु उन्होंने ब्राह्मण को कोढ़ी होने का शाप दे ही दिया। कुछ दिन बीतने पर ब्राह्मण के सारे शरीर में कोढ़ हो गया। अब तो ब्राह्मण बहुत दु:खी हुआ। इस प्रकार उसे काफी दिन बीत गये। एक दिन देवलोक से कुछ अप्सरायें महादेव जी का पूजन करने उसी मंदिर में आईं। पुजारी जी को कोढ़ से दु:खी देख वे इसका कारण पूछने लगीं। तब ब्राह्मण ने आद्योपान्त सारी कथा कह सुनाई। अप्सरायें बोली हे विप्र, तुम दु:खी मत हो। शिवजी तुम्हारे सब दु:खों को दूर करेंगे। तुम व्रतों में सर्वोपरि जो सोलह सोमवारों का व्रत है, उसे श्रद्धावनत होकर करो। तब पुजारी ने बड़ी विनम्रता से अप्सराओं से सोलह सोमवारों के व्रत की विधि पूछी। अप्सरायें बोलीं–हे विप्र जिस दिन सोमवार हो उस दिन बड़े भक्ति भाव से व्रत कर स्वच्छ वस्त्र पहन कर, आधा सेर स्वच्छ गेहूं का आटा लेकर

उसके तीन भाग करें। और घी, गुड़,धूप, दीप, नैवेद्य, फल, सुपाड़ी, लौंग, इलायची, बेल पत्र, जनेऊ जोड़ा, चन्दन, अक्षत और पुष्प आदि से प्रदोष काल में महादेव जी का विधि विधान से पूजन करें। पश्चात् उन भागों को शिव का प्रसाद जान उपस्थित जन में बांट दें। फिर स्वयं प्रसाद ग्रहण करें। फिर सत्रहवें सोमवार के दिन पाव भर गेहूं का चूरन लें और उसकी बाटी बना लें उसमें घी और गुड़ मिलाकर चूरण तैयार कर लें। फिर शिवजी को भोग लगाकर भक्तों में बांट दें। बचे हुए प्रसाद को अपने परिवार के साथ में प्रसन्न मन के साथ स्वयं ग्रहण करें। ऐसा करने से शिव कृपा प्राप्त होती है। और शिव कृपा से व्रती के समस्त मनोरथ पूर्ण होते हैं।

ऐसा कह अप्सरायें स्वर्ग को चली गयीं ब्राह्मण ने उनकी बताई विधि से सोलह सोमवारों का व्रत किया और शिव जी की कृपा से वह ब्राह्मण कोढ़ मुक्त हो आनन्दपूर्वक से रहने लगा। कुछ दिन बाद पुनः शिव पार्वती जी उस मंदिर में आये। तब पार्वती जी ने ब्राह्मण को निरोग देख उससे इसका कारण पूछा। उसने सोलह सोमवार व्रत की कथा सुनाई। तब पार्वती जी ने प्रसन्न हो व्रत करने के लिये उससे व्रत की विधि पूछी। जिसके करने के कारण उनके रूठे हुए पुत्र कार्तिकेय जी माता के आज्ञाकारी हुए। एक दिन उन्होंने अपने विचारों को माता के प्रति बदला हुआ देख उनसे पूछा हे माता आपने ऐसा कौन सा उपाय किया, जिससे मेरा मन आपकी ओर आकर्षित हुआ। तब पार्वतजी जी ने सोलह सोमवार व्रत की कथा सुनाई। कार्तिकेय जी बोले—यह व्रत मैं भी करूंगा। क्योंकि मेरा मित्र विदेश

गया है, मेरी उससे मिलने की इच्छा है। जब उन्होंने भी इस व्रत को किया तो उनका प्रिय मित्र मिल गया। तब मित्र ने इस मिलने के भेद को उनसे पूछा। कार्तिकेय जी बोले—हे मित्र मैंने सोलह सोमवारों का व्रत किया है। जिसके प्रभाव से तुम मिले, अब ब्राह्मण मित्र ने भी अपने विवाह की इच्छा से इसका विधि-विधान उनसे पूछा और यथाविधि व्रत किया। एक दिन व्रत के प्रभाव से किसी कार्यवश ब्राह्मण विदेश गया। जहाँ राजा की लड़की का स्वयम्बर था। राजा ने प्रतिज्ञा की कि जिस किसी के गले में सर्वआभूषणों से अलंकृत कन्या वर माला डाल देगी, उसी के साथ मैं अपनी पुत्री का विवाह कर दूंगा। शिवजी की कृपा से ब्राह्मण स्वयंवर देखने की इच्छा से राजसभा में एक ओर जा बैठा। नियत समय में सर्व आभूषणों से सुसज्जित राजकुमारी आई और ब्राह्मण के गले में माला डाल दी। राजा ने अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार बड़ी धूम-धाम के साथ में अपनी कन्या का विवाह ब्राह्मण के साथ कर दिया। और बहुत सा धन देकर संतुष्ट किया। ब्राह्मण सुन्दर राजकुमारी को पाकर अपने देश में आकर सुखमय जीवन बिताने लगा। एक दिन राजकुमारी ने पति से पूछा—हे नाथ आपने ऐसा कौन सा पुण्य किया जिसके प्रभाव से मैंने सब राजकुमारों को छोड़कर आपको ही वरण किया। ब्राह्मण बोला—हे प्रिये मैंने अपने मित्र स्वामी कार्तिकेय के द्वारा बताये गये सोलह सोमवारों का व्रत किया, उसके प्रभाव से मुझे तुम राजलक्ष्मी प्राप्त हुई हो। व्रत के प्रभाव को सुन वह बहुत आश्चर्य चकित हुई। और पुत्र की कामना से व्रत करने लगी। शिव जी की कृपा से उसके गर्भ

से सर्वगुण सम्पन्न सुन्दर सुशील एक पुत्र उत्पन्न हुआ। माता-पिता उस पुत्र को पाकर बहुत प्रसन्नु हुए। और अनेकानेक प्रकार से उसका लालन पालन करने लगे। जब पुत्र बड़ा हुआ तो उसने अपनी माता से पूछा कि आपने ऐसा कौन सा उपाय किया जिसके बल से मैं आपके गर्भ से पैदा हुआ। राजकुमारी ने अपने पुत्र की बात सुन सोलह सोमवार की व्रत कथा यथाविधि सुनाई। पुत्र ने ऐसे व्रत को जो संपूर्ण मनोरथों को पूर्ण करने वाला है, सुना तो राज्याधिकार पाने की लालसा से व्रत करने लगा। तब तक एक देश के वृद्ध राजा ने कुछ दूतों को अपनी कन्या के योग्य वर ढूढ़ने को भेजा। उन्होंने आकर ब्राह्मण कुमार को जो कि सर्वगुण सम्पन्न था वरण किया। और राजा ने बड़ी प्रसन्ता के साथ अपनी पुत्री का विवाह उसके साथ कर दिया। राजा के स्वर्गलोक गमन के पश्चात् यही ब्राह्मण पुत्र राजगद्दी पर बैठाया गया। क्योंकि राजा के कोई भी पुत्र नहीं था। राज्य पाने पर भी ब्राह्मण व्रत करता रहा। जब सत्रहवाँ सोमवार आया तो उसने अपनीप्राण वल्लभा से पूजन की सामग्री लेकर शिव मंदिर में चलने को कहा। राजपुत्री ने उसकी आज्ञा पर कुछ ध्यान न दिया, और पूजन की सब सामग्री अपने दास-दासियों से भिजवा दी पर स्वयं नहीं गई। जब राजा ने शिव पूजन किया तो आकाशवाणी हुई। कि हे राजा तुम अपनी पत्नी को शीघ्र ही राजमहल से निकाल देना। नहीं तो ये तुम्हारा सर्वनाश कर देगी। आकाशवाणी को सुन राजा (ब्राह्मण पुत्र) आश्चर्य चकित हो तत्काल राजमहल में आया। और मन्त्रियों को बुलाकर सब हाल कहने लगा। कि मन्त्रियों शिवालय

में आकाशवाणी हुई है कि तुम अपनी रानी को निकाल दो। नहीं तो यह सर्वनाश कर देगी। यह सुन मंत्री आदि सब बड़े दु:खी हुए। और बोले जिस कन्या से इसे राज्य मिला है आज वही राजा उसको निकालना चाहता है। अन्त में राजा ने उसे निकाल ही दिया। रानी दु:खी हृदय से अपने भाग्य को कोसती हुई नगर से बाहर निकल गई। बिना पदत्राण, फटे वस्त्र पहिने भूख से व्याकुल धीरे-धीरे चलकर एक नगर में गई। वहां एक बुढ़िया सूत कातकर बेचने जा रही थी। बुढ़िया उसकी दु:खित दशा को देखकर बोली तू चल मेरे साथ सूत बिकवा मैं वृद्धा हूं। यह सुन रानी ने उसके सिर पर से गठरी उतार कर अपने सिर पर रख ली। उसी समय ऐसी आंधी आई कि उसका सब सूत आंधी में उड़ गया। बुढ़िया ने दु:खी हो उसको अपने पास से हटा दिया।अब रानी ने एक तेली के घर गई तो उसके सभी तेल के मटके शिव जी के कोप से चटक गये। यह देख तेली ने भी रानी को अपने यहां से निकाल दिया। रानी अत्यन्त दु:ख पाती हुई, एक नदी के किनारे गई तो नदी का सारा पानी सूख गया। फिर वह रानी वन में एक तालाब में गई रानी प्यास से व्याकुल थी। जैसे ही सीढ़ी उतरी वैसे ही तालाब का समस्त पानी का रंग नीला पड़ गया। और उसमें असंख्य कीड़े पड़ गये। प्यास से व्याकुल रानी ने उसी पानी को पीकर एक पेड़ की शीतल छाया में विश्राम करना चाहा। पेड़ के नीचे जाते ही, पेड़ के सभी पत्ते झड़कर जमीन पर गिर गये। उस वन के कुछ ग्वाला जो गाय चराते थे और गाय को पानी पिलाते थे। वे उस वन की ऐसी दशा देखकर बहुत दु:खी हुए। और अपने गुसाईं

जी से जो कि उस मंदिर के पुजारी थे। वह सब कथा सुनाई और रानी को पकड़कर उनके पास ले आये। उसके मुख की कान्ति तथा शरीर को कुम्हलाया हुआ देख वे जान गये कि यह कोई राजपुत्री है और विधिगति की मारी है। ऐसा सोच उन्होंने कहा, बेटी तू मेरी पुत्री के समान है। अत: तुम मेरे आश्रम को चलो। वह ऐसे वचन सुन हृदय में धैर्य धारण कर आश्रम में रहने लगी। जब रानी भोजन बनाती तथ पानी लाती तो उसमें कीड़े पड़ जाते थे। तब तो गुसाईं जी बड़े दु:खी हुए। और उससे बोले बेटी बताओ तुम्हारे ऊपर किस देवता का कोप है। जिससे तुम्हारी यह दशा हुई है। गुसाईं जी की बात सुन रानी ने आद्योपान्त सब कथा कह सुनाई। तब गुसाईं जी भूतेश्वर भगवान् शिवजी की अनेकानेक प्रकार से स्तुति करने लगे। और रानी से बोले–बेटी तुम सभी मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाला सोलह सोमवारों का व्रत करो। उसके प्रभाव से तुम्हारे सभी कष्ट अपने आप ही छूट जायेंगे। गुसाईं जी के कथनानुसार रानी ने यथाविधि सोलह सोमवारों का व्रत किया और समापन किया। शिव कृपा से इधर राजा के हृदय में विचार आया कि रानी को गये बहुत दिन बीत गये। न जाने वह कहां भटक रही होगी। यह सोचकर राजा ने उसे ढूढ़ने के लिये चारों तरफ दूतों को भेजा। दूत ढूंढ़ते–ढूंढ़ते गुसाईं जी के आश्रम में पहुंचे। रानी को देख उनसे रानी को ले जाने की बात कही। गुसाईं जी ने उनसे मना कर दिया। तो सभी दूत वापस लौट गये। और राजा को सब समाचार कह सुनाया। रानी का पता पा राजा उनके आश्रम में आया और बोला–महाराज यह मेरी पत्नी है, मैंने

शिवजी के कोप से इसको त्याग दिया था। अब शिवजी की उसके ऊपर कृपा है। अत: इसे मैं लेने आया हूं, आप इसे मेरे साथ चलने की आज्ञा दें। गुसाईं जी ने राजा के वचनों का विश्वास कर रानी को जाने की आज्ञा दे दी। रानी गुसाईं जी की आज्ञा पाकर बड़े प्रसन्न मन से राजमहल में आई। नगर में अनेक प्रकार के आनन्द मंगल तथा बधाई होने लगीं तथा नगर तोरण–वन्दन वारों से सजाया गया। घर–घर मंगलाचार होने लगे। विद्वान् पंडित जन वेद मन्त्रों द्वारा राजा रानी का शुभ प्रवेश कराया। इस प्रकार रानी ने अपने राजधानी में प्रवेश किया। राजा ने ब्राह्मणों को बहुत सा धन देकर विदा किया और याचकों को भी सन्तुष्ट किया। नगर में जगह–जगह सदाव्रत खुलवाये, जिससे भूखे को अन्न मिले। इस प्रकार शिव जी की कृपा से राज राजमहल में रानी के साथ अनेक सुखों को भोग आनन्द पूर्वक जीवन बिताने लगा। अब तो राजा रानी प्रति वर्ष बड़े भक्तिभाव से शिवजी के सोलह सोमवारों का यथाविधि व्रत करने लगे। और इस लोक में अनेक सुखों को भोग अन्त में शिव लोक को प्राप्त हुए। इस प्रकार जो मनुष्य मन क्रम वचन से भक्ति सहित सोलह सोमवारों का व्रत करेंगे, वह अनेक सुख भोगकर अन्त में शिवलोक को प्राप्त करेंगे। यह व्रत समस्त मनोरथों को पूर्ण करने वाला है।

इस व्रत को करने से गौरीशंकर भगवान् की कृपा प्राप्त होती है।

हर–हर–महादेव।

॥ मंगलवार व्रत ॥

शुभ मुहूर्त में ऋण, व्याधि के विनाश के लिये, सुख, धन, सन्तान की प्राप्ति के लिये भूमिपुत्र मंगल की उपासना करनी चाहिये। मंगल भूमि का पुत्र है, भूमि हमारी पालन करने वाली माँ है, अतः भूमि पुत्र मंगल की उपासना अवश्य करनी चाहिये।

शुभ मुहूर्त में मंगलवार का व्रत प्रारंभ करें। हनुमत् भक्त को तो मंगल व्रत अवश्य करना चाहिये। हनुमान जी को सन्दिूर चढ़ाकर लड्डू का भोग लगाना चाहिये। एक तांबे के तिकोने यन्त्र में इक्कीस नामों वाला यन्त्र बनाकर पूजा करें। ऐसा करने पर समस्त मनोकामनायें पूर्ण होती हैं।

अनुष्ठान विधि से, धन प्राप्ति, पुत्र प्राप्ति या ऋण या व्याधि दूर करना हो तो अनुष्ठान की विधि से अनुष्ठान करके खैर की लकड़ी के कोयले से भूमि पर तीन रेखा खींचकर बांये पैर से रगड़कर मिटा दें। तो कार्य सफल होगा।

दुःख दौर्भाग्य नाश के लिये तथा सुख सन्तान की प्राप्ति के लिये तीन जन्म के पाप रूपी रेखा को बायें पैर से मिटा रहा हूं। मंगल देव की लाल चन्दन, लाल पुष्प, लाल वस्त्र से ही पूजा करनी चाहिये। स्वाती नक्षत्र से सात मंगलवार तक व्रत करना चाहिये।

कथा—प्राचीन काल में एक नन्दक नाम का ब्राह्मण था। उसकी सुनन्दा नाम की रूपवती भार्या थी। उनके कोई सन्तान नहीं थी।

कन्यादान करने के लिये किसी ब्राह्मण से, कन्या को गोद ले ली। यह कन्या पूर्व जन्म के कारण बड़ी भाग्यशालिनी थी। इस कन्या के भाग्य से नन्दक धनाढ्य हो गया। जब दस वर्ष की हो गई तो सोमेश्वर नामक ब्राह्मण कुमार से इसका विवाह कर दिया। कुछ वर्ष बाद सोमेश्वर विदा कराकर अपने घर ले गये। नन्दक ने सोचा—लड़की बड़ी भाग्यशालिनी थी। इसे ले आना चाहिये। एक दिन छिपकर पहाड़ी मार्ग में खड़ा रहा तथा आने पर सोमेश्वर (अपने दामाद) को मार दिया, लड़की ने भी मरने का निश्चय कर लिया। इसी समय मंगल देव प्रगट हुए और कहा। वरंब्रूहि (वर मांगो) ब्राह्मणी ने कहा यदि आप प्रसन्न हैं तो मेरे पति को जीवित कर दीजिये। पति को जीवित करके कहा, कोई और वर मांगो। ब्राह्मणी ने कहा—

येत्वां स्मरन्ति देवेशं रक्तचन्दन चर्चितम्।
रक्त पुष्पैश्च सम्पूज्य प्रत्यूषे भौम वासरे॥
बन्धनं व्याधि रोगाश्च कदाचिन्नोपजापजायताम्।
न वियोगो महीपुत्र भक्तानां सौख्यदोभव॥

जो मनुष्य मंगलवार को प्रातः काल आपका स्मरण कर रक्त, चन्दन पुष्प आदि से आपकी पूजा करे। उनको व्याधि, बन्धन, रोग कभी न हो। तथा आपके भक्तों को सभी प्रकार का सुख प्राप्त हो। ग्रहपीड़ा नष्ट हो।

॥ बुधवार व्रत ॥

जिस दिन बुधवार विशाखा नक्षत्र से युक्त हो उस दिन से सात नक्त व्रत करें। भोजन में मूंग या मूंग दाल अवश्य होनी चाहिये। शास्त्रों में लिखा है, बुधवार व्रत करने से लक्ष्मी, धैर्य, तुष्टि, पुष्टि और शान्ति प्राप्त होती है। येन लक्ष्मी धृतिः तुष्टिः पुष्टिः कान्तिश्च जायते। बुध नीच राशि मीन का हो शत्रु क्षेत्री अथवा 6, 8, 12 वें स्थान में हो तो बुधव्रत करें। तथा स्तोत्र का पाठ करें। विशाखा बुधवार के सात नक्त व्रत करें।

कथा–एक समय एक दिन अपनी पत्नी को विदा करवाने के लिये ससुराल गया। वहां कुछ दिवस रहने के पश्चात् सास-ससुर से विदा करने के लिये कहा, किन्तु सभी ने कहा आज बुधवार है आज के दिन यात्रा नहीं करते। वह व्यक्ति किसी भी प्रकार से नहीं माना। और बुधवार को ही पत्नी को प्यास लगी तो उसने अपने पति से कहा मुझे बहुत जोर की प्यास लगी है। तब वह व्यक्ति लोटा लेकर रथ से उतरकर जल लेने चला गया। जैसे ही व्यक्ति पानी लेकर अपनी पत्नी के निकट आया तो वह यह देखकर आश्चर्यचकित रह गया कि अपनी ही सूरत तथा वैसी ही वेशभूषा में एक व्यक्ति उसकी पत्नी के पास रथ में बैठा हुआ है। उसने क्रोध करते हुए कहा कि तू कौन है, जो मेरी पत्नी के निकट बैठा हुआ है? दूसरा व्यक्ति बोला–यह मेरी पत्नी है, मैं अभी-अभी ससुराल से विदा कराकर ला रहा हूं।

दोनों व्यक्ति परस्पर झगड़ने लगे, तभी राज्य के सिपाही आकर लोटे वाले व्यक्ति को पकड़ने लगे। तथा स्त्री से पूछा–तुम्हारा असली पति कौन है? तब पत्नी शान्त सी रही। क्योंकि दोनों एक ही जैसे थे, वह किसे अपना असली पति कहे।

वह व्यक्ति ईश्वर से प्रार्थना करता हुआ बोला–हे परमेश्वर ये कैसी लीला है, कि सच्चा झूठा बन रहा है। तभी आकाशवाणी हुई कि मूर्ख आज बुधवार है, बुधवार के दिन तुझे यात्रा नही करनी चाहिये थी, तूने कसी की बात नहीं मानी।

यह सब लीला बुधदेव भगवान् की है, उस व्यक्ति ने बुधदेव से प्रार्थना की और अपनी गलती के लिये क्षमा मांगी। तब बुधदेव ने उसे दर्शन दिये। और अपनी माया को हटा लिया, वह दूसरा मनुष्य रथ से अदृश्य हो गया। तब वह अपनी पत्नी सहित घर आया, तब से यह व्यक्ति बुधवार व्रत करने लगा। जो इस कथा को पढ़ता है, या सुनता है या व्रत करता है, उसे बुध के दिन गमन करने का कोई दोष नहीं लगता।

॥ बृहस्पतिवार व्रत कथा ॥

विधि–देव गुरु बृहस्पति जी विद्या, बुद्धि, वैभव, मान, सम्मान, यश, पद और पुत्र-पौत्र प्रदाता अत्यन्त दयालु देवता है। नवग्रहों में सबसे प्रमुख शक्तिशाली तथा देवताओं के गुरु होने के नाते बृहस्पति देव के निमित्त व्रत और पूजा करने पर अन्य सभी ग्रह और देवता भी कृपालु बने रहते हैं। गुरुदेव का वाहन हाथी है। और हाथों में

शंख एवं पुस्तक के साथ-साथ त्रिशूल भी धारण करते हैं। देवगुरु बृहस्पति जी के शरीर का रंग सोने जैसा पीला है। और देव गुरु पीले वस्त्र एवं भरपूर स्वर्ण आभूषण धारण करते हैं। शास्त्रों का कथन है कि आचार्य बृहस्पति को पीले रंग की वस्तुएं परम प्रिय हैं। तो काले नीले रंग की वस्तुओं से घृणा। इनके पूजन में पीले फूलों, हल्दी में रंगे चावलों, रोली के स्थान में हल्दी पिसी हुई और प्रसाद में भीगी हुई चने की दाल अथवा बेसन के लड्डुओं का प्रयोग किया जाता है। व्रत धारक को भी बेसन आदि से बना पीला ही भोजन करना चाहिये।

बृहस्पति वार को व्रत रखने वाले अधिकांश लोग मध्यान्ह में कहानी सुनने या पढ़ने के बाद पीले रंग की गाय को पानी में भींगी तथा शक्कर मिश्रित चने की दाल खिलाकर ही व्रत खोल लेते हैं। यदि उपलब्ध हो तो केले के पौधे में जल, हल्दी, आदि से पूजन कर कथा का पाठ या श्रवण करना चाहिये। परम दयालु होने के कारण देवगुरु इस प्रकार व्रत करने वाले भक्तों की सभी कामनाओं की पूर्ति कर देते हैं।

शास्त्रीय विधानानुसार हल्दी में रंगे चावलों अथवा चने की दाल की वेदी बनाकर रेशमी वस्त्र बिछाकर, वृहस्पति देव जी की स्वर्ण मूर्ति रखकर षोडशोपचार विधि से पूजन कर इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये।

धर्मशास्त्रार्थ तत्वज्ञ ज्ञान-विज्ञान पारग। विबुधार्तिहराचिन्त्य देवाचार्य्य नमोऽस्तुते। हे धर्मशास्त्र के तत्व को जानने वाले। हे ज्ञान और

विज्ञान के पारदर्शी हे देवताओं के दु:ख को हरने वाले हे अचिन्त्य हे देवों के आचार्य आपको नमस्कार हो।

बृहस्पतिवार व्रत कथा–प्राचीन काल में एक नगर में बड़ा व्यापारी रहता था। वह जहाजों में व्यापार सामग्री लदवाकर दूसरे देशों में भेजा करता था। और स्वयं भी जहाजों के साथ दूर-दूर के देशों में जाया करता था। और इस तरह खूब धन कमाकर लाता था। उसकी गृहस्थी सुचारु रूप से चल रही थी। वह व्यापारी दान भी सहृदयता से देता था। और इस तरह उसका दान देना पत्नी को बिल्कुल पसन्द नहीं था। वह किसी को एक दमड़ी देकर भी खुश न थी। एक बार जब वह व्यापारी माल से जहाज को भरकर किसी दूसरे देश को गया हुआ थ। तो पीछे से वृहस्पति देवता साधु का रूप धारण करके उसके मकान में कंजूस पत्नी के पास पहुंचे। और भिक्षा की याचना की, उस व्यापारी की पत्नी ने वृहस्पति देवता से कहा, महात्माजी! मैं तो इस दान पुण्य से बहुत तंग आ गई हूं। मेरा पति अपना सारा धन दान में व्यर्थ ही लुटाता है। अब आप कोई ऐसा उपाय कीजिये जिससे हमारा सब धन नष्ट हो जाय। इससे न धन लुटेगा और न ही मुझे दु:ख होगा। वृहस्पति देव ने कहा देवी तुम बड़ी विचित्र हो, धन और संतान तो सभी चाहते हैं, देवी पुत्र और लक्ष्मी तो पापी के घर में भी होनी चाहिये। यदि तुम्हारे पास अत्यधिक धन है तो इससे तुम दिल खोलकर पुण्य कार्य करो। भूखों को भोजन खिलाओ, प्यासों को पानी पिलाओ, यात्रियों को धर्मशाला बनवाओ, कितने ही निर्धनों की कुंवारी कन्यायें धन के

अभाव से बिना ब्याही बैठी है, उनका विवाह सम्पन्न करवाओ। और भी कई पुण्य कार्य ऐसे हैं, जिनको करके तुम्हारा लोक-परलोक सार्थक हो सकता है। लेकिन व्यापारी की पत्नी बड़ी ढीठ थी। उसने कहा महात्माजी मैं इस सम्बन्ध में आपकी कोई बात नहीं सुनना चाहती। मुझे ऐसे धन की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है। जो कि दूसरों को बांटती फिरूं। बृहस्पति देवता बोले यदि तुम्हारी ऐसी ही इच्छा है तो ऐसा ही होगा। तुम अब ऐसा करना कि सात वृहस्पति घर को लीप कर पीली मिट्टी से अपने केशों को धोना, भोजन में मांस तथा मदिरा ग्रहण करना। भट्टी चढ़ाकर कपड़े धोना बस तुम्हारा धन नष्ट हो जायेगा। और इतना कहकर वृहस्पति देव वहां से अन्तर्ध्यान हो गये। उस व्यापारी की पत्नी ने जैसा वृहस्पति देव ने बताया था उसी के अनुसार सात बृहस्पति वैसा ही किया केवल छः बृहस्पति ही बीतने पर उस स्त्री का संपूर्ण धन नष्ट हो गया। और स्वयं भी परलोक सिधार गई। उधर उसके पति का माल से भरा जहाज समुद्र में डूब गया। और उसने बड़ी मुश्किल से लकड़ी के तख्तों पर बैठकर अपनी जान बचाई। किसी तरह वह धर्मात्मा व्यापारी किसी तरह अपने नगर में पहुंचा। वहां उसने देखा कि उसका सब कुछ नष्ट हो गया। और उसकी छोटी लड़की भी आंसू बहा रही है। उस व्यापारी ने अपनी लड़की को सान्त्वना पूर्वक चुप कराया और उससे सब समाचार पूछा। लड़की ने अपने पिता को उस साधू वाली कहानी सुनाई। उसने लड़की को शान्त कराया और भगवान् की करनी पर बड़ा प्रसन्न हुआ। अब वह प्रतिदिन जंगल

जाता वहां से लकड़ियां चुन कर लाता और उन्हें नगर में बेचकर अपनी जीविका चलाने लगा। लेकिन धन के अभाव के कारण बहुत दुःखी था। क्योंकि गुजारा बड़ी मुश्किल से चल रहा था। एक दिन उसकी लड़की ने उससे दही खाने की इच्छा प्रकट की। लेकिन उसके पास एक पैसा भी नहीं था। वह अपनी लड़की को आश्वासन देकर जंगल में जाकर एक वृक्ष के नीचे बैठकर अपनी पूर्व दशा का विचार कर रोने लगा। वह बृहस्पति का दिन था, बृहस्पति देव उसकी दशा देखकर द्रवित हुए और साधु का वेष धारण कर वहां आ पहुंचे। और उस व्यापारी से कहने लगे, लकड़हारे तू इस जंगल में किस चिन्ता के कारण बैठा है, व्यापारी ने उत्तर दिया, महाराज आप तो सब कुछ जानने वाले हैं, इतना कहकर उसने आर्द्र कण्ठ और भींगी आंखों से बृहस्पति देव से अपनी आप बीती सुनाई। बृहस्पति देव ने कहा-भाई तुम्हारी पत्नी ने बृहस्पति के दिन भगवान् का अपमान किया था। जिस कारण से तुम्हारा यह हाल हुआ है। लेकिन अब तुम किसी प्रकार की चिन्ता न करो। भगवान् तुम्हें पहले से भी अधिक धनवान् करेंगे। तुम मेरे कहे अनुसार बृहस्पतिवार को बृहस्पति का पाठ किया करो। दो पैसे के चने और मुनक्का मंगवाकर जल के लोटे में थोड़ी सी शक्कर डालकर वह अमृत और प्रसाद परिवार के सब सदस्यों को तथा सुनने वालों में बांट दो। और खुद भी अमृत पान किया करो। तथा प्रसाद खया करो। तो भगवान् तुम्हारी सभी मनोकामनाएं पूरी करेंगे। साधु को प्रसन्न देखकर उस व्यापारी ने कहा महाराज! मुझे लकड़ियों

में से इतना लाभ नहीं कि दो पैसे की दही लाकर अपनी इकलौती कन्या को खिला सकूं। उसको प्रतिदिन झूठे आश्वासन देकर टाल आता हूं। और इसलिये मैं इस समय व्याकुल होकर बैठा हुआ था। बृहस्पति देवता ने कहा तुम चिन्ता मत करो। बृहस्पति के दिन तुम शहर में लकड़ियां बेचने के लिये जाना। तुमको उस दिन लकड़ियों में चार पैसा अधिक मिलेगा। जिससे से दो पैसे की दही लेकर अपनी कन्या को खिलाना, और दो पैसा का मुनक्का और चना लाकर बृहस्पति देवता की कथा करना। जल में जरा सी शक्कर डालकर अमृत बनाना और कथा का प्रसाद सब में बांटना। और खुद भी खाना तो तुम्हारे सब मनोरथ सिद्ध हो जायेंगे। इतना कहकर बृहस्पति देव अन्तर्धान हो गये। धीरे-धीरे बृहस्पति का दिन भी नजदीक आ पहुंचा। व्यापारी ने जंगल में से लकड़ियां इकट्ठी की और शहर में बेचने के लिये आया। उसको उस दिन चार पैसे अधिक मिले। दो पैसे का दही लाकर अपने लड़की को दिया। दो पैसे के चने और मुनक्का लेकर अमृत बनाकर प्रसाद बांटा और स्वयं भी प्रेम से प्रसाद ग्रहण किया। इस प्रसाद के फल से व्यापारी की सभी कठिनाइयाँ दूर होने लगी। लेकिन अगले बृहस्पति को बृहस्पति देवता की कथा करवाना भूल गया। शुक्रवार को उस नगर के राजा ने आज्ञा दी कि कल मैं एक बड़े यज्ञ का आयोजन करवा रहा हूं अत: कोई भी व्यक्ति अपने घर में अग्नि न जलाये और समस्त जनता मेरे यहां आकर भोजन ग्रहण करें। जो इस आदेश की अवहेलना करेगा उसे सूली पर लटका दिया जायेगा। राजा की

आज्ञानुसार अगले दिन सभी लोग राजा के महल में भोजन करने के लिये गये।

लेकिन वह व्यापारी और उसकी लड़की दोनों ही थोड़ी विलम्ब से पहुंचे। अतएव राजा ने उन दोनों को अपने महल के अन्दर ले जाकर भोजन करवाया। जब पिता पुत्री भोजन करके वापस आ गये तो महारानी की दृष्टि उस खूंटी पर पड़ी जिस पर उसका नौलखा हार टंगा था, उस खूंटी पर अब हार नहीं था। रानी को विश्वास हो गया कि उसका हार लकड़हारा और उसकी लड़की ही ले गये हैं।

तत्काल सिपाहियों को बुलाकर दोनों बाप-बेटी को कैद में डाल दिया गया। कैद खाने में पड़कर दोनों बाप बैटी अत्यन्त दु:खी हो गये। वहां उन्होंने बृहस्पति देवता का स्मरण किया। तुरन्त वृहस्पति देवता प्रगट हो गये। और कहने लगे 'भक्तराज! तुम पिछले सप्ताह बृहस्पति देवता की कथा करना भूल गये थे। इसलिये तुम्हारा यह हाल हो गया है। अब तुम किसी प्रकार की चिन्ता मत करो बृहस्पति के दिन कैद खाने के दरवाजे पर दो पैसे पड़े दिखाई देंगे। तुम वह पैसा उठाकर चने और मुनक्का मंगा लेना फिर विधि पूर्वक बृहस्पति देवता का पूजन तथा कथा करवाना बस फिर तुम्हारे सब दु:ख दूर हो जायेंगे। जब बृहस्पति का दिन आया तो उस व्यापारी को जेल में मुख्य द्वार पर दो पैसे पड़े हुए मिले। बाहर सड़क पर एक औरत जा रही थी, व्यापारी ने कहा कि वह बाजार से उसके दो पैसे के चने और मुनक्का ला दे। ताकि मैं बृहस्पति देवता की कथा करवा सकूं। उस औरत ने कहा मैं अपनी बहू के कपड़े सिलाने जा रही

हूं अत: मैं तुम्हारे बृहस्पति भगवान् को क्या जानूं। इतना कहकर वह औरत वहां से चली गई। थोड़ी देर में वहां से एक और स्त्री निकली, व्यापारी ने उसको बुलाकर प्रार्थना की बहन तू मुझे बाजार से दो पैसे के चने और मुनक्का ला दे। मुझे बृहस्पति देवता की कथा करवाना है, और प्रसाद बांटना है। वह स्त्री बृहस्पति देवता का नाम सुनकर गद्‌गद हो गई और बोली–'बलिहारी जाऊं वीर भगवान् के नाम, मैं अभी मुनक्का और चने लाकर देती हूं। मेरा इकलौता बेटा मर गया है, उसके लिये कफन लेने जा रही थी। मगर अब पहले तुम्हारा काम करूंगी। और उसके बाद बेटे के लिये कफन लाऊंगी। उस स्त्री ने व्यापारी से दो पैसे लिये और बाजार से चने मुनक्के ले आई। और स्वयं भी बृहस्पति देवता की कथा समाप्त होने के पश्चात् वह कफन लेकर अपने घर की ओर चली। देखती क्या है कि लोग उसके बेटे की लाश लेकर 'राम-राम-सत्य है', कहते हुए श्मशान की ओर जा रहे हैं।

स्त्री ने कहा–भाई मुझे लाड़ले का मुख तो देख लेने दो। लोगों ने अर्थी को पृथ्वी पर रख दिया। स्त्री ने अपने पुत्र के मुख में प्रसाद और अमृत डाला। प्रसाद और अमृत के मुख में पड़ते ही लड़का उठ खड़ा हुआ। और अपनी माता के हृदय से लग गया। दूसरी स्त्री जिसने बृहस्पति देव का निरादर किया था। जब वह अपने पुत्र के विवाह के लिये कपड़े लेकर आई और जब अपने पुत्र को घोड़ी पर सवार करा बाजे गाजे के साथ बारात निकाली तो घोड़ी ने ऐसी छलांग लगाई कि उस स्त्री का पुत्र जमीन पर आ गिरा और बुरी

तरह घायल हो गया, और कुछ क्षण के पश्चात् मर गया। तब उसकी समझ में आया कि यह बृहस्पति देवता के निरादर का फल है। वह स्त्री रो-रोकर बृहस्पति देवता से कहने लगी, हे देव मेरे अपराध को क्षमा करो, उसकी प्रार्थना सुनकर भगवानश्री वीर (बृहस्पति देव) साधु का रूप धारण कर वहां आये, उस स्त्री से बोले देवी! अधिक व्याकुल होने की आवश्यकता नहीं है। तुमने बृहस्पति देवता का निरादर किया था जिसका परिणाम तुम्हें यह मिला। अब भी तुम जेल खाने जाकर उस भक्त से क्षमा याचना करो। और उससे बृहस्पति देवता की कथा सुनो। इससे सब कुछ ठीक हो जायेगा। वह स्त्री पुन: जेल खाने पहुंची और मुख्य द्वार पर जाकर उस व्यापारी से मिली। हाथ जोड़कर कहने लगी, भक्तराज मैंने तुम्हारा कहा नहीं माना और तुम्हें मुनक्का और चने लाकर नहीं दिये। इससे बृहस्पति देवता मुझसे रुष्ट हो गये। जिसके कारण मेरा इकलौता लड़का घोड़ी पर से गिर कर मर गया। उन्होंने कहा माता तू चिन्ता मत कर। बृहस्पति देव सब कल्याण करेंगे। तुम अब अगले बृहस्पति को आकर बृहस्पति देवता की कथा सुनना तब तक अपने लड़के के शव को फूल, इत्र तथा घी आदि वस्तुओं में डालकर रख दो। उस अबला ने ऐसा ही किया। बृहस्पति का दिन भी आ पहुंचा। दो पैसे के मुनक्का और चने लेकर पवित्र जल का लोटा भरकर जेल के द्वार पर आई और श्रद्धा के साथ बृहस्पति देवता की कथा सुनी। जब कथा समाप्त हुई तो अमृत व प्रसाद लाकर अपने मरे हुए बेटे के मुख में डाला। एकाएक उसको सांस

आने लगी और उठकर खड़ा हो गया। और पुत्र को लेकर वह प्रसन्नतापूर्वक अपने घर को गई। और बृहस्पति देव के गुण गाने लगी। और उसी दिन रात्रि में राजा को बृहस्पति देवता ने स्वप्न में दर्शन दिये और कहा–हे राजन् तूने जिस व्यापारी और उसकी लड़की को जेल में बंद कर रखा है, वह दोनों निर्दोष हैं। अब दिन निकलने के साथ दोनों को जेल से रिहा कर दो। तेरी रानी का नौलखा हार उसी खूंटी पर लटका है। दिन निकला तो रानी ने अपना हार खूंटी पर लटका हुआ देखा। राजा ने व्यापारी तथा उसकी लड़की दोनों को मुक्त कर वस्त्र धारण करवाकर, किये हुए अपराध की क्षमा याचना की, और उस व्यापारी को अपना आधा राजपाट देकर तथा उसकी लड़की का उच्च कुल में विवाह सम्पन्न करवाकर दहेज में अनमोल हीरे जवाहरात दिये। बृहस्पति देव परम दयालु देव हैं। भक्त की जैसी कामना होती है, जिस प्रकार की कामना होती है, वह तुरन्त ही पूर्ण करते हैं, जो कोई श्रद्धा व प्रेम से बृहस्पति देवता की कथा पढ़ेगा, अथवा दूसरों को पढ़ायेगा अथवा सुनायेगा उसकी बृहस्पति देव की कृपा से सभी मनोकामनायें पूर्ण होंगी।

॥ शुक्रवार व्रत कथा ॥ (सन्तोषी माता का व्रत)

शुक्रवार को सन्तोषी माता का व्रत एवं पूजन करके गुड़ और चने की दाल का भोग लगाना चाहिये। तथा प्रयास करके खट्टी वस्तुओं का सेवन न करें और पवित्रता बरतें। गुड़, चना युक्त सामग्री से माता संतोषी का पूजन कर उसे गौ माता को खिला देना चाहिये।

कथा–एक बुढ़िया थी, जिसके सात बेटे थे, छः कमाने वाले थे एक निकम्मा था। बुढ़िया अपने छहों पुत्रों के लिये भोजन बनाती और उन्हें प्रेम से खिलाती और जो उनसे बचता वह सातवें को भोजन के निमित्त दे देती थी। वह (सातवां) बहुत सीधा था। एक दिन वह अपनी स्त्री से बोला देखा मेरी माता का मुझ पर कितना प्यार है, उसकी स्त्री बोली 'क्यों नहीं'। इसीलिये तो उनका जूठा बचा हुआ तुमको खिलाती है। वह बोला मैं जब तक आंखों से न देख लूं तब तक नहीं मानूंगा। कुछ ही दिनों बाद त्योहार आया, मां ने घर में नाना प्रकार के भोजन और लड्डू बनवाये। वह पता लगाने के लिये सिर दुखने का बहाना बना पतला वस्त्र सिर पर ओढ़ रसोईघर में ही लेट गया। वह कपड़े के अन्दर से ही देखता रहा कि छहों भाई भोजन करने आये हैं, मां ने सुन्दर आसन बिछाये और सात प्रकार के भोजन परोसे और आग्रह करके मां उन्हें खिला रही है।

भाई भोजन करके उठे तो मां ने उनकी थालियों में से लड्डू के टुकड़े उठा के और एक लड्डू बनाया। जूठन साफ करके उस बुढ़िया माता ने उसे पुकारा। भोजन करने के लिये वह उठा और कहने लगा, मुझे भोजन नहीं करना है। में परदेश जा रहा हूं। माता ने कहा–कल जाता है तो आज ही चला जा, वह बोला–हां-हां, आज ही जा रहा हूं। चलते समय बहू की याद आई, वह गोशाला के बाहर कण्डे पाथ रही थी। वह जाकर बोला मैं परदेश जा रहा हूं। तुम हृदय में धीरज रख अपना धर्म पालन करते हुए रहना। मैं कुछ दिनों के बाद आऊंगा। मेरे पास केवल यह अंगूठी है, सो इसे

ले लो। और अपनी कुछ निशानी मुझे दे दो। बहू बोली मेरे पास क्या है? यह गोबर भरा हाथ है और उसकी पीछ पर गोबर के हाथ की थाप मार दी। वह चल दिया चलते-चलते दूर देश में पहुंचा। वहां एक साहूकार की दुकान थी वहां जाकर कहने लगा मुझे नौकरी पर रख लो, व्यापारी दयावश कहा रह जा। लड़के ने पूछा तनख्वाह क्या दोगे? साहूकार ने कहा काम देखकर दाम मिलेंगे। सहूकार की नौकरी मिली वह प्रात: सात बजे से रात्रि बारह बजे तक नौकरी बजाने लगा। थोड़े ही दिनों में वह दुकान का लेन-देन हिसाब आदि ग्राहकों को माल बेचना आदि सारा काम करने लगा। वह तो काफी होशियार हो गया। सेठ ने काम देखा और तीन महीने में ही उसे आधे मुनाफे का हिस्सेदार बना लिया। बारह बरस में वह नामी सेठ बन गया। और मालिक उसके जिम्मे सारा काम छोड़कर बाहर चला गया। इधर बहू पर क्या बीती। सास-ससुर उसे बहुत कष्ट (दु:ख) देने लगे। सारी गृहस्थी का काम कराके वे उसे लकड़ी लेने जंगल भेज देते । इस बीच घर की रोटियों के आटे से भूसी निकलती, उसी की रोटी बनाकर रख दी जाती। और फूटे नारियल की नरेली में पानी दे देते। इस प्रकार बहू के दु:खमय दिन गुजरते रहे। एक दिन वह लकड़ी लेने जा रही थी। कि रास्ते में बहुत सी स्त्रियां संतोषी माता का व्रत एवं पूजन कर रहीं थी। वह वहां खड़ी हो गयी। और कथा सुन स्त्रियां से पूछने लगी बहनों यह तुम किस देतता की पूजा कर रही हो? और इसके करने से क्या फल प्राप्त होता है?

तब उन स्त्रियों में से एक स्त्री ने कहा—यह संतोषी माता का व्रत है, इसके करने से निर्धनता का शमन (नाश) होता है। लक्ष्मी की प्राप्ति होती है, और मन की चिन्ताओं का भार दूर होता है। भविष्य में सुख की प्राप्ति, मन को प्रसन्नता और शान्ति मिलती है। निपुत्री को पुत्र मिलता है। और पति बाहर गया हो तो व्रत के प्रभाव से शीघ्र आ जाता है। कुंवारी कन्या को मनचाहा वर प्राप्त होता है। राजद्वार पर बहुत दिनों तक मुकदमा चल रहा हो तो शीघ्र शुलह हो जावे। कलह क्लेशों से छुटकारा प्राप्त होता है। इस व्रत के प्रभाव से रोग दूर हों, तथा समस्त मनोकामनायें संतोषी माता की कृपा से पूरी हो जाती हैं। इसमें कोई संशय नहीं है, वह पूछने लगी यह व्रत किया कैसे जाता है। स्त्री ने कहा सवा आने का गुड़ चना लेना इच्छा हो तो सवा पांच आने का लेना। या सहूलियत के अनुसार सवा रुपया का लेना। बिना परेशानी श्रद्धा और प्रेम से जितना भी बन सके सवाया लेना प्रत्येक शुक्रवार को निराहार रहकर कथा सुननी चाहिये। व्रत का क्रम टूटना नहीं चाहिये। लगाातर नियम पालन करते हुए व्रत करना चाहिये। सुनाने वाला कोई न मिले तो घी का दीपक जला कर आगे रखकर और जल के पात्र को सामने रखकर स्वयं कथा कहना और व्रत (कार्य) पूर्ण हो जाने पर व्रत का उद्यापन करना चाहिये। तीन महीने में माता फल प्रदान करती है। इसमें यदि कोई ग्रह खोटे हो तो भी तीन वर्ष में अवश्य ही कार्य सिद्ध करती है। फल सिद्ध होने पर ही उद्यापन करना चाहिये।

उद्यापन में अढ़ाई सेर खाजा तथा इस परिमाण में खीर तथा चना का शाक बनाना चाहिये। आठ लड़कों को इसमें भोजन कराना। जहां तक मिले तो देवर-जेठ-भाई बन्धु व कुटुम्ब के लड़कों को भोजन कराना। न मिले तो रिश्तेदार और पड़ोसियों के लड़के बुला उन्हें सप्रेम भोजन खिलाना चाहिये।

और यथाशक्ति दक्षिणा आदि देकर माता का नियम पूरा करना चाहिये। व्रत के दिन घर में खटाई का उपयोग कोई न करे। सारे विधान को जान बुढ़िया की बहू मंदिर में जा माता के चरणों में सिर रख कर प्रणाम किया और विनती की कि हे माता मैं निपढ़ हूं, और अज्ञानी हूं, व्रत के नियम आदि भी नहीं जानती। मां मैं बहुत दु:खी हूं हे जगजननी दु:ख दूर कर मैं तेरी शरण में हूं।

माता को दया आई, एक शुक्रवार बीता कि दूसरे शुक्रवार को ही उसके पति का पत्र आया और तीसरे शुक्रवार को पति का भेजा हुआ पैसा भी मिल गया। यह देख जेठ-जेठानी मुख सिकोड़ने लगे और कहने लगे इतने दिनों में इतना पैसा आ गया इसमें बड़ाई की क्या बात है। बेचारी सरलता से कहती भैया पत्र आये रुपया आये तो सबका ही भला है। ऐसा कहकर आंखों में आंसू भर संतोषी माता के मंदिर में आ मातेश्वरी के चरणों में गिर कर रोने लगी। मां मैंने तुमसे पैसा कब मांगा है। मुझे तो अपने सुहाग से काम है। मैं तो अपने स्वामी का दर्शन और सेवा मांगती हूं। तब माता जी ने प्रसन्न होकर कहा जा बेटी तेरा पति (स्वामी) आ जायेगा। यह सुन खुश हो घर में जा काम करने लगी। इधर संतोषी मां बुढ़िया के बेटे के

पास स्वप्न में प्रकट हो कहने लगी-भोले पुत्र तेरी घरवाली घोर कष्ट उठा रही है, तेरे मां-बाप उसे बहुत त्रास दे रहे हैं। वह तेरे लिये तरस रही है। तू उसकी सुध ले। वह बोला हां मां कोई जाने का रास्ता नजर नहीं आ रहा है, कैसे चला जाऊं। मां कहने लगी, मेरी बात सुन सवेरे नहा-धोकर संतोषी माता का नाम ले। घी का दीपक जला दण्डवत कर दुकान पर बैठ जा। देखते-देखते तेरा लेन-देन चुक जायेगा। जमा हुआ माल बिक जायेगा। और शाम होते-होते धन का भारी ढेर लग जायगा। वह माता की बात सुन नहा-धोकर संतोषी माता को दण्डवत कर घी का दीपक जला काम पर जाकर बैठ गया। थोड़ी देर में क्या देखता है, देने वाले रुपया लाने लगे और लेने वाले कोठों में भरे सामानों के नगद दाम दे सौदा करने लगे। शाम तक धन का ढेर लग गया। मन में माता का नमा ले उनका चमत्कार देख प्रसन्न हो गया। अपनीं पत्नी के लिये वस्त्र आभूषण खरीदने लगा।

यहां के काम से निबट तुरन्त घर के लिये रवाना हुआ। वहां बहू बेचारी जंगल में लकड़ी लेने जाती है, लौटते वक्त माता जी के मंदिर पर विश्राम करती है, वह तो उसका रोज रुकने का स्थान जो ठहरा। दूर धूल उड़ती देख वह माता जी से पूछती है, हे मा यह धूल कैसे उड़ रही है? मां कहती है तेरा पति आ रहा है। अब तू इन्हीं लकड़ियों के तीन बोझ बना ला। एक नदी के किनारे रख दूसरा मेरे मंदिर पर और तीसरा अपने सिर पर रख तेरे सिर पर लकड़ी का गट्ठा देख उसे मोह पैदा होगा। वह वहां रूकेगा। भोजन

बना खाकर मां से मिलने जायेगा। तब तू लकड़ी का बोझ उठाकर जाना और बीच चौक में गट्ठा डालकर तीन आवाज जोर से लगाना। लो सासू जी लकड़ियों का गट्ठा लो, भूसी की रोटी दो, नरेली के खोपड़ी में पानी दो। आज मेहमान कौन आया है। बहुत अच्छा कहकर लकड़ियों के तीन गट्ठे ले आई। एक नदी पर एक माता के मंदिर पर रखा इतने में ही वह पहुंचा। लकड़ी को देख उसकी इच्छा हुई कि भोजन बना खा पीकर अपने गांव जाये। इस प्रकार रूक कर भोजन कर विश्राम कर अपने गांव को गया। सबसे प्रेमपूर्वक मिला। उसी समय उसकी बहू सिर पर लकड़ी का गट्ठा लिये उतावली से आई। लकड़ी का भारी बोझ आंगन में डाल जोर से तीन बार आवाज देती है, लो सासू जी, लकड़ी का गट्झ लो, भूसी की रोटी दो, नारियल के खोपड़े में पानी दो। आज मेहमान कौन आया है? यह सुन उसकी सास बाहर आकर अपने दिये हुए कष्टों को भुलाने के लिये कहती है आ बैठ, भात का भोजन कर, कपड़े गहने पहन, तेरा मालिक ही तो आया है। इतने में सुनकर उसका स्वामी बाहर आता है और अंगूठी देख व्याकुल हो जाता है। मां से पूछता है मां यह कौन है? मां कहती है, बेटा यह तेरी बहू है आज बारह बरस हो गये तब से जानवर की तरह सारे गांव में भटकती फिरती है। काम काज तो कुछ करती नहीं, चार बार आकर खा जाती है। अब तुझे देख भूसी की रोटी, नारियल के खोपड़े में पानी मांगी रही है। वह बोला ठीक है मां, मैंने इसे भी देखा है, और तुम्हें भी देखा। अब मुझे दूसरे घर की कुंजी दो उसी में रहूंगा। तब मां

बोली ठीक है बेटा तेरी जैसी मर्जी हो वैसा कर। यह कह ताली का गुच्छा पटक दिया। वह ताली ले दूसरे मकान में जा तीसरे मंजिल के ऊपर का कमरा खोला, सामान जमाया। एक ही दिन में वहां राजा के महल जैसा ठाट-बाट बन गया। अब क्या था वह सुख भोगने लगी। इतने में अगला शुक्रवार आ गया। उसने पति से कहा मुझे संतोषी माता के व्रत का उद्यापन करना है। और पति की आज्ञा से तुरन्त ही उद्यापन की तैयारी करने लगी। जेठ के लड़कों को भोजन के लिये कहने चली गई। लड़कों ने मंजूर किया परन्तु पीछे जिठानी अपने बच्चों को सिखाती है देखो-भोजन के समय सब खटाई मांगना जिससे उद्यापन पूरा न हो, लड़के जीमनें आये, खीर आदि पदार्थ पेट भर खाये। परन्तु मां की बात याद आते ही कहने लगे। हमें कुछ खटाई दो खीर हमें अच्छी नहीं लगती। देख कर अरुचि होती है। वह कहने लगी देखो भाई खटाई किसी को नहीं दी जायेगी। यह तो संतोषी माता का प्रसाद है। लड़के उठ खड़े हुए। बोले-तो फिर पैसा ही दक्षिणा में दे दो। भोली बहू कुछ जानती न थी। उन्हें पैसा दे दिये। लड़के उसी समय हठ करके उन पैसों से इमली लेकर खाने लगे। यह देख बहू पर माता (संतोषी) ने कोप किया राजा के दूत उसके पति को पकड़कर ले गये। जेठ-जिठानी मनमाने खोटे वचन कहने लगे। बहू से यह वचन सहन नहीं हुए। रोती-रोती माता जी के मंदिर पहुंची। कहने लगी माता जी आपने यह क्या किया? हंसा कर अब क्यों रूलाने लगी हो। माता बोली पुत्री, तूनें उद्यापन करके मेरा व्रत भंग किया है। इतनी जल्दी सारी

बातें भुला दी। वह कहने लगी माता भूली तो नहीं... न कुछ अपमान ही किया है। मुझे तो लड़कों ने भुलावे में डाल दिया। मैंने भूल से ही उन्हें पैसा दे दिया। मुझे क्षमा करो मां। मां बोली ऐसी भी भूल होती है क्या, वह बोली मां मुझे माफ करो। मैं आपका उद्यापन पुनः करूंगी। मां ने कहा अब भूल माफ करो। मैं आपका उद्यापन पुनः करूंगी। मां ने कहा अब भूल मत करना। वह बोली अब भूल नहीं होगी मां अब बताओ वे कैसे आयेंगे। मां बोली जा पुत्री तेरा स्वामी रास्ते में ही आता मिलेगा। वह निकली और राह में पति आ मिला। वह पूछती है, आप कहां गये थे। वह कहने लगा इतना धन जो कमाया है, उसका टैक्स राजा ने मांगा था। उसे भरने गया था। दोनों घर गये। कुछ ही दिनों में शुक्रवार आया, उसकी स्त्री ने कहा मुझे फिर संतोषी माता का उद्यापन करना है, पति ने पुनः आज्ञा दे दी। वह फिर अपने जेठ के यहां लड़कों को भोजन के लिये निमंत्रित करने गई। जेठानी ने एक दो बातें सुनाई उसके चले जाने के बाद सब लड़कों को सिखाने लगी। तुम सब लोग पहले ही खटाई मांगना जिससे उद्यापन कार्य पूर्ण न हो सके। लड़के भोजन के समय कहने लगे हमें खीर खाना नहीं भाता। कुछ खटाई खाने को दो। वह बोली–खटाई खाने को नहीं मिलेगी। खाना हो तो खाओ। यह कहकर ब्राह्मणों के लड़के बुलाकर भोजन कराने लगी यथाशक्ति दक्षिणा दी। एक-एक उन्हें फल दिया। इससे संतोषी माता प्रसन्न हुई। माता की कृपा होती है। नवें मास उसको चन्द्रमा के समान सुन्दर पुत्र हुआ। उसे लेकर वह प्रति दिन माता के मंदिर जाने लगी। मां ने

सोचा कि यह मेरी भक्ता रोज यहां आती है, क्यों न आज मैं इसके घर चलूं। इसका आसरा देखूं तो सही। यह विचार कर माता ने भयानक रूप बनाया। गुड़ चनें से सना मुख, ऊपर सूंढ़ के समान ओठ उस पर मक्खियां भिनभिना रहीं थी। देहली में पांव रखते ही उसकी सास चिल्लाई देखो रे ये कौन है, चुड़ैल सी भयानक डाकिनी सी प्रतीत होती है। और ये तो अंदर ही चली आ रही है। अरे लड़कों इसे भगाओं नहीं तो ये किसी को खा जायेगी। अब तो लड़के भागने लगे। बहू रोशनदान से देख रही थी। प्रसन्नता से व्याकुलता पूर्वक (पगली की तरह) चिल्लाने लगी। आज मेरी माता जी मेरे घर आईं हैं। इतना कहकर बच्चे का मुख स्तन से हटाती है। इतने में तो सासू जी आग बबूला हो गईं। सास ने बहुत सी अभद्र गालियां देते हुए कहा क्या देखकर उतावली हुई है। बच्चे को धरती पर पटक दिया। इतने में ही माता संतोषी जी की कृपा से जहां देखो बच्चे ही बच्चे दिखाई देने लगे। बहू ने सासू जी से कहा यही तो मेरी मां संतोषी हैं, इन्हीं का तो मैं प्रति शुक्रवार को व्रत एवं पूजन करती हूं आज मां ने बहुत बड़ी कृपा की है, जो एक दिन दुखियारी के घर चल कर आईं हैं। इतना कहकर झट ही घर के सारे किवाड़ खोल दिये। सबने मां के चरण पकड़े। और विनती करने लगे, कहते हैं हे मां हम मूर्ख हैं अज्ञानी हैं, आपको हम समझ नहीं पाये मां हम आपके व्रत की विधि को नहीं जानते। आपका व्रत भंग करके हमने बहुत बड़ा पाप किया है। हम लोगों से आप का अपराध हो गया है, हे जगमाता हमारे अपराध को क्षमा करो।

इस प्रकार इनके विनती को सुनकर माता को दया आ गई। और माता प्रसन्न हुई और सबके अपराध को क्षमा किया एवं आशीर्वाद प्रदान किया। हे माता जैसे बहू पर प्रसन्न हो जैसा फल दिया वैसा ही फल सबको देना।

इस व्रत कथा को जो सुनता है, या सुनाता है, माता संतोषी उसके सभी मनोरथों को सिद्ध (पूर्ण) करती हैं। बोलिये संतोषी माता की जय।

शुक्रवार (संतोषी माता) का व्रत संपूर्ण।

॥ स्कन्द पुराणोक्त संक्षिप्त॥ (शनिवार व्रत कथा)

श्रावण मास के शनिवार से सात नक्त व्रत करें। तथा शनि जी की लोहे की प्रतिमा बनवाकर उसका पूजन करें। तिल का तेल चढ़ायें। या अश्वत्थ (पीपल) के जड़ के समीप धनुषाकृति मण्डल का निर्माण कर गणेश कलश आदि का पूजन करके इसी मण्डल में शनि देव का पूजन करें। साथ ही पीपल वृक्ष का भी पूजन करें। शमी वृक्ष की शनिवार को पूजन करने से या शमी पत्र शिवजी पर चढ़ाने से भी शनि दोष समाप्त होता है। पीपल के मूल में शनिवार के दिन श्री लक्ष्मी नारायण पधारते हैं। शनिवार को पीपल वृक्ष का पूजन करने से एवं पश्चिमाभिमुख होकर दीप दान करने से तथा पीपल का स्पर्श कर प्रणाम करने से सब दु:ख दूर होकर भाग्योदय होता है।

कथा–त्रेता युग में एक बार गुरु वशिष्ठ ने महाराज दशरथ से

कहा–राजन् शनि देव रोहिणी शकट भेदन करके निकल जायेंगे। बारह वर्ष का घोर अकाल पड़ेगा। दशरथ जी शस्त्र लेकर रोहिणी शकट के सामने धनुष बाण सन्धान करके खड़े हो गये। उन्हें देखकर शनि देव बहुत प्रसन्न हुए। और दशरथ जी से इस प्रकार कहा–राजन् तुम्हारा बड़ा उत्साह है। मैं प्रसन्न हूं, वर मांगों (वरं ब्रूहि) दशरथ जी ने शनि देव को प्रणाम कर बड़ी दिव्य स्तुति की। शनि देव ने प्रसन्न होकर पुन: वरदान मांगने के लिये प्रेरित किया। दशरथ जी ने कहा प्रभो–आपके द्वारा किसी को पीड़ा ने हा। तब शनि देव ने कहा–राजन् जो भी मनुष्य इस कथा का श्रवण करेगा। या सुनायेगा उसे कोई पीड़ा नहीं होगी, तथा तुम्हारे द्वारा कहा गया स्तोत्र का पाठ जो भी करेगा उसे एक जन्म तो क्या सात जन्मों तक धन ऐश्वर्य का सुख प्राप्त होगा।

इस दो श्लोक का जो प्रात: काल पाठ करेगा उसके सभी कष्ट दूर हो जायेंगे। पीपल की पूजा के पश्चात् भी पाठ करने से कष्ट दूर होकर सुख सम्पत्ति प्राप्त होगी।

लोक कोणस्थ: पिङ्गलो बभ्रु: कृष्णो रौद्रोन्तको यम:।
सौरिश्शनैश्चरोन्मन्द: पिप्पलादेन संस्तुत:।
एतानि शनि नामानि प्रातरुत्थाय य: पठेत्।।
शनैश्चर कृता पीड़ा न कदाचित् भविष्यति।।

शनैश्चर भगवान श्री कृष्ण का बड़ा भक्त है, कृष्ण नाम लेने से भी शनि बहुत प्रसन्न होता है। शनि की दशा में कृष्ण-कृष्ण जपने से शनि बहुत प्रसन्न होते हैं। शनिवार को तिल के तेल में

बनी हुई तथा उड़द के दाल की बनी हुई खिचड़ी खाने से भी शनि दोष दूर होता है।

भाव का भूखा हूँ मैं भाव ही इक सार है।
भाव नहीं तो निधिवन मधुवन दीखत सब वीरान है।
भाव होय तो वीरानों में भी दीखत बन्स भगवान् हैं।
भाव जो जो मुझको भजे ते तो भव से उसका बेड़ा पार है।
भाव बिन वो कुछ दे तो मैं कुछ लेता नहीं।
भाव से अगर इक फूल भी दे तो मुझे स्वीकार है।

दयामय लीजिये मोहि उबार।। टेक।।
न मैं जानूँ योग भोग को,
जानूं न सार असार ।। दयामय.।।
ज्ञान ध्यान मैं कुछ जानू नहीं,
न ही साधन उपचार ।। दयामय.।।
न ही स्वास्थ परमारथ जानूँ।
न वही जानूं व्यवहार ।। दयामय.।।
भिक्षु आयो शरण आपकी,
कीजिये भव से पार ।। दयामय।।

चतुर्युगी सृष्टि चक्रम्

ऊपर चतुर्युगी सृष्टि चक्र का जो चित्र दिया है, उसमें स्वास्तिक का चिन्ह दिया गया है। शास्त्रों में वर्णन मिलता है, कि ये चारों युगों के व्यतीत हो जाने के पश्चात् यह एक चतुर्युगी बीत गया। स्वास्तिक का जीवन में बहुत महत्व है, प्रत्येक शुभ कार्यों में स्वास्तिक बनाते हैं। आप चक्र में देख सकते हैं–कि कलियुग वाम भाग में स्थित है, बायां भाग शास्त्रों का कथन है कि हमेशा ही अशुद्ध होता है, लेकिन त्याज्य नहीं है, इस चक्र में द्वापर सर्वप्रथम दर्शाया है, क्योंकि इस युग में श्री कृष्ण पधारे थे ''एते चांशकला पुंस कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्'' के अनुसार सर्वप्रथम ''गीता'' जैसे ग्रन्थ को सत्य समझे। दाहिने अंग की विशेष महिमा होती है। कलियुग में असुरों पर (काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद्, अहंकार) विजय प्राप्त करना है। द्वापर में श्रीकृष्ण पधारे और कंस जैसे असुरों का संहार किया। त्रेता में श्री राम और वामन, परशुराम जी ने पधार कर असुरों का वध एवं क्षत्रियों का मान मर्दन किया। सतयुग में भगवान नारायण

ने पाताल में जाकर मत्स्य रूप धारण कर वेदों की रक्षा की और पाताल में जाकर वाराह रूप धारण कर पृथ्वी को लाकर पुनः स्थापना की यही कारण है, कि सतयुग को नीचे (नीव) में रखा है। क्योंकि नीव (सत्य) मजबूत होगी तभी धर्म सुरक्षित रहेगा। कलियुग ऊपर इसलिये है कि एक इसमें सबसे बड़ा गुण है, "मासस पुण्य होइ नहिं पापा–यह कलियुग कर परम प्रतापा।। कलौ केशव कीर्तनात्" जो अन्य युगों में तप, यज्ञ आदि करने से फल प्राप्त होता था वो सब कलियुग में मात्र नाम जप से प्राप्त हो जाता है, बायें भाग का एक और कारण बाये भाग से ही असुर संहार श्रीमान् हनुमान जी ने किया था। "बायें भुजा असुर दल मारे" तो कहने का भाव यह है कि इस स्वास्तिक को जीवन में उतारें और प्रत्येक युगों के सद्विचारों को अपने जीवन में उतारें। इस सातिये की तरह जब यह 72 बार घूम जाता है, तब एक कल्प होता है। सतयुग तप प्रधान था, त्रेता यज्ञ प्रधान था, द्वापर अर्चन प्रधान था, कलियुग स्मरण प्रधान है। ये सातिया के चारों अंग और सृष्टि के चार स्तंभ हैं। अतः सातिया बनाके पूजन ही नहीं अपितु इस चतुर्युगी स्वास्तिक को जीवन में उतारें। चारों युगों के पूर्ण गुण न ले सकें तो कम से कम (कलियुग को शूद्र संज्ञा दी गई है) सेवा धर्म ही अपना लें तो स्वास्तिक का तात्पर्य पूर्ण हो जायेगा।

स्वास्तिक का अर्थ–कल्याण, शुभ होता है।

।। इति ।।

।। ॐ की महिमा ।।

1. ओ३म् नाम सबसे बड़ा, वासे बड़ा न कोय।
   जो वाको सुमिरन करै, शुद्ध आत्मा होय।।
   ओ३म नाम अमृत भरा, सर्व सुखों की खान।
   सबसे उत्तम नाम यह, करते वेद बखान।।
   ओ३म नाम में है भरा, सब नामों का सार।
   ओ३म नाम का सृष्टि में, हुआ प्रथम विस्तार।।
   ओ३म नाम अक्षर बना, अ उ म का योग।
   जिसके शुभ संयोग से, नष्ट हो रोग।।
   ओ३म नाम अनमोल है, अमृत का भण्डार।
   धार हृदय में नाम यह, जो चाहे निस्तार।।
2. जो तू चहे ब्रह्म सुख त्याग भोग तुच्छन को,
   धाम धन सम्पदा धरा हिये धरी रहें।
   जो तू चाहे रावँ–रंक आवें नतमस्तक हैं,
   स्वच्छ कीर्ति चारिदस भुवन भरी रहें।
   जो तू चहे दिव्य दारा–पुत्र और प्रवीण मित्र,
   पद्मा पद्मासना हैं पौरि पै परी रहैं।
   राखि के भरोसो जपि 'ॐ' महामंत्र देखु,
   सिद्धियें बेचारी कर जोरि कै खरी रहैं।
3. ओ३म मेरे धर्म का मुख बोलता हुआ चित्र।
   अकार, उकार और मकार से मिलकर बना ये विचित्र है।।
   ईश्वर, जीव और प्रकृति का इसमें हुआ समावेश है।

सर्व व्यापक सबसे पृथक इसका न कोई देश है।।
योगियों के समीप है और पापियों से दूर है।
छोटी-बड़ी रचना सभी ओ३म से भरपूर है।।

4. यह ॐ अक्षर पर ब्रह्म सदा सब नामों का शिर तारा हैं।
ॐकार बिना सिद्ध होत नहीं तप योग यज्ञ आचारा हैं।।
यह सकल काम सिद्धि धाता प्रभुनेनिज धाम निकारा है।
ॐकार से निकले मंत्र सभी गायत्री आदिक सारा है।।
धर्म विद्या चतुर्दश है जग में सब ॐकार विस्तारा है।
वर्ण मात्र सब ॐ से निकले ओउम करके होत उचारा है।।
ओंकार सकल घट व्यापक है सब नाम रूप आधारा है।
इमि जान भजे मन मांहि मुनि तिने प्राणों से अति प्यारा है।।
ओउम मंत्र का है अधिकार उसे जिसने ब्रह्मचर्य धारा है।
कहत 'आचार्य' तभी कल्याण होय ये वेद वेदांत पुकारा है।।

5. बड़ा है सबसे ओउम् नाम तत्सार।
ओ३म् नाम बिन सिद्ध न होवे जप तप नेमाचार।।
ओणादि मन प्रत्यो भाई, अवधातु से ओ३महि गाई।
व्याकरण वाणी वेद गवा ही, कर देखा निरधार।।
ओमित्यो मिदगम ब्रह्म भाई, व्यापक है वो सबके माई।
श्रुति उपनिषद् कहे समझाई, प्रणवाक्षर उच्चार।।
अ, उ, म ब्रह्मजीव ओ माया, त्रय समुदाय ॐ बतलाय।
लख अभेद धर ध्यानहिं, माया हो भवसागर पार।।
भ्रू बिच ॐ अनहद तहँ भाई तामे ज्योति ज्योति मन थाई।

मन लय होय परम पद भाई, निज में आप निहार।।
ॐ अनादि अरुप अचल है, सब नामों में नाम सबल है।
जो सुमिरे होवे निर्मल है, परमतत्व की यही पुकार।।

भक्त प्रह्लाद ने तो "ॐ विष्णवे नमः" का जप करते-करते भगवान् नृसिंह के दिव्य दर्शन प्राप्त किये।

भगवान ब्रह्मा जी से कहते हैं–

नैवेद्यं पुरतो न्यस्तं चक्षुषा गृह्यते मया।
रसं च दासजिह्वायामस्नामि कमलोद्भव।।

हे कमलोद्भव-मेरे सामने रखे हुए भोगों को मैं नेत्रों से ग्रहण करता हूँ, परन्तु उस भोग का रस में भक्त की जिह्वा के द्वारा ही लेता हूँ।

॥ ओ३म् शब्द की विशेषता ॥

किसी भी ध्वनि का उच्चारण हम कण्ठ और तालु से करते हैं। स्पष्ट रूप से उच्चारित जितने भी शब्द हैं, उनकी उच्चारण क्रिया जिह्वा के मूल से आरंभ होती है और होठों में आकर समाप्त होती है। साथ ही हमारे मन में जो विचार उस शब्द के उच्चारण के समय होता है उसका एक प्रतिरूप भी मन में होता है जो उसके उच्चारण में प्रभाव डालता है अथवा हमारे मन में जब कोई शब्द उभरता है तो उसका एक भाव भी उच्चारण में तरंग पैदा करता है तो निश्चित ही इसका असर हमारे शरीर पर होता है। इस प्रकार से कोई भी अक्षर या शब्द अपनी विशिष्ट ध्वनि के साथ कम्पन पैदा करके मन और शरीर को प्रभावित करता है।

ओ३म् अ, उ, म के संयोग से बने 'ॐ' शब्द को लें, तीनों अक्षरों का ॐ के रूप में उच्चारण करने से ध्वनि उत्पादन की एक संपूर्ण क्रिया एक साथ पूर्ण रूप से प्रकट होती है। हमारी उच्चारण क्षमता में या ध्वनि उत्पादन शक्ति में जितने भी शब्दों के उच्चारण की सम्भावनाएं हैं वे सब इन तीनों अक्षरों के साथ समाहित हैं।

'ओ' शब्द को लें, इसका उद्‌गम स्थल नाभि है, यह नाभि या तालु के अंश को स्पर्श किये बिना और बिना किसी कष्ट के बोला जाता है। इसका प्रादुर्भाव नाभि से होने के कारण, नाभि से कम्पन्न होकर जो प्रतिक्रिया होती है वह कण्ठ तक आती है। इस प्रकार हमारे स्वर यन्त्र अर्थात् गले से निकला हुआ यह 'ओ' बिना जीभ

व तालु की सहायता लिए सीधा उच्चारित होता है। यह स्वरों का आदि स्वर भी है। 'म' ध्वनि श्रृंखला की अंतिम ध्वनि है क्योंकि इसके उच्चारण से होंठ बन्द हो जाते हैं। 'उ' की ध्वनि नाभि से उत्पन्न होकर कण्ठ से निकलती अवश्य है लेकिन मुंह में जीभ की जड़ से आकर मुंह के मध्य भाग से होती हुई होठों का स्पर्श करके पुनः ध्वनि के आधार पर नाभ की ओर चली जाती है। इस तरह से 'उ' मध्यवर्ती ध्वनि है।

'ओ३म' का उच्चारण करने पर स्वरों के आदि मध्य और अन्त की सम्पूर्ण क्रिया सम्पन्न हो जाती है। 'ॐ' को वैज्ञानिक सार्थकता सिद्ध है लेकिन इस शब्द को किसी भी धर्म के साथ जोड़ना या किसी एक धर्म का शब्द मानना ठीक नहीं है। यह अपनी शक्ति को प्रकट करने वाला एक विशिष्ट वैज्ञानिक शब्द है, इसलिए हम 'ॐ' शब्द का उपयोग मन्त्र, प्रार्थना, स्तुति के रूप में करते हैं।

॥ ॐ ॥

॥ दैव वाणी ॥

धरती के बीच मानव रत्न रूप में आया है।
सुख वैभव से पूर्ण यह मनुष्य देह पाया है॥
अंग अवयवों में श्रेष्ठ होने से क्या होता है।
ज्ञान भ्रष्ट होने से फिर रह ही क्या जाता है॥

॥ गुरु महिमा ॥

कबिरा ते नर अंध है, गुरु को कहते ओर।
हरि रुठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहीं ठौर।।

गुरु की महिमा अपरम्पार है, जब किसी व्यक्ति को यह निर्णय लेना हो कि उसका मार्ग क्या है? ऐसी स्थिति में गुरु की आवश्यकता पड़ती है। गुरु कैसा हो? सभी शास्त्रों का मत है गुरु ब्रह्मज्ञानी, शास्त्रों का ज्ञाता और प्रपंच रहित होना चाहिए। ऐसे गुरु भी अपने शिष्य की वृत्ति व क्षमता को देखकर ही शिष्य के लिये विभिन्न मार्गों का चयन करता है। शरीर प्रधान व्यक्ति को कर्मयोग, भावना प्रधान व्यक्ति को भक्ति मार्ग तथा बुद्धि प्रधान व्यक्ति को देखकर ज्ञान मार्ग बताता है यह निर्णय गुरु अपने शिष्य के स्वभाव व क्षमता को देखकर ही लेता है। सभी शास्त्रों में गुरु का स्थान ईश्वर से अधिक महत्वपूर्ण है।

गुरुब्रह्म, गुरुविष्णु:, गुरुदेवो महेश्वर:।
गुरु साक्षात् पर ब्रह्म, तस्मै श्री गुरवे नम:।।

गुरु ब्रह्म की तरह अपने शिष्य का निर्माण, विष्णु की तरह पालन और शंकर भगवान की तरह अपने अन्दर निकले विष का संहार करके उसको अमृत रुपी मोक्ष प्रदान करते हैं गुरु के बिना जीवन वृथा है। गुरु के अभाव में भवसागर को पार करना कठिन ही नहीं असंभव है। इसलिये गुरु की महिमा का गुणगान जितना किया जाये उतना ही कम है। वे हमारी अन्तरात्मा पर पड़ी मैली

चादर को अपने उपदेश रुपी साबुन से धोकर आत्मा को परमात्मा में लीन कर देते हैं।

गुरु महिमा की कथा–गुरु द्रोण द्वारा शिक्षा देने से मना करने पर एकलव्य विचलित नहीं हुआ उसने अपने गुरु द्रोणाचार्य की मिट्टी की मूर्ति बनायी यह प्रतिदिन उसकी पूजा अर्चना करता तथा उसका आदेश पाकर तीरंदाजी का अभ्यास करता। समय धीरे–धीरे बीतता गया एक दिन एकलव्य अपना दैनिक अभ्यास कर रहा था, तभी वहां एक कुत्ते ने भौंकना शुरु कर दिया अभ्यास में विघ्न पड़ता देख उसने कुत्ते का मुंह तीरों से बन्द कर दिया कुत्ता भागता हुआ गुरु द्रोणाचार्य के पास पहुंचा। गुरुजी कुत्ते की हालत देखकर बहुत आश्चर्य में पड़ गये। वे उस व्यक्ति को खोजने लगे जिसने उसकी यह हालत की थी थोड़ी देर बाद एकलव्य के पास पहुंचे एकलव्य गुरु जी के आगमन पर बहुत खुश था जैसे उसे बहुत बड़ा खजाना मिल गया हो उसने सम्मान सहित गुरु जी को बैठाया। उनकी चरण वन्दना की और हाथ जोड़कर बैठ गया गुरु जी ने पूछा कि आपके गुरु कौन हैं? एकलव्य ने नम्रता से उत्तर दिया कि मेरे गुरु तो आप ही हैं, गुरु द्रोण ने कहा वह कैसे? एकलव्य ने इशारा करके वह मिट्टी की मूर्ति दिखा दी गुरु द्रोण ने कहा कि मुझे गुरु दक्षिणा नहीं दोगे क्या? एकलव्य ने कहा गुरु जी आदेश कीजिये गुरुजी ने कहा मुझे अपने दाहिने हाथ का अंगूठा दे दो। एकलव्य ने उसी क्षण गुरुजी के श्री चरणों में समर्पित कर दिया गुरुजी हतभ्रम रह गये। वो सोच भी नहीं पा रहे थे कि उनके आदेश का पालन इतनी

शीघ्रता से होगा। गुरु जी मन से दु:खी थे, शायद वो एकलव्य की परीक्षा लेना चाहते थे उनका अंगूठा नहीं। अपने शिष्य की गुरु भक्ति से प्रभावित होकर उन्होंने एकलव्य को सीने से लगा लिया, और उसे आशीर्वाद देकर चले गये। एकलव्य ने यह प्रमाणित कर दिया कि गुरु के प्रति सच्ची भावना रखने वाला व्यक्ति ही उनकी कृपा का पात्र बनता है।

॥ समर्पण ॥

अब सौंप दिया इस जीवन का सब भार तुम्हारे हाथों में।
है जीत तुम्हारें हाथों में और हार तुम्हारे हाथों में।।
मेरा निश्चय बस एक यही इकबार तुम्हें पाजाऊँ मैं।
अर्पण करदूँ दुनिया भर का सब प्यार तुम्हारे हाथों में ।।अब...।।
जो जग में रहू तो ऐसे रहूँ ज्यों जल में कमल का फूल रहे।
मेरे सब गुण दोष समर्पित हों भगवान तुम्हारे चरणों में ।।अब...।।
यदि मानुष का मुझे जन्म मिले तो तब चरणों का पुजारी बनूँ।
इस पूजक के इक रग रग का हो तार तुम्हारे चरणों में ।।अब...।।
जब जब संसार का कैदी बनू निष्काम भाव से कर्म करूँ।
फिर अन्त समय में प्राण तजूं साकार तुम्हारे चरणों में ।।अब...।।
मुझमें तुझमें बस भेद यही मैं नर हूँ तुम नारायण हो।
मैं हूँ संसार के हाथों में संसार तुम्हारे हाथों में।
अब सौप दिया इस जीवन का सब भार तुम्हारे हाथों में।।

॥ स्मरण ॥

1. ठाकुर जी का पूजन पवित्र अवस्था, पवित्र वस्त्र, पवित्र, आसन ग्रहण कर करनी चाहिये।
2. द्वादशी, संक्रान्ति, रविवार, पक्षान्त, रात और सन्ध्याकाल में तुलसी पत्र न तोड़ें।
3. कमल को पाँच रात विल्व पत्र को दस रात और तुलसी को ग्यारह रात बाद भी प्रक्षालन कर पूजन के कार्य में लिया जा सकता है।
4. दीपक से दीपक को जलाने से प्राणी रोगी होते हैं। दक्षिणाभिमुख दीपक न रखें।
5. पूजा में रिक्त दोष परिहारार्थ के लिये दक्षिणा अवश्य चढ़ायें।
6. एक हाथ से प्रणाम करने पर पूर्वकृत पुण्य नष्ट हो जाते हैं।
7. स्त्री और शूद्र के शंख ध्वनि करने से कष्ट और भयानवित हो लक्ष्मी वहाँ से हट जाती है। स्कन्ध पुराण का मत है कि पौष शुक्ला दशमी तिथि, चैत्र की पंचमी और श्रावण की पूर्णिमा तिथि को लक्ष्मी प्राप्ति के लिये लक्ष्मी का पूजन करें।
8. विष्णु को चावल, गणेश को तुलसी, दुर्गा जी को दूर्वा, सूर्य को विल्व पत्र, शिव को कुन्दनका पुष्प नहीं चढ़ाना चाहिये।
9. कपड़े में रखा हुआ और जल में डुबोया हुआ पुष्प निर्माल्य हो जाता है। इसलिये देवता उसे ग्रहण नहीं करते।

10. श्री गणेश एवं श्री लक्ष्मी जी को विराजमान करते समय श्री लक्ष्मी जी को श्री गणेश जी के दाहिने तरफ रखना चाहिये।
11. वैशाख एवं ज्येष्ठ दोनों महीनों में प्यासों को जल पिलाना चाहिये। एवं जहां तक संभव हो, कही भी जल का प्रबंध करना चाहिये।
12. श्रावण मास में सोमवार को भगवान शंकर के निमित व्रत करना चाहिए। अगर संभव हो तो रुद्री पाठ का आयोजन करना चाहिये।
13. शिवरात्रि को भगवान् शिव की चार प्रहरों में पूजा एवं उनके निमित व्रत करना चाहिये अगर संभव हो तो रुद्री पाठ का आयोजन करें।
14. मकर संक्रान्ति को तीर्थ स्नान कर श्याम तिल से बने हुये पदार्थ एवं खिचड़ी का दान करना चाहिये।
15. कार्तिक पूर्णिमा को गंगा स्नान कर दान देना चाहिये।
16. अगर संभव हो तो महीने में एक बार कीर्तन का आयोजन अवश्य करें।
17. कालरात्रि (शिवरात्रि), महारात्रि (लक्ष्मी पूजन, दीपावली), मोहरात्रि (जन्माष्टमी), दारुणरात्रि (होली) इस दिन पूजा, पाठ, दान, पुण्य, जप, तप, यज्ञ करने से अनन्त पुण्य एवं लक्ष्मी जी की प्राप्ति होती है।
18. सूर्योदय के पूर्व ब्रह्म मुहूर्त में शैय्या त्याग करना चाहिये।

क्योंकि ब्रह्म मुहूर्त में शयन करने से पुण्य नष्ट हो जाता है।
19. देवताओं को तीन बार पितरों को एक बार धोकर अक्षत चढ़ाना चाहिये।
20. पत्र, पुष्प, फल का मुख नीचे करके चढ़ावे। वे जैसे उत्पन्न होते हैं, उनको वैसे ही चढ़ाना चाहिये। किन्तु विल्व पत्र उल्टा करके चढ़ावे।
21. चौबीस अवतार सनक सनन्दन, सनातन, सतन कुमार, वाराह, नारद, नर और नारायण, कपिल मुनि, दत्तात्रेय, यज्ञ नारायण, ऋषभदेव, पृथु, मत्स्य, कूर्म, धन्वन्तरि, मोहिनी, नृसिंह, वामन, परशुराम, हयग्रीव, हंस, मर्यादा पुरुषोत्तम राम, लीला पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण, बलराम, बुद्ध, हरि, कल्कि।
22. समुद्र मंथन के 14 रत्न–कालकुट विष, कामधेनु गाय, उच्चै-श्रवा घोड़ा, ऐरावत, अप्सराएं, पारिजात, कल्पवृक्ष, श्री लक्ष्मी, वारुणी, मदिरा, चन्द्रमा, कौस्तुभमणि, सारंग, धनुष, शंख, धन्वन्तरी भगवान, श्री मोहिनी।
23. छः शास्त्र, वेदान्त, सांख्य, योग, मीमांसा, न्याय, वैशेषिक।
24. सप्त ऋषि–कश्यप, अत्रि, वशिष्ठ, विश्वामित्र, भारद्वाज, जमदग्नि, गौतम।
25. नौ ग्रह–रवि, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, केतु।
26. छः वेदांग शिक्षा, कल्प, निरुक्त आयुर्वेद धनुर्वेद गंधर्व वेद अर्थशास्त्र।
27. ग्रहण में सूतक काल–सूर्य ग्रहण का सूतक बारह घंटे

पहले लग जाता है, और चन्द्र ग्रहण का सूतक नौ घंटे पहले लगता है। सूतक काल में भोजन, शयन, देवताओं की मूर्ति का स्पर्श तथा शुभ कार्यों का निषेध है। मात्र भोजन एवं शयन बालकों एवं वृद्धों तथा असमर्थ जनों के लिये कोई निषेध नहीं है।

28. जीवन एक फूल की भांति है जो कभी भी मुरझा सकता है।
29. जीवन एक सपना है, जो कभी भी टूट सकता है।
30. जीवन एक झरना है, जो बहता है, और सूख जाता है।
31. जीवन एक हवा का झोंका है जो आता है और चला जाता है।
32. जीवन एक सागर है जिसमें तरंगें आती हैं। और शांत हो जाती हैं।
33. जीवन एक तमाशा है, जो हंसाता है और रुलाता है।
34. जीवन एक जलता दीपक है, जो कभी भी बुझ सकता है।
35. जीवन पशु से मिला एक क्षण-भंगुर वरदान है।

प्रश्नोत्तरी

प्र.–जानने में कठिन क्या है?

उ.–त्रिया चरित्र।

प्र.–चतुर कौन है?

उ.–त्रिया चरित्र से जिसका पराभव न हो सके।

प्र.–दु:ख क्या है?

उ.–असन्तोष।

प्र.–नीचे गिरना क्या है?

उ.–नीच व्यक्ति से याचना।

प्र.–जीवन क्या है?

उ.–निर्दोष रहकर जीवन-यापन करना।

प्र.–मूर्खता क्या है?

उ.–पढ़कर भी विषय का अनभ्यास।

कृपा की न होती जो आदत तुम्हारी।
तो सूनी ही रहती अदालत तुम्हारी।।
जो दीनों के दिल में जगह तुम न पाते।
तो किस दिन में होती हिफाजत तुम्हारी।।
गरीबों कि दुनिया है आबाद तुमसे।
गरीबों से है बादशाहद तुम्हारी।।
न तुम होते हाकिम न हम होते मुजरिम।
न घर घर में होती इबादत तुम्हारी।।
तुम्हारी हि उल्फत के दृग बिन्दु हैं ये।
तुम्हें सौंपते हैं अमानत तुम्हारी।।

॥ भयानक होती है क्रोधाग्नि ॥

जीवन को सार्थक बनाने के लिये क्रोध और लोभ को समीप नहीं फटकने देना चाहिये। वैसे तो काम भी इन दोनों का भाई है, परन्तु धर्मपरायण काम होना चाहिये। क्योंकि काम आने पर पूर्ति की इच्छा होती है। यदि इच्छा पूर्ण नहीं होती तो क्रोध उत्पन्न होता है। यदि काम पूर्ण हो गया तो लोभ की अभिवृद्धि होती है, जैसा कि श्रीमद् गीता जी में भगवान् श्री कृष्ण अर्जुन को समझाते हैं–

ध्यायतो विषयान्पुंसः संगस्तेषोपजायते। (2/62)
सङ्गात्संजायते कामः कामात्क्रोधोपजायते।।
क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृति विभ्रमः।

अर्थात् क्रोध से अत्यन्त मूढ़ भाव उत्पन्न हो जाता है। मूढ़भाव से स्मृति में भ्रम हो जाता है, स्मृति में भ्रम हो जाने के बाद बुद्धि अर्थात् ज्ञान शक्ति का नाश हो जाता है। और बुद्धि के नष्ट होने पर मुनष्य अपने आप ही नष्ट हो जाता ळै। क्रोध तो मनुष्य के श्रेय और तप दोनों को ही नष्ट कर डालता है। इसे एक प्रकार से सर्वनाशक ही समझना चाहिये। तप का फल परम उत्कृष्ट होता है।

एक कथा आती है, कि जब यक्षों ने ''ध्रुव'' के भाई ''उत्तम'' को मार डाला तब ध्रुव के मन में इतना क्रोध आया कि वे समूची यक्ष जाति का ही नाश करने पर उतारु हो गये।

फिर जब भगवान् के परम् भक्त स्वायम्भुव मनु जो ध्रुवजी के दादाजी लगते थे, वे आये और उन्होंने समझाया कि ''अलंवत्सति

रोषेण'' मेरे प्यारे बेटे इतना क्रोध मत करो। तब वे शान्त हुए।

इसलिये संत रज्जब ने कहा है–

रज्जब रोष न कीजिये, कोई कहे क्यों ही।
हंस के उत्तर दीजिये हां बाबा यों ही।

कुछ भी हो जाये मनुष्य क्रोध नहीं करना चाहिये। क्योंकि क्रोध से मनुष्य के हृदय में धर्म का रस, श्रद्धा का रस, भजन का रस, प्रेम का रस अथवा तत्व ज्ञान का रस, जल जाता है। क्रोध अग्नि है, सब कुछ जलाकर भस्म कर देती है। इसलिये, प्रकृति से, काल से, स्वभाव से, ईश्वर से जो कुछ हो रहा है, उसे भी स्वीकार करते रहना चाहिये। अर्थात् ईश्वर की इच्छा में अपनी इच्छा समाहित कर देनी चाहिये। तभी जीवन सार्थकता का उद्देश्य पूरा हो सकता है। गीता जी में श्री कृष्ण जी अर्जुन को समझाते हैं कि काम, क्रोध तथा लोभ–ये तीनों प्रकार के नरक के द्वार आत्मा का नाश करने वाले अर्थात् उसको अधोगति में ले जाने वाले हैं, अत एव इन तीनों को त्याग देना चाहिये।

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत्।।

इन द्वारों से मुक्त होकर ही मनुष्य अपनी मुक्ति का मार्ग खोज सकता है। जीवन को कल्याणकारी एवं सफल बना सकता है।

॥ प्रत्येक मानव को शाकाहारी होना चाहिये ॥

मानव मूलतः एक शाकाहारी प्राणी है। शाकाहार ही मानव का

प्राकृतिक भोजन है, मानवी संस्कृति एवं प्रकृति उसे शाकाहारी ही मान्य करती है। इसी प्रकार मानव रहा है। भारतीय वैदिक कालीन संस्कृति एवं सत्साहित्यों में पदे-पदे शाकाहार महिमा मण्डित एवं मांसाहार को निन्दनीय तो बताया ही गया है, पाश्चात्य चिकित्सकों, वैज्ञानिकों, साहित्यकारों, एवं मनिषियों की दृष्टि में भी मांसाहार का स्थान कभी भी गौरवमय नहीं रहा। उन्होंने मुक्त कण्ठ से शाकाहार का ही समर्थन किया है।

॥ इति ॥

1. **किमर्थं ब्राह्मणा पूज्याः–ब्राह्मण क्यों पूज्य हैं**–शास्त्रों के अनुसार–

दैवाधीनं जगत् सर्वं मन्त्राधीनश्च देवता।
ते मन्त्रा ब्राह्मणाधीना तस्मात् ब्राह्मण देवता॥

अर्थात् देवताओं के आधीन संपूर्ण जगत् है, और देवता मन्त्रों के आधीन है। तथा मन्त्र ब्राह्मणों के आधीन है। अतः ब्राह्मण देव पद का अधिकारी एवं पूज्य है।

2. **विद्यार्थियों** में ये आठ चीजें नहीं होनी चाहियें–

कामं क्रोधं तथा लोभं स्वादुश्रृंगार कौतुके।
अतिनिद्रातिसेवा च विद्यार्थीह्यष्ट वर्जयेत्॥

अर्थ–काम, क्रोध, लोभ, स्वाद, श्रृंगार, कौतुक, अधिक सोना, अति सेवा लेने वाला।

विद्यार्थियों के पांच लक्षण–कौवे जैसी चेष्टा, बगला जैसा ध्यान, श्वान जैसी निद्रा, गृह सुख से दूर, एवं हल्का भोजन करना।

॥ मांसाहार अनेक रोगों का जनक ॥

मांस-भक्षण से कैन्सर, गठिया, मोतीझरा, सिरदर्द, क्षय, उन्माद, श्वास रोग, निमोनिया, भगंदर आदि सैकड़ों रोग उत्पन्न होते हैं। डॉ. पर्कस अपने व्यक्तिगत अनुभवों का उल्लेख करते हुए कहते हैं। मांसाहार के कारण ही वे बहुत दिनों तक सिरदर्द, मानसिक थाकावट तथा गठिया से ग्रसित रहे। कुछ प्रामाणिक स्वास्थ्य, विशेषज्ञों में से डॉ. शिरमेट अमेरिका से लिखते हैं–शाकाहार पर रहने वालों को टायफाइड कम होता है, डॉ. रसेल ने अपनी 'सार्वभौम भोजन' पुस्तक में लिखा है, जहां मांसाहार जितना कम होगा, वहां कैन्सर की बीमारी भी कम होगी। डॉ. लक्सशौर्य ने कहा है, कि 'अपेन्डी-सायटिस की बीमारी मुख्यतः माँसाहार के कारण ही होती है।

कन्हैया तुम्हें इक नजर देखना है
जिधर तुम छिपे हो उधर देखना है कन्हैया तुम्हें इक नजर देखना है।
उबारा था जिस कर से गीध और गज को
उन्हीं हाथों का अब हुनर देखना है ॥ कन्हैया...॥
विदुर भीलनी के जो घर तुमने देखे।
तो तुमको हमारा भी घर देखना है ॥ कन्हैया...॥
टपकते हैं दृग बिन्दु तुमसे ये कहकर।
तुम्हें अपनी उल्फत में तर देखन है ॥ कन्हैया...॥

॥ दान धर्म का निरूपण ॥

श्री ब्रह्मा जी ने कहा मैं सर्वोत्तम दान धर्म के विषय में कह रहा हूं। सत् पात्र में श्रद्धा पूर्वक किये गये अर्थ का प्रतिपादन दान कहलाता है। ऐसा दान धर्म विद्वान जनों का कहना है।

यह दान इस लोक में भोग और परलोक में मोक्ष प्रदान करने वाला है। प्रत्येक मानव को चाहिये कि वह न्यायपूर्वक धन (अर्थ) का उपार्जन करे। क्योंकि न्याय से उपार्जित धन (अर्थ) का ही दान भोग सफल होता है। अध्ययन, याजन तथा प्रतिग्रह ये तीनों ब्राह्मणों की वृत्ति है।

ब्राह्मणों के लिये सूदखोरी, कृषि कर्म तथा वाणिज्य अथवा क्षत्रिय वृत्ति (युद्ध आदि कर्म) त्याज्य हैं। उक्त सद्वृत्तियों से प्राप्त हुआ धन यदि सुयोग्य पात्रों को दिया जाता है, तो उसी को दान कहा जाता है। यह नित्य, नैमित्तिक, काम्य और विमल चार प्रकार का कहा गया है।

1. **नित्य दान**—फल की अभिलाषा न रखकर प्रत्युपकार की भावना से रहित होकर ब्राह्मण को जो दान दिया जाता है, वह नित्य दान कहा जाता है।
2. **नैमित्तिक दान**—अपने पापों की शान्ति के लिये विद्वान ब्राह्मणों के हाथों पर जो धन दिया जाता है, ऐसा दान नैमित्तिक दान कहलाता है।
3. **काम्य दान**—सन्तान, विजय, ऐश्वर्य और स्वर्ग प्राप्ति की इच्छा से जो धन दिया जाता है, उसको धर्मवेत्ता ऋषिगण काम्य दान कहते हैं।
4. **विमलदान**—ईश्वर की प्रसन्नता को प्राप्त कने के लिये ब्राह्मणों को सत्ववृत्ति से युक्त चित्त वाले मनुष्य के द्वारा जो दान दिया जाता है, वह विमल दान कहलाता है। यह दान कल्याणकारी है।

ईख की हरी-भरी फसल से युक्त या जौ, गेहूं की फसल से सम्पन्न (शस्य-श्यामल) भूमि का दान वेदविद् ब्राह्मणों को जो देता है, उसका पुनर्जन्म नहीं होता।

भूमि दान से श्रेष्ठ दान न हुआ है, न होगा।

ब्राह्मण को विधा दान करने से ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है। जो व्यक्ति प्रतिदिन ब्रह्मचारी को श्रद्धापूर्वक विधा प्रदान करता है या करवाता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर ब्रह्मलोक के परमपद को प्राप्त करता है।

बैशाख मास की पूर्णिमा को उपवास रखकर जो व्यक्ति पांच या सात ब्राह्मणों की विधिवत् पूजा करके उन्हें मधु-तिल और घृत से सन्तुष्ट करता है, उनका गन्ध आदि से भली प्रकार पूजा करके उनसे यह कहलवाता है, या स्वयं कहता है—

"प्रीयतां धर्म राजेति यथा मनसि वर्तते"

(हे धर्मराज! मेरे मन में जैसा भाव है, उसी के अनुकूल आप प्रसन्न हों।)

ऐसा कहने पर उसके जीवन भर के किये गये समस्त पाप उसी क्षण विनष्ट हो जाते हैं।

जो व्यक्ति सोना, मधु एवं घी के साथ तिलों को कृष्ण मृगचर्म में रखकर ब्राह्मण को देता है, वह सभी प्रकार के पापों से मुक्त हो जाता है।

वैशाख मास में घृत, अन्न और जल दान करने से विशेष फल की प्राप्ति होती है। अत: इस मास में धर्म राज को उद्देश्य करके घृत अन्न और जल का दान ब्राह्मणों के लिये अवश्य करना चाहिये। ऐसा करने से सभी प्रकार के भय से मुक्ति मिलती है। द्वादशी तिथि में उपवास रखकर पाप का विनाश करने वाले भगवान विष्णु की पूजा करनी चाहिये। ऐसा करने से निश्चित ही मनुष्य के सभी पाप-ताप नष्ट हो जाते हैं।

जो मनुष्य जिस देवता की पूजा करने के लिये इच्छा करता है, उसकी पूजा वह अपने इष्ट को प्राप्त करने के लिये करे, और उसको उस देव की प्रतिमूर्ति मानकर प्रयत्नपूर्वक ब्राह्माणों की पूजा करके उन्हें भोजन भी करायें। साथ ही सौभाग्यशाली स्त्रियों तथा अन्य देवों का भी पूजन कर भक्तों को भोजन आदि के द्वारा संतुष्ट करे।

॥ इति ॥

॥ कामना पूर्ति के लिये विभिन्न देवताओं की उपासना ॥

शास्त्रों में कामना सिद्धि के लिये अन्यान्य उपाय बतलाये हैं। जोकि भक्तों के कल्याणार्थ ''व्रत मञ्जरी'' में प्रस्तुत किये जा रहे हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि भक्त गण इससे लाभान्वित होंगे।

1. सन्तान प्राप्ति के लिये 'इन्द्र' की पूजा अर्चना करें।
2. ब्रह्म वर्चस् की कामना वाले ब्रह्मरूप 'ब्राह्मणों' का पूजन करें।
3. आरोग्यता प्राप्त करने के लिये 'सूर्य' की पूजा करें।
4. धन चाहने वाले भगवान 'अग्निदेव' का पूजन करें।
5. कार्यों की सिद्धि प्राप्त करने की अभिलाषा करने वाला मनुष्य विनायक (गणेश) का पूजन करे।
6. भोग की कामना होने पर 'चन्द्रमा' की पूजा करें।
7. बल प्राप्ति के लिये 'वायु देवता' का पूजन करें।
8. संसार सागर से मुक्त होने के लिये प्रयत्नपूर्वक 'श्री हरि' की आराधना करनी चाहिये।

जलदान से तृप्ति, अन्नदान से अक्षय सुख, तिल दान से अभीष्ट सन्तान, दीप दान से नेत्र, भूमिदान से समस्त अभिलक्षित पदार्थ, सुवर्ण दान से दीर्घ आयु, गृह (घर) दान से उत्तम भवन तथा चांदी दान करने से उत्तम रूप की प्राप्ति होती है। वस्त्र दान से चन्द्रलोक, तथा अश्व दान से अश्विनी कुमार के लोक की प्राप्ति होती है। बैल का दान देने से विपुल सम्पत्ति का लाभ और गौ दान से सूर्य लोक प्राप्त होता है।

।। श्राद्ध तत्त्व ।।

1. श्रद्धा पूर्वक भोजन बनाकर ब्राह्मण को भोजन कराना ही मुख्यतः श्राद्ध है।
2. श्राद्ध में एक ही ब्राह्मण को निमन्त्रण देना चाहिये।
3. माता का श्राद्ध अलग से नहीं करना चाहिये पिता के श्राद्ध के दिन माता का भी श्राद्ध साथ में करना चाहिये।
4. श्राद्ध का समय दोपहर का होता है लगभग 11 से 1 तक श्राद्ध तर्पण भोजन कराना चाहिये। ।। मत्स्य पुराण।।
5. श्राद्ध में प्रशंसनीय तीन गुण–पवित्रता, क्रोध, जल्दबाजी न करें (क्रोध का त्याग करें) इनका ध्यान रखना चाहिये। ।।मनुस्मृति।।
6. श्राद्ध में सात महत्वपूर्ण पदार्थ–गंगा जल, दूध, मधु, कपड़ा, तिल। ।। हेमाद्रि श्राद्ध कल्प ।।
7. श्राद्ध में आठ दान वस्तुएं–पात्र, कम्बल, चांदी, कुश, तिल, शाक, वस्त्र।
8. श्राद्ध में लोहे की वस्तु का उपयोग नहीं करना चाहिये केवल शाक फल काटने के लिये कर सकते हैं।
9. श्राद्ध में उपयोग लाने वाली वस्तुएं–उदड़, तिल, जौ, सांवा चावल, गेहूं, अंगूर, कटहल, अनार, नारियल, चीनी, बेल, आंवला, अंगूर, कटहल, अनार, नारियल, खजूर, नारंगी, बेर, जामुन, गुड़, परमल, आलू, नींबू, मिर्च, मसाला, घी, मौसम

की सब्जी, मिठाई, सेब, आम, सुपाड़ी, अदरक। ।।वायु पुराण)

11. भोजन पात्र–सोने-चांदी, कांसे, तांबे अथवा पत्तल बड़ उपयोग में लाना चाहिये।
12. श्राद्ध में ब्राह्मण को बैठाकर पैर धोना चाहिये और पत्नी को दाहिने रहना चाहिये। ।। मनुस्मृति ।।
13. श्राद्ध में निषिद्ध ब्राह्मण, चोर, पतित, नास्तिक, मूर्ख, धूर्त, मांस, व्यापारी, नौकर काले दांत वाला शूद्र, पति गुरु द्वेषी काना जुआरी, अंधा, अंगहीन ब्राह्मण करने वाला ब्राह्मण इन सब ब्राह्मणों का त्याग करना चाहिये। ।। कूर्म पुराण ।।
14. श्राद्ध में निषिद्ध अन्न-कोदौ, चना, मसूर, सन्तु, तीसी, मूली, काला जीरा, काला नमक, लौकी, सीताफल, सरसों, काला उदड़, खीरा, कैथ, कचनार, रेंड़ इन वस्तुओं को उपयोग में नहीं लाना चाहिये केवल भोजन में। ।। श्राद्ध कल्प ।।
15. ब्राह्मण को भोजन कराते समय बोलना नहीं चाहिये, पूछना भी नहीं चाहिये कि कैसा बना है, नमक कम तो नहीं है, मीठा ज्यादा तो नहीं है। जबरदस्ती नहीं करना चाहिये जो ब्राह्मण को खाना होगा स्वयं भोग लेगा। पूछने से पितर नाराज हो जाते हैं। भोजन के बाद पान नहीं खिलाना चाहिये, केवल श्राद्धों में। ।। श्राद्ध दीप-श्रा. कल्प ।।

॥ ज्योतिष में वास्तुशास्त्र ॥ (एक दृष्टि में)

मकान का निर्माण करने पर प्रत्येक व्यक्ति को एक प्रकार की आत्मिक शान्ति एवं सुख प्राप्त होता है। उसे ऐसा महसूस होता है कि जैसे उसने कोई बड़ी उपलब्धि हासिल कर ली हो। भवन-निर्माण को एक प्रकार का धार्मिक कृत्य भी माना गया है, क्योंकि इसका उपयोग पीढ़ी दर पीढ़ी तक होता है।

इसलिये समय-समय पर भवन में परिवर्तन करना पड़ता है। ऐसी मान्यता है कि वास्तुशास्त्र नियमों के अनुसार भवन में परिवर्तन या परिवर्धन किया जाये तो घर में सुख-शान्ति बनी रहती है। वास्तुशास्त्र के अनुसार घर बनवाते समय, परिवर्तन, या परिवर्धन करते समय दिशाओं को ध्यान में रखते हुए करना चाहिये। अपने भवन में कोई भी व्यक्ति कुछ भी परिवर्तन कर सकता है। जिस तरह बने हुए भवनों में वास्तु के दोषों को साधारण परिवर्तनों के द्वारा सुधारा जा सकता है। उसी तरह यदि आपका मकान वास्तु सिद्धान्तों के अनुसार बनाया गया है, और बाद में वास्तु सिद्धान्तों पर ध्यान न देते हुए उसमें परिवर्तन कर लिया जाय तो वास्तु दोष का प्रभाव घर परिवार पर निश्चित रूप से दिखाई देता है। इसलिये कुछ वास्तु सम्बन्धी बातों की जानकारी भी अति आवश्यक है।

मकान में कोई नया परिवर्तन करना हो तो दक्षिण, पश्चिम में दक्षिण क्षेत्र के भाग में जोड़कर ना बढ़ायें। साथ ही इस तरह नया निर्माण पश्चिम, दक्षिण के पश्चिम क्षेत्र की ओर ना बढ़ायें। यदि

आपके भवन का द्वार पश्चिम की ओर है, तो भवन का कोई भी परिवर्तन या निर्माण उत्तर, पश्चिम उत्तर की ओर ना करें।

यदि आपके भवन का द्वार पूर्व की ओर है तो दक्षिण, पूर्व में पूर्व दिशा की ओर न बढ़ायें।

यदि आग्नेय कोण में है, तो दक्षिण और पूर्व क्षेत्र में ना बढ़ायें।

नैऋत्य कोण में द्वार हो तो दक्षिण क्षेत्र में ना बढ़ायें।

ईशान कोण में हो तो पूर्व क्षेत्र में ना बढ़ायें।

कभी-कभी भूमि खरीदने के पश्चात् या अधूरा मकान लेने के पश्चात् उसके निर्माण में विलम्ब हो ही जाता है। अतः ऐसी परिस्थिति में इन वास्तु नियमों को ध्यान में रखें।

अधूरे निर्माण में साधारण परिवर्तन करने के पश्चात् अनावश्यक कार्य भी बढ़ जाते हैं। घर को व्यवस्थित करने का कार्य महिलाओं का होता है, अतः रसोई घर का चूल्हा आग्नेय कोण (पूर्व और दक्षिण का मध्य) में रखा जाना चाहिये। यदि स्थान बदलना संभव नहीं है, और चूल्हा स्लैब में रख हो तो स्लैब के नीचे पानी से भरा तांबे का एक भरा पात्र अवश्य रखें। और रोजाना सुबह शाम, इसका जल बदलते रहें। भोजन पकाने के बाद इस स्थान को साफ कर दें। इसी प्रकार शयन कक्ष में भी परिवर्तन कर सकते हैं। गृह स्वामी का कमरा पश्चिम या पश्चिम दिशा के कोण में होना चाहिये। इस स्थान में शयन करने से भवन दीर्घकाल तक चलता है। यदि शयन कक्ष में पूजा घर हो तो वह शयन कक्ष के ईशान कोण (पूर्व और उत्तर का मध्य) की तरफ होना चाहिये। ताकि पैर पूजा घर की ओर

न रहे। पूजा घर के निकट यदि परिवर्तन करना चाहें तो इस प्रकार करें, ईशान कोण में झाड़ू एवं कूड़ादान नहीं रखना चाहिये। मूर्ति कभी प्रवेश द्वार के ठीक सामने नहीं विराजनी चाहिये।

इसी प्रकार पूजा घर में हवन आदि की व्यवस्था आग्नेय कोण में करनी चाहिये। पूजाघर की दीवारों का रंग सफेद हल्का पीला अथवा हल्का नीला होना चाहिये। पूजा घर का निर्माण उत्तर और पूर्व के मध्य में होना चाहिये। (या पूर्व ईशान के मध्य में करना चाहिये) इस प्रकार स्नानघर भी पूर्व दिशा या उत्तर दिशा की ओर बनवाना चाहिये। पानी का बहाव उत्तर पूर्व होना चाहिए।

वास्तु शास्त्र के अनुसार भवन के पूर्व दिशा में जल का निकास देने से अच्छा होता है। और उत्तर दिशा में जल निकास देने से धन लाभ होता है। इसलिये जल का निकास उत्तर-पूर्व में ही शुभ होता है।

घर में आंगन का बहुत महत्व होता है, यह स्थान खुला हुआ रहना चाहिये। आंगन घर के बीचो-बीच होता है।

ऐसी ही बहुत सी वस्तुएं हैं, जिनको भवन में परिवर्तन करके सही ढंग से रखा जाता है। जिससे वास्तु का प्रभाव भी बना रहे, और घर में निवास करने वालों पर कोई गलत प्रभाव भी न पड़ें।

भवन-निर्माण करने के पश्चात् यदि वहां किसी कारणवश शुभ फल नहीं दे रहा या उसका कोई कमरा अथवा घर का कोई भी क्षेत्र हानि पहुंचा रहा है, तो वास्तु शास्त्र के अनुसार थोड़ा सा परिवर्तन एवं भवन को परिवर्तित करके घर के वातावरण को शान्तिमय

बनाया जा सकता है।

केवल भवन में ही नहीं, अपितु औद्योगिक प्रतिष्ठान दुकान एवं कार्यालयों में भी वास्तु सिद्धान्तों की आवश्यकता पड़ती है। इनमें भी थोड़ा सा परिवर्तन करके शान्ति प्राप्त कर सकते हैं। व्यवहारिक दृष्टि से अगर देखें कि जिन लोगों ने वास्तु के अनुसार भवन में परिवर्तन एवं उसमें परिवर्धन किये हैं, वे निरोग एवं सुखी देखे गये हैं।

भारत के दक्षिण प्रदेशों में वास्तु शास्त्र के नियमों को भवन निर्माण में अधिकांशतः लोग प्राथमिकता देते हैं। परन्तु धीरे-धीरे अब सभी जगह वास्तु शास्त्र का महत्व बढ़ता ही जा रहा है। और लोग शान्ति प्राप्त करने के लिये वास्तु नियमों का पालन कर रहे हैं। और लाभान्वित भी हो रहे हैं।

भवन निर्माण में, आकाश वायु, जल, पृथ्वी और अग्नि तत्वों को प्राकृतिक स्रोतों से कैसे उपलब्ध कराया जाय यह सब वास्तु शास्त्र के सिद्धान्तों में निहित है, और इनकी उपलब्धता भी हमारे लिये परमावश्यक है, वास्तुशास्त्र नियमों का उद्देश्य मानव सुख समृद्धि एवं आत्मिक शान्ति को उपलब्ध कराना है।

अतः भवन निर्माण या निर्माण के पश्चात् परिवर्तन या परिवर्धन करना हो तो वास्तु शास्त्र के नियमानुसार ही करें। ऐसा यदि आप करते हैं तो निश्चय ही उस भवन की नींव आप के सुख-शान्ति का आधार बनेगी।

।। इति ।।

॥ मंगलीक योग से भय न लायें ॥

ज्योतिष शास्त्र का एक नियम विवाह से पूर्व वर-वधू की कुण्डली को मिलाना है। वर-वधू के स्वभाव समान होंगे तभी उनका भावी दाम्पत्य जीवन सफल होगा। कुछ व्यक्ति इसे महत्व नहीं देते, किन्तु वे समझ लें कि ज्योतिष शास्त्र एक विज्ञान है तथा उसके नियम भी वैज्ञानिक आधार लिये हुए हैं। ये नियम मात्र कपोल कल्पना नहीं है।

आकाशीय पिण्ड जैसे सूर्य, चन्द्र, मंगल आदि मानव के मस्तिष्क पर प्रभाव डालते हैं। जिस प्रकार चन्द्रमा का अदृश्य प्रभाव समुद्र में हलचल उत्पन्न कर विशाल जल समूह को ज्वार भाटा के रूप में बिखेर देता है उसी प्रकार आकाशीय पिण्ड हमारे शरीर के रक्त संचालन पर प्रभाव डालते हैं। ज्वारभाटा चन्द्रमा की गुरुत्वताकर्षण की शक्ति के कारण आता है। तथा इससे समुद्र में 10.15 फुट ऊंची पानी की लहरें उठती हैं जब समुद्र के जल पर चन्द्रमा का इतना अधिक प्रभाव है तो निश्चित ही हमारे रक्त जो कि पानी का ही एक रूप है उस पर भी कुछ प्रभाव तो होता होगा। यही ज्योतिष विज्ञान का आधार है, इन आकाशीय पिण्डों/ग्रहों के प्रभाव के प्रभाव से मानव जीवन नित नयी करवट लेता होगा। आइये अब अपने मूल विषय की ओर चलें। कुण्डली मिलान में गुणों को मिलाया जाता है। कुण्डली मिलान में एक धारणा मांगलीक भी है। सामान्य जन मानस की धारणा है, कि मंगली लड़का या लड़की

का विवाह मंगलीक लड़का या लड़की से ही होना चाहिये। अन्यथा उनमें से किसी एक ही मृत्यु हो सकती है। यह विचारधारा कितनी सही है, इस पर आइये चिन्तन की दृष्टि से देखें।

जन्म कुण्डली कुल मिलाकर बारह खानों (घरों) की बनी होती है। इन बारह खानों में से यदि पहले, चौथे, सातवें, आठवें, बारहवें स्थान में मंगल हो तो उस लड़के या लड़की को मंगलीक मान लिया जाता है। ऐसा निर्णय साधारण ज्योतिषी ही करते हैं। आज कल के ये ज्योतिषी अल्प ज्ञान तथा परम्परागत प्रभाव के कारण सलाह देते हैं कि ऐसे मंगलीक योग वाले लड़के या लड़की का विवाह मंगलीक लड़के या लड़की से होना चाहिये।

ज्योतिष शास्त्र का कथन है कि मंगल एक क्रूर ग्रह है, कुण्डली के 1, 4, 7, 8, 12 वें स्थान में होने से मंगल ग्रह दाम्पत्य जीवन में कटुता पैदा हो जाती है। दाम्पत्य जीवन में व्यवधान आता है। वर्तमान ज्योतिषी मंगलीक का निर्धारण ही सही ढंग से नहीं कर पा रहे हैं।

ऊपर जो मंगलीक निर्धारण की विधि बताई गई है, वह अत्यन्त स्थूल है, इस विधि द्वारा मंगलीक होने की घोषणा करना ज्योतिष शास्त्र की दृष्टि में महान् अपराध है।

हमारे शास्त्र सदैव स्थूल से सूक्ष्म की ओर चलने की आज्ञा देते हैं। इस विधि का अनुशरण तो शास्त्रों का अपमान करना ही है, मंगलीक योग की घोषणा से पूर्व अन्य अनेक तथ्यों का अवलोकन करना चाहिये। कुण्डली के (12) बारह खानों के आधार पर

मंगलीक योग का निर्धारण कर डालना शास्त्र सम्मत नहीं है। (ज्योतिषां वास्तवं जनानां मार्गदर्शकम्) अर्थात् ज्योतिष वास्तविक शास्त्र है, तथा व्यक्तियों को मार्ग दर्शन के लिये है। अल्प तथ्यों के आधार पर मंगलीक का निर्धारण करने वाले ज्योतिषी ज्योतिष को इस विषय से भटका देते हैं। व्यर्थ भ्रम तथा शंका का वातावरण उत्पन्न करते हैं। कुण्डली के अलावा मंगलीक निर्धारण के लिये अन्य ग्रहों की क्या स्थिति है, मंगल वक्री तो नहीं है, अस्त तो नहीं है, आदि को देखना आवश्यक है, एतदर्थ गहन अध्ययन एवं परिश्रम की आवश्यकता रहती है।

इसी प्रकार एक सादी सामान्य लड़की या लड़के का विवाह मंगली लड़के या लड़की से हो सकता है। आपको व्यर्थ में मंगलीक लड़की या लड़का की तलाश में अपना समय नष्ट नहीं करना चाहिये। शास्त्रों की आज्ञा है, कि एक पक्ष की कुण्डली में अशुभ मंगल जिन स्थानों (1, 4, 7, 8, 12) में हो दूसरे पक्ष की कुण्डली में उन्हीं स्थानों पर शनि, सूर्य, राहु आदि पाप ग्रह हो तो मंगलीक दोष नष्ट हो जाता है। ऐसा संबंध शुभदायक माना जाता है। ज्योतिष ग्रन्थ फलित संग्रह के अनुसार–

शनि भौमोऽथवा कश्चत् पापो वा तादृशो भवेत्।
तेष्वेव भवनेष्वेव भौम दोष विनाश कृत्।।

यदि कुण्डली में लड़की के जिस स्थान पर मंगल स्थित हो मंगलीक कारक हो और लड़के के कुण्डली में उसी स्थान पर शनि, मंगल, सूर्य, राहु आदि कोई पाप ग्रह होने से भी भौम दोष

भंग हो जाता है। इसी प्रकार लड़के की कुण्डली में भौम दोष होने पर कन्या की कुण्डली में उसी भाव में कोई पाप ग्रह होने से भी मंगलीक दोष (भौम दोष) नहीं रहता।

।। द्विजों के सन्ध्या न करने से संस्कार अपवित्र होते हैं ।।

सन्ध्या येन न विज्ञाता सन्ध्या येनानुपासिता।
जीवन्नेव भवेत् शूद्रों मृतः श्वा चाभि जायते।।

जो द्विज सन्ध्या नहीं जानता और सन्ध्या नहीं करता, वह जीता हुआ भी शूद्र के समान हो जाता है, और मरने पर श्वान की योनि को प्राप्त करता है।

आचार्य श्री का लेख

॥ जीव हत्या करके बलिदान देना महापाप है! ॥

माना की यदि कालों में बलिदान दिया गया था जो कि आज के नये युग में उस बलिदान को प्रथा समझ बैठे हैं।

पश्चात्य देशों में (मध्ययुग में) भी डायनी, योंगिनी, पुरुष डायनी योगिनियों की कुछ हत्यायें हुई थीं–

श्री मद्भागवत चतुर्थ स्कन्ध अध्याय में एक कथा है–जो की प्राचीन बर्हि नाम के राजा की है।

प्राचीन बर्हि कर्मकाण्ड में लिप्त था और निर्दयता पूर्वक पशुओं की बलि देता रहा, वहां एक दिन आध्यात्म विधा विशारद नारद जी पधारे और राजा प्राचीन बर्हि को उपदेश दिया उपदेशान्तर्गत श्लोक–

भोभो प्रजा प्रतेराजन पशून पश्य त्वया हवरे।
संज्ञा पिताज्जीव सङ्घात निर्घृणेन सहस्रसः।।
एतेत्वां सम्प्रतीक्षन्ते स्मरन्तो वैशसं तव।
सम्परेतमयः कूटैः घिन्दन्त्युत्थित मन्यतः।।

देखो–देखो राजन् तुमने निर्दयतापूर्वक यज्ञ में हजारों पशुओं की बलि दी है, उन्हें आकश में देखो। ये सब तुम्हारे द्वारा प्राप्त हुई पीड़ाओं को याद करते हुए बदला लेने के लिये तुम्हारी राह देख रहे हैं। जब तुम मर कर जाओगे तब ये अत्यन्त क्रोध में भरकर तुम्हें अपने लोहे के से सीघों से छेदेंगे।

इन कथाओं को जानते हुये भी कुछ अल्पज्ञ है वे अजा (बकरा) यहां तक की मनुष्य और गौओं का भी बलिदान करा देते हैं, यह तो महा पाप है। इससे व्यक्ति संतुष्ट नहीं रहता।

शास्त्रों में तो बलिदान में कुम्हड़े का बलिदान नारियल का बलिदान इत्यादि प्रकारों से बताया है।

हर कामनाओं का समाधान हमारे शास्त्र करते हैं। जो कि नितान्त सत्य है। और प्रेक्टिकल भी है, भगवती जगदम्बा त्रिपुर सुन्दरी सिद्ध शक्ति, शतचण्डी यज्ञ, रुद्र यज्ञ, विष्णु यज्ञ, गोपाल यज्ञ, गणपति यज्ञ अनेकानेक अनुष्ठानिक कर्मों के माध्यम से नौकरी का समागन शान्तान प्राप्ति व्यापार में उन्नति लक्ष्मी प्राप्ति यहां तक कि महामारी जैसी बाधायें जो की भौतिक बाधा है।

ये सब प्रकार की बाधायें शान्त होती हैं और मन इच्छित कामना भी सिद्ध हो सकती है। हमारे प्राचीन ग्रन्थ ज्योतिष द्वारा भूत, भविष्य तथा वर्तमान भी जाना जा सकता है।

अतः अन्ध–विश्वास को त्यागकर विश्वास लायें।

माना की वैज्ञानि लोग चन्द्र पहुंच गये हैं। और बहुत कुछ हासिल भी किया लेकिन विश्वास को लौटाने में असमर्थ रहे।

॥ इति ॥

मीरा बाई

जाके सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई।
मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई।।

॥ भक्तों के लिये संदेश ॥

1. भक्त गणों जब आप पूजा के समय दो मिनट को बैठें तो बड़ी दीनता के साथ अपने को अनुभव करें "मैं बहुत बड़ा पापी हूं, मैंने जीवन में बहुत दुष्कर्म किये हैं। मेरा कल्याण कैसे होगा अतः दीन भावना से प्रभु से प्रार्थना करें। और यह चिन्ता छोड़ दें कि "मैं वृद्ध हो चुका हूं, थोड़ी सी जिन्दगी बची है। श्री भागवत् जी के द्वितीय स्कन्ध के प्रथम अध्याय के आधार पर राजा खट्वांग ने गुरु मार्गदर्शन से एंव भजन के बल प्रभाव से डेढ़ घण्टे में ही दिव्य विमान में बैठकर भगवान के श्री धाम को गये। अतः हम लोग अपने भविष्य का समय बरबाद न करें।
2. प्रेमियो, हम लोग भक्ति तो करते हैं, लेकिन बदले में सांसारिक सुख मांगकर प्रभु भक्ति से वंचित रह जाते हैं, "बिन मांगे मोती मिले, अतः प्रभु के चरण कमलों में अपने जीवन को समर्पित कर दें, प्रभु हर तरह से हमारे हित का उपाय करेंगे।
3. भक्तो, संसार का हीरा मोती द्रव्य पदार्थ साथ नहीं बल्कि उससे मानव दुष्कर्म की ओर बढ़ जाता है, किन्तु राम नाम प्रभु के चरणों तक पहुंचा कर प्रभु के चरणों में प्यार कराता है। इस लिये सन्त लोग राम नाम के मोती बिखेरा करते हैं। लूटे या ना लूटे ये आपकी इच्छा।
4. भक्ति करने वाले भक्त सुख की आशा छोड़ दें तब भक्ति

हृदय में प्रस्फुटित होगी, बड़ी कल्पना के साथ भगवान के वियोग में अश्रु प्रवाहित करें, तो दर्शन भी देंगे कभी न कभी, वियोग के आंसू, देखकर उनको जरूर दया आयेगी।
5. प्यारे भक्तों भगवान की भक्ति दो प्रकार की होती है—सकाम और निष्काम। सकाम सेवा भक्ति करने वाले भक्त को केवल सांसारिक पदार्थ प्राप्त होते हैं। लेकिन निष्काम भक्ति से केवट की तरह लौकिक तथा पारलौकिक दोनों वस्तुएं प्राप्त हो जातीं हैं। अतः हमें भी चाहिये कि निष्काम भक्ति करें, तुच्छ वस्तु मांगने की चेष्टा न करें।
6. भक्तों! एक भाई राम और लक्ष्मण थे कि भाई को मूर्छा आ जाने पर कह रहे हैं, "मैं अपने प्राण नहीं रखूंगा" अब "राम चरित मानस में लिखा है। चौ. जौं जनतेउँ बन बन्धु बिछोहू। पिता बचन मनतेउँ नहिं ओहू–सुत बिन नारि भवन परिवारा, होहिं जाहिं जग बारहि अस बिचरि जियँ जागहु ताता। मिलइ न जगत सहोदर भाता। जैहउँ अवध कौन मुहु लाई। नारि हेतु प्रिय भाइगवांई। बरु अपजस सहतेउँ जगमाहीं। नारि हानि बिसेष छति नाहीं।

दूसरी तरफ एक भाई कलियुग में हम हैं, जो थोड़ी–थोड़ी बात में अनेक प्रकार से सांसारिक वस्तुओं के लिये भाई से द्रोह करते हैं। अपने ही बाहु को काल के गाल में ढकेल देते हैं।

7. प्यारे भगवत् प्रेमियों–सबरी को महर्षि मातङ्ग ने कहा था– ''बेटी मैं तो भगवान के धाम को जा रहा हूं, तुम धीरज से रहना श्री राम जी के दर्शन तुम्हें इसी कुटिया में होंगे। एक बार सबरी की अस्वस्थ अवस्था होने पर उसके शरीर का मांस पक्षी खाने लगा तो सबरी रोते हुए बोली, अरे पक्षी! तुम मेरे पूरे शरीर को खा जाना मेरे दोनों नेत्रों को छोड़ देना मेरे गुरुदेव का वचन है कि राम के दर्शन तुम नेत्रों से करोगी, नेत्र रहने पर उनके दर्शन अवश्य होंगे या मेरे दोनों नेत्रों को उनके पास पहुंचा दो। जब सबरी को राम जी के दर्शन हुए तो सबरी बोली, सबरी देखि राम गृह आये। गुरु के बचन सम झि जिय भाये। गुरु में, भगवान तथा भजन में सबरी की तरह निष्ठा होनी चाहिये। हम लोग कहने-कहनें में महीनें दो महीनें माला फेरते हैं, फायदा नहीं देखते तो माला खूंटी पर टांग देते हैं।

मन में ठान लेते हैं कि भगवान का भजन करना सब व्यर्थ है। यह सबसे बड़ी भ्रान्ति है।

8. भगवत् प्रेमियों, हमें तैयार रहना चाहिये पता नहीं हमारी जानें की घड़ी कब आ जाये यहां समझने की बात है, कि संसार ही स्टेशन है, भक्ति करना ही टिकट लेना है, धर्म की पूंजी बढ़ाना ही रास्ते का खर्च है, गाड़ी आने की पहचान सारे अगों का ढीला पड़ जाना है। (मन ही बन्धन और मुक्ति का कारण है) मन चाहे तो नरक में पहुंचा दे मन ही चाहे तो स्वर्ग में पहुंचा दें। अतः किसी भी महापुरुष से गुरु मन्त्र

लेकर भक्ति करें क्योंकि धर्मराज सब चेक करेंगे आगे भक्तों की मर्जी।

9. भक्तों हम लोग मां के गर्भ में नरक में थे तब दुख से भ्यावह होकर प्रभु से प्रार्थना करते हैं, हे भगवान बाहर निकालो, बाहर जाकर भजन करूंगा, लेकिन हम लोग कर क्या रहे हैं, सोचें और ऐसा कर्म करें कि फिर दुबारा मां के गर्भ का नरक न देखना पड़े। गर्भ स्त्री नरक से छुटकारा पाने के लिये यह आखिरी मौका है क्योंकि–

मानुष तन दुर्लभ है, मिलै न बारम्बार।
पक्का फल गिर पड़ा बहुरिन लागे दार।।

अगर नहीं संभाला तो पुनः चौरासी लाख योनियों में चक्कर काटना निश्चित है।

10. सत्संग प्रेमियो, संसार में हम लोग एक-दूसरे को देखते हैं, तो यही कहते हैं, कि ये सुखी लेकिन सत्यता तो ये है, कि ''राम भजन बिन सब जीव दुखारी'' सन्तोषी सदा सुखी अपने धर्म कर्म का पालन कीजिये लोक परलोक दोनों को सुखमय बनाने का प्रयत्न कीजिये। भगवान में श्रद्धा विश्वास रखते हुए निश्छल भाव से परिश्रम कीजिये, और उसके फलस्वरूप आपको जितना प्राप्त हो उतने में ही निर्वाह करते चलिये।

11. भक्तों बिना भक्ति के मुक्ति न तो किसी को मिली है न ही मिलेगी। पानी मथने से चाहे घी निकल आये, चाहे बालू से तेल निकल आये लेकिन बिना भक्ति के मुक्ति नहीं प्राप्त

हो सकती। प्रभु भक्ति का महत्व बताते हुए बाबा तुलसीदास जी ने लिखा है–

"वारिमथे घृत होइअरु, सिकता तेवरुतेल।
बिनु हरि भजन नभव वरिअ यह सिद्धान्त अपेल।।

12. जीवन का परम तत्व कार्य–

कबीरा जग में आयके कर लीजै दो काम।
देने को टुकड़ा भला लेने को हरि नाम।।

प्रिय भक्तों–

अब निज अनुभव अब कहऊ खगेसा।
बिनु हरि भजन न जाय कलेसा।।

मानव अपने जीवन में चाहे कितना भी पूजा पाठ क्यों न करे लेकिन जब तक असहाय निर्बल तथा दीन-दुखियों पर दया नहीं करता तब तक उसकी सारी क्रियायें पूर्ण रूप से सार्थक नहीं है, "परहित सरिस धर्म नहिं भाई पर पीड़ा सम नहि अधमाई"।। शास्त्र भी कहते हैं, "पैरोपकाराय सतांविभूतय:" देखिये आम फल स्वयं नहीं खाता नदियां स्वयं जल का सेवन नहीं करती, मेघ स्वयं सेवन के लिये जल नहीं बरसाता, कहने का तात्पर्य जिसके दिल में पर उपकार की भावना है उसका जीवन धन्य-धन्य हो जाता है। महर्षि बाल्मीकि ने रामायण में कथा लिखी है। कि एक श्वेत द्वीप का राजा था स्वर्ग में सारी सुविधायें मिलीं। रहने के लिये स्वर्ण पलंग, सिंहासन, मनोरंजन आदि सब है, लेकिन भोजन की कोई व्यवस्था नहीं है। राजा ने इन्द्र से पूछा–हमारे लिये सारी सुविधायें उपलब्ध हैं लेकिन

भोजन के लिये क्या है, भोजन की क्या व्यवस्था है, इन्द्र ने कहा राजन्, तुमनें अपने जीवन में पूजा पाठ खूब किये हैं, लेकिन अन्नदान नहीं किया है, गरीबों को भोजन नहीं कराया तो यहां भोजन कहां से मिलेगा। अब तुम जिस तालाब में डूबकर मरे हो उसी तालाब में तुम्हारा मुर्दा शरीर ज्यों का त्यों पड़ा है। रोज स्वर्ग से जाओ अपने शरीर का मांस खाओ। उसी तालाब पर किसी दिन अगस्त जी हाथ का कड़ा दान दे देना। तब अगस्त जी कड़े के बदले सन्तों का भण्डारा ब्राह्मण भोजन करायेंगे तब तुम्हें स्वर्ग में शान्ति मिलेगी। राजा ने ऐसा ही किया तब स्वर्ग में शान्ति से रहने लगा। कहने का भाव यह है कि–

कर्म प्रधान विश्वरचिराखा।
जो जस करइं सो तस फल चाखा।।

भक्तों हमनें अपने जीवन में अनुभव करके देखा है आप भी अपने जीवन में विचार कर देखिये। भूखों को भोजन कराने के बराबर संसार में कोई पुण्य नहीं है। निश्वार्थ भाव से गरीबों की सेवा करने से परमात्मा जितना प्रसन्न होते हैं उतना किसी काम से नहीं होते। अत: व्यक्ति को कमाये हुए धनसे दशांश दान करने का नियम शास्त्र सम्मत है–

क्योंकि–"दानेन पाणिर्नतुकङ्कणेन" हाथ की शोभा स्वर्गजड़े कड़े पहनने से नहीं होती बल्कि दान देना ही हाथ की शोभा है।

।। हमारी शुभ कामनायें आपके साथ हैं ।।

।। इति शुभम् भूयात् ।।

॥ ॐ ॥

॥ उद्‌गार ॥

सज्जनों आप यदि प्रभु की याद करेंगे तो प्रभु आप पर दया करेंगे, आप यदि किसी का भला करेंगे तो प्रभु आप को लाभ करायेंगे, सज्जनों ध्यान देना जो प्रभु की प्रबल माया है, उसको गोस्वामी तुलसी दास जी ने नर्तकी बताया है।

सारे जीवन भर हम उसी माया (नर्तकी) के इशारे में नाचते रहते हैं, यदि नर्तकी शब्द का विलोम (उल्टा) करें तो कीर्तन में बदल जायेगा, यदि ऐसा हमने किया तो सत्य समझना यह नाचना हमेशा के लिये बंद हो जायगा। वास्तव में यदि आप प्रभु के लिये एक मिनट का भी अपना अमूल्य समय निकालेंगे तो प्रभु निश्चित ही कृपा की बरसात करेंगे। आप छः घंटे बिजली जलाते हैं, आप उसका किराया देते हैं, कि नहीं? देते हो न।

आप दो पांच बाल्टी पानी पाते हैं, नगर पालिका आपसे पैसा ले लेती है, यहां तक की आपने अपने पसीने की कमाई से जगह खरीदी और उसमें मकान बनवाया उसमें भी सरकार कर (इंकम टैक्स) ले लेती है। और खुशी खुशी हम दे भी दे हैं, आप एक मिनट नेत्र बन्द कर सोचें की प्रभु ने रहने को धरती दी प्रकाश के लिये दिन में सूर्य की व्यवस्था की रात्रि में चन्द्र की व्यवस्था की वर्षा के लिये नदियों के माध्यम से जल की व्यवस्था करते हैं।

जब हमारा जन्म भी नहीं हुआ होता तभी से प्रभु माँ के स्तनों

में दूध की व्यवस्था कर देते हैं, बताइये प्रभु को हमारी कितनी चिन्ता रहती है। लेकिन प्रभु की कहीं कथा चल रही हो तो हम वहां भी कहने से नहीं चूकते अरे भैया हमें अमुक कार्य में जाना है। नहीं जायेंगे तो लाखों का नुकसान हो जायेगा। प्रिय बन्धुओं इसे धन से मत तौलों ये तो प्राण धन है, संतों की पूंजी है। अनमोल धन है।

''इनकी छवी पे मैं बलि-बलि जाऊँ'' कहने का मतलब कि प्रभु हमारे लिये इतना कुछ करते हैं इतना कुछ देते हैं। लेकिन सब निःशुक्ल कोई शुक्ल नहीं, शुल्क मात्र इतना ही है, सत्संग करो, मंत्र जाप करो परोपकार करो, ध्यान रखें दुनिया लेने के लिये आपसे प्रेम करती है। और प्रभु आपको देने के लिये आपसे प्रेम करते हैं। प्रभु जगत् की चिन्ता करते हैं, फिर आप किसकी चिन्ता करते हो। तो प्रश्न है कि हम क्या करें तो उत्तर में हम सबको एक होकर प्रभु का चिन्तन करना चाहिये। अपने जीवन को समझना चाहिये। सोने, खाने, पीने, हसने में व्यर्थ नहीं गवांना चाहिये। भगवान का कीर्तन भजन करना चाहिये।

''तेरी सूनी सूनी जिन्दगानी प्राणी भजन बिना''।

ये जीवन हमें बड़े भाग्य से मिला है, आगे मिले न मिले।

॥ जय श्री कृष्ण ॥

॥ भजन से भी भगवत् प्राप्ति ॥

यज्ञो वै यजनः, यजनो वै यज्ञः यज्ञो वै विष्णुः
अतः यज्ञो वै श्रेष्ठ तमं कर्मः॥

यज्ञ ही यजन है, आराधना ही यज्ञ है, यज्ञ भगवान नारायण का ही स्वरूप है, इसलिये यज्ञ एक श्रेष्ठ कर्म माना गया है। अतः पवित्र और निष्काम भाव से भगवान का यजन करना चाहिये। सुना है, कि यज्ञों को तो धनवान लोग ही करवा सकते हैं, या कर सकते हैं, इस पर विद्वान लोग कहते हैं–

जैसे सामान्य लोगों को ए. सी. (एयर कण्डीशन) में रहना ''बड़े ठाट-बांट से रहना'' असंभव है, नाना प्रकार के भोज्य पदार्थ भी पाना कठिन है, फिर भी उदर पूर्ति के लिये दो वक्त का भोजन वो भी खाते हैं, कहने का मतलब उदर पूर्ति नाना प्रकार की व्यंजन सामग्रियों के द्वारा भी होती है, और उदर पूर्ति मात्र नमक-रोटी के द्वारा भी होती है।

ठीक इसी प्रकार यज्ञ के माध्यम से एश्वर्यशाली लोग भगवान् नारायण की आराधना करते हैं, और (यजनो वैयज्ञः) के आधार पर सामान्य लोग भी कीर्तन या भक्ति भाव के द्वारा भगवत् आराधना करते हैं।

सामान्य लोगों को यह नहीं सोचना चाहिये कि हम ऐश्वर्यशाली नहीं हैं, और यज्ञ नहीं कर सकते हैं, आप भी यज्ञ कर सकते हैं। क्योंकि यज्ञ के द्वारा भी लक्ष्य है भगवत् प्राप्ति, इष्ट पूर्ति। और उसी

प्रकार से भजन, कीर्तन के द्वारा भी भगवत् प्राप्ति होती है। अतः दोनों का लक्ष्य एक ही है।

अतः यह भाव मन में नहीं लाना चाहिये कि हम यज्ञ नहीं करवा सकते या नहीं कर सकते, तो भगवत् प्राप्ति नहीं होगी कभी-कभी तो यज्ञ करवाने वालों को भी भगवत् प्राप्ति नहीं होती, वहीं पर राम नाम स्मरण से ही भगवत् प्राप्ति हो जाती है। क्योंकि यज्ञ ही यजन का स्वरूप है, यजन ही यज्ञ है। अतः अपने मन को छोटा न करें और भगवत् भजन में लग जायें।

॥ जय श्री हरि ॥

आत्मा

आत्मा है दिव्य ज्योति विश्व का आधार है।
जैसे माला में सुगम मुझमें गुथा संसार है॥
जो नियम श्रद्धा लगन से आता मेरे द्वार है।
उसका दृढ़ विश्वास द्वारा होता खुद उद्धार है॥

॥ गीता ॥

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र समाज के चार स्तंभ हैं।

श्लोक—चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुण कर्म विभागशः।
तस्य कर्तारमपि मां विद्याकर्ता रमव्ययम्॥
॥ गीता अ. 4-13॥

भगवान श्री कृष्ण गीता में कहते हैं—कि गुण और कर्मो के आधार पर मैंने चार वर्णों की सृष्टि (उत्पत्ति) की है, यद्यपि इन सबों को मैंने बनाया है, अर्जुन फिर भी तुम मुझे अमर और अकर्ता समझो।

मानव योनी में जो भी आये हैं, उनके कर्म मिश्रित हैं। अर्थात् उनमें विभिन्न मात्रा में अच्छे और बुरे दोनों ही प्रकार के कर्म हैं। इसके साथ ही अलग-अलग वर्गों में सत्व, राजस अथवा तामस जैसे गुणों की न्यूनाधिक प्रभाव होता है। गुण और कर्मो के प्रभाव में अन्तर होने के कारण मानव को चार वर्णों में विभक्त किया गया है।

ब्राह्मण—जिनके व्यक्तित्व में सत्व की प्रबलता अधिक होती है। ब्राह्मण चिन्तनशील अन्तर्मुखी रहता है, तथा दूसरों के लिये आध्यात्मिक मार्गदर्शक बनने की इसमें सहज प्रवृत्ति होती है।

शास्त्रों के स्वाध्याय और ध्यान के द्वारा स्वयं ज्ञान प्राप्त कर दूसरों में इस ज्ञान का प्रसार करना ही इनका कर्तव्य है।

क्षत्रिय—क्षत्रिय वे हैं जिनमें राजस की प्रबलता होती है। इनकी

सहज प्रवृत्ति सैनिक अथवा राजनीतिज्ञ बनने की है। इनका कर्त्तव्य समाज में व्यवस्था और शासन बनाये रखना है।

वैश्य—वैश्य में राजस और तामस दोनों का मिश्रण प्रभावी रहता है। वैश्य स्वभाव से व्यापार अथवा धन संपत्ति अर्जित करने में रुचि रखने वाला होता है। वैश्य को अर्थनीति का अच्छा ज्ञान होता है। इसलिये उसका कर्तव्य समाज में आर्थिक (धन) सन्तुलन बनाये रखना है।

शूद्र—शूद्र में तामस गुण की अधिकता होती है। वह स्वभाव से ही दूसरों की सेवा में रुचि रखने वाला होता है। उसका कर्त्तव्य विभिन्न कार्यों और माध्यम से ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य की सेवा करना है। वास्तव में देखा जाय शास्त्रों का अध्ययन किया जाय तो पता चलता है, कि मानव समाज इन चार स्तम्भों पर खड़ा है। यदि सभी वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र अपने अपने कर्त्तव्यों का ठीक-ठीक पालन करते हैं, तो समाज की सर्वतोमुखी) उन्नति होती है। तथा एक उत्कृष्ट संस्कृति का जन्म होता है। यदि व्यक्ति अपने कर्तव्यों को त्यागकर वे अपने स्वभाव के विपरीत दूसरे वर्णो के कार्य करने लगते हैं। तो उनका व्यक्तित्व तो स्वयं विकृत होता ही है, समाज मे अनेक प्रकार की विषमतायें, अशान्ति, असन्तुलन और असमंजस्यता भी उत्पन्न हो जाती है।

इन चार वर्णों की सृष्टि परमात्मा ने स्वयं की है, तथा ये सभी वर्ण उनसे ही निर्देशित होते रहते हैं। जिस प्रकार सूर्य सभी प्रकार के बीज को अंकुरित होने के लिये आवश्यक प्रकाश प्रदान करता

है, वैसे ही परमेश्वर किसी भी वर्ण के जीव के लिये आवश्यक सहायता देते हैं। सूर्य के समान ही मानव के गुण तथा कर्म से परमेश्वर सर्वथा अप्रभावित और अछूते रहते हैं।

''नमां कर्माणि लिम्पत्ति नमे कर्म फले स्पृहा।
इति मां यो–भि जानाति कर्म भिर्नस बाध्यते।।

कर्म मुझे स्पर्श नहीं करते और न ही कर्मों के फल की मुझे लालसा है। इस प्रकार मुझे जो भी जान लेता है, वह कर्म बन्धन से मुक्त हो जाता है।

अर्जुन का प्रश्न

श्री परमात्मा के पूर्णावतार श्री कृष्ण अपनी गीता के तीसरे अध्याय मे अर्जुन को निष्काम कर्म योग का उपदेश देने के बाद चौथे अध्याय में प्रारम्भ करते हुए कहा कि अर्जुन हमनें जगत के आरम्भ में इस कर्मयोग का उपदेश सूर्य को दिया था, सूर्य ने अपने पुत्र वैवश्वत मनु को दिया और मनु ने अपने पुत्र इक्ष्वाकु को दिया था इस प्रकार परम्परा से आये हुए इस कर्म योग को राजर्षि गण जानते थे।

परन्तु बहुत समय से यह विद्या लुप्त हो गई है, और इसी विद्या का हमने तुम्हें तुम्हें पुनः उपदेश किया है। अर्जुन ने तब पूछा–

''अपरं भवतो जन्मपरं जन्म विवस्वतः''

आप तो अबके है सूर्य नारायण तो पहले के हैं, फिर मैं आपकी बात कैसे मानूं कि आपने कल्प के आरम्भ में इस विद्या का उपदेश

सूर्य को दिया?

भगवान श्री कृष्ण ने कहा–

''बहूनि में व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन''

हे अुर्जन! जैसे बहुत से जन्म तेरे हैं, वैसे ही मेरे भी जन्म बहुत हुए हैं, अर्जुन विशेषता केवल इस बात की है कि तू उन सबको नहीं जानता, परन्तु मैं जानता हूं। श्री कृष्ण के इस स्पष्ट उत्तर को सुन कर अर्जुन ने और कुछ नहीं पूछा। परन्तु अर्जुन ने हम समस्त मनुष्यों की तरफ से एक प्रतिनिधि था, और गीता जी का उपदेश मात्र अर्जुन के लिये ही नहीं था, अपितु (बल्कि) सारे संसार के मनुष्यों के प्रयोजन के लिये था। इसलिये भगवान श्रीकृष्ण ने अपनी सर्वज्ञता के कारण हम कलियुगी पुरुषों की बुद्धि में आने वाली शंकाओं और कुयुक्तियों को भी अपने हिसाब में लेकर प्रश्न किया। यद्यपि इनका अर्जुन ने तनिक भी नाम तक का भी जिक्र नहीं किया था, हम लोगों के कल्याण के लिये अपने आप शङ्का समाधान और कुयुक्त्यों का निरसन किया।

आपस में परस्पर सम्बन्ध

जो यह समझते हैं कि पालन करने वाले और संहार करने वाले आपस में विरुद्ध काम करने वाले हैं, अतः हरि (नारायण) हर (शिव) का अवश्य ही अत्यन्त विरोध और शत्रुत्व हो सकता है, ऐसे लोग ऊपर–ऊपर से ही विचार कर पालन और संहार के भीतर अर्थ को न सोचकर बड़ी भारी गलती कर रहे हैं। यह ठीक है, कि

यदि हरि और हर एक ही वस्तु के पालक और संघारक (विनाशक) हैं, तो उनका आपस में शत्रुत्व ही हो सकता है, परन्तु यह बात सत्य नहीं है। जिस पदार्थ की रक्षा करनी होती हो, उसके शत्रु का संहार जब हर से होता है, तब विरोध कहां है?

मसलन, बीमार के प्राणों की रक्षा के लिये जब वैध (डाक्टर) शस्त्र (औजार) का प्रयोग (**Surgical operation**) करता है, और व्याधि का संहार करता है, तब तो एक ही व्यक्ति से हरि और हर दोनों के काम होने की बात है। यही संबंध पालक हरि और संहारक हर का है।

महाकाली और रुद्र का काम

तीनों शक्तियों के रंगों और कार्यों का यह चमत्कारी सम्बन्ध है, कि रुद्र को जो संहार रूपी कार्य करना है, उसे कराने वाली महाकाली रूपी रुद्र शक्ति अपने भयंकर कार्य के अनुरूप और योग्य काले रंग की होती है। परन्तु वह संहार का काम संहार के लिये नहीं, बल्कि सारे संसार के रक्षण और कल्याण के लिये होता है। इसलिये वह खराब हिस्से का संहार करके, अपने पति का काम पूरा करके खराबी से अपनी बचाई हुई असली चीज को अपने भाई अर्थात् विष्णु के हाथ में सौंपकर कहती है कि 'भाई जी' मैंने पति महादेव रुद्र की शक्ति की हैसियत से खराबी का संहार कर दिया। अतएव हमारा दम्पति का काम पूरा हो गया है। अब तुम इस चीज को लेकर, अपना जो पालने का काम है, उसे करो।

राजनीति क्षेत्र में विद्या

इससे राजनीति क्षेत्र में भी यह स्पष्ट शिक्षा हमें मिलती है, कि प्रजा कि रक्षा ही राजा का प्रधान कर्तव्य है। अतएव मनु ने कहा है–

इस पर आक्षेप रूप से पूछा जा सकता है, कि ऐसा हो तो फिर राजा दुष्टों को दण्ड क्यों देते हैं। और फिर उन्हीं भगवान मनु ने ऐसा क्यों कहा–

अदण्डयान्दण्डयन्राजा दण्डयांश्चैवाप्यदण्डयन्।
अपशो मह दारनोति नित्यं चापि गच्छति।।

इस शंका का समाधान यह है कि प्रजा की रक्षा और दुष्टों का दमन ये दोनों ही काम राजा के हैं–परन्तु इनमें से दूसरा (दुष्टों को दण्ड देने का) जो काम है वह दण्ड देने के लिये नहीं है, बल्कि सज्जनों की रक्षा रूपी असली राजधर्म की पूर्ति के लिये एक अनिवार्य (**Unavoidable**) अंग या साधन रूपी काम है। अतएव पाश्चात्य राजनीत में ग्रन्थकारों ने भी **"Doctrine at vindictive punishment"** (बदला लेने के लिये सजा देने के सिद्धान्त) को छोड़कर अब यह स्वीकार कर लिया है कि **"The King's Punitive function is there, only as a means towards the adequate fulfilment at his pratective function"**, (अर्थात् दण्ड देना भी प्रजा की रक्षा के अंग रूप से ही राजा का कर्तव्य है।

अवतारों का प्रयोजन

इसीलिये श्री कृष्ण ने गीता जी में अपने अवतारों का उद्देश्य बतलाते हुए कहा–

'परित्राणाय साधूनाम्'

और तत्पश्चात् कहा–

'विनाशाय च दुष्कृताम्।'

अर्थात् जैसे बीमार की सड़ी हुई एक अंगुली के जहर को सारे शरीर में फैलने से रोकने के लिये वैद्य शस्त्र (Operation) से काटते हैं, इसी प्रकार भगवान श्री रुद्र संहार का जो काम करते हैं, वह जगत् के पालने के लिये है और किसी भी प्रयोजन के लिये नहीं।

महालक्ष्मी भगवान विष्णु का काम

विष्णु को जो पालन रूपी कार्य करना है, उसे कराने वाली महालक्ष्मी रूपी विष्णु शक्ति अपने पालनात्मक कार्य के अनुरूप और योग्य स्वर्ण वर्ण की होती है। परन्तु व पालन का काम सिर्फ पालन करके छोड़ देने के लिये नहीं, बल्कि पोषण और वर्धन करने के उद्देश्य से किया जाता है। इसलिये वह पालन का कार्य करके, अपने पति के कार्य को पूर्ण करके अपनी पाली हुई चीज अपने भाई (ब्रह्माजी) के हाथ में सौंपकर कहती हैं कि ''भाई जी'' मैंने अपने पति श्री महाविष्णु की शक्ति की हैसियत से इस चीज को

पाला है। इससे अब हमारा दम्पत्ति का काम पूरा हो गया है। अब तुम इसे लेकर अपना कार्य जो नई चीजों का उत्पन्न करना अर्थात् पोषण और वर्धन करने का है सो करो।

महासरस्वती और ब्रह्मा जी का काम

ब्रह्मा जी को जो नई चीजों की उत्पत्ति करने का काम है, उसे कराने वाली महासरस्वती रूपी ब्रह्मशक्ति अपने सृष्ट्यात्मक कार्य के अनुरूप और योग्य सफेद रंग की होती है। परन्तु वह पोषण एवं वर्धन का काम आगे-आगे बढ़ाते जाने के ही मतलब से नहीं है, बल्कि पोषण और वर्धन करने के समय जो बुरे या अनिष्ट पदार्थ भी उसके साथ सम्मिलित हो जाया करते हैं, उनको दूर हटा कर ठीक कर लेने के उद्देश्य से ही होता है। इसलिये वह वर्धन के काम हो जाने के बाद, अपनी बढ़ाई + बनाई हुई चीज को अपने भाई (रुद्र) के हाथ में देकर कहती है कि 'भाई जी' मैंने अपने पति श्री हिरण्यगर्भ ब्रह्मा की शक्ति की हैसियत से इस चीज का पोषण और वर्धन किया है। इससे अब हमारा दम्पति का काम पूरा हुआ। अब इसके पोषण और वर्धन के समय में जो खराबियां और त्रुटियां आ गईं हों उनका संहार करने का काम हमारा नहीं अपितु तुम्हारा है। इसलिये इन्हें हाथ में लेकर खूब मार-मार कर सीधा करो।

प्रवर्तित चक्रम्

इस प्रकार से एक ही परमात्मा जगदीश्वर महाप्रभु उत्पत्ति पालन, संहार, इन तीनों कर्मों को लगातार चलाते हुए ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र इन तीनों नामों से दुनिया में प्रसिद्ध होते हैं। और इन तीनों कर्मों को कराने वाली जगत् माता भगवती महामाया के अन्तर्गत जो सृष्टि शक्ति, पालन शक्ति, और संहार शक्ति है उन्हीं के नाम (पूर्वोक्त कारण से उलटे क्रम से) महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती है।

॥ भक्त सूरदास कथन ॥

जो सुख होय गोपालहिं गाये।
सो नहिं होत किये तप व्रतके कोटिक तीरथ न्हाये॥

॥ ज्योतिष नेत्र है ॥

वेद चक्षु किलेदं स्मृतं ज्यौतिषं।
श्रेष्ठताचाङ्ग मध्येऽथ तेनोऽच्यते॥

वेद भगवान हैं, वेद की आंखें तो ज्योतिष है, जैसे अंग में नेत्र प्रधान हैं, वैसे ही वेदाङ्ग में ज्योतिष शास्त्र प्रधान है।

॥ सीतायाः पतये नमः ॥

श्री राम भक्त संत तुलसी दास द्वारा रचित 'रामचरित मानस'

सन्त तुलसीदास द्वारा रचित 'रामचरित मनस' सर्वश्रेष्ठ एवं आध्यात्मिक एवं पारिवारिक आदर्श ग्रंथ है।

इस ग्रन्थ में व्यक्ति, परिवार, एवं राष्ट्र की समस्याओं का बड़े सुन्दर ढंग से समाधान किया गया है।

यदि हम रामायण को आदि से अन्त तक पढ़ लें तब भी हमारी आध्यात्मिक भूख नहीं मिटती अपितु बार-बार पढ़ने की इच्छा होती है।

श्री राम चरित मानस में त्याग क्या है, वैराग्य कैसा होना चाहिये? प्रेम की परिभाषा क्या है? सदाचार क्या है? इन सभी बातों का सुन्दर रीति से वर्णन है। ज्ञान एवं भक्ति का स्रोत है, 'राम चरित मानस' रामायण को भगवान श्री राम जी के चरणों में नमन करके पढ़ना चाहिये। यह ग्रन्थ पढ़ने में जितना प्रेरणादायक है, उतना ही सुनने में कर्ण पुटों को अच्छा लगता है।

रामायण पढ़ते-पढ़ते मनुष्य अपने आप ही आकर्षित होता है।

हृदय गद्‌गद् हो जाता है। नेत्र अश्रुपूर्ण हो जाते हैं।

सत्य तो यह है कि राम नाम में सारा ब्रह्माण्ड समाया हुआ है।

यह नाम जितना दिव्य है उतना सरल भी है।

राम नाम जपने मात्र से मनुष्य समस्त दुःखों से छुटकारा पा लेता

है। भौतिक सुखों के लिये व्यक्ति बाहर भागता है, पुरुषार्थ करता है। और जब थक जाता है, तब शान्ति की खोज में भटकता है, तीर्थों में जाता है, चर्चों में जाता है, फिर भी शान्ति नहीं मिलती तब एकान्त में बैठकर प्रभु का नाम जपता है। और इस प्रकार मनुष्य भगवत् भक्ति में लीन हो जाता है।

यदि परिवार के सभी सदस्यों को यथा उचित सम्मान दें छोटों को प्यार एवं आशीर्वाद दें तथा अन्य जनों को भी समभाव से देखें। तो समस्त समाज का सुधार हो जाये।

इतना ही नहीं यदि समस्त परिवार एकत्रित होकर जप या संकीर्तन करें तो घर तीर्थ बन जाय एक घड़ी या आधी घड़ी राम नाम जप से सारा वातावरण मंगलमय हो जाता है। सभी कष्टों से छुटकारा मिल जाता है।

एक घड़ी आधी घड़ी आधे में पुनि आध।
तुलसी संगत साधु की हरै कोटि अपराध।।

वो मनुष्य धन्यवाद के पात्र हैं, जो नित्य रामायण पाठ करते हैं, या श्रवण करते हैं। किन्तु वे दया के पात्र हैं, जो भगवान की भक्ति से विमुख हैं, नित्य रामायण का पाठ जो करता है, वास्तव में उसका तो हर जगह कल्याण ही कल्याण है।

यदि ऐसा करने से आप असमर्थ हैं तो आप चलते-फिरते, उठते-बैठते, खाते-पीते, सोते-जागते काम करते रोते हंसते राम-राम तो कह ही सकते हैं।

बाबा तुलसीदास जी ने लिखा है–

राम नाम बिनु गिना न सोहा।
देखि विचारि त्याग मद मोहा।।

मद का त्याग कर एक बार तो राम नाम लो फिर देखो आपका जीवन पवित्र हो जायेगा।

।। जय श्री राम ।।

।। राम चरित मानस के अन्तर्गत बालकाण्ड के कुछ अंश।।

चौ.–मुद मंगल मय संत समाजू। जो जग जंगम तीरथ राजू।

संतों का समाज व संग मंगलमय है, जो कि एक चलता-फिरता तीरथ राज है।

चौ.–सीय राम मय सब जग जानी। करहुँ प्रनाम जोरि जुग पानी।
मंगल भवन अमङ्गल हारी। उमा सहित जेहिं जपत पुरारी।।

दोहा–राम नाम मणि दीप धरु जेहिं देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहरहु जो चाहसि उजियार।।

चौ.–भाव कुभाव अनख आलसहूं। नाम जपत मंगल दिसि दसहूं।

राम नाम भाव से लो, बैरसे लो, क्रोध से लो, जैसे चाहे लो, नाम लेने से सर्वत्र मंगल ही होता है। तुलसीदास जी का मत है, जैसे अग्नि के अंगारे में यदि धोखे से भी पैर पड़ जाय तो वह अंगारा यह नहीं सोचता कि इस मनुष्य का धोखे से पैर पड़ा है। इसे नहीं जलाना चाहिये। बल्कि उसे वह जला देता है।

ठीक इसी प्रकार राम नाम भी है। जैसे भी लो वह फल अवश्य देगा।

सगुनहि अगुनहिं नहिं कछु भेदा। गावहिं मुनि पुरान बुध वेदा।
अगुन अरूप अलख अज जोई। भगत प्रेम वस सगुन सो होई।।

परब्रह्म परमात्मा के दो रूप हैं–सगुन और निर्गुण दोनों में कोई अन्तर नहीं है। जो ब्रह्म निर्गुण निराकार अजन्मा व अदृश्य है, वही भगवान प्रेम के वश में होकर सगुण रूप धारण कर भक्तों को दर्शन देते हैं।

हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता। कहहिं सुनहिं बहुविधि सब संता।
हरि व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम ते प्रगट होहि मैं जाना।।

भोले नाथ कहते हैं हे उमा मैं तो जानता हूं भगवान् सर्वत्र एक रस में विद्यमान है। फिर भी भगवान प्रेम से प्रगट होते हैं।

जैसे लकड़ी में अग्नि विद्यवान है वो दिखाई नहीं देती उसे यंत्र द्वारा प्रगट किया जाता है।

चौ.–जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरति देखी तिन्ह तैसी।

भगत जिस भावना से भगवान को देखता है, भगवान् पुराण पुरुषोत्तम उसको उसी रूप में दर्शन (प्राप्त होते हैं) देते हैं।

।। अयोध्या काण्ड के कुछ अंश ।।

दोहा–करम वचन मन छाड़ि छल जब लग जन न तुम्हार।
तब लग सुख सपनेहु नहिं किये कोटि उपचार।।

जब तक मानव कपट छोड़कर भगवत् भक्ति नहीं करता तब

तक करोड़ों उपचार क्यों न कर लें ठाकुर जी उसे प्राप्त नहीं हो सकते। परमानन्द की प्राप्ति नहीं हो सकती।

दो.– सुनहुं भरत भावी प्रबल बिलख कहेउ मुनि नाथ।
हानि लाभ जीवन मरण यश अपयश बिधि हाथ।।

देवज्ञ मुनि वशिष्ठ जी ने दुखी मन से भरत को समझाया भरत ये छः वस्तुयें अपने हाथ में नहीं हैं–हानि, लाभ, जीवन, मरण, यश, अपयश, विधाता के अधिकार में हैं, इन पर मनुष्य का वश नहीं चलता।

कोऊ न काहू सुख दुख कर दाता। निजकृत कर्म भोग सब भ्राता।

मनुष्य सारे भोग स्वयं के कर्मों से प्राप्त करता है।
कोई किसी को सुख दुख देने वाला नहीं है।
(कर्मों का फल तो स्वयं को ही भोगना होगा)

अर्थ न धर्म न काम रुचि गति न चहहुं निरवान।
जनम-जनम रति राम पद यह वरदान न आन।।

भरत जी कहते हैं मुझे धन-धर्म, काम कुछ भी अच्छे नहीं लगते मैं मुक्ति भी नहीं चाहता। मैं तो एक ही वरदान चाहता हूं कि जन्मों जन्मों तक भगवान श्री राम जी के चरणों में प्रेम बढ़े।

कर्मप्रधान विश्व कर राखा।
जो जस करइ सो तस फल चाखा।

॥ अरण्य काण्ड के कुछ अंश ॥

चौ.–यह बर मागउ कृपा निकेता। बसहुं हृदय श्री अनुज समेता।।

मुनि अगस्त्य जी ने राम जी से वरदान मांगा था आप सीता जी तथा लक्ष्मण जी सहित मेरे हृदय में निवास करें यह एक प्रेम का अनूठा उदाहरण है।

चौ.–मैं अरु मोर तोर तै माया। जेहि बस कीन्हे जीव निकाया।।

लखन जी ने श्री राम से ईश्वर और जीव का भेद जानना चाहा। श्री राम ने कहा मैं और मेरा, तू और तेरा यही तो माया है, जिसने समस्त प्राणियों को वश में कर रखा है।

जीव माया के वश में है, ईश्वर माया से परे है।

॥ किष्किन्धा काण्ड के कुछ अंश ॥

चौ.–अब प्रभु कृपा करहु एहिं भांती।
सब तजि भजन करहु दिन राती।।

बाली के भय के कारण ही सुग्रीव को श्री राम के दर्शन हुए सुग्रीव को वैराग्य उत्पन्न हो गया तथा निरन्तर सब कुछ त्यागकर निरन्तर भजन करने का वरदान मांगा।

चौ.–जन्म जन्म मुनि जतन कराही।
अन्त राम कहि आवत नाहीं।।

किन्तु बाली ने बोला अनेक जन्मों तक मुनि गण यत्न करते हैं कि अन्त में राम नाम निकले फिर भी अन्त में मुख से राम नाम

नहीं निकलता। मैं कितना भाग्यशाली हूं कि मेरे सामने साक्षात् ब्रह्म खड़े हैं, प्रभु अब मुझे जीने की लालसा नहीं, अब तो विश्राम चाहता हूं।

चौ.–उमा राम सम जग हित माही। गुरु पितु मातु बंधु प्रभु नाहीं।
सुर नर मुनि सब की यह रीति। स्वारथलाग करहिं सब प्रीती।।

भगवान शिव माता पार्वती से कहते हैं कि श्री राम के समान संसार में हितकारी कोई नहीं है, सुर, नर, मुनि, स्वार्थ से ही प्रीति करते हैं।

॥ सुन्दरकाण्ड के कुछ अंश ॥

चौ.–राम नाम बिनु गिरा न सोहा। देखिविचार त्यागि मद मोहा।

हनुमान जी ने रावण से कहा तू श्री राम से द्रोह मत कर, जिह्वा राम नाम से शोभा पाती है। अभिमान त्यागकर श्री राम जी का स्मरण कर।

चौ.–सन्मुख होइ जीव मोहि जबहीं।
जन्म कोटि अघ नासहिं जबहीं।।
निर्मल मन जन सो मोहि पावा।
मोहि कपट छल छिद्र न भावा।।

विभीषण के श्री राम के पास आने पर सुग्रीव को संदेह हुआ जीव (विभीषण) ब्रह्म (श्रीराम) की ओर आकर्षित हो रहा है, श्री राम ने कहा कि जीव जब मेरे सामने होता है, तब उसके करोड़ों

पाप तुरन्त नष्ट हो जाते हैं। छल, कपट, त्याग कर आने वाला स्वच्छ हृदय वाला जीव (व्यक्ति) ही मुझे प्राप्त कर सकता है। अन्य कोई नहीं।

दोहा–जब लगि कुशल न जीव कहुं सपने हुँ मन विश्राम।
जब लगि भजत न राम कहुं सोक धाम तजि काम।।
तब लगि हृदय बसत खल नाना।
लोभ मोह मत्सर मद नाना।।

जब तक मनुष्य भगवान श्री राम का भजन नहीं करता तब तक उसे स्वप्न में भी शान्ति नहीं मिल सकती। और जब श्री राम उसके हृदय में निवास कर लेते हैं, तो लोभ, मोह, निन्दा, घमंड, अहंकार जैसे से विकार स्वत: हृदय से विदा हो जाते हैं।

चौ.–सठ सन विनय कुटिल सन प्रीति।
सहज कृपन सन सुन्दर नीति।।
ममता रत सन ज्ञान कहानी।
ऊसर बीज बएं फल जथा।।

श्री राम ने लंका पर चढ़ाई करने से पूर्व समुद्र से मार्ग देने के लिए प्रार्थना की। तीन दिन बीतनें पर भी अहंकारी समुद्र ने मार्ग नहीं दिया। तब श्री राम ने लखन लाल से कहा बिना भय के प्रीति नहीं होती। दुष्ट से विनती करना, कुटिल से प्रेम करना, कंजूस से सुन्दर नीति की बात करना, ममता में फंसे व्यक्ति से ज्ञान कथा की चर्चा करना, अति लोभी से वैराग्य का वर्णन करना, क्रोधी से शान्ति की बात करना और कामी पुरुष से भगवान की कथा की

चर्चा करना इन सब का वैसा ही फल होता है, जैसे ऊसर भूमि पर बीज बोने से होता है। अर्थात् कोई लाभ नहीं होता।

।। लंका काण्ड के कुछ अंश ।।

चौ.–शिव द्रोही मम दास कहावा।
सो नर सपनेहुँ मोहि न पावा।।
संकर विमुख भगति चह मोरी।
सो नारकी मूढ मति थोरी।।

दोहा–शंकर प्रिय मम द्रोही शिव द्रोही मम दास।
ते नर करहिं कलप भरि घोर नरक महुं बास।।

श्री राम कहते हैं कि मेरा भक्त शिव से यदि द्रोह करता है वह मुझे स्वप्न में भी अच्छा नहीं लगता।

वास्तव में भगवान राम और भगवान् शंकर एक-दूसरे के पूरक हैं। दोनों की भक्ति परम आवश्यक है। अन्यथा घोर कष्ट सहने पड़ते हैं। भगवान शंकर मां पार्वती से कहते हैं कि श्री रामचन्द्र जी तो केवल अनन्य प्रेम होने पर ही मिलते हैं।

दोहा–यह कलिकाल मलायतन मन करि देखु विचार।
श्री रघुनाथ नाम तजि नाहिन आन अधार।।

गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं, कि यह कलियुग पापों का घर है, मन में विचार कर देख लो इससे बचने का मात्र एक ही उपाय है। श्री राम के चरणों में प्रेम हो, तो इससे बचा जा सकता है।

॥ उत्तरकाण्ड के कुछ अंश ॥

चौ.–अहह धन्य लछिमन बड़भागी। राम पादारबिंदु अनुरागी।

जब राम जी के लौटने का एक दिन शेष रह गया तब भरत जी सोचते हैं कि लक्ष्मण भाग्यशाली है जो भैया राम के साथ है, और मुझे कुटिल समझकर प्रभु राम ने अपने साथ नहीं रखा।

श्री राम जी के प्रति भरत जी के अति श्रेष्ठ विचार हैं, श्री राम बड़े दीन हितकारी तथा मृदुल स्वभाव के हैं वे किसी के अवगुण नही देखते।

चौ.–बड़े भाग्य मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथन गावा।
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा। पाइ न जेहि पर लोक संवारा।।

मानव शरीर पाने के लिये देवता भी तरसते हैं, क्योंकि यही मोक्ष को देने वाला साधन है, इसके द्वारा लोक व परलोक को संभालने में ही चतुराई है। ये विचार अयोध्या में श्री राम जी ने समस्त अयोध्या वासियों, सभासदों, गुरु, मुनि आदि को बुलाकर एक सभा में व्यक्त किये। आगे श्री राम जी बोले ज्ञान से भक्ति बड़ी है।

चौ.–भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी।
बिनु सत्संग न पावहिं प्रानी।
पुण्य पुंज बिनु मिलहिं नहि संता।
सत् संगति संसृति कर अंता।।

भक्ति स्वतंत्र है भक्ति सब सुखों की खान है, भक्ति भी संतो के संग के बिना नहीं प्राप्त होती। संत भी अनेक पुण्यों से मिलते

हैं। सत्संग के द्वारा ही जनम मरण के चक्र का अन्त होता है।

दोहा–औरउ एक गुप्त मत सबहिं कहहुँ कर जोरि।
शंकर भजन बिना नर भगति न पावइ मोरि।।

श्री राम जी ने एक गुप्त मंत्र बताया कि शंकर जी के भजन बिना मनुष्य को मेरी भक्ति भी प्राप्त नहीं होगी।

भक्ति मार्ग में चलने के लिये योग, यज्ञ, जप, तप, उपवास की आवश्यकता नहीं है, केवल सरल स्वभाव हो मन दर्पण जैसा स्वच्छ हो और जो मिल जाय उसी में संतोष करे।

दोहा–भगति कल्पतरु प्रनतहित कृपा सिन्धु सुख धाम।
सोई निज भगति मोहि प्रभु देहु दयाकर राम।।

भगवान् श्री राम के तीन परम भक्त हुए हैं–संत तुलसीदास श्री हनुमान जी और काकभुशुण्डि जी। काकभुशुण्डि जी की भक्ति से प्रसन्न होकर श्री राम ने उनसे कोई भी वरदान मांगने को कहा। आज मैं तुझे सब कुछ दूंगा जो भी मांग लो। काकभुशुण्डि जी ने भक्ति का वरदान मांगा। आप यदि प्रसन्न हैं तो न मांगने वाली मुझे निष्काम भक्ति दीजिये। श्री राम जी प्रसन्न होकर अमोघ भक्ति प्रदान की।

चौ.–भगतिवंत अति नीचहु प्रानी। मोहि प्राणप्रिय अस मम बानी।।

श्री राम जी कहते हैं कि ब्रह्मा भी यदि मेरी भक्ति नहीं करते तो वे भी सब प्राणियों के समान मुझे प्रिय हैं किन्तु मेरी भक्ति करने वाला नीच प्राणी भी मुझे अपने प्राणों से भी अधिक प्यारा है।

निज अनुभव अब कहऊँ खगेशा।
बिनु हरि भजन न जाय कलेशा।।

कागभुशुण्डि जी अब गरुड़ जी से अपना अनुभव कहते हैं। कि हे पक्षिराज बिना हरि भजन के दु:ख दूर नहीं होते। और विश्वास के बिना सिद्धि नहीं प्राप्त होती। और न प्रभु भजन के बिना जन्म-मरण का चक्र ही खत्म होता।

चौ.–जप तप मख सम दम व्रत दाना।
बिरति विवेक जोग विज्ञाना।
सब कर फल रघुपति पद प्रेमा।
तेहि बिनु कोउ न पावइ क्षेमा।।

भक्ति किसी भी साधन के द्वारा की जाय (चाहे जप से, तप, सम, दम) सबका फल एक ही है, भगवान श्री राम के चरणों में प्रेम होना। बिना भगवत्प्रेम के किसी का कल्याण संभव नहीं है।

दोहा–प्रगट चारि पद धर्म के कलिमंहु एक प्रधान।
येन केन बिधि दीन्हें दान करे कल्याण।

धर्म के चार चरण हैं–सत्य, दया, तप, और दान। कलियुग में दान प्रधान माना गया है। जैसे भी हो सके अपनी शक्ति के अनुसार दान करें।

चौ.–एहि कलि काल न साधन दूजा।
योग जाय जप तप व्रत पूजा।।
रामहि सुमिरियं गाइअ रामहि।
संतत सुनिअ राम गुन गावहिं।।

संत तुलसीदास कहते हैं इस कलियुग में योग, यज्ञ, तप, जप, पूजा आदि कोई भी साधन नहीं है। इस कलियुग में तो केवल श्रीराम की याद उनके चरित्र का गुणगान और उनकी कथाओं को सुनना परमानन्द को देने वाला है, जिसने भी पतित पावन श्री राम के चरणों में प्रेम किया, उसने सहन में ही मोक्ष प्राप्त कर लिया, ये राम भजन का प्रभाव है।

पाठ के अन्त में प्रार्थना कीजिये–

मोसम दीन न दीन हित तुम्ह समान रघुवीर।
अस विचार रघुवंश मनि हरहु विषम भव भीर।।

प्रभु मेरे सामन दीन और आपके समान दीनों का हित चाहने वाला कोई और नहीं है। हे रघुवंश शिरोमणि ऐसा विचार कर इस अनाथ को भव सागर से पार लगाओ।

मांगें–प्रेमा भक्ति दीजिये, सद्बुद्धि दीजिये, सत्कर्म में लगाइये, सब विकार दूर करिये।

।। इति ।।

सन्तानगोपाल

ॐ नमो भगवते वायुदेवाय।

श्रीशं कमलपत्राक्षं देवकीनन्दनंहरिम्।।
सूतसम्प्राप्तये कृष्णं नामि मधुसूदनम्।।1।।
नमाम्यहं वायुदेवं सुतसम्प्राप्तये हरिम्।
यशोदांकगतं बाल गोपालं नन्दनन्दनम्।।2।।
अस्माकं पुत्रलाभाय गोविन्दं मुनिवन्दितम्।
नमाम्यहं वायुदेवं देवकीनन्दनं सदा।।3।।
गोपालं डिम्भकं वन्दे कमलापतिमच्युतम्।
पुत्रसम्प्राप्तये कृष्णं नमामि यदुपङ्गवम्।।4।।
पुत्रकामेष्टफलदं कञ्जाक्षं कमलापतिम्।
देवकीनन्दनं वनेदे सुतसम्प्राप्तये मम्।।5।।
पद्मापति पद्मनेत्र पद्मनाभं जनाद्रन।
देहि में तनयं श्रीश वासुदेव जगत्पते।।6।।
यशोदांकगतं बाल गोविन्द मुनिवन्दितम्।
अस्माकं पुत्रलाभाय नमामि श्रीशमज्युतम्।।7।।
श्रीपती देवदेवेश दीनार्तिहरणाज्युत।
गोविन्द में सुतं देहि पमाति त्वां जनार्दन।।8।।
भक्तकामदं गोविन्द भक्तं रक्ष शुभप्रद।
देहिमे तनयं कृष्ण रुक्मिणी वल्लभ प्रभो।।9।।
रुक्मिणीनाथ सर्वेश देहि में तनयं मुदा।
भक्त मन्दार पद्माक्ष त्वामहं शरणं गतः।।10।।

पुत्र प्राप्ति के लिए मैं लक्ष्मीपति कमलनयन देवकी नन्दन मधुसूदन भगवान श्री कृष्ण को नमस्कार करता हूँ। पुत्र की प्राप्ति के लिए यशोदा के अंक में बाल–गोपाल रूप में स्थित एवं नन्द को आनन्द देने वाले वायुदेव श्री हरि को मैं नमस्कार करता हूँ। पुत्र लाभ के लिए देवकी वसुदेव के पुत्र, मुनियों द्वारा वन्दना किए हुए गोविन्द को मैं नमस्कार करता हूँ। पुत्र लाभ की कामना से साक्षात् लक्ष्मीपति, अच्युत होकर भी गोप बालक के रूप में गौओं की रक्षा में तत्पर यदुकुल तिलक भगवान श्री कृष्ण को प्रणाम करता हूँ। पुत्र की कामना से पुत्रेष्टि यज्ञ के फलदाता कमलाक्ष, कमलापते, देवकी सुत को मैं नमस्कार करता हूँ। हे कमलापते! हे कमलनयन!! हे कमलनाभ!!! हे जनाद्रन! हे जगदीश्वर!! मुझे पुत्र दीजिए। यशोदा की गोदी में विराजमान रहने वाले, अपनी महिमा से कभी अलग न होने वाले, मुनियों द्वारा वन्दना किये हुए भगवान गोविन्द को मैं नमस्कार करता हूँ, मेरे इस कर्म के फल से मुझे पुत्र प्राप्त हो। हे भक्तों की कामना पूर्ण करने वाले गोविन्द मुझ भक्त की रक्षा कीजिए। शुभद्र! रुक्मिणि! हे प्रभो! हे कृष्ण! मुझे पुत्र दीजिए। हे रुक्मिणीपते! हे सर्वेश्वर! मुझे पुत्र दीजिए। भक्तों के अभीष्ट को पूर्ण करने में कल्पवृक्ष स्वरूप भगवान श्रीकृष्ण में आपकी शरण में हूँ।

देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते।
देहिमे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः।।11।।

वासुदेव जगदवन्द्य श्रीपते पुरुशोत्तमम्।
देहिमे तनयं कृष्णं त्वामहं शरणं गतः।।12।।
कंजाक्ष कमलानाथ परकारूपिकोत्तम।
देहिमे तनयं कृष्णं त्वामहं शरणं गतः।।13।।
लक्ष्मीपते पद्मनाभ मुकुन्द मुनिवन्दित।
देहिमे तनयं कृष्णं त्वामहं शरणं गतः।।14।।
कार्यकारण रूपाय वायुदेवाय ते सदा।
नमामि पुत्रलाबार्थ सुखदाय बुधाय ते।।15।।
राजीवनेत्र श्रीराम रावणारे हरे कबे।
तुभ्यं नमानि देवेश तनयं देहि में हरे।।16।।
अस्माकं पुत्रलाभाय भजामि त्वां जगत्पते।
देहिमे तनयं कृष्णं वासुदेव रमापते।।17।।
श्रीमानिनीमानचोर गोपावस्त्रापहारक।
देहिमे तनयं कृष्णं वासुदेव जगत्पते।।18।।
अस्माकं पुत्र सम्प्राप्ति कुरूष्व यदुनन्दन।
रमापतें वासुदेव मुकुन्द मुनिवन्दित।।19।।
वासुदेव सुतं देहि तनयं देहि माधव।
पुत्र में देहि श्रीकृष्ण वत्सं देहि महाप्रभो।।20।।

हे देवकी नन्दन! हे गोविन्द! हे वासुदेव! हे जगन्नाथ! है श्री कृष्ण! मुझे पत्र प्रदान कीजिये, मैं आपकी शरण में आया हूँ। हे विश्ववंद्य! है वासुदेव! हे श्रीपते! हे पुरुषोत्तम श्री कृष्ण! मुझे पुत्र प्रदान कीजिए, मैं आपकी शरण में हूँ। हे कमलाक्ष! हे कमलापते!

हे दयालुओं में सर्वश्रेष्ठ श्रीकृष्ण! मैं आपकी शरण में आया हूँ, मुझे पुत्र दीजिए। हे लक्ष्मीपते! हे मुनिवंदित मुकुन्द! हे श्रीकृष्ण मैं आपकी शरण में आया हूँ, मुझे पुत्र प्रदान कीजिए। आप कार्य कारण रूप, सुखदाता एवं ज्ञानी हैं, पुत्र प्राप्ति हेतु मैं आप वासुदेव को सदा प्रणाम करता हूँ। हे कमलनयन! हे रावणारे! हे हरे कवे! हे देवेश विष्णो! आपको नमस्कार है, मुझे पुत्र दीजिये। हे विश्वेश्वर! पुत्र प्राप्ति की कामना से मैं आपकी आराधना कर रहा हूँ। हे रमापते! हे वासुदेव! हे श्रीकृष्ण! मुझे पुत्र प्रदान कीजिये। हे मानिनी! राध ा के मान भंजक श्रीकृष्ण, हे वासुदेव, हे जगननाथ, मुझे पुत्र प्रदान करिये। हे यदुनन्दन! हे लक्ष्मीपति, हे वासुदेव, मुझे पुत्र प्रदान करिये। हे यदुनन्दन! हे लक्ष्मीपति, हे वासुदेव, मुझे पुत्र दीजिए, हे माधव, हे तनय, हे श्रीकृष्ण, मुझे पुत्र प्रदान कीजिए, हे महाप्रभो, मुझे पुत्र प्रदान कीजिये।

चन्द्रसूर्याक्ष गोविन्द पुण्डरीकाक्ष माधव।
अस्माकं बन्यसत्पुत्रं देहि देव जगत्पते।।21।।
कारूण्य रूप पद्माक्ष पद्मनाभ समर्चित।
देहि में तनयं कृष्णं देवकीनन्दन।।22।।
देवकीसुत श्रीमान् वासुदेव जगत्पते।
समस्तकामफलप्रद देहि में तनयं सदा।।23।।
भक्तमन्दार गम्भीर शंकराच्युत माधव।
देहि में तन्यं गोपालवत्सल श्रीपते।।24।।
श्रीपते वायुदेवेश देवकीप्रियनन्दन।

भक्तमन्दार में देहि तनयं जगतां प्रभो॥25॥
जगननाथ रामनाथ भुमिनाथ दयानिधे।
वासुदेवेश सर्वज्ञ देहि में तनयं प्रभो॥26॥
श्रीनाथ पद्रपत्राक्ष वासुदेव जगत्पते।
देहि में तनयं कृष्णं त्वामहं शरणं गतः॥27॥
दासमन्दार गोविन्द भक्त चिन्तामणेप्रभो।
देहि में तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥28॥
गोविन्द पुण्डरीकाक्ष रमानाथ महाप्रभो।
देहि में तनयं कृष्ण त्रामहं गतः॥29॥
श्रीनाथ पद्मपत्राक्ष गोविन्द मधुसूदन।
मत्पुत्रफलस्द्धियर्थं भजामि त्वं जनार्दन॥30॥

हे चन्द्र सूर्य रूपी नेत्रधारी गोविन्द, हे पद्मनयन माधव, जगदीश्वर, हमें भाग्यवान पुत्र दीजिये। हे पद्मनाभ, हे विष्णु सम्मतिदेवकी पुत्र श्रीकृष्ण, हमें पुत्र प्रदान कीजिये। हे देवकीनन्दन, हे लक्ष्मीपते, हे जगत्पति वासुदेव, हे अभीष्ट फलदाता श्रीकृष्ण मुझे तनय प्रदान कीजिये। हे भक्तों की कामना पूर्ति हेतु कल्प वृक्ष स्वरूप है, हे गंभीर स्वभाव वाले अच्युत! हे मंगलकारी माधव, हे ग्वाल बालों पर स्नेह करने वाले, हे लक्ष्मीनाथ मुझे पुत्र प्रदान कीजिये। हे श्रीपते, हे वसुदेव, पुत्र, हे देवकीनन्दन ईश्वर, आप भक्तों के लिए कल्पवृक्ष हो, हे जगदीश्वर, मुझे पुत्र प्रदान कीजिए। हे जगन्नाथ, हे लक्ष्मीनाथ, हे दयानिधे, हे वासुदेव, ईश्वर एवं सर्वेश्वर प्रभो मुझे पुत्र प्रदान करें। हे कमलनाथ, हे कमलनयन वासुदेव, हे जगत्पति श्रीकृष्ण मैं आपकी

शरण में हूँ, मुझे पुत्र प्रदान कीजिये। हे अपने सेवकों की कामना सिधि हेतु कल्पवृक्ष स्वरूप गोविन्द भक्तों की इच्छा पूर्ति हेतु चिन्तामणि रूप श्री कृष्ण! मैं आपकी शरण में आया हूँ। मुझे पुत्र प्रदान कीजिये। हे पुण्डरीकाक्ष, गोविन्द, हे लक्ष्मीपति श्रीकृष्ण, हे महप्रभो, मुझे पुत्र प्रदान कीजिये, मैं आपकी शरण में हूँ। हे कमलापते, कमललोचन हे मधुसूदन गोविन्द, हे जनार्दन, पुत्र रूप की फल की प्राप्ति के लिए मैं आपकी आराधना करता हूँ।

भवदीय पद्माभोजे चिंतयामि निरंतरम्।
देहि में तनयं सीताप्राणवल्भ राघव॥31॥
रास मत्काम्यवरद पुत्रोत्पत्तिफलप्रद।
देहि में तनयं श्रीश कमलासन वंदित॥32॥
राम राघव सीतेश लक्ष्णानुज देहि में।
भाग्यवत्पुत्र संदान दशरथात्मज श्रीपते॥33॥
देवकी गर्भसंजात यशोदाप्रियनन्दन।
देहि में तनयं राम कृष्ण गोपाल माधव॥34॥
कृष्ण माधव गोविन्द वामनाज्युत शंकर।
देहि में तनयं श्रीश गोप बालक नायक॥35॥
गोपाल महाधन्य गोविंदाच्युत माधव।
देहि में तन्यं कृष्ण वासुदेव जगत्पते॥36॥
दिशतु दिशतु पुत्रं देवकी नन्दनोऽयं।
दिशतु दिशतु शीघ्रं भाग्यवत्पुण्यलाभम्।
दिशतु दिशतु श्रीशो राघवों रामचन्द्रो।

दिशतु दिशतु पुत्र वंश विस्तारहेतो!॥37॥
दीयतां वासुदेवेन तनयो मयिः सुतः।
कुमारो नन्दनः सीतानायकेन सदा मम॥38॥
राम राघव गोविंद देवकीसुत माधव।
देहि मं तनयं श्रीश गोपबालक नायक॥39॥
वैशविस्तारकं पुत्र देहि में मधुसूदन।
सुतं देहि सुतं देहि त्वामस्मि शरणं गतः॥40॥

हे राघव! सीता के प्राणवल्लभ, मैं आपके चरणारविन्दों की चिंता में रत हूँ आप मुझे पुत्र दीजिए। 311 अभिलाषापति वर और पुत्रोत्पत्ति फल देने वाले हे श्रीराम, ब्रह्माजी के द्वारा वंदित हे श्रीपते! आप मुझे पुत्र प्रदान कीजिये। 321 हे लक्ष्मण के ज्येष्ठ भ्राता, हे सीताजी के प्राणपते! हे दशरथ सुवन! हे रघुनन्दन श्री राम हे श्रीपते! आप मुझे भाग्यशाली पुत्र दीजिये। 331 हे देवकी के उदर से अवतीर्ण होने वाले गोपाल! हे यशोदा के सुवन श्रीकृष्ण! हे माध व! हे राम मुझे पुत्र प्रदान कीजिए। 341 हे माधव! हे गोवन्द! हे वामन! हे अच्युत! हे कल्याणकारी लक्ष्मीपते! हे गोपुत्रों के अधि नायक! हे श्री कृष्ण! मुझे पुत्र प्रदान कीजिये। 351 हे गोपकुमार! हे सर्वश्रेष्ठ एवं धन्य-धन्य! हे गोविन्द! हे अच्युत! माधव! वासुदेव! हे जगदीश्वर! हे श्रीकृष्ण आप मुझे पुत्र प्रदान कीजिए। 361 दे देवकीनन्दन भगवान मुझे पुत्र की प्राप्ति करावें! हे सीतावल्लभ! हे रघुकुल पुत्र श्रीराम! मुझे मेरी वंश वृद्धि के निमित्त पुत्र प्रदान कीजिये। 371 वासुदेव सुवन श्रीकृष्ण सीतावल्लभ श्रीराम मुझे आनन्द देने

वाले प्रिय पुत्र प्रदान करें। 381 हे राघव! हे गोविन्द! हे दवकी नन्दन! हे माधव! हे लक्ष्मीनाथ! हे गोपबालकों के नायक श्रीकृष्ण! मुझे पुत्र प्रदान करिये। 391 हे मधुसूदन! मुझे मेरे वंश का विस्तारक पुत्र प्रदान करिये, मुझे पुत्र दीजिये मैं आपकी शरण में आया हूँ।

पुत्रसम्पत्पदातातं गोविन्द देव पूजितम्।
वदामहे सदा कृष्ण पुत्रलाभप्रदायिनम्॥41॥
करुष्यनिधये गोफीवललभाय मुरारये।
नमस्ते पुत्रलाभार्थ देहि में तन्य विभो॥42॥
नमस्तस्यै रमेशाय रूक्मिणीवल्लभायं ते।
देहि में मनयं श्रीश गोपबालकनायकः॥43॥
नमस्ते वासुदेव नित्य श्री कामुकाय च।
पुत्रदाय च सर्षेन्द्रशायिन रंगशायिने॥44॥
रंगशायिन रमानाथ मंगलप्रदमाधव।
देहि में तनयं श्रीश गोपबालकनायक॥45॥
दासाय में सुतं देहि दीनमन्दार राघव।
सुतं देहि सुतं देहि पुत्र देहि रमापते॥46॥
यशोदातनयाभीष्ट पुत्रदानातः सदाः।
देहि में तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥47॥
मदिष्टदेव गोविन्द वायुदेव जनार्दन।
देहि में तनयं कृष्ण त्वामहं शरण गतः॥48॥
नीतिमान् धनवान पुत्रो विद्यावश्चप्रदायते।
भगवस्त्वत्कृपायाश्च वासुदेवेन्द्रपूजित॥49॥

यः पठेत् पुत्रस्तोत्रं सोऽपि सत्पुत्रवानभवेत।
श्रीवासुदेवकथितं स्तोत्ररत्नं सुखायचः।।50।।
काले पठेन्नित्यं पुत्रलाभ धन श्रियम।
श्रश्वर्य राजसम्पन्न सद्योयाति न संशयः।।51।।

पुत्र तथा सम्पत्ति को देने वाले, पुत्र-लाभ कराने वाले और देवताओं द्वारा पूजित गोविंद श्रीकृष्ण का हम सदैव वन्दन करते हैं। हे प्रभो, आप करुणा के निधि गोपियों के प्राणवल्लभ एवं मुर नामक दैत्य के शत्रु हैं। आपको पुत्र लाभ के निमित्त मेरा नमस्कार है। आप मुझे पुत्र दीजिये। हे लक्ष्मीपते हे रूक्मिणी के प्राणनाथ! हे भगवान श्रीकृष्ण! आपको नमस्कार है। हे गोपबालकों के नायक श्रीपते! मुझे पुत्र प्रदान कीजिये। सदैव लक्ष्मी जी की इच्छा रखने वाले आप वासुदेव को मैं प्रणाम करता हूँ। आप पुत्र प्रदान करने वाले एवं सर्पेन्द्र शेष की शय्या पर शयन करते हैं आप शेषशायी भगवान को मेरा नमस्कार है, हे रंगाशायी रमापते! हे मंगल के देने वाले माधव! हे गोपबालकों के नायक! हे लक्ष्मीनाथ! आप मुझे पुत्र दीजिये। हे दीनों के कल्पवृक्ष! हे राघव! मुझ दास को पुत्र प्रदान कीजिये। हे रमापते मुझे पुत्र प्रदान कीजिये। मुझे पुत्र दीजिये। पुत्र दीजिये है, यशोदा नन्दन, हे मनोभिलाषित पुत्र प्रदान करने में तत्पर श्रीकृष्ण! मैं आपकी शरण आया हूँ मुझे पुत्र प्रदान करिये। हे मेरे इष्टदेव गोविन्द! हे वासुदेव! हे जनार्दन श्रीकृष्ण! मुझे पुत्र प्रदान करिये। मैं आपकी शरण में आया हूँ। हे भगवान, हे इन्द्र द्वारा पूजित

वासुदेव! आपकी कृपा से नितीवान धनवान और विद्यावान पुत्र उत्पन्न होता है।

श्री वासुदेव कथित इस पुत्र स्तोत्र का जो पाठ करता है। वह श्रेष्ठ पुत्र युक्त होता है। यह स्तोत्र रत्न सुख प्राप्त कराने वाला भी है। इसका प्रतिदिन पाठ करने वाले को तत्काल पुत्र लाभ होता है। और शीघ्र ही धन, सम्पत्ति, ऐश्वर्य, एवं राज से सम्पन्न होता है इसमें सन्देह नहीं है।

अग्नि स्तोत्र

समस्त प्राणियों के साधक महात्मा अग्निदेव को नमस्कार है। उनके एक, दो और पाँच स्थान हैं। वे राजसूय यज्ञ में छः स्वरूप धारण करते हैं समस्त देवताओं को वृत्ति देने वाले अत्यन्त तेजस्वी अग्निदेव को नमस्कार है। जो समस्त जगत के कारण रूप तथा पालन करने वाले हैं, उन अग्निदेव को प्रणाम है।

अग्ने! तुम सम्पूर्ण देवताओं के मुख हो। भगवन! तुम्हारे द्वारा ग्रहण किया हुआ हविष्य सब देवताओं को तृप्त करता है। तुम्हीं समस्त देवताओं के प्राण हो। तुम में हवन किया हुआ हविष्य अत्यन्त पवित्र होता है, फिर वही मेघ बनकर जलरूप में परिणत हो जाता है। फिर उस जल से सब प्रकार के अन्नादि उत्पन्न होते हैं। अनिलसारथे! फिर उन समस्त अन्न आदि से सब जीव सुखपूर्वक जीवन धारण करते हैं।

अग्निदेव! तुम्हारे द्वारा उत्पन्न की हुई औषधियों से मनुष्य यज्ञ करते हैं। यज्ञों से देवता, दैत्य तथा राक्षस तृप्त होते हैं। हुताशन! उन यज्ञों का आधार तुम्हीं हो, अतः अग्ने! तुम्हीं सबके आदिकारण और सर्वस्वरूप हो। देवता, दानव, यक्ष, दैत्य, गन्धर्व, राक्षस, मनुष्य, पशु, वृक्ष, मृग, पक्षी तथा सर्प–ये सब तुमसे ही तृप्त होते हैं और तुम्हीं से वृद्धि को प्राप्त होते हैं। तुम्हीं से इनकी उत्पत्ति है और तुम्हीं में इनका लय होता है।

देव! तुम्हीं जल की दृष्टि करते हो और तुम्हीं उसको पुनः सोख

लेते हो। तुम्हारें पकाने से ही जल प्राणियों की पुष्टि करता है।

तुम देवताओं में तेज, सिद्धों में कान्ति, नागों में विष और पक्षियों में वायुरूप से स्थित हो। मनुष्यों में क्रोध, पक्षी और मृगादि में मोह, वृक्षों में स्थिरता, पृथ्वी में कठोरता, जल में द्रवत्व तथा वायु में जल रूप से तुम्हारी स्थिति है। अग्ने! व्यापक होने के कारण तुम आकाश में आत्मारूप से स्थित हो।

अग्निदेव! तुम सम्पूर्ण भूतों के अन्तःकरण में विचरते तथा सबको पालन करते हो। विद्वान पुरुष तुमको एक कहते हैं, तथा फिर वे ही तुम्हें तीन प्रकार का बतलाते हैं। तुम्हें आठ रूपों में कल्पित करके ऋषियों ने आदि यज्ञ का अनुष्ठान किया था। महर्षिगण इस विश्व को तुम्हारी सृष्टि बतलाते हैं।

हुताशन! तुम्हारे बिना यह सम्पूर्ण जगत तत्काल नष्ट हो जायेगा। ब्राह्मण हव्य–कव्य आदि के द्वारा 'स्वाहा' और 'स्वदा' का उच्चारण करते हुए तुम्हारी पूजा करके अपने कर्मो के अनुसार विहित उत्तर गति को प्राप्त होते हैं।

देवपूजित अग्निदेव! समस्त प्राणियों के परिणाम, आत्मा और रीर्यस्वरूप तुम्हारी ज्वालाएँ तुमसे ही निकलकर सब भूतों का दाह करती हैं।

परम कान्तिमान् अग्निदेव! संसार की यह सृष्टि तुमने ही की है। तुम्हारा ही यज्ञरूप वैदिक कर्म सर्वभूतमय जगत है। पीले नेत्रों वाले अग्निदेव! तुम्हें नमस्कार है। हुताशन! तुम्हें नमस्कार है। पावक! आज तुम्हें नमस्कार है। हव्यवाहन! तुम्हें नमस्कार है। तुम ही खाये

पीये हुए पदार्थों को पचाने के कारण विस्व के पालक हो। तुम्हीं खेती को पकाने वाले और जगत के पोषक हो। तुम्हीं मेघ हो, तुम्हीं वायु हो और तुम्हीं समस्त प्राणियों का पोषण करने के लिये खेती के हेतुभूत बीज हो। भूत, भविष्य और वर्तमान सब तुम ही हो। तुम्हीं सब जीवों के भीतर प्रकाश हो। तुम्हीं सूर्य और तुम्हीं अग्नि हो।

अग्ने! दिन-रात तथा दोनों सन्ध्याएँ तुम्हीं हो। सुवर्ण तुम्हारा वीर्य हैं। तुम सुवर्ण की उत्पत्ति के कारण हो। तुम्हारे गर्भ में सुवर्ण की स्थिति है। सुवर्ण के समान तुम्हारी कान्ति है। मुहुर्त, क्षण, त्रुटि और लव-सब तुम्हीं हो।

जगतप्रभो! कला, काष्ठा और निमेष आदि तुम्हारें ही रूप हैं। यह संपूर्ण दृश्य तुम्हीं हो। परिवर्तनशील काल भी तुम्हारा ही स्वरूप है। प्रभो! तुम्हारी जो काली नाम की जिव्हा है, वह काल को आक्षय देने वाली है। उनके द्वारा तुम पापों को भय से हमें बचाओं और इस लोक के महान् भय से हमारी रक्षा करो। तुम्हारी जो कराली नाम की जिव्हा है, वह महाप्रलय की कारणरूपा है। उसके द्वारा हमें पापों तथा इहलोक के महान् भय से बचाओ। तुम्हारी जो मनोजवा नाम की जिव्हा है, वह लघिमा नामक गुण स्वरूपा है। उसके द्वारा तुम पापों तथा इहलोक के महान भय से बचाओ। तुम्हारी जो सुलोहिता नाम की जिव्हा है। वह सम्पूर्ण भूतों की कामनाएँ पूर्ण करती है। उसके द्वारा तुम पापों तथा इस लोक के महान् भय से हमारी रक्षा करो। तुम्हारी जो सुधूम्रवर्ण नाम की जिव्हा है, वह प्राणियों के रोगों का दाह करने वाली है। उसके द्वारा तुम पापों तथा इस लोक के

महान भय से हमारी रक्षा करो। तुम्हारी जो स्फुलिंगिनी नामक जिव्हा है जिससे सम्पूर्ण जीवों के शरीर उत्पन्न हुए हैंष उसके द्वारा तुम पापों तथा इस लोक के महान भय से हमारी रक्षा करो।

- तुम्हारी जो ध्रिवा नाम की जिव्हा है, वह समस्त प्राणियों का कल्याण करने वाली है। उसके द्वारा तुम पापों तथा इस लोक के महान भय से हमारी रक्षा करो।
- हुताशन! तुम्हारे नेत्र पीले, ग्रीवा लाल और रंग साँवला है। तुम सब दोषों से हमारी रक्षा करो और संसार से हमारा उद्धार कर दो।
- वह्नि, सप्तार्चि, कृशानु, हव्यवाहन, अग्नि, पावक, शुक्र तथा हुताशन-इन आठ नामों से पुकारे जाने वाले अग्निदेव! तुम प्रसन्न हो जाओ। तुम अक्षय, अचिन्त्य, समृद्धिमान, दु:सह एवं अत्यन्त तीव्र वह्नि हो। तुम मूर्तरूप में प्रकट होकर अविनाशी कहे जाने वाले सम्पूर्ण भयंकर लोकों को भस्म कर डालते हो अथवा तुम अत्यन्त पराक्रमी हो-तुम्हारे पराक्रम की कहीं सीमा नहीं है।
- हुताशन! तुम संपूर्ण जीवों के हृदय कमल में स्थित उत्तम, अनन्त एवं स्तवन करने योग्य सत्त्व हो। तुमने इस संपूर्ण चराचर जगत को व्याप्त कर रखा है। तुम एक होकर भी यहाँ अनेक रूपों में प्रकट हुए हो। पावक! तुम अक्षय हो, तुम्हीं पर्वतों और वनों सहित सम्पूर्ण पृथ्वी, आकाश, चन्द्रमा, सूर्य तथा दिन-रात हो। महासागर के उदर में बढ़वानल के रूप

में तुम्हीं हो तथा तुम्हीं अपना परा विभूति के साथ सूर्य की किरणों में स्थित हो।

- भगवन् तुम हवन किये हुए हविष्य का साक्षात भोजन करते हो, इसीलिये बड़े-बड़े यज्ञों के नियमपरायण महर्षिगण सदा तुम्हारी पूजा करते हैं। तुम यज्ञ में स्तुत होकर सोमपान करते हो तथा वषट् का उच्चारण करके इन्द्र के उद्देश्य से दिये हुए हविष्य को भी तुम्हीं भोग लगाते हो और इस प्रकार पूजित होकर तुम सम्पूर्ण विश्व का कल्याण करते हो। विप्रगण अभिष्ट फल की प्राप्ति के लिये सदा तुम्हारा ही यजन करते हैं। संपूर्ण वेदांगों में तुम्हारी महिमा का गान किया जाता है। यज्ञपरायण श्रेष्ठ ब्राह्मण तुम्हारी ही प्रसन्नता के लिये सर्वदा अंगों सहित वेदों का पठन-पाठन करते रहते हैं।

तुम्हीं यज्ञ परायण ब्रह्मा, सब भूतों के स्वामी भगवान विष्णु, देवराज इन्द्र, अर्यमा, जल के स्वामी वरूण, सूर्य तथा चन्द्रमा हो। संपूर्ण देवता और असुर भी तुम्हीं को हविष्यों द्वारा सन्तुष्ट करके मनोवांछित फल प्राप्त करते हैं। कितने ही महान दोष से दूषित वस्तु क्यों न हो, वह सब तुम्हारी ज्वालाओं के स्पर्श से शुद्ध हो जाती है। सब स्नानों में तुम्हारे भस्म से किया हुआ स्नान ही सबसे बढ़कर है, इसीलिये मुनीगण सन्ध्याकाल में उसका विशेष रूप से सेवन करते हैं।

पवित्र नाम वाले अग्निदेव! मुझ पर प्रसन्न होओ। वायुरूप! मुझ

पर प्रसन्न होओ। अत्यन्त निर्मल कान्तिवाले पावक! मुझ पर प्रसन्न होओ। विद्धुन्मय! आज मुझ पर प्रसन्न होओ। हविष्यभोजी अग्निदेव! तुम मेरी रक्षा करो। वह्नि! तुम्हारा जो कल्याणमय स्वरूप है, देव! तुम्हारी तो सात ज्वालामयी जिव्हाएँ हैं, उन सबके द्वारा तुम मेरी रक्षा करो—ठीक उसी तरह, जैसे पिता अपने पुत्र की रक्षा करता है। मैंने तुम्हारी स्तुति की है।

पतृ-स्तोत्र

ब्रह्मा जी के यह कहने पर कि पितन सन्तुष्ट हो जाएँ तो वे क्या नहीं दे सकते—महात्मा रूचि ने पितरों की नीचे लिखे स्तोत्र द्वारा उनकी स्तुति की—

1. जो श्राद्ध में अधिष्ठाता देवता के रूप में निवास करते हैं तथा देवता भी श्राद्ध में 'स्वधान्त' वचनों द्वारा जिनका तर्पण करते हैं, उन पितरों को में प्रणाम करता हूँ
2. भक्ति और मुक्ति की अभिलाषा रखने वाले महर्षिगण स्वर्ग में भी मानसिक श्राद्धों के द्वारा भक्तिपूर्वक जिन्हें तृप्त करते हैं, सिद्धगण दिव्य उपहारों द्वारा श्राद्ध में जिनको सन्तुष्ट करते हैं, आत्यन्तिक समृद्धि की इच्छा रखने वाले गुह्यक भी तन्मय होकर भक्तिभाव से जिनकी पूजा करते हैं, भूलोक में मनुष्यगण जिनकी सदा आराधना करते हैं, जो श्राद्धों में श्रद्धापूर्वक पूजित होने पर मनोवांछित लोक प्रदान करते हैं, पृथ्वी पर ब्राह्मण लोग अभिलषित वस्तु की प्राप्ति के लिये जिनकी अर्चना करते हैं तथा जो आराधना करने पर प्राजापत्य लोक प्रदान करते हैं, उन पितरों को मैं प्रणाम करता हूँ।
3. तपस्या करने से जिनके पाप धुल गये हैं तथा जो संयमपूर्वक आहार करने वाले हैं, ऐसे वनवासी महात्मा वन के फल-मूलों द्वारा श्राद्ध करके जिन्हें तृप्त करते हैं, उन पितरों को मैं मस्तक झुकाता हूँ।

4. नैष्ठिक ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करने वाले संयतात्मा ब्राह्मण समाधि के द्वारा जिन्हें सदा तृप्त करते हैं, क्षत्रिय सब प्रकार के श्राद्धोपयोगी पदार्थों के द्वारा विधिवत श्राद्ध करके जिनको सन्तुष्ट करते हैं, जो तीनों लोकों को अभिष्ट फल देने वाले हें, स्वकर्म परायण वैश्य पुष्प, धूप, अन्न और जल आदि के द्वारा जिनकी पूजा करते हैं तथा शूद्र भी श्राद्धों द्वारा भक्तिपूर्वक जिनकी तृप्ति करते हैं और जो संसार में सुकाली के नाम से विख्यात हैं, उन पितरों को मैं प्रणाम करता हूँ।
5. पाताल में बड़े-बड़े दैत्य भी दम्भ और मद त्यागकर श्राद्धों द्वारा जिन स्वधाभोजी पितरों को सदा तृप्त करते हैं, मनोवांछित भोगों को पाने की इच्छा रखने वाले नागगण रसातल में संपूर्ण भोगों एवं श्राद्धों से जिनकी पूजा करते हैं तथा मन्त्र, भोग और सम्पत्तियों से युक्त सर्पगण भी रसातल में ही विधिपूर्वक श्राद्ध करके जिन्हें सदा तृप्त करते हैं, उन पितरों को मैं नमस्कार करता हूँ।
6. जो साक्षात् देवलोक में, अन्तरिक्ष में और भूतल पर निवास करते हैं, देवता आदि समस्त देहधारी जिनकी पूजा करते हैं, उन पितरों को मैं नमस्कार करता हूँ। वे पितर मेरे द्वारा अर्पित किये हुए इस जल को ग्रहण करें।
7. जो परमात्मस्वरूप पितर मूर्तिमान होकर विमानों में निवास करते हैं, जो समस्त क्लेशों से छुटकारा दिलाने में हेतु हैं तथा योगीश्वरगण निर्मल हृदय से जिनका यजन करते हैं, उन

पितरों को में प्रणाम करता हूँ।

8. जो स्वधा-भोजी पितर दिव्य लोक में मूर्तिमान होकर रहते हैं, काम्यफल की इच्छा रखने वाले पुरुष की समस्त कामनाओं को पूर्ण करने में समर्थ हैं और निष्काम पुरुषों को मोक्ष प्रदान करने वाले हैं, उनको में प्रणाम करता हूँ। वे समस्त पितर इस जल से तृपत हों, जो चाहने वाले पुरुषों को इच्छा अनुसार भोग प्रदान करते हैं; इतना ही नहीं, जो पुत्र, पशु, धन, बल और गृह भी देते हैं।

9. जो पितर चन्द्रमा की किरणों में, सूर्य के मण्डल में तथा श्वेत विमानों में सदा निवास करते हैं, वे मेरे दिये हुए अन्न, जल और गन्धादि से तृप्त एवं पुओष्ट हों। अग्नि में हविष्य का हवन करने से जिनको तृप्ति होती है, जो ब्राह्मणों के शरीर में स्थित होकर भोजन करते हैं तथा पिण्डदान करने से जिन्हें प्रसन्नता प्राप्त होती है, वे पितर यहाँ मेरे द्वारा दिये गये जल और अन्न से तृप्त हों।

10. जो देवताओं से भी पूजित हैं तथा सब प्रकार से श्राद्धोपयोगी पदार्थ जिन्हें अत्यन्त प्रिय हैं, वे पितर यहाँ पधारें। मेरे निवेदन किये हुए पुष्प, गन्ध, अन्न एवं भोज्य पदार्थों के निकट उनकी उपस्थिति हो। जो प्रतिदिन पूजा ग्रहण करते हैं, प्रत्येक मास के अन्त में जिनकी पूजा करनी उचित है, जो अष्टकाओं में, वर्ष के अन्त में तथा अभ्युक्ष्यकाल में भी पूजनीय हैं, वे मेरे पितर यहाँ तृप्ति लाभ करें।

11. जो ब्राह्मणों के यहाँ कुमुद और चन्द्रमा के समान शान्ति धारण करके आते हैं, क्षत्रियों के लिये जिनका वर्ण नवोदित सूर्य के समान है, जो वैश्यों के यहाँ सुवर्ण के समान उज्जवल कान्ति करते हैं तथा शूद्रों के लिये जो श्याम वर्ण के हो जाते हैं, वे समस्त पितर मेरे दिये हुए पुष्प, गन्ध, धूप, अन्न और जल आदि से तथा अग्निहोत्र से सदा तृप्ति लाभ करें। मैं उन सबको प्रणाम करता हूँ।

12. जो वैश्वदेवपूर्वक समर्पित किये हुए श्राद्ध को पूर्ण तृप्ति के लिये भोजन करते हैं और तृप्त हो जाने पर ऐश्वर्य की सृष्टि करते हैं, वे पितर यहाँ तृप्त हों। मैं उन सबको नमस्कार करता हूँ।

13. जो राक्षसों, भूतों तथा भयानक असुरों का नाश करते हैं, प्रजाजनों का अमंगल दूर करते हैं, जो देवताओं के भी पूर्ववर्ती तथा देवराज इन्द्र के भी पूज्य हैं, वे यहाँ तृप्त हों। मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ।

14. अग्निष्वात पितृगण मेरी पूर्व दिशा की रक्षा करें, बहिर्षद पितरगण दक्षिण दिशा की रक्षा करें। आज्यप नाम वाले पितर पश्चिम दिशा की तथा सोमप संज्ञक पितर उत्तर दिशा की रक्षा करें। उन सबके स्वामी यमराज राक्षसों, भूतों, पिशाचों तथा असुरों के दोष से सब ओर से मेरी रक्षा करें।

15. विश्व, विश्वभुक, आराध्य, धर्म, धन्य, शुभनन, भूतिद, भूतिकृत और भूति—ये पितरों के नौ गण हैं। कल्याण, कल्यताकर्ता,

कल्य, कल्यतराश्रय, कल्यता हेतु तथा अवध से पितरों के छः गण माने गये हैं। वर, वरेण्य, वरद, पुष्टिद, तुष्टिद, विश्वपाता तथा धाता ये पितरों के सात गण हैं। महान, महात्मा, महित, महिमावान और महाबल ये पितरों के पापनाशक पाँच गण हैं। सुखद, धनद, धर्मद और भूतिद—ये पितरों के चार गण कहे जाते हैं। इस प्रकार कुल इकत्तीस पितृगण हैं, जिन्होंने सम्पूर्ण जगत को व्याप्त कर रखा है। वे सब पूर्ण तृप्त होकर मुझ पर सन्तुष्ट हों और सदा मेरा हित करें।

एक और स्तोत्र—जो सबके द्वारा पूजित, अमूर्त, अत्यन्त तेजस्वी, ध्यानी तथा दिव्य दृष्टि सम्पन्न हैं, उन पितरों को मैं सदा नमस्कार करता हूँ। जो इन्द्र आदि देवताओं, दक्ष, मारीच, सप्तऋषियों तथा दूसरों के भी ेनता हैं, कामना की पूर्ति करने वाले उन पितरों को मैं प्रणाम करता हूँ। जो मनु आदि राजर्षियों, मुनीश्वरों तथा सूर्य और चन्द्रमा के भी नायक हैं, उन समस्त पितरों को मैं जल और समुद्र में भी नमस्कार करता हूँ। नक्षत्रों, ग्रहों, वायु, अग्नि, आकाश और भुलोक तथा पृथ्वी के भी जो नेता हैं, उन पितरों को मैं हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ। जो देवर्षियों के जन्मदाता, समस्त लोकों द्वारा वन्दित तथा सदा अक्षय फल के दाता हैं, उन पितरों को मैं हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ। प्रजापति, कश्यप, सोम, वरूण तथा योगश्वरों के रूप में स्थित पितरों को सदा हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ। सातों लोकों में स्थित सात पितृगणों को नमस्कार है। मैं योग दृष्टि सम्पन्न स्वंयभू ब्रह्मा जी को प्रणाम करता हूँ। चन्द्रमा के आधार पर प्रतिष्ठित

तथा योगमूर्तिधारी पितृगणों को मैं प्रणाम करता हूँ तथा अग्निस्वरूप अन्य पितरों को भी प्रणाम करता हूँ; क्योंकि यह संपूर्ण जगत अग्नि और सोममय है। जो पितर तेज में स्थित हैं, तथा जो जगत स्वरूप एवं ब्रह्म स्वरूप हैं, उन संपूर्ण योगी पितरों को मैं एकाग्रचित होकर प्रणाम करता हूँ। उन्हें बारम्बार नमस्कार है। वे स्वधाभोजी पितर मुझ पर प्रसन्न हों।

अच्छे दिन

जिस तिथि को लेकर सूर्य उदित होते हैं वह तिथि स्नान, अध्ययन और दान के लिये श्रेष्ठ समझनी चाहिये।

कृष्ण पक्ष में जिस तिथि में सूर्य अस्त होते हैं वह तिथि स्नान, दान आदि कर्मों में पितरों के लिये उत्तम मानी जाती है।

- प्रतिपदा तिथि में अग्निदेव का भजन और हवन धन- धन्य एवं आरोग्यदायक कहा गया है।
- द्वितीया (शुक्ल पक्ष)—यदि वीरवार को हो तो अग्निदेव का पूजन करने से इच्छित ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है।

  द्वितीया तिथि का उपवार जब मिथुन, कर्क में सूर्य हों तो स्त्री को विधवा होने से बचाता है।

  द्वितीया (कृष्ण पक्ष)—श्रावण मास की–लक्ष्मी– नारायण की पूजा करने से पति–पत्नी का वियोग नहीं होता।

- तृतीया (शुक्ल पक्ष, वैशाख मास)—गंगा स्नान से सभी पापों से मुक्ति मिलती है।

  तृतीया (स्वाति नक्षत्र, वैशाख मास)—दान अक्षय होता है।

  तृतीया (रोहिणी नक्षत्र, माघ मास) दान अक्षय होता है।

  तृतीया (श्रवण नक्षत्र, बुधवार) स्नान, उपवास का अनन्त फल कहा गया है।

- चतुर्थी (भरणी नक्षत्र में हो)—यम की पूजा से सम्पूर्ण पापों से मुक्ति होती है।

  चतुर्थी (शुक्लपक्ष, भाद्रपद मास)—शिव की पूजा कने से शिवलोक की प्राप्ति होत है।

  चतुर्थी (कार्तिक, माघ मास में ग्रहण हो)—अनन्त फल देने वाली कही गयी है।

  चतुर्थी को गणेश पूजन करने से सभी विघ्नों का नाश होता है।

- पंचमी (श्रावण मास, शुक्ल पक्ष)—नागों की पूजा करने से भय का नाश होता है।

  पंचमी (श्रावण मास, कृष्ण पक्ष)—मनस्त देवी की मूर्ति की नीम के पत्तों से पूजा करने से सर्वभय समाप्त होता है।

- षष्ठी (भाद्रपद)—स्नान दान का अनन्त कल होता है।

  षष्ठी (माघ, कार्तिक)—व्रत असीम कीर्ति देने वाला होता

है।

- सप्तमी (शुक्ल पक्ष)—यदि सक्रान्ति हो तो महाजया या सूर्याप्रिया।

  सप्तमी (भाद्रपद)—अपराजिता।

- अष्टमी (शु. पक्ष आश्विन, कार्तिक)—अष्टभुजा दशभुजा की पूजा करें आषाढ़, श्रावण मास में चण्डिका की पूजा करें चैत्र मास में अशोक पुष्प से भगवती का पूजन करें।
- नवमी—प्रत्येक मास में देवी का पूजन करें।
- दशमी (शुक्ल पक्ष, कार्तिक मास)—व्रत करें ज्येष्ठ मास में गंगा दशहरा, स्नान करें। आश्विनी की विजया, कार्तिक की महापुण्या कहलाती है।
- एकादशी—व्रत में सभी पाप नष्ट हो जाते हैं।
- द्वादशी तिथि द्वादश पापों को हरण करती है।
- त्रयोदशी (शुक्ल पक्ष, चैत्र मास)—कामदेव की पूजा करें।

  त्रयोदशी (कृष्ण पक्ष, चैत्रमास)—यदि शनिवार और शतभिषा से युक्त हो तो सभी कुछ अक्षय होता है।

- चतुर्दशी (शुक्ल पक्ष, चैत्र मास)—दम्भ-भंजिनी कहलाती है। धतूरे की जड़ में जामदेव की पूजा करें।
- पूर्णिमा/अमावस्या—सभी विशेष फलदायक कही गयी है।

ज्ञान गंगा

एक : ज्योतिस्वरूप लिंग

दो : पक्ष (1) कृष्ण पक्ष (2) शुक्ल पक्ष

तीन : कल्प (1) ब्रह्मा (2) बाराह (3) पाद्‌य्म

चारः : मनुष्य द्वारा इन चार की रक्षा प्रथम कर्त्तव्य–
(1) ब्राह्मण (2) रोगी (3) वृद्ध

पाँच : संवत्सर (1) संवत्सर (2) परिवत्सर (3) अनवत्सर (4) वत्सर (5) इडावत्सर

छः : मुक्तियाँ
(1) सार्ष्टि–आपके समान ऐश्वर्य की प्राप्ति
(2) सालोक्य–आपके समान लोक की प्राप्ति
(3) सारूप्य–आपके समान रूप की प्राप्ति
(4) सामीप्य–आपके निकट रहने का सौभाग्य
(5) साम्य–आपकी समता की प्राप्ति
(6) लीनता–आप में मिलकर लीन हो जाना अर्थात् सायुज्य की प्राप्ति।

सात : मातृकाएँ - (1) ब्राह्मी (2) वाराही (3) कौमारी (4) चामुण्डा (5) माहेश्वरी (6) वैष्णवी (7) ऐन्द्री

आठ : धर्म के नाम–
(1) धर्म राज (2) शमन (3) अन्तक (4) दण्डधर (5) काल (6) यम (7) पुण्यमित्र (8) ईश

नौ : नवदुर्गा
(1) शैलपुत्री (2) ब्रह्मचारिणी (3) चन्द्रघण्टा (4) कूषमाण्डा (5) स्कन्दमाता (6) कात्यायनी (7) कालरात्रि (8) महागौरी (9) सिद्धिदात्री

दस : विश्वेदेव
(1) क्रतु (2) दक्ष (3) वसु (4) सत्य (5) काल (6) काम (7) धृति (8) कुरु (9) शंकुमात्र (10) वामन

ग्यारह : महापापी
(1) आग लगाने वाले (2) विष देने वाला (3) हाथ में हथियार लेकर मारने के लिये आनेवाला (4) धन का अपहरण करने वाला (5) निन्दक (6) क्षेत्र का विनाश करने वाला (7) कटु वचन कहने वाला (8) स्त्री को चुराने वाला (9) पिता का वध करने वाला (10) बंधुओं की हिंसा करने वाला (11) सदा अपकार करने वाला।

बारह : साध्यदेव
(1) मन (2) अनुमन्ता (3) प्राण (4) नर (5) यान (6) चिति (7) हय (8) नय (9) हंस (10) नारायण (11) प्रभव (12) विभु

तेरह : क्रियाएँ
(1) देखना (2) सुनना (3) स्पर्श करना (4) सूंघना (5) खाना–(ये ज्ञानेन्द्रियों की है (6) चलना

(7) ग्रहण करना (8) बोलना (9) मल-मूत्र का त्याग–(ये कर्मेन्द्रियों की है) (10) सोना–(अन्तःकरण की है) (11) श्वांस लेना–(प्राण की है) (12) आँखें खोलना व (13) मूँदना (कूर्म नामक उपप्राण की है)

चौदह : रत्न

(1) हाथी (2) घोड़ा (3) रथ (4) अप्सराएँ (5) बाण (6) खजाना (7) माला (8) वस्त्र (9) वृक्ष (10) शक्ति (11) पाश (12) मणि (13) छत्र (14) विमान

पन्द्रह : शरीर के धर्म

(1) उत्तम वचन (2) कटुवचन (3) क्रोधा (4) सन्ताप (5) लोभ (6) मोह (7) काम (8) क्षुधा (9) पिपासा (10) स्थूलता (11) कृशता (12) नाश (13) दृश्य (14) अदृश्य (15) उत्पन्न होना

सोलह : न्यायशास्त्र ये सोलह पदार्थ नित्य मानता है–

(1) प्रमाण (2) प्रमेय (3) संशय (4) प्रयोजन (5) दृष्टान्त (6) सिद्धान्त (7) अवयव (8) तर्क (9) निर्णय (10) बाद (11) जल्प (12) वितण्डा (13) हेत्वाभाष (14) अदृश्य (15) उत्पन्न होना

सत्रह : स्वायंभुव मनु द्वारा कहे गये सत्रह मूर्ख–

(1) कुशिष्यों को शिक्षा करके गुरु बना देने वाला। (2) कुभार्या की रक्षा करके कुशल चाहने वाला। (3)

थोड़ लाभ से सन्तुष्ट न होने वाला। (4) शत्रु की सेवा करके कल्याण की इच्छा करने वाला। (5) ससुराल में रहकर सम्मान की अभिलाषा करने वाला। (6) तीर्थ में दान करके उधार रखे और फिर न दे तथा अपने दानी पन की भी प्रशंसा करे। (7) दुष्ट और झूठे को साधु समझने वाला। (8) किसी का धन लेकर भूल जाये। (9) स्त्रियों से विवाद करे। (10) पराये क्षेत्र में बीज को बोवे। (11) पुत्रवधु से परिहास करे। (12) अकाम्य वस्तु की कामना करे। (13) निर्बल होकर बलवार से वैर करे। (14) अविश्वासी का विश्वास करे। (15) अनुचित कर्म करके कुलीनता चाहे। (16) अपने मुंह से अपनी शलाघा करे। (17) अपाच्य से याचना करने वाला।

अठारह : जानने योग्य–

(1) सबसे बड़ा दान-किसी को दण्ड न देना। (2) शूरवीरता-अपने गलत स्वभाव पर काबू पा लेना। (3) सत्य-सबको एक दृष्टि से देखना। (4) पवित्रता-कर्म में आसक्ति का न होना। (5) सन्यास-त्याग हो जाय। (6) सहायक-धर्म। (7) दक्षिणा-ज्ञान देना। (8) बल-प्रणाया। (9) लाभ-हरि की उत्तम प्रेमा भक्ति का प्राप्त होना। (10) हानि-मानव शरीर पाकर भजन न

करना। (11) विद्या-आत्मा परमात्मा की एकता का बोध। (12) मूर्ख-जो शरीर को आत्मा मानता है। (13) रास्ता-वेद जो बताते हैं। (14) नर्क- बात बात पर क्रोध आना। (15) स्वर्ग-जिसे क्रोध नहीं आता। (16) भाई-बंधु-मित्र मैं ही हूँ। (17) दरिद्रि-जो असन्तुष्ट है। लोभी है। (18) कृपण-जिसने अपनी इन्द्रियों पर विजय नहीं पाई।

उन्नीस : माताएँ–

(1) गर्भ धारण करने वाली (2) स्तर पिलाने वाली (3) गुरु पत्नी (4) इष्टदेव पत्नी (5) राज पत्नी (6) पिता की पत्नी (7) बहिन (8) पुत्रवधु (9) नौकर की स्त्री (10) शिष्य की पत्नी (11) पत्नी की माता (12) भाई की पत्नी (13) नानी (14) दादी (15) चाची (16) मौसी (17) बुआ (18) मामी (19) कन्या (बेटी)

बीस : राजा–

(1) चन्द्रमा (2) वरुण (3) कुबेर (4) विष्णु (5) अग्निदेव (6) दक्ष (7) इन्द्र (8) प्रहल्लाद (9) यम (10) शूलपाणि (11) हिमालय (12) समुद्र (13) चित्ररथ (14) वासुकि (15) तक्षक (16) ऐरावत (17) सुपर्ण (18) उच्चैश्रव्य (19) सिंह (20) वृषभ।

इक्कीस: दु:ख– (जिनसे छूटना ही मुक्ति है)–

(1) शरीर (2) दु:ख (3) सुख (4) स्त्रोत (5) त्वक (6) नेत्र (7) रसना (8) घ्राण (9) मन (10-15) षट् इन्द्रियों के विषय एवं (16-21) षट् इन्द्रियों के ज्ञान।

बाईस : सिद्धियाँ–

अणिमा	लधिमा	प्राप्ति
प्रकाम्य	महिमा	ईशित्व
वशित्व	कामावसायिता	दूरश्रवण
परकाय प्रवेश	मनोयायित्व	सर्वज्ञत्व
अभिष्ट सिद्धि	अग्निस्तम्भ	जल स्तम्भ
चिन्नी वित्व	वायुस्तम्भ	वाकसिद्धि
सृष्टिकरण	प्राणों का आकर्षण	

इच्छानुसार मृत प्राणी को बुला लेना

क्षुप्ति पासानिद्रा स्तम्भन (भूख, प्यास, नींद का स्तम्भन)।

तैईस : गुण (जो सातवीं श्रेणी के कहे गये हैं)

(1) मन, वाणी और शरीर से किसी भी प्रकार से किसी को कष्ट न देना (2) चोरी का सर्वथा अभाव (3) आठ प्रकार के मैथुनों का अभाव (4) किसी की भी निन्दा न करना (5) सत्कार, मान, पूजा का न चाहना (6) तृष्णा का सर्वथा अभाव (7) शीत-उष्ण,

सुख:दु:खादि को सहना (8) स्वधर्म पालन हेतु कष्ट सहना (9) सत- असत पदार्थों का यथार्थ ज्ञान (10) एकान्तवास (11) समाधान (12) उपरामता (13) क्षमा (14) धैर्य (15) अद्रोह (16) अभय (17) निरहंकारता (18) ईश्वर में अनन्य भक्ति (19) वेद, शास्त्र, महात्मा, गुरु और परमेश्वर के वचनों में प्रत्यक्ष के सदृश विश्वास (20) दु:खियों के करुणा (21) शरीर एवं इन्द्रियों के सहित अन्त:करण की सरलता (22) वेद एवं सत शास्त्रों का अध्ययन तथा भगवान के नाम एवं गुणों का कीर्तन (23) अन्त:करण और इन्द्रियों के द्वारा जैसा निश्चय किया हो वैसे का वैसा ही प्रिय शब्दों में कह देना।

चौबीस : गुरु (दत्तात्रेय भगवान के)–

(1) पृथ्वी (2) वायु (3) आकाश (4) जल (5) अग्नि (6) चन्द्रमा (7) सूर्य (8) कबूतर (9) अजगर (10) समुद्र (11) पतंग (12) भौंरा (13) हाथी (14) शहद निकालने वाला (15) हरिन (16) मछली (17) पिंगला वेश्या (18) कुरर पक्षी (19) बालक (20) कुँआरी कन्या (21) बाण बनाने वाला (22) सर्प (23) मकड़ी (24) भृंगी कीट।

पच्चीस : मैं (आत्मा), मूल प्रकृति, बुद्धि (महत्त्व), अहंकार,

पाँच महाभूत, दस इन्द्रियाँ, मन, पाँचों इन्द्रियों के पाँच विषय।

छब्बीस : (दैवी सम्पदा को प्राप्त हुए मनुष्य के)

(1) भय का सर्वथा अभाव (2) अन्त:करण की शुद्धि (3) ज्ञान के लिये योग में दृढ़ स्थिति (4) सात्विक दान (5) इन्द्रियों का दमन (6) यज्ञ (7) स्वाध्याय (8) कर्त्तव्यपालन के लिये कष्ट सहना (9) शरीर, मन, वाणी की सरलता (10) अहिंसा (11) सत्यभाषा (12) क्रोध न करना (13) संसार की कामना का त्याग (14) अन्त:करण में रागद्वेषजनित हलचल का न होना (15) चुगली न करना (16) प्राणियों पर दया करना (17) सांसारिक विषयों में न ललचाना (18) अन्त:करण की कोमलता (19) अकर्त्तव्य करने में लज्जा (20) चपलता का अभाव (21) तेज (22) क्षमा (23) धैर्य (24) शरीर की शुद्धि (25) बैर भाव का न रहना (26) मान को न चाहना।

।।इति।।

"शिव-निर्माल्य" सावधान ?

एक प्राचीन आख्यायिका है कि कोई गन्धर्वराज किसी राजा के उपवन से प्रतिदिन पुष्प-हरण किया करता था। चोरी कौन करता है? इसका पता करने के लिये राजा ने मार्ग में शिवनिर्माल्य बिछा दिया क्योंकि उसका उल्लंधन करने से अर्न्धानादि सर्व शक्तियाँ नष्ट हो जाती हैं। जब अगले दिन गन्धर्वराज आया तो वैसा ही हुआ; उसकी शक्तियाँ नष्ट हो गई। ध्यान से देखने से सारी बात जब गन्धर्वराज को मालूम पड़ी तो उसने परमकरूणामय सर्वकामप्रद शंकर भगवान की स्तुति की वही स्तुति 'महिम्न स्त्रोत' नाम से प्रसिद्ध हुई।

"भगवान के गुण अनन्त हैं, अत: उनको पूर्णतया जानना असम्भव है। इस कारण से गुण कथनात्मक स्तुति योग्य कैसे हो सकती है?" इस आशंका के निराकरण हेतु अपने अनौक्त्य को प्रकट करते हुए गन्धर्वराज पुष्पदन्ताचार्य भगवान शंकर की स्तुति प्रारंभ करते हैं:

1. अपनी बुद्धि सामर्थ्य के अनुसार सभी के द्वारा की गयी परमेश्वर की स्तुति निर्दोष ही मानी जाती है, क्योंकि परमेश्वर के अनन्त गुणों को न कोई पूर्णरूप से जान सकता है और न पूर्णतया वाणी से कह ही सकता है।
2. यद्यपि निर्गुण परमात्मा वाणी का अविषय है तथा सगुण के अनन्त गुणों का वर्णन करना भी असम्भव है, तथापि भक्तों के कृपर अनुग्रह कर धारण किये गये सगुण विग्रह को देखकर जीवमुक्त से लेकर पामर तक के मन और वाणी उसमें तन्मय हो ही जाते हैं।

3. हमारी प्रार्थना का प्रयोजन परमेश्वर को बहलाना नहीं है—यह तो अपनी अपवित्र वाणी को पवित्र बनाने हेतु प्रयास मात्र है।
4. प्रत्यक्ष, अनुमान तथा आगमादि प्रमाणों से सिद्ध भी आपके अपरिमित ऐश्वर्य को खण्डन करने के लिये नास्तिक लोग वितण्डावाद का आश्रय लेकर असफल प्रयत्न करते हैं।
5. लोक में शरीर के बिना कहीं भी चेष्टा नहीं देखा जाती। सृष्टि से पहले न तो परमेश्वर का देह था और न सृष्टि के अन्य कारण ही थे, फिर परमेश्वर जगत का सृष्टा कैसे हो सकता है? नास्तिकों के इस आक्षेप का उत्तर यह है कि अचिन्त्य मायाशक्ति सम्पन्न परमेश्वर को जगत सृष्टि के लिये लोकवत देहादि कारण सामग्री की आवश्यकता नहीं होती। अत: नास्तिकों का आक्षेप अनवसर गीत है।
6. न तो सावयव जगत् अजन्मा हो सकता है, न कर्ता के बिना ही यह बन सकता है और न परमेश्वर से भिन्न अलपज्ञ जीव संसार को बना सकता है। इस प्रकार सब प्रमाण से सिद्ध परमेश्वर के विषय में, हत-भाग्य नास्तिकों की संशय होता ही रहता है।

7. उक्त मार्गों में से कोई साक्षात और कोई परम्परा से मोक्ष का साधान है। अन्त में आपको प्राप्त करके ही परमशान्ति का लाभ मिल सकता है।

8. जब तत्त्वनिष्ठ जीव को भी विषय मृग तृष्णा मोहित नहीं करती है, तो नित्य-शुद्ध-बुद्ध-मुक्त-स्वभाव सदाशिव को यह कैसे भ्रान्त कर सकेगी।

9. अत्यन्त ढीठ वाचालता ने मुझे भी ढीठ बना रखा है। अतः परस्पर विरुद्ध मत-मतान्तरों की ओर ध्यान न देकर निर्लज्ज की भाँति में बकता जा रहा हूँ। कृपया आप इसे क्षमा कर देवें।

10. अभिमान पूर्वक प्रयत्न से परमेश्वर की महिमा को कोई जान नहीं सकता, किन्तु अभिमान परित्याग कर जब अनन्य भाव से शरण में आ जाता है तो कृपाकर अपनी महिमा के तहित स्वरूप को आप स्वयं ही दिखला देते हो।

11. रावण ने जो तीनों भुवनों को शत्रुहीन कर दिया था और प्रतियोद्धा न मिलने के कारण उसके हाथों में लड़ने की खुजलाहट सदा बनी रहती थी। यह तो आपके चरणों में अपने को कुर्बान कर देने से सुदृढ़ हुई शिवभक्ति का ही प्रभाव था, किसी अन्य का नहीं।

12. शिवजी की कृपा से प्राप्त अतुलबल वाले अपने बीस भुजाओं के पराक्रम को आपके निवास स्थान कैलाशपर्वत पर ही रावण ने दिखलाना चाहा था। उस समय भयभीत हुई पार्वती

की प्रार्थना से भगवान शंकर ने पैर के अंगूठे के अग्रभाग से पर्वत को धीरे से दबाया। बस! इतने मात्र से शक्ति क्षीण रावण को पाताल में भी आश्रय न मिल सका था, पुनः आपने दया करके उसका उद्धार किया था।

13. बाणासुर जो इन्द्र से भी अधिक समृद्ध हो गया था सो वह अन्य के लिये दुलर्भ होने पर भी आपके चरणकमलों में सदैव नतमस्तक रहता था क्योंकि आपको प्रणाम करना कौन सी उन्नति का कारण नहीं हो सकता, वरन् मुक्ति प्रयन्त फल को देने वाला भी हो सकता है।

14. तीनों लोगों को बचाने में संलग्न भगवान् शंकर के गले में हलाहल विषपानजन्य कालिका उनकी शोभा को बढ़ाती है और इसीलिये उनका नीलकण्ड भी नाम पड़ गया, जो प्रशंसा का सूचक है।

15. जब किसी भी जितेन्द्रिय पुरुष का अनादर हितकर नहीं होता, तो जितेन्द्रियों के मुकुटमणि आप का तिरस्कार कर कोई अपना कल्याण कैसे कर सकता है।

16. सन्ध्याकाल में विश्व-विध्वंसक राक्षसों को मोहित कर जगत की रक्षा हेतु आप ताण्डव नृत्य करते हैं, तब आपकी व्यापकता लोक में विपरीत परिस्थिति को पैदा कर देती है।

17. अगस्त्य के द्वारा समुद्र को पी जाने पर महती खाई को भगीरथ ने गंगाजल से भरा था। जो गंगाजल गंगावतरण के समय शंकर की जटा में छोटे-छोटे जल बिन्दु से दीख रहे

थे, उन्हीं जल कणों ने स्वर्ग पाताल तथा पृथ्वी में भी जलधि रूप वलय से युक्त द्वीपाकार जगत को बना दिया' बस इतने मात्र से आपकी महिमा का अनुमान लगाया जा सकता है।

18. शुष्क तृण के समान त्रिपुरासुर को मारने के लिये आपका उक्त आडम्बर मच्छर को मारने के लिये एटमबम तैयारी के समान ही है, क्योंकि आपके तो भ्रू वक्रता मात्र से उसका नाश होना सुनिश्चित था।

19. भगवान शंकर ने विष्णु की अपने प्रति दृढ़ भक्ति की परीक्षा के लिये एक कमल पुष्प कम कर दिया था। अपने नियमित कमल पुष्प के उपहार में एक कम देखकर विष्णु भगवान ने कमल के सदृश अपने नेत्र को ही उखाड़कर शंकर के चरणों में समर्पित कर दिया। फलतः विष्णु भगवान के हाथ में वही नेत्रकमल सुदर्शन चक्र बनकर तीनों लोकों की आज भी रक्षा कर रहा है।

20. कर्म स्वतन्त्र ही फल दे सकता है फिर भला ईश्वर की क्या आवश्यकता है? मीमांसकों ने इस मत को खण्डन करते हुए कहा है कि यागदि कर्म शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। ऐसी दशा में यजमान को कालान्तर में उनका फल कैसे मिल सकेगा। जैसे नष्ट-दण्ड और मृत-कुलाल से घट उत्पन्न नहीं होता है, वैसे ही नष्ट कर्म कैसे फल पैदा कर सकेगा। इसीलिये चेतन परमात्मा को ही कालान्तर भावी फल के देने में साक्षी

समझकर यजमान वेद वचनों में विश्वास कर दृढ़ता के साथ वेदोक्त कर्मों में लग जाता है क्योंकि विहित कर्म से प्रसन्न हो शंकर ही उसे फल देते हैं।

21. सम्पूर्ण साधनों से युक्त होते हुए भी शंकर की कृपा के बिना यागादि कर्म अपना फल नहीं देते हैं, क्योंकि फल तो सदाशिव से ही मिलता है।

22. त्रैलोक्यसुन्दरी संध्या नामक अपनी कन्या के पीछे कामुक ब्रह्मा दौड़ा और बलात्कार करना चाहा। शास्त्र एवं लोक विरुद्ध पिता के इस व्यवहार से लज्जा के मारे जब संध्या ने मृगी का रूप धारण कर लिया तो ब्रह्मा ने मृग बनकर उससे रति करना चाहा। इस मर्यादा विरुद्ध व्यवहार को देख जब आप सर्वनियन्ता शंकर ने बाण छोड़ा तो वह ब्रह्मा मृगशिरा नक्षत्र बनकर अन्तरिक्ष में कूद गया। डरकर मृगशिरा नक्षत्र के रूप में आकाश में घूमते हुए ब्रह्मा को आज भी शंकर जी का बाण आर्द्रा नक्षत्र बनकर पीछा कर रहा है। अतएव आज भी उक्त दोनों नक्षत्रों का सन्निधान विद्यमान है।

23. स्त्रियों में भोलापन आभूषण माना गया है अतः पार्वती जी भी से धारण कर अपने लोकातीत सौन्दर्य को बढ़ा रही हैं। अतएव अयुक्त को भी युक्त कह दिया गया है।

24. आपके अष्टधा स्वरूप प्रतिपादक आगम वाक्यों का आश्रय

लेकर दृढ़ आग्रही विद्वान लोग भले ही उक्त रीति से संकुचित अर्थ बोधक शब्द आपके विषय में कहें; पर हमारी समझ में ऐसी कोई वस्तु संसार में नहीं है, जो सर्वात्मा आपसे भिन्न हो।

25. सम्पूर्ण विश्व का कारण वेद है और वेद का सार तत्त्व सर्वश्रेष्ठ शिव का नाम 'ओम' है—इसमें अ, उ और म ये तीन मात्राएँ हैं—विभक्त तीनों मात्राओं के द्वारा 'ओम' यह पद शक्तिवृत्ति से समष्टि, व्यष्टि, स्थूल, सूक्ष्म एवं कारण प्रपंच—विशिष्ट चैतन्य को कहता है और लक्षणावृत्ति से शुद्ध चैतन्य हो कहता है। वैसी ही सूक्ष्म अर्धमात्रा द्वारा यही 'ओस' पद करण सहित संपूर्ण प्रपंच से रहित केवल तुरीयत्व विशिष्ट को शक्तिवृत्ति से, एवं तुरयीत्व उपलक्षित को लक्षणावृत्ति से बतलाया है—इस प्रकार कार्य ब्रह्म और कारण ब्रह्म के रूप में विद्यमान आप शिवतत्त्व को ही तो सभी प्रकार से 'ओम' यह पद बतलाया है। वस्तुत: वाच्य अपने वाचक से अभिन्न है और वाचक सम्पूर्ण नाम का 'ओम' के साथ अभेद है, क्योंकि सावधानी से सुनने पर व्यक्त तथा अव्यक्त सभी शब्द का उदरय और अस्त ओम ही जान पड़ता है।

26. प्रणव जन में अनाधिकारी को प्रसिद्ध 'भव, शर्व' आदि नाम जप से सकल पुरूषार्थ की सिद्धि होती है अत: सर्वसाधारण

प्रसिद्ध भव, शर्व आदि नाम से भगवान् शंकर की स्तुति करते हैं।

27. हे निर्जन एकान्तप्रिय भगवन अत्यन्त समीपवर्ती और दूर से दूरवर्ती आपको नमस्कार है, नमस्कार है; हे कामदेव नाशक! सूक्ष्म से भी अति सूक्ष्म और महान् से भी अति महान् आपको बारम्बार नमस्कार है। हे सूर्य आदि तीन नेत्र वाले! वृद्ध कालातीत और तरूण से सदा तरूण आपको पुन: पुन: नमस्कार है, सर्वात्मरूप आपको नमस्कार है और परोक्ष, अपरोक्ष इस प्रकार अनिर्वचनीय सम्पूर्ण प्रपंचों के अधिष्ठान आपको नमस्कार है और प्रपंचों से परे असंग निर्विकार स्वरूप आपको अनेकश: नमस्कार है।

28. हे शिव! भले ही विश्व की सृष्टि, स्थिति तथा संहार के लिये आप सत्वादि गुणों का आश्रय लेकर त्रिदेव बन जावें; पर वस्तुत: आप गुणातीत नित्य-शुद्ध-बुद्ध- मुक्त-स्वभाव हैं अत: पूर्वोक्त सभी स्वरूपों में आपको भूरिश: नमस्कार है।

29. आपकी भक्ति ही मुझ जैसों से बड़े-बड़े कार्य करवा देती है अत: आप में अपराधा को भी क्षमा कर मुझे अपनी भक्ति प्रदान करें।

30. जब असम्भावित साधनों को लेकर शारदा भी आपके गुणों को जानने और लिखने से पार नहीं पा सकता है तो फिर हमारी क्या गिनती है।

31. व्रतादि दीक्षा, गोधनादि का दान, तप, तीर्थसेवन, उपासन, यागादि कर्म—ये सब फल प्रदान करने में महिम्नः स्तुति पाठ के षोडश अंश के तुल्य भी होने योग्य नहीं है।

जैसे महेश्वर से बड़ा कोई देवता नहीं है, अधोर मन्त्र से उत्कृष्ट कोई दूसरा मन्त्र नहीं है, गुरु से बढ़कर कोई नहीं है, उसी प्रकार महिम्नः स्तोत्र से उत्तम कोई दूसरी स्तुति नहीं है।

यह स्तोत्र सुरश्रेष्ठ, मुनिश्रेष्ठों द्वारा श्लाघनीय तथा मुक्ति का उत्तम साधन है, यदि कोई मनुष्य इस स्तुति को अनन्यचित्त से बद्धाञ्जली होकर पढ़ता है तो किन्नरों के द्वारा श्लाध्यमान् हुआ भगवान शिव को प्राप्त कर लेता है।

।।इति।।

श्री हनुमान चालीसा

श्री गुरूचरन सरोज रज निज मन मुकरु सुधारि।
बरनउ रघुवर बिमल यश जो दायक फल चारि।।
बुद्धिहीन तनु जानि के सुमिरौं पवन कुमार।
बल बुद्धि विद्या देहिं मोहे हरउ क्लेश विकार।।

जय हनुमान ज्ञान गुण सागर-जय कपीश तिहुँलोक उजागर
रातदूत अतुलित बलधामा-अंजनिपुत्र पवनसुत नामा
महावीर विक्रम बजरंगी-कुमति निवार सुमति के संगी
कंचन बरन बिराज सवेशा-कानन कुण्डल कुंचित केशा
हाथ व्रज और धवजा विराजै-कांधै मूँज जनेऊ साजे
शंकर सुवन केसरी नन्दन-तेज प्रताप महा जगबन्दन
विद्यावान गुणी अति चातुर-राम काज करिबे को आतुर
प्रभु चरित सुनिबे को रसिया-राम लखन सीमा मन बसिया
सूक्ष्म रूप धरि सियहिं दिखावा-विकट रूप धारि लंक जरावा
भीम रूप धरि असुर संहारे-सिया राम जी के काज सँवारे
लाय संजीवन लखन जिवाये-श्री रघुवीर हरषि उर लाये
रघुवर कीन्हीं बहोत बड़ाई-तुम मम प्रिय भरतहिं सम भाई
सहस बदन तुम्हरों जस गावें-अस कहि श्रीपति कंठ लगावें
सनकादिक ब्रह्मादि मुनीशा-नारद शारद सहित अहीषा
यम कुबेर दिग्पाल जहां ते-कबि कोविद कहि सके कहां ते
तुम उपकार सुग्रीवहिं कीन्हा-राम मिलाय राज्यपद दीन्हा
तुम्हरो मन्त्र विभिषण माना-लंकेश्वर भये सब जग जाना

युग सहस्त्र योजन पर भानु-लील्यो ताहि मधुर फल जानेउ
प्रभु मुद्रिका मेलहि मुख मांहि-जलधि लाघँ गये अचरज नाहिं
दुर्गम काज जगत के जेते-सुगम अनुग्रह तुम्हरे तेते
राम द्वारे तुम रखवारे-होत न आज्ञा बिनु पैसारे
सब सुख लहैं तुम्हारी सरना-तुम रक्षक काहु को डरना
आपन तेज सम्हारो आपहिं-तीनों ेक हाँक ते काँपहि
भूत पिशाच निकट न आवहिं-महावीर जब नाम सुनावहिं
नाशै रोग हरै सब पीरा-जपत नीरन्तर हनुमत बीरा
संकट से हनुमान छुड़ावहिं-मन क्रम बचन ध्यान जो लावहिं
सब पर राम तपस्वी राजा-तिनके काज सकल तुम साजा
और मनोरथ जो कोई लावैं-तासु अमित जीवन फल पावैं
चारों जुग प्रताप तुम्हारा-है प्रसिद्ध जगत उजियारा
साधु सन्त के तुम रखवारे-असुर निकन्दन राम दुलारे
अष्ट सिद्धि नवनिधि के दाता-ऐसा वी दीन्ह जानकी माता
राय रसायन तुम्हरे पासा-सदा रहो रघुपति के दासा
तुम्हरे भजन राम को भावैं-जन्म-जन्म के दु:ख बिसरावैं
अंतकाल रघुवर पुर जाई-जहाँ जन्म हरि भक्त कहाई
और देवता चित्त न धरहिं-हनुमत सेय सर्व सुख करहिं
संकट कटै मिटे सब पीरा-जो सुमिरै हनुमत बलबीरा
जै जै जै हनुमान गौसाई-कृपा करो गुरूदेव की नाईं
ये सतबार पाठ करै जोई-छूटहिं बन्द महासुख होई
जो यह पढ़ै हनुमान चालीसा-होय सिद्धि साखी गौरीसा
तुलसीदास सदा हरि चेरा-कीजै नाथ हृदय महिं डेरा

दोहा: पवन तनय संकट हरण मंगल मूरति रूप।
राम लखन सीता सहित हृदय बसेहुँ सुरभूपा।।

।।इति।।

संकटमोचन हनुमानाष्टक

बाल समय रवि भक्ष लियो तब, तीनहुं लोक भयो अंयिारो
ताहि सो त्रस भयो जग को, यह संकट काहु सो जात ना टारो
देवन आनि करी विनती तब, छोड़ दियो रवि कष्ट निवारो
को नहिं जानत है जग में बाबा संकट मोचन नाम तिहारो

हे हनुमान जी! आप बालक थे तब आपने सूर्य को अपने मुँह में रख लिया, जिससे तीनों लोकों में अंधेरा हो गया। इससे संसार-भर में विपत्ति छा गयी और उस संकट को कोई भी दूर नहीं कर सका। देवताओं ने आकर आपकी विनती की और आपने सूर्य को मुक्त कर दिया। इस प्रकार संकट दूर हुआ। हे मनुमान जी! संसार में ऐसा कौन है जो आपका संकटमोचन नाम नहीं जानता।

बालि की त्रास कपीश बसे गिरि जात महाप्रभु पंथ निहारो
चौंकि महामुनी श्राप दियो तब, चाहिये कौन उपाय विचारो
कै द्विज लिवाय महाप्रभु, सो तुम तासु को संकट टारो
को नहिं जानत है जग में .....

बालि के डर से सुग्रीव पर्वत पर रहते थे। उन्होंने श्री रामचन्द्र को आते देखा। उन्होंने आपको पता लगाने के लिए

भेजा। आपने अपना ब्राह्मण का रूप करके श्रीरामचन्द्र से भेंट की और उनको अपने साथ लिवा लाये जिससे आपने सुग्रीव के शोक का निवारण किया। हे हनुमानजी! संसार में ऐसा कौन है जो आपका संकटमोचन नाम नहीं जानता।

अंगद के संग लेन गये सिय खोज कपीस यह बैन उचारो
जीवित ना बचिहौं हम सों जु बिना सुधि लाए इहाँ पग धारो
हेरि थकै तट सिंधु सबै तब, लाय सिया सुधि प्राण उबारौ
को नहिं जानत है जग में .....

सुग्रीव ने अंगद के साथ सीता जी की खोज के लिए अपनी सेना को भेजते समय कह दिया था कि यदि सीताजी का पता लगाकर नहीं आये तो हम तुम सबको मार डालेंगे सब ढूंढ-ढूंढकर हार गये। तब आप समुद्र के तट से कूदकर सीताजी का पता लगाकर लाये जिससे प्राण बचे। हे हनुमान जी! संसार में ऐसा कौन है जो आपका संकटमोचन नाम नहीं जानता।

रावण त्रस दई सिय को तब, रक्षक होकर शोक निवारो
ताहि समय हनुमान महाप्रभु, जाय महारजनीचर मारो
चाहत सीय अशोक सों आगि सु दे प्रभु मुद्रिका शोक निवारो
को नहिं जानत है जग में .....

जब रावण ने श्रीसीताजी को भय दिखाया और सब राक्षसियो से कहा कि सीताजी को मनावें, हे महावीर हनुमान

जी! उस समय आपने पहुंचकर महान राक्षसों को मारा। सीताजी ने अशोक वृक्ष से अग्नि मांगी (स्वयं को भस्म करने के लिए) परन्तु आपने उसी वृक्ष पर से श्रीरामचन्द्र की अंगूठी डाल दी जिससे सीताजी की चिन्ता दूर हो गई। हे हनुमानजी! संसार में ऐसा कौन है जो आपका संकटमोचन नाम नहीं जानता।

बाण लग्यो उर लक्ष्मण के तब प्राण तजे सुत रावण मारो
ले गृह वैद्य सुषेण समेत, तबै गिरि द्रोण सु वीर उपारो
आन संजीवन हाथ दई तब, लछिमन के तुम प्राण उबारो
को नहिं जानत है जग में .....

रावण के पुत्र मेघनाद ने बाण मारा जो लक्ष्मणजी की छाती पर लगा और उससे उनके प्राण संकट में पड़ गये। तब आप ही सुषेण वैद्य को घर सहित उठा लाए और द्रोणाचल पर्वत सहित संजीवनी बूटी ले आये जिससे लक्ष्मणजी के प्राण बच गये। हे हनुमान जी! संसार में ऐसा कौन है जो आपका संकटमोचन नाम नहीं जानता।

रावण युद्ध अजान कियो तब, नाग की फांस सबै सिर डारो
श्री रघुनाथ समेत सबै दल, मोह भयो यह संकट भारो
आनि खगेश तबै हनुमान जु बन्धन काटि सुत्रास निवारो
को नहिं जानत है जग में .....

रावण ने घोर युद्ध करते हुए सबको नागपाश में बांध लिया तब श्री रघुनाथ सहित सारे दल में यह मोह छा गया

कि यह तो बहुत भारी संकट है। उस समय, हे हनुमान जी! आपने गरूड़जी को लाकर बंधान को कटवा दिया जिससे संकट दूर हुआ। हे हनुमान जी! संसार में ऐसा कौन है जो आपका संकटमोचन नाम नहीं जानता।

बन्धु समेत जबै अहि रावण लै रघुनाथ पाताल सिधारो
देविंहिं पूंजि भली विधि सों बलि देउ सबै मिलि मन्त्र बिचारो
जाय सहाय भयो तबहि, अहिरावण सैन्य समेत संहारो
को नहिं जानत है जग में .....

अब अहिरावण श्री रघुनाथजी को लक्ष्मण सहित पाताल को ले गया और भली भांति देवीजी की पूजा करके सबके परामर्श से यह निश्चय किया कि इन दोनों भाइयों की बलि दूंगा, उसी समय अपने वहां पहुंचकर अहिरावण को उसकी सेना समेत मार डाला। हे हनुमान जी! संसार में ऐसा कौन है जो आपका संकटमोचन नाम नहीं जानता।

काज किये बड़े देवन के तुम वीर महाप्रभु देखि विचारो
कौन सा संकट मोर गरीब को जो तुम सों नहिं जात है टारो
बेगि हरो हनुमान महप्रभु जो कछु संकट होय हमारो
को नहिं जानत है जग में .....

हे महावीर! आपने बड़े-बड़े देवों के कार्य संवारे हैं। अब आप देखिये और सोचिये कि मुझ दीन-हीन का ऐसा कौन सा संकट है जिसको आप दूर नहीं कर सकते। हे महावीर

हनुमान जी! संसार में ऐसा कौन है जो आपका संकटमोचन नाम नहीं जानता।

लाल देह लाली लसै अरू धारि लाल लंगूर।
वज्र देह दानव दलन जय जय जय कपि शूर।।

।।इति।।

आपका शरीर लाल है आपकी पूंछ लाल है और आपने लाल सिंदूर धारण कर रखा है आपके वस्त्र भी लाल हैं। आपका शरीर वज्र है और आप द्रष्टों का नाश कर देते हैं। हे हनुमान जी! आपकी जय हो, जय हो, जय हो।

अनमोल वचन या अमृत की कुछ बूँद

1. जहाँ ऋण देने वाला धनी, चिकित्सा करने वाला वैद्य, श्रोत्रिय ब्राह्मण तथा जलपूर्ण नदी—ये चार न हों—ब्राह्मणों! वहाँ निवास नहीं करना चाहिये (वेदव्यास जी)
2. प्राणी अपने कर्म के अनुसार ही पैदा होता और कर्म से ही मर जाता है। उसे उसके कर्म के अनुसार ही सुख, दुःख, भय और मंगल के निमित्तों की प्राप्ति होती है।
3. मनुष्य अपेन स्वभार के अधीन है। वह उसी का अनुसरण करता है। यहाँ तक कि देवता, असुर, मनुष्य आदि को लिये हुए यह सारा जगत स्वभाव में ही स्थित है।
4. जैसे अपने विवाहित पति को छोड़कर जार पति का सेवन

करने वाली व्याभिचारिणी स्त्री कभी शान्ति लाभ नहीं करती, वैसे ही जो मनुष्य अपने आजीविका चलाने वाले एक देवता को छोड़कर किसी दूसरे की उपासना करते हैं उससे उन्हें कभी सुख नहीं मिलता।

5. जीव अपने कर्मों के अनुसार उत्तम और अधम शरीरों को ग्रहण करता और छोड़ता रहता है। अपने कर्मों के अनुसार ही 'यह शत्रु है, यह मित्र है, यह उदासीन है'—ऐसा व्यवहार करता है। कहाँ तक कहूँ कर्म ही गुरु है और कर्म ही ईश्वर है।

6. सूखी हड्डी में खून नहीं होता, पर कुत्ता सूखी हड्डी चबाता है। उसे अपने खून का स्वाद आता है, पर वह अज्ञानी उस हड्डी को आनन्द समझता है। ठीक यही दशा विषयी पुरुषों की है।

7. मनुष्य संसार के प्राणी, पदार्थों में दो विभाग कर लेता है—ये मेरा है और ये मेरा नहीं है। जिन्हें अपना मानता है उनमें ममता, कामना, प्रियता, आसक्ति हो जाती है और इन्हीं से फिर शोक, चिन्ता, भय, उद्वेग, हलचल, सन्ताप आदि दोष पैदा हो जाते हैं।

8. कर्त्तव्य चिन्ता का विषय नहीं होता अपितु विचार का विषय होता है। विचार से कर्त्तव्य का बोधा होता है और चिन्ता से विचार नष्ट होता है।

9. गरीब के मुँह पर गरीबी का बरवान करना उसका शील-हरण करने जैसा है। गरीब की हाय लोहे को भी भस्म कर देती है।

10. जिसे नंगापन रास आ गया, उसे कपड़े दिखाकर नहीं ठगा जा सकता।

11. स्वयं खाने से सन्तोष नहीं मिलता। दूसरों को खिलाने से ही मिलता है।

12. रजस्वला स्त्री चार रातों तक सभी वर्ण के पुरुषों के लिये त्याज्य है।

13. भोजन के साथ अलग नमक रखकर न खायें।

14. दक्षिण या पूर्व दिशा की ओर ही मस्तक करके सोयें।

15. पूर्व या उत्तर की ओर ही मुख करके दाँतन करें और दाँतन करते समय बोलें नहीं।

16. दृढ़तापूर्वक अपना लक्ष्य अवश्य निर्धारित कर लें। ईश्वर ही एकमात्र प्राप्तव्य हैं। प्रत्येक दिन यह लक्ष्य याद रखें और इसे अपनी आँखों के समक्ष रखें।

17. दुनिया से भागकर गैरिक वस्त्रधारण करना ईश्वर अनुभूति के लिये अनिवार्य नहीं है। गृहस्थ के रूप में संसार में सक्रिय रहते हुए आधयात्मिकता की परम अवस्था प्राप्त की जा सकती है। मनुष्य को सावधानी सिर्फ इतनी बरतनी है कि संसार मन के भीतर न घुसे।

18. मन ही बन्धन और मुक्ति दोनों का कारण है। यदि मन को

सांसारिक चीजों की ओर मोड़ दिया जाता है तो वह बन्ध न उत्पन्न करता है और यदि भगवान की ओर मोड़ा जाता है तो वह मुक्ति प्रदान करता है।

19. कोई भी साधना तभी संभव है जब हमारे पास मानव देह हो। हमारी यह देह ही सर्वाधिक समर्थ नौका है। अपने गुरु को नौका चलाने वाला नाविक बना, भगवान की कृपा वह अनुकूल पवन है जो नौका की गति को तीव्र कर सकती है और आपको संसार सागर से सुगमता से पार करा सकती है। शरीर के इस रूप का उपयोग न करना आत्महत्या जैसा है।
20. दैहिक इच्छाएँ अग्नि की तरह हैं और उनके तोष या पोषण का प्रयास अग्नि में घी डालने जैसा है। किसी स्त्री के संग कभी अकेला न रहे चाहें वह माँ, बहन या बेटी ही क्यों न हो क्योंकि प्रबल इन्द्रियाँ अच्छे भले लोगों को भी सत्पथ से विचलित कर सकती हैं।
21. घर में दो शिवलिंग, तीन गणेश, दो शंख, दो सूर्य, तीन दुर्गामूर्ति दो गोमती चक्र और दो शालग्राम की पूजा करने से गृहस्थ मनुष्य को अशान्ति होती है।
22. कुत्ते और व्याभिचारिणी स्त्री की मित्रता स्थायी नहीं होती वे दोनों ही सदा नये-नये शिकार ढूँढा करते हैं।
23. जैसे बाँस या बेंत की बना हुई पिटारी कभी जल से नहीं भरती, उसी प्रकार धन से मनुष्य का जी नहीं भरता।
24. विष्णु को चावल, गणेश की तुलसी, दुर्गा को दूर्वा और सूर्य

भगवान को बिल्व पत्र नहीं चढ़ावें। शिवजी को कुनद, विष्णु को धतूरा, देवी को आक तथा मदार, और सूर्य को तगर का पुष्प नहीं चढ़ावें। हाथ में धारण किया हुआ पुष्प, ताम्बे के पात्र में चन्दन और चर्मपात्र में गंगाजल अपवित्र हो जाता है।

25. जैसे खच्चरी दु:ख भोगने के लिये ही गर्भ धारण की इच्छा करती है, उसी प्रकार जिसका मन विश्रान्त नही है, ऐसा मूर्ख मनुष्य कष्ट उठाने के लिये ही व्यर्थ आयु का विस्तार चाहता है।

।।इति।।

दिशा ज्ञान

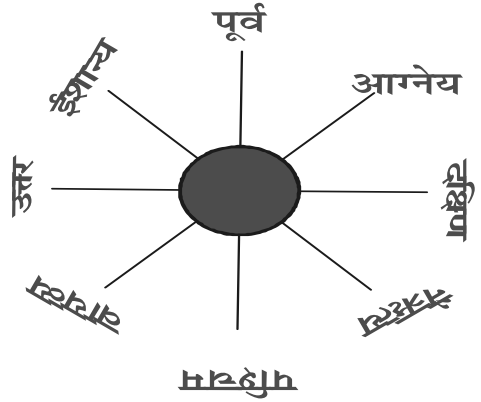

अंगुलियाँ : अँगूठे के पास वाली (पहली)–तर्जनी (दूसरी) सबसे लम्बी–मध्यमा (तीसरी) लम्बी– अनामिका (चौथी) सबसे छोटी–कनिष्ठा।

याद करें : ॐ द्यौ शान्तिरन्तरिक्षं शान्ति पृथ्वी शान्ति राप: शान्ति औषधय: शान्ति वनस्पतय: शान्ति विश्वेदेवा: शान्ति: ब्रह्म शान्ति: सवेर्ठे शान्ति शान्ति खे: शान्ति सामा शान्ति रेधि।। ॐ सर्वारिष्ट शान्तिर्भवतु ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति:।

॥ उपसंहार ॥

प्रभु ने प्रत्येक प्राणी को जीवन जीने का ठीक मार्ग दर्शाने के लिये प्रकृति को एक आदर्श के रूप में रचा है। इसे अधिक संवारने व निखारने तथा प्रकृति के गर्भ में छिपे हुये करोड़ों रहस्यों को उजागर करने के लिये प्रत्येक मनुष्य को विवेक दिया है। ताकि सद्वृत्ति के अनुसार प्रत्येक मनुष्य को लाभ पहुंचा सके। और अपनी दृढ़ प्रतिज्ञा एवं उद्देश्य में सफल हो सके।

जो मनुष्य अपने जीवन लक्ष्य के मार्ग पर चलने का उद्योग रखे तो उसी के लिये वह रास्ता है। यदि कोई उस पर न चले तो फिर क्या मार्ग और कैसा मार्ग? सही मार्ग वही है, जो हमारे वेद–पुराणों और शास्त्र स्मृतियों में अन्य प्रकारों से दर्शाये गये हैं। उन्हीं सत्मार्गों में से एक व्रत एवं उपवास भी है। व्रत आदि का आचरण करने से सत्मार्ग की प्राप्ति होती है। व्रत आदि के नियम से इन्द्रिय संयम एवं मन की स्थिरता की वृद्धि होती है। इन्द्रिय संयमन एवं मन की एकाग्रता से मनुष्य स्वत: ही सत् मार्ग की ओर चल पड़ता है। इसी मार्ग से चलकर प्राणी अपने–अपने उद्योग द्वारा जीवन में सौंदर्यीकरण का बगीचा लगा सकता है। सोच सकता है और समय आने पर उसका फल पा सकता है। जो अत्यन्त मीठा है और सुखदायक होता है। महापुरुषों संतों द्वारा बताए गये आदर्शों को जीवन में उतारते हुए मैत्री करुणा मुदिता सहिष्णुता और परोपकार सेवा आदि का मार्ग अपना–अपना कर्तव्य ही नहीं परम धर्म समझें। और भगवान्

की भक्ति की ओर दृष्टि रखें। संसार की ओर दृष्टि न रखें। अर्थात् मिथ्या दृष्टि, संयम, राग, द्वेष, मान, मोह, काम, क्रोध, लोभ, हिंसा तथा पाप आदि सब व्यसन बंधनों को सद्विचारों के द्वारा परित्याग कर देना चाहिए। जीवन सत्यता इसी में है। नित्य शांति सुखमय जीवन की भी यही सत्यता है।

।। इति ।।

।। समर्पण ।।

श्री त्रिपुर सुन्दरयै नमः

श्री दुर्गायै नमः

है कल्प अनन्त अनन्त कोटि मम नयन मातु तेरे चरणों में।
यह वस्तु आपकी ही माता, अर्पण कर दी तेरे चरणों में।।
मम धीरेन्द्र की तुच्छ भेंट माँ जगदम्बे स्वीकार करो।
जो त्रुटियाँ हो इस सेवक की माँ उनका स्वयं सुधार करो।।
तुच्छ भेंट अर्पण करुँ तब चरणों में मात्।
धीरेन्द्र तब दास का शत् शत् कोटि प्रणाम्।।

माते! जगदम्बिकायाः चरणकमलयोरियं रचनां
सादरं समर्पणमस्ति।
।। इति शुभम्।।